पाठयक्रम समिति

प्रो0 गिरिजा पाण्डे
निदेशक,समाज विज्ञान
विद्याशाखा उत्तराखण्ड
मुक्त विश्वविद्यालय,हल्द्वानी

प्रो0 सी0 एम0 अग्रवाल,
विभागाध्यक्ष इतिहास,
कुमाऊँ विश्वविद्यालय
एस0एस0जे0परिसर,अल्मोड़ा

प्रो0 अजय रावत
उत्तराखण्ड मुक्त
विश्वविद्यालय
हल्द्वानी

प्रो0अनिल कुमार जोशी
इतिहास विभाग,कुमाऊँ
विश्वविद्यालय डी0एस0बी0
परिसर नैनीताल

डा0 मदन मोहनजोशी,
सहायक प्राध्यापक
उत्तराखण्ड मुक्त
विश्वविद्यालय,हल्द्वानी

पाठ्यक्रम संयोजन एवं संपादन

डॉ0 मदन मोहन जोशी
इतिहास विभाग
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी, नैनीताल

इकाई लेखन /संकलन

डा. जी.एम.जैसवाल — **ब्लॉक दो– इकाई1,2,3,4**
पूर्व आचार्य, इतिहास — **ब्लॉक चार– इकाई1,2,3,4**
कुमाऊँ विश्वविद्यालय — **ब्लॉक पांच– इकाई1,2,3,4**

स्व. डॉ. जीशान इज्जत — **ब्लॉक छह– इकाई1,2,3,4**
प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति विभाग
एम.जे.पी.रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली

डॉ.मदन मोहन जोशी — **इकाई संकलन ब्लॉक एक– इकाई1,2,3,4**
असिस्टेण्ट प्रोफेसर(इतिहास) — **इकाई संकलन ब्लॉक तीन– इकाई1,2,3,4**
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालयए हल्द्वानी

कापीराइट @उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
संस्करणः जून 2012 (पूर्व प्रकाशन प्रति)
प्रकाशकः निदेशालय, अध्ययन एवं प्रकाशन
mail : studies@uou.ac.in
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी ,नैनीताल –263139

मध्यकालीन भारत का इतिहास

		पृष्ठ संख्या
ब्लाक एक	**इस्लाम का आगमन**	**1-41**
इकाई एक	इस्लाम का आगमन तथा भारतीय संस्कृति में इस्लाम का प्रभाव।	1-10
इकाई दो	अरब आक्रमण के समय भारत की स्थिति तथा अरबों के आक्रमणों का प्रभाव।	11-19
इकाई तीन	महमूद गजनवी एवं मोहम्मद गौरी के आक्रमणों का प्रभाव।	20-29
इकाई चार	तुर्क आक्रमण की पूर्व संध्या में भारत की राजनैतिक, धार्मिक, आर्थिक दशा	30-41
ब्लाक दो	**सल्तनतकालीन इतिहास -1206 ई0 से 1526 ई0**	**42-93**
इकाई एक	गुलाम वंशः कुतुबुद्दीन ऐबक, इल्तुतमिश, रजिया तथा बलवन।	42-55
इकाई दो	जलाउद्दीन खिलजी, अलाउद्दीन खिलजी, बाजार नियंत्रण नीति, एवं सैनिक उपलब्धियॉ।	56-70
इकाई तीन	तुगलक वंश, मोहम्मद बिन तुगलक की नीतियां, फिरोजशाह तुगलक के सुधार एवं धार्मिक नीति।	71-82
इकाई चार	बहलोल लोदी, सिकन्दर लोदी, इब्राहिम लोदी एवं सामाजिक स्थिति।	83-93
ब्लाक तीन	**सल्तनतकालीनः समाज, संस्कृति एवं अर्थब्यवस्था**	**94-133**
इकाई एक	बहमनी तथा विजयनगर साम्राज्य।	94-104
इकाई दो	सल्तनतकालीन अर्थव्यवस्था एवं समाज।	105-111
इकाई तीन	दिल्ली सल्तनत का प्रशासन, स्थापत्य एवं साहित्य।	112-124
इकाई चार	सल्तनतकालीन राजस्व व्यवस्था।	125-133
ब्लाक चार	**मुगलकालीन- भारत**	**134-194**
इकाई एक	मुगल राज्य व्यवस्थाः बाबर, हुमायूं तथा शेरशाह।	134-150
इकाई दो	अकबर उसकी धार्मिक एवं राजपूत नीति तथा जहांगीर।	151-165
इकाई तीन	शाहजहां, औरंगजेबः धार्मिक तथा दक्षिणी नीति।	166-181
इकाई चार	मुगलों के राजत्व का सिद्धान्त।	182-194
ब्लाक पॉच	**मुगलकालीन भारत**	**195-255**
इकाई एक	मुगल प्रशासन का स्वरुप, वित्त व्यवस्था, मनसबदारी व्यवस्था	195-212
इकाई दो	मुगलकाल की जागीरदारी प्रथा, भू-राजस्व व्यवस्था	213-226
इकाई तीन	मुगल स्थापत्य कला तथा चित्रकला	227-240
इकाई चार	मराठों के उत्थान के कारण तथा पेशवाओं के अंतर्गत मराठा प्रशासन।	241-255
ब्लाक छह	**संकल्पनाएं , विचार तथा शब्दावली**	**256-304**
इकाई एक	इक्ता,खिलाफत,इनाम,वतन,अमरम,जजिया,जकात,खम्स,खराज,मदद-ए.मास,हरम,परगना, तुर्कानि-चहलगानी , जिम्मी, शरियत, परदा,उलेमा, खिदमती, शहना ए-मंडी	256-268
इकाई दो	उर्दू,तराना,ठुमरी,गजल,कब्बाली,खयाल,कथक,खड़ीबोली,सती,गोदप्रथा,दास,बुतपरस्त, दोआब, सिलसिला	269-279
इकाई तीन	मनसब,मुगल,तुर्क,मंगोल,मेहराब,गुम्बद,दस्तूर,खालसा-भूमी,काजी, सुलहकुल, इबादतखाना, दहसालाप्रणाली, सयूरघाल	280-291
इकाई चार	जागीर,मस्जिद,सूफी,सगुण,निर्गुण,सनातन,पीर,नजर,तीर्थ-कर,नायंकरएवंआयगर,रायरेखो, अहदी, दाखली, कारखाना,मज्म-उल-बाहरीन	292-304

इकाई एक- इस्लाम का आगमन तथा भारतीय संस्कृति में इस्लाम का प्रभाव

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 अरब संस्कृति तथा भारत

1.4 सल्तनत युग और भारतीय संस्कृति

1.4.1 धर्म एवं संस्कृति

1.4.2 समाज एवं संस्कृति

1.5 साराशं

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

1.7 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

1.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1.10 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

भारत में अति प्राचीन काल से आर्थिक सम्पन्नता के कारण बड़े.बड़े साम्राज्यों का उदय हुआ और प्राचीन काल से ही यहां वाह्य आक्रमण होते रहे। कुछ आक्रांता लूटपाट कर वापस लौट गये जबकि कुछ सदैव के लिए यहीं बस गये। इसी कारण कहा भी गया है कि कारवां आते रहे और हिन्दोस्तां बसता रहा ।भारत की सुसम्पन्नता वाह्य आक्रमणकारियों के लिए संभवतः सबसे बड़ा लालच था। भारतीय इतिहास के प्राचीन काल खण्ड की समाप्ति के साथ ही हम देखते हैं कि विश्व में भी अनेक परिवर्तन हो रहे थे, विशेषकर 622 ई0 में अरब देश में इस्लाम धर्म का जन्म हुआ था। इस नवीन धर्म के नये- नये अनुनायियों में इस धर्म को विश्व के सभी स्थानों में प्रसारित करने का अत्यधिक जोश था ।इन्हीं परिस्थितियों में 712 ई् में सिन्ध पर अरबों का आक्रमण हुआ और भारत में इस्लाम का आगमन हुआ।

अरबों की सिन्ध विजय के बाद लगभग 300 वर्षों तक हमारा देश वाह्य आक्रमणों से मुक्त रहा। इस प्रकार दीर्घकाल तक विदेशी आक्रमणों के भय से मुक्त रहने के कारण हमारी जनता में यह भावना उत्पन्न हो गयी कि भारत भूमि को कोई विदेशी शक्ति आक्रान्त कर ही नहीं सकती। हमारे शासक सैनिक विषयों में असावधान हो गये थे। उन्होंने उत्तर- पश्चिमी सीमाओं की किलेबन्दी नहीं की और न उन पर्वतीय दर्रों की रक्षा का ही प्रबन्ध किया जिनमें होकर विदेशी सेनाऐं हमारे देश में प्रवेश कर सकती थी। इसके अतिरिक्त हमारे लोगों ने उस नवीन रण नीति और युद्ध प्रणाली से भी सम्पर्क नहीं रखा जिसका विकास अन्य देशों में हो चुका था। आठवीं से ग्यारहवीं शताब्दी तक के युग में विचारों की संकीर्णता हमारे देशवासियों के चरित्र का एक अंग बन गयी थी। अलबरूनी नामक प्रसिद्ध विद्वान महमूद गजनवी के साथ हमारे देश में आया था। उसने यहॉं रहकर संस्कृत भाषाए हिन्दू धर्म तथा दर्शन का अध्ययन किया। वह लिखता है कि हिन्दुओं की धारणा यह है कि हमारे जैसा देश, हमारी जैसी जाति, हमारे जैसा राजा, धर्म, ज्ञान और विज्ञान संसार में कहीं नहीं है। वह यह भी लिखता है कि हिन्दुओं के पूर्वज इतने संकीर्ण विचारों के न थे जितने इस युग के लोग थे। उसे यह देक्षकर भी बडा आश्चर्य हुआ था कि - हिन्दू लोग यह नहीं चाहते कि जो चीज एक बार अपवित्र हो चुकी है, उसे पुनः शुद्ध करके अपना लिया जाये।

उस युग में हमारा देश शेष संसार से लगभग पूर्णतया पृथक था। यही कारण था कि हमारे देशवासियों का अन्य देशों से सम्पर्क टूट गया और वे वाह्य जगत में होने वाली राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक घटनाओं से भी सर्वथा अनभिज्ञ रहे। अपने से भिन्न जातियों और संस्कृति से सम्पर्क में न रहने के कारण हमारी सभ्यता गतिहीन होकर सड़ने लगी थी। वास्तविकता तो यह है कि इस युग में हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पतन के स्पष्ट लक्षण दिखायी देने लगे। इस युग के संस्कृत साहित्य में हम उतनी सजीवता और सुरूचि नहीं पाते, जितनी कि पांचवीं और छठी

शताब्दियों के साहित्य में। हमारी स्थापत्य, चित्रकला तथा अन्य ललित कलाओं पर भी बुरा प्रभाव पड़ा। हमारा समाज गतिहीन हो गया, जातिबन्धन अधिक कठोर हो गये, स्त्रियों को वैधव्य के नियमों का कठोरता से पालन करने पर बाध्य किया गया । उच्च वर्णों में विधवा विवाह की प्रथा पूर्णतया समाप्त हो गयी और खानपान के सम्बन्ध में भी अनेक प्रतिबन्धों का पता चलता है। अछूतों को नगर से बाहर रहने के लिए बाध्य किये जाने की सूचनाऐं भी मिलती हैं। इन्हीं परिस्थितियों में भारत में इस्लाम का आगमन हुआ।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई्र का उद्देश्य आपको को भारत में इस्लाम का आगमन तथा भारतीय संस्कृति में इस्लाम के प्रभाव से परिचित कराना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

अरब संस्कृति एवं भारतीय संस्कृति का परस्पर प्रभाव

तुर्क- अफगान संस्कृति एवं भारतीय संस्कृति का परस्पर प्रभाव

1.3 अरब संस्कृति तथा भारत

भारत में सैद्धान्तिक रूप से देखा जाय तो इस्लाम धर्म, अरब व्यापारियों के साथ अपने बाल्यकाल में ही आ गया था। आठवीं तथा नवीं शताब्दियों में अरब लोग बड़ी संख्या में दक्षिणी भारत के पूर्वी तथा पश्चिमी तटों पर व्यापारिक गतिविधियों के लिए बस गये थे। यहीं पर प्रथम बार हिन्दू तथा इस्लाम दोनों धर्मों का सम्पर्क हुआ और उन्होंने एक-दूसरे को प्रभावित करना आरम्भ कर दिया। उत्तर-भारत अरबों की सिन्ध विजय तक इस्लामी प्रभाव से मुक्त रहा था। डॉ0 ताराचन्द्र का तो यहां तक कहना है कि शंकराचार्य (788ई.-820ई.) पर भी इस्लामी धर्मशास्त्र का प्रभाव पड़ा था, लेकिन इस विचार को मानने में यह कठिनाई है कि यदि शंकराचार्य ने अपना अद्वैतवाद का सिद्धान्त इस्लाम से ग्रहण किया तो उन्होंने मूर्तिपूजा का जिसका सभी मुसलमान कट्टर विरोध करते हैं, क्यों खण्डन नहीं किया? अरब विजय का सांस्कृतिक क्षेत्र में बहुत अधिक महत्व है। इस काल में भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति इतनी उन्नत थी कि उसके सामने अरब निवासी बिल्कुल असभ्य तथा बर्बर कहे जा सकते थे। अरबवासियों पर भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। अरबों ने भारतीय विद्वानों तथा साहित्यकारों का बड़ा आदर किया। भरतीय दर्शन, ज्योतिष, चित्रकारी आदि कलाओं के विशेषज्ञों ने भी मुसलमानों को बहुत आधिक प्रभावित किया। भरतीयों के सम्पर्क में आकर उन्होंने इन सभी विधाओं का ज्ञान प्राप्त किया। खलीफा हारून रशीद ने एक असाध्य रोग की चिकित्सा करने के लिये भारत से एक वैद्य को भी बुलाया था जिसको अपने कार्य

में सफलता प्राप्त हुई और जो सुरक्षित स्वदेश वापिस लौट आया। खलीफा हारून रशीद भारतीय साहित्य का प्रेमी था तथा विद्वानों का आदर करता था। उसने अनेक भारतीय विद्वानों को अपनी राजधानी बगदाद में आमन्त्रित किया और उनकी सहायता से विभिन्न शास्त्रों का अनुवाद अरबी भाषा में करवाया, अरबवासियों के द्वारा इस ज्ञान का यूरोप में भी बहुत अधिक प्रचार हुआ। अतः कहा जा सकता है कि अरबवासियों के प्रयत्न के कारण ही भारत की सभ्यता तथा संस्कृति न केवल मध्य एशिया में ही फैली,वरन् यूरोप के विभिन्न देशों को भी प्रभावित करने में सफल हुई। खलीफा मंसूर के शासन काल में भी भारत के बहुत से विद्वान बगदाद गये। अरब भारत से '' ब्रहम सिद्धान्त'' तथा ''खण्ड खण्डयायक'' नामक ग्रन्थ बगदाद ले गये, जहॉं उसका अरबी में अनुवाद किया गया। अरबवासियों को अंकों का ज्ञान भारतीयों से प्राप्त हुआ। इसी कारण उन्होंने उसका नाम – हिन्दसा-रखा । इस प्रकार यह कहना गलत नहीं होगा कि भारत मध्य काल में अरबों के गुरू पद पर आसीन था। हैवेल नामक इतिहासकार ने भी लिखा है कि ''भारतवर्ष ने अरबों को बहुत सी विद्याओं का ज्ञान करवाया तथा उनके साहित्य और कला को विशेष रूप से प्रभावित किया। बाद में अरबवासियों का भारत से सम्पर्क कम होने लगा और वे यूनान की सभ्यता तथा संस्कृति से प्रभावित हुए, किन्तु आरम्भ में उनको सभ्यता की ओर अग्रसर करने का श्रेय भारत को ही प्राप्त है।

1.4 सल्तनत युग और भारतीय संस्कृति

उत्तर भारत में अरब, तुर्क तथा अफगानों की उपस्थिति का हमारे धार्मिक विचारों तथा क्रियाओं पर कोई क्रान्तिकारी प्रभाव नहीं पड़ा। भक्ति आन्दोलन के विषय में भी हम जानते हैं कि यह हिन्दू धर्म तथा इस्लाम के सीधे सम्पर्क का परिणाम नहीं था। इस युग में देश की बहुसंख्यक जनता जहॉं तक उसके धार्मिक विचारों तथा अनुष्ठानों का सम्बन्ध था, पूर्णतया राजनीतिक उठापटक से अप्रभावित रही। संतों,सूफियों एवं अनेक शासकों ने दोनों धर्मों तथा सम्प्रदायों में समन्वय स्थापित करने का समय-समय पर प्रयत्न किया। उत्तर तथा दक्षिण दोनों जगह सामान्य जनता तथा शासक वर्ग ने इन नये लोगों का स्वागत एवं उनके साथ उदारता का व्यवहार किया। देश के प्रायः सभी स्थानों में विदेशियों को सम्मानपूर्ण स्थान मिला और उन्हें स्वतन्त्रतापूर्वक अपने धर्म के पालन एवं प्रसार की अनुमति दी गयी। इसलिए सामाजिक नियमों को अधिक जटिल बनाने का प्रयत्न किया गया। दैनिक जीवन के नियमों को भी कठोरता से निर्धारित किया गया। श्रुतियों में आचार-विचार के नये नियम बनाये गये। माधव, विश्वेश्वर आदि विद्वानों ने टीकाऐं लिखीं और जनता के लिए कठोर धार्मिक जीवन का विधान किया।मुसलमानों के भय से बाल-विवाह प्रचलित हो गया। हिन्दुओं में भी पर्दा प्रथा कठोरता से लागू की गयी। खानपान तथा विवाह के सम्बन्ध में भी अत्यधिक जटिल नियम बनाये गये। दूसरे, सुधारकों ने इस्लाम के कुछ लोकतान्त्रिक सिद्धान्तों को ग्रहण कर लिया, जातियों की समानता पर जोर दिया गया और कहा कि जाति मोक्ष के मार्ग में

बाधक नहीं हो सकती। इसी प्रकार भारतीय साहित्य पर भी कुछ प्रभाव पडा, यद्यपि वह बहुत गहरा नहीं था। इस काल में बहुत कम हिन्दुओं ने अरबी तथा फारसी का अध्ययन किया, संस्कृत तथा हिन्दी ग्रन्थों की विषयवस्तु अथवा शैली पर इस्लाम का कोई विशेष प्रभाव नहीं मिलता है। अमीर खुसरो के बाद दिल्ली में कोई उल्लेखनीय संगीतज्ञ नहीं हुआ, इसलिए भारतीय संगीत पर इस्लामी विचारों का प्रभाव नहीं पड़ा। दिल्ली के प्रारम्भिक तुर्क-अफगान शासकों को चित्रकला से किसी प्रकार का नहीं प्रेम था, इस्लाम में संगीत तथा जीवित वस्तु के चित्र-निर्माण में पाबंदी थी। भारतीय चित्रकला विदेशियों की उपस्थिति से प्रभावित हुए बिना अपने ढंग से विकसित होती रही। कुछ इतिहासकारों के अनुसार तुर्क-अफगान शासन का हिन्दुओं के चरित्र पर दूषित प्रभाव पड़ा। उनके अनुसार उच्च तथा मध्य वर्ग के लोगों को प्रतिदिन शासकों के सम्पर्क में आना पड़ता था, इसलिए जीवन निर्वाह करने के लिए उन्हें धर्म, संस्कृति तथा अन्य विषयों के सम्बन्ध में अपने विचार तथा भावनाऐं छिपानी पड़ती थीं, इससे उनके चरित्र में दास-भाव तथा चाटुकारिता का समावेश हो गया।अनेक देशवासी कपटी तथा प्रवंचक हो गये। यही कारण था कि हिन्दू चरित्र, आचरण की सरलता, वीरता, साहस आदि गुणों को खो बैठे।

1.4.1 धर्म एवं संस्कृति

यद्यपि उत्तर भारत में तुर्क शासन स्थापित हो गया ,हिन्दू शासक एक-एक कर पराजित कर दिये गये और इस्लाम की राजनीतिक विजय स्थापित हो गयी लेकिन इसके साथ ही दो विरोधी धर्म और संस्कृतियों के बीच भी आपसी टकराव प्रारंभ हुए, जिसमें अधिक श्रेष्ठ और विकसित भारतीय संस्कृति ने इस्लाम की मान्यताओं पर अधिक प्रभाव किया। तुर्क अफगान विजेता हिन्दू धर्म तथा संस्कृति के प्रभाव से अपने को पूर्णतया मुक्त रखना चाहते थे, किन्तु ऐसा करना उनके लिए भी सम्भव न हो सका। जिन हिन्दुओं ने इस्लाम अंगीकार कर लिया वे अपने साथ अपने पूर्वजों के विचारों तथा रीति-रिवाजों को भी लेते गये। भक्ति-आन्दोलन यद्यपि हिन्दुत्व तथा इस्लाम के सम्पर्क का प्रत्यक्ष फल नहीं था, फिर भी कुछ हद तक उस पर इस्लाम की उपस्थिति का प्रभाव पडा । अनेक सुधारकों और आचार्यों ने तो हिन्दुओं और मुसलमानों में खुले रूप से एकता तथा मैत्री का उपदेश दिया। इनमें निर्गुण भक्तिधारा के संत प्रमुख थे। कबीर तथा नानक ने इस तथ्य पर जोर दिया कि हिन्दुत्व तथा इस्लाम एक ही उद्देश्य की प्राप्ति के दो भिन्न मार्ग हैं और राम तथा रहीम, कृष्ण तथा करीम और अल्लाह तथा ईश्वर एक ही ब्रहम के अलग-अलग नाम हैं। उन्होंने कर्मकाण्ड तथा धर्म के वाह्य आडम्बरों की निन्दा की और भक्ति तथा जीवन की पवित्रता पर जोर दिया। भारत में इस्लाम की उपस्थिति के प्रमुख रूप से दो प्रभाव पड़े। प्रथम, इस्लाम के प्रचार सम्बन्धी उत्साह ने जिसका उद्देश्य हिन्दू जनता पर विदेशी धर्म लादना था, भारतीय जनता की अनुदार प्रवृत्तियों को पुष्ट किया। हिन्दू नेताओं को विश्वास हो गया कि विचारों और व्यवहार में कट्टर होना ही अपने धर्म तथा समाज को इस्लाम के आघात से बचाने का एकमात्र मार्ग है। सुधारकों ने ईश्वर तथा सभी धर्मों की

मौलिक एकता का उपदेश दिया; इनके प्रभावस्वरूप मुसलमानो में फकीरों, पीरों तथा मकबरों की पूजा प्रचलित हो गयी, वास्तव में यह हिन्दुओं में प्रचलित ग्राम देवता तथा जातीय देवताओं की पूजा का ही दूसरा रूप था, जिसने भारतीय मुसलमानों को भी अत्यधिक प्रभावित किया। मुसलमानों में रहस्यवाद की विचारधारा ने भी प्रभाव डाला, विशेषकार सूफी पंथ को हिन्दू वेदान्त से प्रेरणा मिली । कुछ मुसलमान विद्वानों ने योग, वेदान्त आदि हिन्दू दर्शनों का अध्ययन किया। इस काल में धार्मिक क्षेत्र में भी अधःपतन होने लगा था। शंकराचार्य ने हिन्दू धर्म को पुनः संगठित किया था और उसे एक सुद्ढ़ दार्शनिक आधार पर खड़ा किया थाए किन्तु सामाजिक दोषों को वे भी दूर नहीं कर सके। इस युग में वाममार्गी सम्प्रदायों की लोकप्रियता बढ़ने लगी। इन संप्रदायों में सुरापान, मांसाहार, व्यभिचार आदि दुर्व्यसन आम थे। उनका दुष्प्रभाव भी समाज में पड़ रहा था। उनके दूषित विचार शिक्षा संस्थाओं में भी प्रवेश कर गय थे, विशेषकर बिहार में विक्रमशिला के विश्वविद्यालय में तन्त्रवाद एवं वाममार्गी शिक्षा का बोलबाला बड़ रहा था। इस काल में सन्यासियों का महत्व घट रहा था, यद्यपि साधारण जनता की उनके प्रति श्रद्धा बनी रही। देवदासी प्रथा इस युग का एक महान दोष थी। प्रत्येक मन्दिर में देवता की सेवा के लिए अनेक अविवाहित लड़कियां रखी जाती थीं। इससे भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिल रहा था और वैश्यागमन मन्दिरों में एक सामान्य नियम बन गया था । निकृष्ट कोटि की अश्लीलता से पूर्ण तान्त्रिक साहित्य की इस युग में अधिक वृद्धि हुई। हमारे नैतिक जीवन पर इसका दूषित प्रभाव पड़ा। इस काल में महानतम विद्वानों के लिए अश्लील ग्रन्थ रचना बुरा न माना जाता था। काश्मीर के राजा क्षेमेन्द्र ने समय मैत्रक अर्थात वैश्या की आत्मकथा नामक ग्रन्थ रचा। इस प्रकार की सब चीजों ने समाज के उच्च तथा मध्यम वर्गों के लोगों को भ्रष्ट कर दिया। सम्भवतः साधारण जनता प्रचलित साहित्य और वाममार्गी धर्म के दूषित प्रभाव से मुक्त रही।

1.4.2 समाज एवं संस्कृति

शासन के क्षेत्र में भी तुर्कों ने भारत में पहले से प्रचलित अनेक संस्थाओं तथा परिपाटियों को ग्रहणकिया, विशेषकर उन व्यवस्थाओं को जिनका सम्बन्ध वित्त तथा राजस्व विभागों से था। युद्धों में भारतीय हथियारों का प्रयोग करना भी उनके लिए अनिवार्य हो गया। इस्लामी स्थापत्य का जिसे विदेशी अपने साथ लाये, भारतीय कला परम्पराओं और हिन्दु कारीगरों के प्रभाव के कारण रूपान्तरण हो गया और उसका शुद्ध इस्लामी रूप जाता रहा।। कुछ मुसलमान विद्वानों ने हिन्दू चिकित्सा पद्धति तथा ज्योतिष सीखी। तुर्क-अफगान शासकों को भारतीय भोजन अपनाना पड़ा और उन्होंने राजपूत दरबारों की तड़क भड़कपूर्ण रस्मो-रिवाजों को भी अपने दरबारी जीवन में पर्याप्त स्थान दिया। दिल्ली सल्तनत के शासकों तथा प्रान्तीय शासकों ने जिन इमारतों का निर्माण करवाया वे हिन्दू तथा विदेशी मुसलमानों की संयुक्त प्रतिभा और प्रयत्नों का फल थी। यद्यपि शासकों ने फारसी को दरबारी भाषा बनाया, लेकिन उनके लिए देशी भाषाओं से समझौता करना आवश्यक हो गया क्योंकि उनके सैनिकों में एक मिश्रित भाषा का प्रचलन हो रहा था, जिसे परिणामस्वरूप उर्दू का

जन्म हुआ। इस प्रकार पारस्परिक सम्पर्क के कारण धीरे-धीरे भाषाओं का समन्वय हुआ। इसी प्रकार मुसलमानों के रीति रिवाजों तथा शिष्टाचार में भी गम्भीर परिवर्तन हुए। देश के अनेक भागों में भारतीय मुसलमानों ने अपनी मूल जाति को बनाये रखा। कुछ कुलीन मुसलमान परिवारों में हिन्दुओं की सती प्रथा तथा जौहर की प्रथाओं को अपनाने के प्रमाण भी मिलते हैं। इस्लाम ने हिन्दू संस्कृति में जितना प्रभाव डाला उससे कहीं अधिक परिवर्तन हिन्दू संस्कृति ने इस्लाम में कर दिया।

सभी इतिहासकार एवं विद्वान इस बात को मानते हैं कि प्राचीन हिन्दू समाज की पाचन शक्ति अत्यधिक तीव्र थी उन्होंने यूनानी, शक, हूण, कुषाण आदि प्रारम्भिक आक्रमणकारियों को अपने समाज में पूर्णरूप से आत्मसात कर लिया। किन्तु इसके विपरीत वही हिन्दू संस्कृति, तुर्क-अफगान आदि मुस्लिम विदेशियों का हिन्दूकरण करने में असमर्थ रहा। कुछ विद्वानों का मानना है कि हमारे पूर्वजों ने इन नवागन्तुकों को अपने में आत्मसात करने का प्रयत्न ही नहीं किया और यदि हिन्दुओं ने मुसलमानों को अवसर दिया होता तो वे भारतीय दृष्टिकोण, भावनाऐं तथा जीवन प्रणाली को अवश्य ही अपना लेते किन्तु हिन्दुओं ने उन्हें अपने से दूर रखा और उनसे खानपान तथा विवाह आदि का सम्बन्ध नहीं कायम किया। लेकिन यह मत पूर्णतया सही प्रतीत नहीं होता है। क्योंकि हम जानते हैं कि प्रारम्भ में हिन्दू जनता तथा शासकों ने अरबों और तुर्कों के साथ अत्यधिक उदारता का व्यवहार किया था। दक्षिण भारत में जहॉं 8वीं शताब्दी में ही अरब लोग बड़ी संख्या में आकर बस गये थे, हमारे शासकों ने उन्हें व्यापारिक सुविधाऐं ही नहीं दीं बल्कि हिन्दुओं को इस्लाम अंगीकार करने के लिए प्रोत्साहित भी किया। कालीकट के शासक जमोरिन ने आज्ञा दे रखी ।थी कि उसके राज्य में जितने भी मछुआरों के परिवार हैं उनमें से प्रत्येक में एक अथवा अधिक पुरूष सदस्यों का मुसलमानों की भॉंति पालन पोषण किया जाय। परवर्ती युग के यूरोपीय व्यापारियों की भॉंति अरबों को कुछ व्यापारिक विशेषाधिकार मिले हुए थे जो स्वदेशी व्यापारिक समुदाय को नहीं प्राप्त थे। हम यह भी जानते हैं कि इस काल के सन्तों तथा आचार्यों ने सिखाया था कि हिन्दू धर्म तथा इस्लाम एक ही उद्देश्य तक पहुंचने के लिए दो अलग-अलग मार्ग हैं। उन्होंने कहा कि राम और रहीम, कृष्ण और करीम, अल्लाह तथा ईश्वर एक ही शक्ति के विभिन्न नाम हैं। उन्होंने पुरोहितों के कर्मकाण्ड तथा बाहयआडम्बरों की निन्दा करके तथा भक्ति पर बल देकर हिन्दू तथा मुसलमान दोनों सम्प्रदायों में एकता और मैत्री स्थापित करने का हृदय से प्रयत्न किया। विदेशी मुसलमानों का आदर तथा सम्मान ही नही किया गया, बल्कि इस्लाम अंगीकार करने वाले भारतीयों के साथ भी निम्न जातियों के हिन्दुओं की अपेक्षा अधिक अच्छा तथा सम्मानपूर्ण व्यवहार किया गया। लेकिन उन्होंने उनके साथ खानपान तथा विवाह का सम्बन्ध नहीं कायम किया। हिन्दुओं का शरीर,वस्त्रों, निवास स्थान तथा मन की शुद्धता और स्वतन्त्रता में सदैव से विश्वास रहा है। इसके विपरीत, तुर्क तथा अफगान बल्कि भारतीय मुसलमानों में भी रेगिस्तानी अरबों जैसा जीवन के अनुकरण का आग्रह था। हिन्दू अधिकतर निरामिषभोजी थे,वे गो मांस खाना पाप मानते थे। जबकि मुसलमान शत

प्रतिशत मांसाहारी थे और गो-वध तथा गो-मांस भक्षण त्यागने को उद्यत नहीं थे। वे भक्ति के मार्ग को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे। उन्हें अपने धर्म पर गर्व था इसलिए उनका व्यवहार इस्लाम के कट्टर प्रचारकों जैसा था। उनमें विजेताओं के अनुरूप अहंकार था और इसलिए अपने पृथक व्यक्तित्व को बनाये रखने के लिए वे दृढ प्रतिज्ञ थे। यदि हिन्दू उन्हें म्लेच्छ कहते थे तो वे हिन्दुओं को काफिर कहकर उनका तिरस्कार करते थे। हिन्दू धर्म प्रचारकों तथा आचार्यों को उन लोगों पर सफलता नहीं मिल सकती थी जो इस्लाम से च्युत होने वालों तथा मुसलमानों को अपना धर्म छोड़ने के लिए फुसलाने वालों को मृत्युदण्ड का अधिकारी समझते थे। सल्तनत युग का इतिहास इन प्रमाणों से भरा पड़ा है कि यदि कोई हिन्दू जिसने इस्लाम अंगीकार कर लिया था, पुनः अपने पूर्वजों के धर्म को वापस लौटने की इच्छा करता तो सल्तनत के कानूनों के अनुसार उसे मृत्युदण्ड दिया जाता था। इसी प्रकार यदि कोई हिन्दू यह कहने का साहस करता कि हिन्दू धर्म तथा इस्लाम धर्म दोनों समान रूप से अच्छे धर्म हैं तो उसे भी प्राणदण्ड दिया जाता था। मुसलमान, हिन्दू लड़कियों से विवाह करने के पहले उन्हें मुसलमान बना लेते थे, और यदि कोई हिन्दू किसी मुस्लिम स्त्री से विवाह करता तो उसे भी वे पहले इस्लाम धर्म स्वीकार करने पर विवश किया जाता था। मुसलमानों की इस हठधर्मिता के कारण भिन्न धर्मों के परिवारों और मुसलमान परिवार में वैवाहिक सम्बन्ध कायम होना असम्भव हो जाता था। दोनों समुदायों के अन्तर्विलयन में बाधा का संभवतः यह सबसे बड़ा कारक था। प्रारम्भिक तुर्कों तथा अफगानों ने अपने खानपान सम्बन्धी बहिष्कार को बुरा भी नहीं माना; बल्कि हिन्दुओं के इस विश्वास से स्वयं लाभ उठाया, यदि कभी कोई हिन्दू निषिद्ध भोजन कर लेता तो उस व्यक्ति को निषिद्ध भोजन कर लेने के कारण भ्रष्ट घोषित कर हिन्दू रहने योग्य नहीं माना जाता था। ऐसी स्थिति में उस व्यक्ति के पास इस्लाम ग्रहण करने के अलावा कोई चारा नहीं रहता था। अतः उस काल में सुधारकों, आचार्यों तथा जनता ने भारतीयों तथा विदेशियों में एकता कायम करने के जो प्रयत्न किये, उनका निष्फल होना अनिवार्य था।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

कृपया निम्नांकित प्रश्नों के आगे सत्य/असत्य लिखिए।

1. शंकराचार्य का जन्म 788ई. तथा मृत्यु 820ई. में हुई थी
2. अरबवासियों ने भारतीय का अंकों का नाम हिन्दसा रखा
3. विक्रमशिला विश्वविद्यालय तन्त्रवाद एवं वाममार्गी शिक्षा का केन्द्र था
4. इस काल में संतों ने दोनों धर्मों तथा सम्प्रदायों दूर रखने का समय-समय पर प्रयत्न किया
5. देवदासी प्रथा इस युग में प्रचलित नहीं हुई थी

6. इस काल में शासकों में एक मिश्रित भाषा का प्रचलन हो रहा था, जिसे परिणामस्वरूप उर्दू का जन्म हुआ

1.5 सारांश

इस युग प्रथम बार आम हिन्दू और मुसलमान परिस्थितियोंवश एक साथ रहने को विवश हुए थे, इसके परिणामस्वरूप दोनों समुदायों की जीवन प्रणाली में अनेक परिवर्तन दृष्टिगोचर हुए। खानपान, रहन-सहन, वेशभूषा, वस्त्र-विन्यास, कला, स्थापत्य, संगीत, भाषा, रीति-रिवाजों आदि क्षेत्रों में परस्पर आदान-प्रदान हुआ और हिन्दू तथा मुसलमान दोनों ही समुदायों ने एक-दूसरे से बहुत कुछ सीखा, इसी काल में समन्वित संस्कृति की आधारशिला पड़ी। लेकिन इन सबके बावजूद भी यह युग सामाजिक परिवर्तनों का तो कहा जा सकता है,लेकिन सामाजिक विकास का नहीं कहा जा सकता है।

1.6 पारिभाषिक शब्दावली

दर्रा- अभेद्य पर्वत श्रृंखला के बीच मार्ग

अद्वैतवाद- इस वाद के अनुसार ईश्वर एक है

निर्गुण- इस सिद्धांत के अनुसार ईश्वर निराकार है

वेदान्त- उपनिषदों में व्यक्त ज्ञान

जौहर- स्त्रियों द्वारा आत्मदाह करने की प्रथा

1.7 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

भाग 1.4.2 के प्रश्न 1 का उत्तर- सत्य
भाग 1.4.2 के प्रश्न 2 का उत्तर- सत्य
भाग 1.4.2 के प्रश्न 3 का उत्तर- सत्य
भाग 1.4.2 के प्रश्न 4 का उत्तर- असत्य
भाग 1.4.2 के प्रश्न 5 का उत्तर- असत्य
भाग 1.4.2 के प्रश्न 6 का उत्तर- असत्य

1.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Habibullah, A.B.M. – *Foundation of Muslim Rule in India*

2. Prasad Ishwari – *History of Medieval India*
3. Haig ,Woolseley : Cambridge History of India, vol.III
4. Elliot & Dowson: History of India etc. vol. II &III
5. पाण्डेय, विमल चन्द्र - मध्यकालीन भारत का इतिहास
6. एल.पी.शर्मा – भारत का इतिहास 1000-1761ई.
7. आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव- मध्यकालीन भारत का इतिहास

1.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. पाण्डेय, विमल चन्द्र - मध्यकालीन भारत का इतिहास
2. शर्मा एल.पी. – भारत का इतिहास (1000-1761 ए.डी.)
2. Haig ,Woolseley : Cambridge History of India, vol.III
3. Elliot & Dowson: History of India etc. vol. II &III

1.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. इस्लामिक संस्कृति तथा भारतीय संस्कृति के पारस्परिक आदान-प्रदान की चर्चा कीजिए।

इकाई दो- अरब आक्रमण के समय भारत की स्थिति तथा अरबों के आक्रमणों का प्रभाव

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 सिन्ध राज्य की तत्कालीन स्थिति

2.3.1 मुहम्मद-बिन-कासिम का आक्रमण

2.3.2 सिन्ध तथा मुल्तान पर अरबों की विजय (711-713 ई0)

2.3.3 आक्रमण के कारण

2.4 अरब आक्रमण का प्रभाव

2.4.1 राजनीतिक प्रभाव

2.4.2 सांस्कृतिक प्रभाव

2.4.3 धार्मिक प्रभाव

2.5 साराशं

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

2.7 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

2.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

2.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

2.10 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

भारत की शस्यश्यामला धरती ने भारत को विश्व के उन देशों में स्थान दिया है जहां प्रकृति मनुष्य के लिए वरदान साबित हुई और अपनी गोद से वे सभी चीजें यहां के निवासियों को प्रदान की जो किसी देश को आर्थिक सुसम्पन्नता प्रदान करती हैं। प्राचीन भारत के इतिहास के अध्ययन से आपको अब यह जानकारी है कि इस देश में अति प्राचीन काल से आर्थिक सम्पन्नता के कारण बड़े-बड़े साम्राज्यों का उदय हुआ और प्राचीन काल से ही यहां वाह्य आक्रमण होते रहे,कुछ आक्रांता लूटपाट कर वापस लौट गये जबकि कुछ सदैव के लिए यहीं बस गये। इसी कारण कहा भी गया है कि 'कांरवां आते रहे और हिन्दोस्तां बसता रहा'।

भारत की सुसम्पन्नता वाह्य आक्रमणकारियों के लिए संभवतः सबसे बड़ा लालच था। भारतीय इतिहास के प्राचीन काल खण्ड की समाप्ति के साथ ही हम देखते हैं कि विश्व में भी अनेक परिवर्तन हो रहे थे, विशेषकर 622 ई0 में अरब देश में इस्लाम धर्म का जन्म हुआ था। इस नवीन धर्म के नये-नये अनुनायियों में इस धर्म को विश्व के सभी स्थानों में प्रसारित करने का अत्यधिक जोश था।

नवीन इस्लाम धर्म को प्रतिष्ठित करने के लिए इसके प्रचारकों ने विश्व के विभिन्न देशों में अभियान किये, धर्म के प्रचार के लिए इन्होंने बल का प्रयोग भी किया और जबर्दस्ती धर्म परिवर्तन को भी इन्होंने अपनाया। भारत भी इससे अछूता नहीं रहा। इन्हीं परिस्थितियों में भारत में अरब आक्रमण हुए।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य आपको को भारत में अरब आक्रमण इन आक्रमणों का भारत में प्रभाव से परिचित कराना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

- अरब आक्रमण की पूर्व संध्या में भारत की राजनीतिक स्थिति
- अरब आक्रमणों का भारत पर प्रभाव

2.3 सिन्ध राज्य की तत्कालीन स्थिति

मुहम्मद बिन कासिम के आक्रमण के समय भारत में विकेन्द्रीयकरण की भावना तेजी से बढ़ रही थी। इस काल में सिन्ध एक स्वतन्त्र राज्य था, जिसकी स्थापना चच ने की थी। मुहम्मद बिन कासिम के आक्रमण के समय सिन्ध में दाहिर शासन कर रहा था। सिन्धु राज्य चार प्रान्तों में विभक्त

था। प्रान्तीय शासकों को पर्याप्त अधिकार प्राप्त थे। राजा दाहिर में इतनी शक्ति तथा सामर्थ्य नहीं थी कि वह शक्तिशाली तथा सुसंगठित मुसलमानी सेना का सामना करने में सफल होता। उस समय सिन्ध की जनसंख्या केवल कुछ लाख ही थी। इसके साथ राजा दाहिर को जनता का भी पूर्ण सहयोग तथा समर्थन प्राप्त नहीं था। समस्त जनता विभिन्न वर्गों में विभाजित थी और उसमें एकता का सर्वथा अभाव था।

अरबवासियों ने खलीफा उमर के शासन काल में भारत के पश्चिमी तट पर आक्रमण करने तथा लूटपाट के लिये एक सेना 636-637 ई0 में भेजी, किन्तु इस सेना के समक्ष अनेक कठिनाइयां उपस्थित हुईं और उसे सफलता के स्थान पर अनेक मुश्किलों का सामना करना पड़ा था। अतः खलीफा उमर के शासन काल में पुनः भारत पर आक्रमण करने का विचार त्याग दिया गया। सन् 642-644 ई0 में उमैद खलीफाओं ने एक सेना द्वारा भारत पर पुनः आक्रमण किया। उस सेना ने किरमन को जीता और बाद में सिस्तान को अपने अधिकार में कर मकरान की ओर कूच किया। सिन्ध तथा मकरान के राजाओं ने सम्मिलित रूप से अरब सेना का विरोध किया, किन्तु उनको विशेष सफलता प्राप्त नहीं हुई। विजयी सेनापति अपने अभियान को आगे बढाना चाहता था, लेकिन उसे खलीफा की अनुमति नहीं मिली और उसको अपना विचार स्थगित करना पड़ा।

2.3.1 मुहम्मद-बिन-कासिम का आक्रमण

अरब भारत में इस्लाम धर्म का प्रसार तथा अपने साम्राज्य का विस्तार करने के लिए भारत विजय करने के लिये बड़े लालायित थे। वे भारत पर आक्रमण करने के अवसर की खोज में थे और उनको शीध्र ही एक स्वर्ण अवसर भी मिल गया। इतिहासकारों के अनुसार इस आक्रमण का एक कारण यह था कि सिन्ध के सामुद्रिक डाकुओं ने देवल के किनारे थट्टा नामक स्थान के पास अरबी जहाजों को लूट लिया था।एक लेखक के अनुसार ईसा की आठवीं शताब्दी के आरम्भ में कुछ अरब व्यापारियों तथा वहॉं के मुसलमान निवासियों की सिंहल (लंका) द्वीप में मृत्यु हुई। ये व्यापारी ईराक के निवासी थे। सिंहल द्वीप के राजा ने इन मृतक व्यक्तियों की अनाथ कन्याओं आदि को एक जहाज में ईराक के मुसलमान गर्वनर हज्जाम के पास भेजा। जब यह जहाज भारतीय समुद्रतट के समीप से ईराक की ओर प्रस्थान कर रहा था तो समुद्री डाकुओं ने जहाज पर छापा मारा और अनाथ कन्याओं को छीन लिया तथा जहाज को भी लूटा।एक अन्य लेखक का कथन है कि लंका के राजा ने जिसने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया था, खलीफा को इन जहाजों में बहुत सा धन भेजा था जिसको सिन्ध के सामुद्रिक डाकुओं ने लूट लिया था। तीसरे लेखक के अनुसार खलीफा ने दासियों तथा कुछ अन्य वस्तुओं के क्रय करने के उद्देश्य से अपने कुछ सेवकों को भारत भेजा था। जब इन्हें जहाजों में ले जाया जा रहा था तो उस जहाज को सामुद्रिक डाकुओं ने लूट लिया और जब यह समाचार हज्जाम

ने सुना तो उसने तुरन्त काठियावाड़ के हिन्दू राजा दाहिर से उन कन्याओं की मांग तथा क्षतिपूर्ति मांग की, किन्तु राजा दाहिर उसकी मांग पूरी न कर सका।

शुरू में खलीफा ने दो सेनायें ओबेदुल्ला तथा बदैल के नेतृत्व में भेजी,किन्तु उनकी सफलता प्राप्त नहीं हुई। अन्त में उसने अपने भतीजे तथा दामाद मुहम्मद-बिन-कासिम को एक विशाल तथा सुसंगठित सेना का नेतृत्व सौंप कर सिन्ध पर आक्रमण के लिये भेज दिया। इस समय मुहम्मद-बिन-कासिम केवल 17 वर्ष का था, किन्तु वह बड़ा वीर तथा साहसी था और प्रत्येक को उससे बड़ी आशायें थीं। इस सम्बन्ध में डाक्टर ईश्वरी प्रसाद कहते हैं कि ‘‘ एक ज्योतिषी ने मुहम्मद बिन कासिम को ही इस कार्य के लिये सबसे अधिक भाग्यशाली घोषित किया था।‘‘

2.3.2 सिन्ध तथा मुल्तान पर अरबों की विजय (711-713 ई0)

सिन्ध राज्य उत्तर में काश्मीर , पूरब में कन्नौज तथा दक्षिण में समुद्र तक फैला हुआ था। इसकी उत्तर-पश्चिमी सीमा में वर्तमान बलोचिस्तान का बहुत बड़ा भाग तथा मकरान का समुद्री तट सम्मिलित था। इसकी राजधानी अलोर (वर्तमान रोहेरा) थीं। उस काल में सिन्ध राज्य चार प्रान्तों में बंटा था और प्रत्येक प्रान्त एक अर्द्ध स्वतन्त्र गवर्नर के अधिकार में था। राजा के अधिकार में केवल राज्य का केन्द्रीय भाग ही था और प्रान्तों का वास्तविक अधिकार गवर्नरों के हाथ में था। ये गवर्नर सामन्त राजा कहलाते थे। सिन्ध का तत्कालीन राजा शूद्र बतलाया गया है और वह बौद्ध मत को मानता था। सातवीं शताब्दी के प्रारम्भ में फारस के राजा निमरोज ने सिन्ध पर हमला किया और एक युद्ध में वहॉ का शासक शेरियाज मारा गया। शेरियाज के उपरांत उसका पुत्र सहसी राय द्वितीय सिंहासन पर बैठा किन्तु उसका ब्राहमण मन्त्री चच उसकी हत्या कर स्वयं गद्दी का अपहरण कर लिया। इस अपहर्ता राजा ने सहसी राय द्वितीय की विधवा के साथ विवाह किया और गवर्नरों के विद्रोह को भी शान्त किया, उसने मकरान (वर्तमान बलोचिस्तान) के एक भाग को जीतकर उस प्रदेश के कन्दाविल पर भी अपना अधिकार जमा लिया। चच के बाद उसका भाई चन्द्र गद्दी पर बैठा किन्तु इसकी शीध्र ही मृत्यु हो गयी। इसके बाद चच के पुत्र दुराज तथा चच के ज्येष्ठ पुत्र दाहिर के बीच गद्दी के लिए संघर्ष हुआ। दुराज को पराजित कर दिया गया और देश निकाला दिया गया। सहसी राय द्वितीय की विधवा से उत्पन्न हुए चच के दोनों पुत्र दाहिर और दाहरसियाह ने राज्य को आपस में बांट लिया। कुछ समय उपरांत दाहरसियाह की मृत्यु के बाद सिन्ध का सम्पूर्ण राज्य दाहिर के अधिकार में आ गया परन्तु अरब विजय के समय इस राजनीतिक उथल-पुथल तथा गृह-कलह के कारण देश की दशा बहुत बिगड़ गयी थी। सिन्ध की जनसंख्या बहुत कम थी और उसमें भेदभाव एवं विभाजक तत्व अत्यधिक थे। निम्न श्रेणी की जनता के साथ शासकों का व्यवहार अत्याचारपूर्ण था, और सिन्ध में सामाजिक एकता का अभाव था। राज्य के आर्थिक साधन निर्बल थे और आय भी कम थी। सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि दाहिर स्वयं अपनी जनता में अप्रिय था क्योंकि उसका

पिता राज्य का वास्तविक अधिकारी नहीं था। अतः स्पष्ट है कि ऐसे अलोकप्रिय शासक और विभाजित राज्य को ही उस समय के सबसे बड़े और सबसे अधिक शक्तिशाली साम्राज्य के प्रबल आक्रमण का सामना करना पड़ा।

2.3.3 आक्रमण के कारण

भारत और अरब के बीच दीर्घकाल से व्यापारिक सम्बन्ध चले आ रहे थे और सातवीं शताब्दी में इस्लाम धर्म के अपनाने से पूर्व भी अरब के साहसिक, व्यापार तथा वाणिज्य के कारण हमारे पश्चिमी समुद्रतट के प्रदेशों में आवागमन करते थे, और स्थानीय जनता द्वारा उनका हार्दिक स्वागत किया जाता था।पश्चिमी समुद्रतटीय क्षेत्रों के राजा तथा प्रजा भौतिक समृद्धि के लिय अत्यन्त उत्सुक थे, अतः ये लोग इन विदेशियों के साथ उदारता का व्यवहार करते थे। अरबों द्वारा इस्लाम धर्म अपनाने पर भी इनके साथ भारतीय जनता और शासक वर्ग के व्यवहार में कोई अन्तर नहीं आया था, किन्तु धार्मिक एवं राजनीतिक परिवर्तनों के कारण अरबों के व्यवहार में अवश्य परिवर्तन आ गया था। मुहम्मद साहब की शिक्षाओं के कारण अरबों के हृदय में एक नया धार्मिक उत्साह भी भर गया था। यद्यपि अरबों का व्यापारिक दल हमारे देश से पहले की भांति ही व्यापारिक लाभ उठाता रहा था, किन्तु साधारण अरब निवासी के मन में विजय एवं इस्लाम के प्रचार की भावनाऐं उठने लगी थीं। उनका पहला आक्रमण बम्बई के निकट थाना को जीतने के लिए खलीफा उमर के काल में 636 ई0 (15 हिजरी) में हुआ था किंतु उन्हें पराजित कर खदेड़ दिया गया। इसके बाद भड़ौच, सिन्ध में देवल की खाड़ी तथा मकरान तट पर लगातार अरबों के हमले होते रहे क्योंकि वे उस समय सिन्ध के ही एक अंग थे। अनेक कठिनाइयों तथा पराजयों के बावजूद भी अरबों ने जल तथा थल से सिन्ध की सीमाओं पर हमले जारी रखे। उन्होंने बोलन दर्रे के चारों ओर के पहाड़ी प्रदेश को अपने आक्रमण का लक्ष्य बनाया, जहॉं जाट रहते थे और पशुपालन कर जीवन बिताते थे। उन उन्होंने अरबों का वीरता से मुकाबला कर देश की रक्षा की। सन् 659 ई0 में अल हेरिस को कुछ प्रारम्भिक सफलता मिली किन्तु 662 ई0 में यह पराजित कर मार डाला गया। इसके बाद 664 ई0 में अल मुहल्लब ने एक आक्रमण किया किन्तु यह सफल नहीं हो पाया।इसके बाद अब्दुल्ला ने आक्रमण किया जो हार गया और मार डाला गया। सिनान बिन सलामह को क्षणिक विजय अवश्य प्राप्त हुई किन्तु रशीद बिन अमीर को उसी प्रदेश के एक आक्रमण में अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा। अल मुधीर नामक एक दूसरे अरब साहसी का भी यही हाल हुआ। परन्तु इन लगातार पराजयों की कुछ भी चिन्ता न कर अरब निरंतर आक्रमण करते रहे। उन्होंने 9वीं सदी के प्रथम दशक में इब्न अल अरीहल के सेनापतित्व में एक भयानक हमला किया गया जिसके परिणामस्वरूप मकरान उसके हाथ में आ गया और अब खास सिन्ध की विजय का द्वार खुल गया। अल हज्जाज नामक इराक के अरब गवर्नर को अपनी उन्नत नीति के कारण खलीफा का समर्थन भी प्राप्त हो गया। उसने सेना का सुदृढ़ संगठन कर दाहिर पर लगातार दो हमले किये किन्तु दोनों बार उनके सेनापति उबैदुल्ला तथा

बुदैल पराजित हुए और मौत के घाट उतार दिये गये। हज्जाज इन पराजयों से बहुत दुखी हुआ और उसने अपने चचेरे भाई व दामाद इमाउद्दीन मुहम्मद बिन कासिम को एक विशाल एवं शक्तिशाली सेना के साथ सिन्ध पर आक्रमण करने के लिए भेजा। मुहम्मद बिन कासिम 17 साल का साहसी एवं महत्वाकांक्षी युवक था। शीराज से रवाना होकर वह मकरान पहुॅचा जो उस समय अरबों के अधिकार में था और वहॉ से पंजगुर, आर्मबिल तथा कौबती होता हुआ करॉची के पास देवल आया। उसका अभियान सफल हुआ और 712-13 ई0 में अरबों को सिन्ध पर विजय प्राप्त हुई। सिन्ध निरंतर 75 वर्ष से भी अधिक समय से अरब साम्राज्य का बड़ी बहादुरी से मुकाबला करता रहा किन्तु अन्त में उसे पराजय का मुंह देखना पड़ा।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

कृपया निम्नांकित प्रश्नों के आगे सत्य/असत्य लिखिए।

1. मुहम्मद बिन कासिम के आक्रमण के समय सिन्ध एक स्वतन्त्र राज्य था

2. सिन्ध के राजा दाहिर को जनता का पूर्ण सहयोग तथा समर्थन प्राप्त नहीं था

3. उमैद खलीफाओं के शासन काल में भारत के पश्चिमी तट पर आक्रमण करने तथा लूटपाट के लिये एक सेना 636-637 ई0 में भेजी गयी थी

4. उस काल में सिन्ध राज्य चार प्रान्तों में बंटा था

5. भारत में आक्रमण के समय मुहम्मद बिन कासिम 27 साल का साहसी एवं महत्वाकांक्षी युवक था।

2.4 अरब आक्रमण का प्रभाव

भारत में अरब आक्रमणों के फलस्वरूप दो विभिन्न धर्म एवं संस्कृति के लोग संपर्क में आये और परस्पर विचारों का आदान प्रदान हुआ, लेकिन हम कह सकते हैं कि उस समय भारतीय संस्कृति अत्यधिक उन्नत थी और अरबों ने इससे पर्याप्त विचार ग्रहण किये, इनका उल्लेख अग्रांकित है-

2.4.1 राजनीतिक प्रभाव

अरब विजय का भारत तथा सिन्ध की राजनीतिक स्थिति पर एक प्रकार से नगण्य प्रभाव पड़ा, क्योंकि उनकी यह विजय क्षणिक थी और मुहम्मद बिन कासिम की मृत्यु के कुछ समय बाद ही अरब सत्ता का भरत से अन्त हो गया और पुनः शासन सत्ता पर भारतीयों का अधिकार स्थापित

हो गया। अतः अरब विजय के राजनीतिक प्रभाव के विषय में कहा जा सकता है कि इसका कुछ काल की राजनीतिक अव्यवस्था के अतिरिक्त कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

2.4.2 सांस्कृतिक प्रभाव

अरब विजय का सांस्कृतिक क्षेत्र में बहुत अधिक महत्व है। इस काल में भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति इतनी उन्नत थी कि उसके सामने अरब निवासी बिल्कुल असभ्य तथा बर्बर कहे जा सकते थे। अरबवासियों पर भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। अरबों ने भारतीय विद्वानों तथा साहित्यकारों का बड़ा आदर किया। भरतीय दर्शन, ज्योतिष, चित्रकारी आदि कलाओं के विशेषज्ञों ने भी मुसलमानों को बहुत आधिक प्रभावित किया। भरतीयों के सम्पर्क में आकर उन्होंने इन सभी विधाओं का ज्ञान प्राप्त किया। खलीफा हारून रशीद ने एक असाध्य रोग की चिकित्सा करने के लिये भारत से एक वैद्य को भी बुलाया था जिसको अपने कार्य में सफलता प्राप्त हुई और जो सुरक्षित स्वदेश वापिस लौट आया। खलीफा हारून रशीद भारतीय साहित्य का प्रेमी था तथा विद्वानों का आदर करता था। उसने अनेक भारतीय विद्वानों को अपनी राजधानी बगदाद में आमन्त्रित किया और उनकी सहायता से विभिन्न शास्त्रों का अनुवाद अरबी भाषा में करवाया, अरबवासियों के द्वारा इस ज्ञान का यूरोप में भी बहुत अधिक प्रचार हुआ। अतः कहा जा सकता है कि अरबवासियों के प्रयत्न के कारण ही भारत की सभ्यता तथा संस्कृति न केवल मध्य एशिया में ही फैली,वरन् यूरोप के विभिन्न देशों को भी प्रभावित करने में सफल हुई। खलीफा मंसूर के शासन काल में भी भारत के बहुत से विद्वान बगदाद गये। अरब भारत से ‘‘ ब्रहम सिद्धान्त‘‘ तथा ‘‘खण्ड खण्डयायक‘‘ नामक ग्रन्थ बगदाद ले गये, जहॉं उसका अरबी में अनुवाद किया गया। अरबवासियों को अंकों का ज्ञान भारतीयों से प्राप्त हुआ। इसी कारण उन्होंने उसका नाम ‘‘हिन्दसा‘‘ रखा। इस प्रकार यह कहना गलत नहीं होगा कि भारत मध्य काल में अरबों के गुरू पद पर आसीन था। हैवेल नामक इतिहासकार ने भी लिखा है कि ‘‘भारतवर्ष ने अरबों को बहुत सी विद्याओं का ज्ञान करवाया तथा उनके साहित्य और कला को विशेष रूप से प्रभावित किया। बाद में अरबवासियों का भारत से सम्पर्क कम होने लगा और वे यूनान की सभ्यता तथा संस्कृति से प्रभावित हुए, किन्तु आरम्भ में उनको सभ्यता की ओर अग्रसर करने का श्रेय भारत को ही प्राप्त है।

2.4.3 धार्मिक प्रभाव

अरबों द्वारा भारत में इस्लाम धर्म का प्रचार हुआ जो सरलता तथा बन्धुत्व के कारण प्रसिद्ध है तथा एकेश्वरवाद में विश्वास करता है, किन्तु हिन्दुओं को अपनी सभ्यता एवं संस्कृति पर पूर्ण विश्वास था जिसके कारण इस काल में इस्लाम धर्म बहुत ही कम भारतीयों को अपनी ओर आकर्षित करने में सफल हुआ। केवल उन्हीं व्यक्तियों ने इस्लाम धर्म स्वीकार किया जो इस धर्म के स्वीकार करने के लिये शक्ति द्वारा बाध्य किये गये थे।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

कृपया निम्नांकित प्रश्नों के आगे सत्य/असत्य लिखिए।

1. अरब विजय का भारत तथा सिन्ध की राजनीतिक स्थिति पर भीषण प्रभाव पड़ा

2.खलीफा मंसूर ने एक असाध्य रोग की चिकित्सा करने के लिये भारत से एक वैद्य को भी बुलाया था

3. अरब भारत से '' ब्रहम सिद्धान्त'' तथा ''खण्ड खण्डयायक'' नामक ग्रन्थ बगदाद ले गये

4. अरबवासियों को अंकों का ज्ञान भारतीयों से प्राप्त हुआ

2.5 सारशं

अब आपको यह जानकारी हो गयी है कि मुहम्मद बिन कासिम के आक्रमण के समय भारत में विकेन्द्रीयकरण की भावना तेजी से बढ़ रही थी। समस्त जनता विभिन्न वर्गों में विभाजित थी और उसमें एकता का सर्वथा अभाव था। इसके साथ राजा दाहिर को जनता का भी पूर्ण सहयोग तथा समर्थन प्राप्त नहीं था। अरब भारत में इस्लाम धर्म का प्रसार तथा अपने साम्राज्य का विस्तार करने के लिए भारत विजय करने के लिये बड़े लालायित थे। इन्हीं परिस्थितियों में 712-13 ई0 में अरबों ने मुहम्मद बिन कासिम के नेतृत्व में सिन्ध पर आक्रमण हुआ और अरबों को सिन्ध पर विजय प्राप्त हुई। इस विजय का भारत तथा सिन्ध की राजनीतिक स्थिति पर एक प्रकार से नगण्य प्रभाव पड़ा, क्योंकि उनकी यह विजय क्षणिक थी। इस विजय का भारतीयों पर केवल ज्योतिष शास्त्र के क्षेत्र में प्रभाव पड़ा जबकि अरबवासियों पर भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विविध क्षेत्रों में बहुत गहरा प्रभाव पड़ा।

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

खलीफा - इस्लाम का सर्वोच्च धर्मगुरू, कमाल पाशा द्वारा 20वीं सदी के प्रारंभ में इस पद का अंत कर दिया गया।

द्वीप - चारों ओर से जल से घिरा भू-प्रदेश

कूच करना - युद्ध के लिए जाना

अपहर्ता राजा - वैध उत्तराधिकारी से गद्दी छीनकर गद्दी में बैठने वाला राजा

2.7 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

भाग 2.3.3 के प्रश्न 1 का उत्तर- सत्य

भाग 2.3.3 के प्रश्न 2 का उत्तर- सत्य

भाग 2.3.3 के प्रश्न 3 का उत्तर- असत्य

भाग 2.3.3 के प्रश्न 4 का उत्तर- सत्य

भाग 2.3.3 के प्रश्न 5 का उत्तर- असत्य

भाग 2.4.3 के प्रश्न 1 का उत्तर- असत्य

भाग 2.4.3 के प्रश्न 2 का उत्तर- असत्य

भाग 2.4.3 के प्रश्न 3 का उत्तर- सत्य

भाग 2.4.3 के प्रश्न 4 का उत्तर- सत्य

2.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Habibullah, A.B.M. – *Foundation of Muslim Rule in India*

2. Prasad Ishwari – *History of Medieval India*

3. पाण्डेय, विमल चन्द्र - मध्यकालीन भारत का इतिहास

4. Haig ,Woolseley : Cambridge History of India, vol.III

5. Elliot & Dowson: History of India etc. vol. II &III

2.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. पाण्डेय, विमल चन्द्र - मध्यकालीन भारत का इतिहास

2. Haig ,Woolseley : Cambridge History of India, vol.III

3. Elliot & Dowson: History of India etc. vol. II &III

2.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. भारत में अरब आक्रमण का परिचय देते हुए उसके प्रभावों का उल्लेख कीजिए।

इकाई तीन- महमूद गजनवी एवं मोहम्मद गौरी के आक्रमणों का प्रभाव

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 महमूद के आक्रमणों का प्रभाव

3.4 मुहम्मद गोरी के आक्रमण

3.4.1 1192 ई0 का तराइन का युद्ध

3.4.2 कन्नौज पर अधिकार

3.4.3 मुहम्मद गौरी तथा उसके सेनापतियों की अन्य विजयें

3.5 साराशं

3.6 पारिभाषिक शब्दावली

3.7 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

3.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

3.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

3.10 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

10 वीं सदी से तुर्क काबुल के हिन्दूशाही राज्य के सम्पर्क में आये और गजनवी वंश की स्थापना के 50 वर्ष पश्चात उन्होंने भारत में प्रवेश पा लिया। भारत में अन्दर तक प्रवेश पाने का प्रथम श्रेय गजनवी वंश के सुल्तान महमूद को जाता है। इसने सन् 1000 से लेकर 1027 ई0 तक हेनरी इलियट के अनुसार 17 आक्रमण किये।

द्वितीय महत्वपूर्ण आक्रमणकारी मुहम्मद गोरी था जिसनेमहमूद गजनवी के प्रायः 148 वर्ष पश्चात 1175 ई0 में अपना प्रथम आक्रमण भारत में किया और 1192 में पृथ्वीराज तृतीय को निर्णायक रूप से हराकर भारत में तुर्की साम्राज्य की नीवं डाली। मुहम्मद गोरी का अन्तिम आक्रमण 1206 ई0 में खोक्करों या इस्माइल विद्रोहियों के विरूद्ध सिन्ध में हुआ जहॉं उसका कत्ल कर दिया गया।

महमूद गजनवी के आक्रमण की पूर्व संध्या में उत्तरी भारत विभिन्न राज्यों में विभाजित था। डॉ0 ईश्वरी प्रसाद के अनुसार,‘‘इस समय भारत 16 वीं सदी के जर्मनी की भांति ऐसे राज्यों का समूह बन गया था जो अपने प्रत्येक उद्देश्य एवं कार्य के लिए स्वतन्त्र थे।‘‘ इनमें से कुछ राज्य शक्तिशाली भी थे परन्तु उनकी पारस्परिक प्रतिस्पर्धा उनकी मुख्य दुर्बलता थी जिसके कारण वे विदेशी शत्रु का मुकाबला मिलकर न कर सके। मुल्तान और सिन्ध में दो मुसलमानी राज्य थे। ब्राहमण हिन्दूशाही राज्य चिनाब नदी से हिन्दुकुश तक फैला था, जयपाल उसका साहसी, बहादुर और दूरदर्शी शासक था। अपने पड़ोसी गजनी राज्य को समाप्त करने के लिए उसने आक्रमणकारी नीति का पालन किया यद्यपि वह उसमें सफल न हो सका। महमूद के आक्रमणों का प्रथम और द्रढ़तापूर्वक सामना इसी राजवंश ने किया। इस समय काश्मीर में भी ब्राहमण वंश का शासन था, इसकी शासिका रानी दिद्दा थी। कन्नौज में प्रतिहार वंश का शासन था, इस समय यहॉं राज्यपाल का शासन था। 11 वीं सदी के आरंभ तक यह राज्य दुर्बल हो गया था, उसके सामन्त बुन्देलखण्ड के चन्देल, मालवा के परमार, और गुजरात के चालुक्त उसके आधिपत्य से मुक्त हो गये थे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई्र का उद्देश्य आपको को भारत में महमूद गजनवी तथा मुहम्मद गोरी के आक्रमणों का परिचय तथा इन आक्रमणों का भारत में प्रभाव से परिचित कराना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

महमूद गजनवी के आक्रमणों का परिचय तथा इन आक्रमणों का भारत में प्रभाव

3.3 महमूद के आक्रमणों का प्रभाव

महमूद के आक्रमणों का भारत पर कोई स्थायी प्रभाव नहीं पड़ा, क्योंकि उसके भारत पर आक्रमणों का मुख्य लक्ष्य,अपने गजनी के साम्राज्य विस्तार के लिए भारत की अतुल सम्पत्ति लूटना था। साथ ही साथ वह अपनी कट्टर सुन्नी प्रजा को इन अभियानों द्वारा यह भी दिखाना चाहता था कि उसने काफिरों के देश में आक्रमण कर जिहाद किया है।उसका लक्ष्य भारत पर राज्य स्थापित करना नहीं था। उसने उत्तरी भारत के पश्चिमी प्रदेशों के अनेक राजाओं को युद्ध में परास्त किया, अनेक भव्य तथा समृद्धिशाली नगरों तथा मन्दिरों का विध्वंश कर दिया और इस समस्त प्रदेश को आतंकित कर दिया,एवं विशाल मात्रा में धन की लूटपाट की।उसने पंजाब के अतिरिक्त किसी अन्य प्रदेश को अपने साम्राज्य का भाग नहीं बनाया और न उसकी उचित शासन व्यवस्था की ओर ही ध्यान दिया। इस सम्बन्ध में डाक्टर ईश्वरी प्रसाद का कहना है कि, 'धन के लोभ तथा लालच ने महमूद को अत्यन्त महत्वपूर्ण लाभों की ओर से अन्धा बना दिया था जो भारतीय विजय द्वारा विजेता को प्राप्त होते।' वह भारत में इस्लाम धर्म का भी प्रचार नहीं कर सका, क्योकि उसकी विध्वंसात्मक नीति ने हिन्दुओं में इस्लाम धर्म के प्रति अरूचि की भावना पैदा कर दी, जो भारत के हिन्दुओं में दीर्घ काल तक विद्यमान रहीं और प्रारंभ में जिसके कारण दोनों धर्मों का सामजंस्य असम्भव हो गया।

राजनीतिक दृष्टि से पंजाब का उसके गजनी राज्य में सम्मिलित होने के अतिरिक्त उसके आक्रमणों का कोई स्थायी परिणाम नहीं हुआ, किन्तु कुछ दूरगामी परिणाम हुये जिसके कारण भारत के इतिहास में आगे चलकर मुस्लिम राज्य स्थापित हो सका। भारत के अन्य स्थानों पर उसके आक्रमणों का प्रभाव शीध्र ही समाप्त हो गया। आगे की लगभग दो सदियों तक राजपूत शासक उत्तरी भारत के विभिन्न राज्यों में शासक बने रहे। महमूद गजनवी के आक्रमणों को उन्होंने एक आंधी या तूफान के समान समझा, जो आई और चली गई। महमूद गजनवी के आक्रमणों के अन्य मुख्य प्रभाव निम्नलिखित हैं -

1. **राजाओं की शक्ति पर प्रभावः-** महमूद ने कुल मिलाकर 17 आक्रमण किये थे। उसके निरन्तर आक्रमणों के कारण भारतीय नरेशों की सैनिक शक्ति को बहुत आघात पहुॅचा था,और भारी जन-धन की हानि उठानी पड़ी थी।

2. **सैन्य दुर्बलता:-** भारतीयों की राजनीतिक तथा सैन्य दुर्बलता का ज्ञान विदेशी आक्रमणकारियों को लग गया जिन्होंने बाद में उसका पूर्णरूप से लाभ उठाया। महमूद के साथ आये

अलबरूनी ने भारतीयों की इस काल में उत्पन्न कमजोरी का कारण उनका विदेशों से संपर्क न होना बताया है।

3. **अतुल सम्पत्ति का पलायनः-** महमूद गजनवी के आक्रमणों के द्वारा भारत की अतुल धन सम्पत्ति विदेश चली गई जिसके कारण भारत की आर्थिक स्थिति को विशेष धक्का पहुंचा। उसने हिन्दुओं के उन मन्दिरों को विशेष रूप से लूटा जिनमें शताब्दियों से एकत्रित किया हुआ अतुल धन संचित था।महमूद का समकालीन इतिहासकार उत्बी उसके अभियानों में लूटी गयी सम्पति का विवरण देता है। महमूद ने इस सम्पत्ति का प्रयोग अपनी पश्चिमी विजयों में किया।

4. **स्थापत्य कलाः-** महमूद ने अपने अभियानों के दौरान अनेक मन्दिरों ,महलों तथा भव्य भवनों को तोड़ डाला था जिसके कारण उत्तरी भारत की राजपूत शैली में विकसित स्थापत्य कला को बड़ी हानि पहुंची और स्थापत्य कला की अनेक अमूल्य धरोहरें सदैव के लिए समाप्त हो गयीं।

5. **पंजाब का गजनी साम्राज्य में विलयः-** भारत के प्रवेश द्वार पंजाब को महमूद ने अपने विशाल गजनी साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया। इससे पंजाब का भारत से कुछ समय के लिए सम्बन्ध विच्छेद हो गया।

6. **आक्रमण के लिये नये मार्ग का खुलनाः-** उत्तर-पश्चिम से भारत में आक्रमण के लिये महमूद गजनवी ने एक नया मार्ग खोल दिया और उत्तर-पश्चिम से आक्रांताओं को भारत के कुछ प्रदेशों में प्रवेश करने का अवसर प्राप्त हुआ। महमूद के आक्रमणों के उपरान्त भारत पर अन्य समस्त आक्रमण इसी मार्ग से हुये और आक्रमणकारियों को विशेष सफलता भी प्राप्त हुई। महमूद के आक्रमणों ने मुहम्मद गौरी के आक्रमणों के लिये मार्ग प्रशस्त करने का कार्य किया। कुछ विद्वानों की ऐसी धारणा है कि यदि महम्मद गौरी को महमूद गजनवी का निर्देशित मार्ग न मिला होता तो वह अपना कार्य इतनी आसानी से सम्पन्न नहीं कर सकता था।

भारत का ज्ञानः- महमूद ने भारत पर 17 आक्रमण किये जिनके कारण मुसलमानों को उत्तरी भारत के अधिकांश भाग का ज्ञान प्राप्त हो गया तथा उनको भारत की विभिन्न दुर्बलताओं के बारे में भी जानकारी प्राप्त हुई, जिससे भविष्य में होने वाले आक्रमणों के अवसरों पर आक्रमणकारियों ने विशेष लाभ उठाया।

3.4 मुहम्मद गोरी के आक्रमण

महमूद गजनवी के प्रायः 148 वर्ष पश्चात मुहम्मद गोरी का प्रथम आक्रमण 1175 ई. में मुल्तान में हुआ। इस समयान्तर के बावजूद भी उत्तरी भारत में विभिन्न राजवंशों में परिवर्तन होने के

अतिरिक्त कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ या यह कहा जा सकता है कि भारतीयों ने महमूद के आक्रमणों से कोई सबक नहीं लिया। राजनीतिक दृष्टि से भारत उस समय भी विभक्त था, निस्संदेह कुछ राजपूत वंश बहुत सम्मानित और शक्तिशाली थे परन्तु उनमें राज्य विस्तार की प्रतिस्पर्धा और वंशानुगत झगड़ों के कारण निरन्तुर युद्ध होते रहते थे, जिससे वे न तो अपनी शक्ति का सदुपयोग अपने और अपने राज्य के हित के लिए कर सके और न वे एक होकर विदेशी शत्रु का मुकाबला कर सके।

इस समय उत्तर-पश्चिम सीमा पर सिन्ध, मुल्तान और पंजाब के मुसलमानी राज्य थे। सिन्ध और मुल्तान के राज्य छोटे थे और पंजाब का गजनवी राज्य दुर्बल था। गिज-तुर्कों से पराजित होकर गजनवी सुल्तान खुशरवशाह गजनी से भागकर लाहौर आ गया था। भारत के अन्य सभी भागों में राजपूत शासक थे। गुजरात और काठियावाड़ में चालुक्य वंश का शासन था जिसके शासक मूलराज द्वितीय ने 1178 ई0 में मुहम्मद गोरी को पराजित किया था। दिल्ली और अजमेर में चौहान वंश का शासन था, यहॉं का शासक पृथ्वीराज तृतीय उत्तरी भारत के राजपूत शासकों में सर्वाधिक साहसी और महत्वाकांक्षी था। अपनी महत्वाकांक्षा के कारण प्रायः सभी राजपूत शासकों से उसकी शत्रुता हो गयी थी। गुजरात के चालुक्य वंश को उसने पराजित कर अपमानित किया, बुन्देलखण्ड के शासक परमर्दी देव को परास्त कर उसने उससे महोबा छीन लिया था और कन्नौज के गहड़वाल वंशी शासक जयचन्द्र की पुत्री संयोगिता से बलपूर्वक विवाह कर उसने कन्नौज की शत्रुता मोल ले ली थी। पृथ्वीराज तृतीय अपने युग का एक महान् साहसी योद्धा और सफल सेनानायक था, परन्तु उसमें दूरदर्शिता तथा राजनीतिज्ञता का अभाव था। इस कारण अपने मुसलमान शत्रु के विरूद्ध वह अपने किसी पड़ोसी से सहायता प्राप्त नहीं कर सका। कन्नौज के गहड़वाल वंश का राज्य उत्तर भारत में सबसे अधिक विस्तृत था। गोरी के विरूद्ध यहॉं के शासक जयचन्द्र ने अत्यधिक पराक्रम दिखाया था लेकिन छंदवाड़ नामक स्थान पर 1194 ई0 में वह अकेला मारा गया। बुन्देलखण्ड में चन्देल वंश तथा कलचुरि में चेदी वंश का शासन था।

3.4.1 1192 ई0 का तराइन का युद्ध

विस्सेन्ट स्मिथ के अनुसार सन् 1192 ई0 का तराइन का युद्ध एक निर्णायक युद्ध था, इसमें पृथ्वीराज तृतीय की निर्णायक हार हुई, जिसने भारत में मुसलमानों के आक्रमण की सफलता सुनिश्चित कर दी। वास्तव में इस कथन में बहुत सत्यता विद्यमान है। इसके उपरान्त धीरे-धीरे मुसलमानों ने समस्त उत्तरी भारत को अपने अधिकार में कर लिया। ईश्वरी प्रसाद के अनुसार 'यह राजपूत शक्ति पर घातक आघात था।' इसके द्वारा भारतीय समाज के समस्त अंगों का नैतिक पतन होना आरम्भ हो गया था जो समस्त राजपूत राजाओं को अपने नेतृत्व में संगठित कर मुसलमानों का सामना करता। डॉ0 आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव ने भी इन्हीं विचारों को व्यक्त किया। इस युद्ध में

विजयी होने से मुहम्मद गौरी को भारत के अन्य भागों पर अधिकार करने में बड़ी सहायता मिली। महमूद गजनवी के विपरीत मुहम्मद गोरी के आक्रमणों से भारत की राजनीतिक स्थिति में आमूलचूल परिवर्तन हो गया,यथा;

3.4.2 कन्नौज पर अधिकार

तराईन के द्वितीय युद्ध में विजयी होने के उपरांत इस विजय को आगे बढ़ाते हुए मुहम्मद गोरी ने झॉसी, कुहराम तथा सरसुती पर अधिकार किया और भारत की भूमि पर मुसलमानी राज्य की स्थापना की। उसने अजमेर को पृथ्वीराज के पुत्र के अधिकार में इस शर्त के साथ सौंप दिया कि वह प्रतिवर्ष उसको कर दिया करेगा और दिल्ली को भी तोमर वंश के एक राजकुमार को समान शर्त पर सौंप दिया। मुहम्मद गोरी ने कुतुबुद्दीन ऐबक के नेतृत्व में दिल्ली के समीप इन्द्रप्रस्थ में एक सेना छोड़ गयी जिसने बाद मेरठ, कोल और दिल्ली पर अधिकार किया। मुहम्मद गौरी स्वदेश वापिस चला गया। उसके चले जाने पर भारत में कुछ स्थानों में बगावत हुई , जिनका कुतुबुददीन ने कठोरता से दमन किया। इसके उपरान्त दिल्ली भारत में मुसलमानी राज्य की राजधानी घोषित हुई।

इन राज्यों पर अधिकार से ही मुहम्मद गौरी की विजय का अन्त नहीं हुआ। जब कुतुबुद्दीन राजपूतों के विद्रोह का दमन करने में व्यस्त था उस समय मुहम्मद गौरी फिर एक बार अपनी विशाल सेना लेकर भारत आया। इस बार उसका उद्देश्य कन्नौज और काशी को अपने अधीन करना था, जिस पर राठौर वंश के जयचन्द्र का अधिकार था। जयचन्द्र को अकेले ही मुसलमानी सेना का सामना करना पड़ा। इस युद्ध में केवल भाग्य के कारण मुहम्मद को विजय प्राप्त हुई। इस युद्ध में विजयी होने के परिणामस्वरूप उसके अधिकार में भारत का बहुत बड़ा भाग आ गया। उसने शीघ्र बनारस पर आक्रमण किया और उस पर भी अधिकार जमाया। मुहम्मद को यहॉ से अतुल धन तथा बहुत से हाथी प्राप्त हुए। उसने वहॉ बहुत से मन्दिरों को नष्ट-भ्रष्ट कर डाला और उनके स्थानों पर मस्जिदों का निर्माण करवाया।

मुहम्मद के गजनी जाने के उपरान्त उसके कार्य को उसके सेनापति कुतुबुद्दीन ऐबक ने पूरा किया। कोल में विद्रोह हुआ जिसका शीध्र दमन कर दिया गया। इसके उपरान्त अजमेर में विद्रोह हुआ। उसने अजमेर पर आक्रमण किया और अजमेर पर पुनः मुसलमानों का अधिकार स्थापित हो गया। कुतुबुद्दीन ने अजमेर को एक तुर्क मुसलमान सूबेदार के हाथ में सौंप दिया और पृथ्वीराज के पुत्र को रणथम्भौर का प्रदेश दे दिया।

3.4.3 मुहम्मद गौरी तथा उसके सेनापतियों की अन्य विजयें

मुहम्मद गौरी ने सन् 1195 ई0 में पुनः भारत पर बियाना तथा ग्वालियर के प्रदेशों को अपने अधिकार में करने के लिए आक्रमण किया।

1. **बियाना पर अधिकारः-** बियाना पर भट्टी राजपूतों का अधिकार था। यहाँ के राजा कुमारपाल ने मुहम्म्द गौरी के आक्रमण से भयभीत होकर उसकी अधीनता स्वीकार कर ली।

2. **ग्वालियर पर अधिकारः-** इसके बाद मुहम्मद गौरी ने ग्वालियर पर आक्रमण किया। ग्वालियर का दुर्ग अभेद्य समझा जाता था। मुहम्मद गौरी ने वहॉ के शासक से वार्षिक कर लेना स्वीकार कर उसने सन्धि की, कुछ समय उपरान्त मुसलमानों ने उस पर अधिकार कर लिया।

3. **अन्हिलवाडा की लूटमारः-** मुहम्म्द गौरी के भारतीय प्रतिनिधि कुतुबुद्दीन ने अन्हिलवाड़ा पर आक्रमण किया, राजपूतों ने बड़ी वीरता से उनका सामना किया, किन्तु वे पराजित हुये। कुतुबुद्दीन अन्हिलवाड़ा की लूटमार कर वापिस चला गया।

4. **बुन्देलखण्ड पर अधिकारः-** सन् 1201 ई0 में कुतुबुद्दीन ने बुन्देलखण्ड के प्रदेश पर आक्रमण किया। उसने कालिंजर के दुर्ग का घेरा डाला,यह दुर्ग भी बहुत दृढ था और उसकी गणना भारत के प्रसिद्ध दुर्गों में की जाती थी कुतुबुद्दीन ने दुर्ग में पानी पहुंचाने के मार्ग पर अधिकार कर दुर्ग में पानी की आपूर्ति बन्द कर दी। फलस्वरूप राजपूतों ने हथियार डाल दिये और दुर्ग पर मुसलमानों का अधिकार हो गया।

5. **बिहार की विजयः-** इसी काल में मुहम्मद गौरी का एक अन्य दास मुहम्मद बिन बख्तियार खजली पूर्वी विजयों में संलग्न था। उसे गंगा और सोन नदी के मध्य में एक जागीर भेंट स्वरूप प्रदान की गई थी। उसने बहुत से खिलजियों को अपनी सेना में भर्ती किया और बिहार के प्रदेश पर आक्रमण करने आरम्भ किये। अपनी शक्ति को दृढ़ करने के उपरान्त उसने बिहार की राजधानी उदन्तिपुर पर अधिकार कर वहॉ के विशाल भवनों को नष्ट-भ्रष्ट कर डाला। उसने नालन्दा विश्वविद्यालय तथा उसके पुस्तकालयों पर भी आग लगा दी। इसके उपरान्त उसने बिहार के अन्य प्रदेश पर अधिकार किया और समस्त बिहार उसके अधिकार में आ गया।

6. **बंगाल विजयः-** सन् 1204 ई0 में मुहम्मद बिन बख्तियार खजली ने बंगाल पर आक्रमण किया। वह अपनी सेना लेकर नदिया के द्वार पर पहुंच गया। उसके साथ उस समय केवल 18 व्यक्ति थे और उसकी सेना पीछे आ रही थी। वह दुर्ग में प्रवेश करने में सफल हुआ। इस समय राजा लक्ष्मणसेन दोपहर का भोजन करने के लिये बैठा ही था। जब उसने यह समाचार सुना तो वह पिछले द्वार से भाग गया। इसके बाद मुहम्मद बिन बख्तियार खजली ने गौढ के समीप लखनौती पर अधिकार कर उसको अपनी राजधानी घोषित किया, उसने बंगाल के अन्य प्रदेशों को अपने अधिकार में करने की चेष्टा नहीं की। उसने तिब्बत आक्रमण करने का विचार किया। लेकिन उसका यह अभियान असफल हुआ और सन् 1206 ई0 में इसकी मृत्यु हो गई।

इस समस्त विजयों के परिणामस्वरूप मुसलमानों के अधिकार में उत्तरी भारत का अधिकांश प्रदेश आ गया और भारत में मुस्लिम राज्य की नींव पड़ी।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

कृपया निम्नांकित प्रश्नों के समक्ष सत्य अथवा असत्य लिखिए।

1. गजनवी वंश के सुल्तान महमूद ने सन् 1000 से लेकर 1027 ई0 तक हेनरी इलियट के अनुसार 27 आक्रमण किये

2. मुहम्मद गोरी का अन्तिम आक्रमण 1206 ई0 में खोक्करों या इस्माइल विद्रोहियों के विरूद्ध हुआ जहॉं उसका कत्ल कर दिया गया

3. महमूद गजनवी के आक्रमण के समय ब्राहमण हिन्दूशाही राज्य चिनाब नदी से हिन्दुकुश तक फैला था

4. मुहम्मद गोरी का प्रथम आक्रमण 1175 ई. में मुल्तान में हुआ

5. मूलराज द्वितीय ने 1178 ई0 में मुहम्मद गोरी को पराजित किया था

6. 1304 ई0 में मुहम्मद बिन बख्तियार खजली ने बंगाल पर आक्रमण किया

7. सन् 1210 ई0 में कुतुबुद्दीन ने कालिंजर के दुर्ग पर विजय प्राप्त की

3.5 साराशं

महमूद गजनवी के आक्रमणों के समय उत्तरी भारत के अधिकांश राज्य राजपूत वंशों के थे। राजपूतों में साहस, शौर्य और बहादूरी की कमी न थीं परन्तु वे विनाशकारी भ्रातृघातक झगडों में लगे रहे थे। उनमें दूरदर्शिता और परिस्थितियों को समझने तथा उसके अनुकूल आचरण करने का सर्वथा अभाव रहा, जिसके कारण वे सभी बार बार पराजित हुए।

महमूद गजनवी के प्रायः 148 वर्ष पश्चात मुहम्मद गोरी का प्रथम आक्रमण 1175 ई में मुल्तान में हुआ। इस समयान्तर के बावजूद भी उत्तरी भारत में विभिन्न राजवंशों में परिवर्तन होने के अतिरिक्त कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ या यह कहा जा सकता है कि भारतीयों ने महमूद के आक्रमणों का कोई सबक नहीं लिया।

इस प्रकार तुर्की आक्रमण के समय भारत राजनीतिक रूप से विश्रखंल था। यहॉ के शासक राजनैतिक महत्वाकाक्षाओं तथा वंशानुगत झगडों के कारण भ्रातृघातक युद्धों में लगे थें ऐसी परिस्थिति में भारत में तुर्की आक्रमणों की बाढ को रोके रखना असंभव सा हो गया था। इस निरन्तरआक्रमणों के परिणाम स्वरूप 1192 ई0 में भारतमें तुर्की राज्य की नींव पडी।

3.6 पारिभाषिक शब्दावली

काफिर – इस्लाम धर्म के अनुसार जो इस्लाम को नहीं मानता है , काफिर कहलाता है।

जिहाद – धर्म युद्ध

मस्जिद – इबादतगाह

दुर्ग - किला

बगावत – विद्रोह

3.7 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

भाग 3.4 के प्रश्न 1 का उत्तर- असत्य

भाग 3.4 के प्रश्न 2 का उत्तर- सत्य

भाग 3.4 के प्रश्न 3 का उत्तर- सत्य

भाग 3.4 के प्रश्न 4 का उत्तर- सत्य

भाग 3.4 के प्रश्न 5 का उत्तर- सत्य

भाग 3.4 के प्रश्न 6 का उत्तर- असत्य

भाग 3.4 के प्रश्न 7 का उत्तर- असत्य

3.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Habibullah, A.B.M. – *Foundation of Muslim Rule in India*

2. Prasad Ishwari – *History of Medieval India*

3. Prasad Ishwari – *A History of the Quraunah Turks in India*

4. Srivastav, A.L. – *The Sultanat of Delhi*

5. Majumdar (General Editor) – *Struggle for Empire*

6. Elliot & Dowson – *The History of India as Told by Its Own Historians*

7. Hodivala, S. H. – *Studies in IndoMuslim History*

8. Jackson, Peter – *The Delhi Sultanate: A Political and Military History*

9. हबीब, मुहम्मद - दिल्ली सल्तनत भाग 1

3.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Minhaj-i-Siraj – *Tabqat-i-Nasiri* (Eng Tr. Raverty, H. G.)

2. Isami – *Futu-us-Salatin* (Edited by Husain, A. M.)

2. Lane Poole – *The Mohammadan Dynasties*

3. Lane Poole – *Medieval India under Mohammadan Rule*

3.10 निबंधात्मक प्रश्न

1- महमूद गजनवी के भारत आक्रमणों पर चर्चा कीजिए

2- मुहम्मद गोरी के आक्रमणों के प्रभाव बतलाइये

इकाई चार- तुर्क आक्रमण की पूर्व संध्या में भारत की राजनैतिक, धार्मिक,आर्थिक दशा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 महमूद गजनवी के आक्रमण के समय भारत की राजनीतिक स्थिति

4.3.1 मुल्तान और सिन्ध के अरब राज्य

4.3.2 हिन्दूशाही राज्य

4.3.3 काश्मीर

4.3.4 कन्नौज

4.3.5 बंगाल का पाल वंश

4.3.6 दक्षिण के राज्य

4.4 मुहम्मद गोरी के आक्रमण के समय भारत की दशा

4.4.1 गजनवी शासन के अन्तर्गत पंजाब

4.4.2 करामाथियों की अधीनता में मुल्तान

4.4.3 सुम्त्र शासन के अन्तर्गत सिन्ध

4.4.4 राजपूत

4.4.4.1 अन्हिलवाड़ा के चालुक्य

4.4.4.2 अजमेर के चौहान

4.4.4.3 कन्नौज के गहड़वाल

4.4.4.4 बुन्देलखण्ड के चन्देल तथा कलचुरी के चेदि

4.4.4.5 उत्तरी बंगाल के पाल

4.4.4.6 बंगाल का सेन राज्य

4.5 सामाजिक तथा धार्मिक दशा

4.6 आर्थिक जीवन

4.7 साराशं

4.8 तकनीकी शब्दावली

4.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

4.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

4.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

4.12 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

पिछली इकाइयों के अध्ययन के उपरांत अब आपको यह जानकारी है कि महमूद गजनवी के आक्रमणों के समय भारत की राजनीतिक दशा अरबों की सिन्ध विजय के समय से एक प्रकार से बहुत भिन्न थी। 8वीं सदी के प्रारम्भ में भारत में कोई विदेशी सत्ता नहीं थी। पश्चिमी भारत के कुछ इलाकों पर केवल कुछ अरब व्यापारिक-गतिविधियों में संलग्न थे। लेकिन 10वीं सदी के अंत में भारत में मुल्तान और सिन्ध के दो अरब राज्य थे।

इन राज्यों की काफी जनता ऐसी थी जिसे मुसलमान बना लिया गया था। दक्षिण भारत में भी, मालाबार राज्य मुसलमानों द्वारा अधिगृहित कर लिया गया था और गजनी तथा मध्य एशिया से आने वाले अपने मुसलमान भाइयों के साथ उनकी सहानुभूति थी,वास्तव में, उनके लिये यह स्वाभाविक था। सुबुक्तगीन, महमूद गजनवी और उनके 150 वर्ष बाद मुहम्मद गोरी इस दृष्टि से भाग्यशाली थे कि उन्हें भारतीय जनता के एक अंग की सहानुभूति प्राप्त हुई थी।

देश विभक्त था और छोटे-छोटे निहित स्वार्थों के कारण शासक वर्ग आपस में लड़ता रहता था। देश की राजनीतिक दशा की भांति ही समाज भी अनेक रूढ़ियों के चलते विभाजित था। धर्म में संकीर्णता प्रवेश कर चुकी थी और जादू-टोने और अंधविश्वास ने धर्म में स्थान प्राप्त कर लिया था। देश आर्थिक दृष्टि से संपन्न था किंतु धन का बंटवारा उचित नहीं था। अधिकांश धन राजा-रजवाड़ों और सामन्तों के महलों तथा मंदिरों में संकेद्रित था। ये स्थान विदेशी आक्रांताओं के लोभ के केन्द्र बन गये और यहां का धन भारत में आक्रमण का एक बहुत बड़ा लालच साबित हुआ।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य आपको को तुर्क आक्रमण की पूर्व संध्या में भारत की राजनैतिक,धार्मिक,आर्थिक दशा का परिचय देना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1. महमूद गजनवी के आक्रमण के समय भारत की राजनीतिक स्थिति

2. मुहम्मद गोरी के आक्रमण के समय भारत की राजनीतिक स्थिति

3. इन दोनों आक्रमणकारियों के आक्रमण की पूर्व संध्या में भारत की ,धार्मिक, आर्थिक दशा

4.3 महमूद गजनवी के आक्रमण के समय भारत की राजनीतिक स्थिति

महमूद गजनवी के आक्रमण के समय भारत की राजनीतिक स्थिति विवरण निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत दिया जा सकता है-

4.3.1 मुल्तान और सिन्ध के अरब राज्य

करामाथी लोग मुल्तान में राज्य करते थे, फतेह दाऊद उनका शासक था। वह एक योग्य व्यक्ति था। सिन्ध में भी अरबों का ही शासन था। अरबों की राजनीतिक और धार्मिक नीति से परिचित होने पर भी पड़ोस के हिन्दू राज्य किसी प्रकार इनसे सजग नहीं हुए थे। इसके विपरीत हर जगह अरबों तथा नये भारतीय मुसलमानों के साथ सहृदयता का बरताव किया जाता था और उन्हें अपने धर्म का पालन करने तथा नये लोगों को मुसलमान बनाने की आज्ञा थी। व्यापारिक गतिविधियों में संलग्न रहने के कारण भारत के विभिन्न भागों में उनका काफी महत्व था।

भारत के शेष अन्य भागों में देशी राजवंश शासन करते थे। इन राज्यों में प्रमुख राज्य निम्नलिखित थे-

4.3.2 हिन्दूशाही राज्य

हिन्दूशाही राज्य, चिनाब नदी से हिन्दूकुश तक फैला हुआ था और काबुल उसमें सम्मिलित था। इस राजवंश ने 200 वर्षों तक अकेले ही अरब आक्रमणों का सफलतापूर्वक सामना किया था। किन्तु अन्त में इसके शासकों को अफगानिस्तान छोड़ने पर बाध्य होना पडा काबुल भी उनके हाथ से निकल गया इसके उपरांत उन्होंने उदभण्डपुर अथवा बैहन्द को अपनी राजधानी बनाया। 10वीं सदी के अंत में जयपाल इस राज्य पर शासन करता था। वह वीर सैनिक तथा योग्य शासक था। अपने राज्य की भौगोलिक स्थिति के कारण गजनी से आने वाले आक्रमण का पहला प्रहार उसी को झेलना पड़ा।

4.3.3 काश्मीर

उत्तर-पश्चिम में दूसरा महत्वपूर्ण राज्य काश्मीर का था। उसकी हिन्दूशाही राज्य तथा कन्नौज के साम्राज्य से इस काल में शत्रुता चल रही थी। प्रसिद्ध राजा शंकरवर्मन ने काश्मीर राज्य की सीमाओं का अनेक देशों में विस्तार किया था परन्तु वह आधुनिक हजारा जिला के लोगों से युद्ध करता हुआ मारा गया। उसके उपरान्त राज्य में अराजकता फैल गयी और कुछ समय तक छोटे-छोटे

राजवंशों का शासन रहा और फिर पर्वगुप्त ने एक नये वंश की नींव डाली। महमूद के आक्रमण के समय में राज्य की सम्पूर्ण शक्ति उसकी रानी दिद्दा के हाथ में थी। उसने 1003 ई0 तक राज्य किया।

4.3.4 कन्नौज

कन्नौज और मध्य प्रदेश पर प्रतिहारों का प्रभुत्व कायम था। अपने उत्तर तथा दक्षिण के पड़ोसी राज्यों से उनका संघर्ष चलता रहता था, जिनमें कभी उनको सफलता मिलती और कभी पराजय भोगनी पड़ती थी। दक्षिण के राष्ट्रकूट शासक इन्द्र तृतीय ने प्रतिहार राजा महिपाल को बुरी तरह हराया था और उसे अपनी राजधानी कन्नौज से भी हाथ धोना पड़ा था। किन्तु एक चन्देल शासक ने उसे पुनः गद्दी पर बैठा दिया, लेकिन प्रतिहारों की शक्ति को भारी धक्का लगा था। इस वंश के शासक गंगा के उत्तरी भाग तथा राजस्थान और मालवा के कुछ प्रदेशों पर राज्य करते रहे किन्तु उनकी सत्ता सदैव अस्थिर रही। बुन्देलखण्ड के चन्देल, गुजरात के चालुक्य और मालवा के परमार जो पहले उनके अधीनस्थ सामन्त थे, इस काल में स्वतन्त्र हो गये थे। प्रतिहार वंश का अन्तिम शासक राज्यपाल हुआ। वह दुर्बल शासक था। उसकी राजधानी कन्नौज पर महमूद गजनवी ने 1018 ई0 में आक्रमण किया, महमूद के आक्रमण के सामन वह टिक न सका।

4.3.5 बंगाल का पाल वंश

11 वीं शताब्दी के प्रथम चरण में बंगाल में महिपाल प्रथम का शासन था जो महमूद गजनवी का समकालीन था। उसने कुछ हद तक अपने वंश के वैभव की पुनः स्थापना की, किन्तु बंगाल के कुछ भाग पर शक्तिशाली सामन्तों ने पहले ही अधिकार कर लिया था और वे नाममात्र को ही राजाअें का प्रभुत्व स्वीकार करते थे। जिस समय उत्तर पश्चिमी भारत में महमूद गजनवी, हत्या और लूट का काण्ड रच रहा था उसी समय बंगाल पर चोल शासक राजेन्द्र चोल का आक्रमण हुआ। इस युद्ध में बंगाल को भीषण क्षति उठानी पड़ी थी, किन्तु दूर स्थित होने के कारण बंगाल राज्य महमूद गजनवी के आक्रमणों से मुक्त रहा।

उपर्युक्त राज्यों के अतिरिक्त उत्तरी भारत में अन्य कई छोटे छोटे राज्य थे जिनमें गुजरात के चालुक्य, बुन्देलखण्ड के चन्देल और मालवा के परमार अधिक महत्वपूर्ण थें पहले किसी समय वे कन्नौज के अधीन रह चुके थे।

4.3.6 दक्षिण के राज्य

दक्षिण भारत के शासकों में भी उत्तर भारतीय शासकों की भांति निरन्तर संघर्ष चलता रहा था। दक्षिण के परवर्ती चालुक्यों और राष्ट्रकूटों में प्रभुता के लिए दीर्धकाल तक संघर्ष हुआ था। 11वीं शताब्दी के प्रारम्भ में दक्षिण में दो प्रसिद्ध राज्य थे, कल्याणी का परवर्ती चालुक्य राज्य और

तंजौर का चोल राज्य। परवर्ती चालुक्य वंश का संस्थापक तैल द्वितीय था। वह वातापी के चालुक्यों के वंश का होने का दावा करता था। उसने आधुनिक हैदराबाद राज्य में स्थित कल्याणी को अपनी राजधानी बनायी थी। उसके उत्तराधिकारी तंजौर के चोल राजाओं के विरूद्ध संघर्षरत रहे थे।चोल लोग आदित्य के वंशज थे। राजराजा के समय में उनका महत्व बढ गया। उसका पुत्र राजेन्द्र चोल महान योद्धा और विजेता हुआ, वह महमूद का समकालीन था। उसने बंगाल की विजय कर गंगईकोण्डचोलपुरम की उपाधि धारण की थी। उसने उत्तरी तथा दक्षिणी भारत के अनेक प्रदेश जीते । उसकी गणना उस युग के महानतम भारतीय शासकों में थी। जिस समय दक्षिण में चालुक्य और चोल निर्मम संघर्ष में रत थे, उत्तरी भारत में महमूद गजनवी बड़े-बड़े साम्राज्यों को धूल में मिला रहा था।

4.4 मुहम्मद गोरी के आक्रमण के समय भारत की दशा

बारहवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में उत्तर पश्चिमी भारत में पंजाब, मुल्तान और सिन्ध के तीन विदेशी राज्य थे।

4.4.1 गजनवी शासन के अन्तर्गत पंजाब

पंजाब को ग्यारहवीं शताब्दी के प्रथम चरण में महमूद ने जीतकर अपने राज्य में मिला लिया था तभी से यह राज्य 1186 ई0 तक गजनवी साम्राज्य का अभिन्न अंग बना रहा। जैसा कि आप जानते हैं कि गिज तुर्कों ने खुसरवशाह को गजनी से मार भगाया था और पंजाब में उसने शरण ली थी। उसके उत्तराधिकारियों ने भी पंजाब को ही अपना घर बनाया और लाहौर उनकी राजधानी थी। इस प्रकार तत्कालीन भारत में सिन्ध के बाद पंजाब दूसरा मुस्लिम राज्य था, जिसमें उत्तर में पेशावर तथा सियालकोट सम्मिलित थे, उत्तर पूरब में उसकी सीमाऐं जम्मू के हिन्दू राज्य तक पहुंचती थी और दक्षिण तथा दक्षिण पश्चिम में उसकी सीमाऐं घटती-बढ़ती रहती थी। चौहान नरेश पृथ्वीराज प्रथम मुसलमानों से बराबर युद्ध में संलग्न रहा और उसके उत्तराधिकारी अजय राज को गजनी के एक अधिकारी बहलीम ने 1112 ई0 में हराकर नागौर छीन लिया था। परन्तु विग्रहराज तृतीय ने 1167 ई0 में पंजाब में गजनवी सुल्तान से हांसी छीन लिया और उसके उत्तराधिकारी पृथ्वीराज द्वितीय ने तुर्क आक्रमणों से रक्षा करने के लिए हांसी की किलेबन्दी की। कालान्तर में पृथ्वीराज द्वितीय ने भटिण्डा पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार चौहान राज्य की सीमाएं उत्तर में आधुनिक फीरोजपुर तक पहुॅंच गयी थीं। महमूद के उत्तराधिकारियों के समय में पंजाब के तुर्की राज्य का पतन होने लगा। चारों ओर भ्रष्टाचार और अयोग्यता का बोलबाला था। गजनवी वंश का अन्तिम शासक मलिक खुसरव विलासी तथा निकम्मा था । उसने शासन की बागडोर पूर्णतया अपने पदाधिकारियों

के हाथों में छोड़ दी और वे स्वतन्त्र बन बैठे। वास्तव में लाहौर के गजनवी सुल्तान को इस काल में सदैव राजपूतों के आक्रमण का भय बन रहता था।

4.4.2 करामाथियों की अधीनता में मुल्तान

मुल्तान में शिया सम्प्रदाय के अनुयायी करामाथी मुसलमान शासन करते थे। इस प्रान्त को महमूद ने जीत लिया था, किन्तु उसकी मृत्यु के बाद करामाथी शासकों ने फिर स्वयं को स्वतन्त्र कर लिया था। सम्भवतः उच्छ भी करामाथी राज्य में सम्मिलित था।

4.4.3 सुम्त्र शासन के अन्तर्गत सिन्ध

मुल्तान के दक्षिण में निचले सिन्ध का प्रदेश स्थित था। देबल उसकी राजधानी थी। महमूद ने इसको भी जीत लिया था। किन्तु उसकी मृत्यु के बाद सुम्त्र नाम की स्थानीय जाति ने पुनः अपनी स्वाधीनता स्थापित कर ली थी। सुम्त्र लोग मुसलमान थे, किन्तु उनकी उत्पत्ति के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं है। करामाथियों की भॉति वे भी शिया थे।

4.4.4 राजपूत

शेष भारत में राजपूत शासक राज्य करते थे। वे प्राचीन क्षत्रियों के वंशज होने का दावा करते थे और सूर्य तथा चन्द्र से अपनी उत्पत्ति मानते थे। किन्तु इतिहासकारों का मानना है कि राजपूत मिश्रित नस्ल के थे। उनकी नसों में प्राचीन क्षत्रियों के अतिरिक्त उन विदेशी आक्रमणकारियों का रक्त भी था जो कालान्तर में हिन्दू समाज में विलीन हो गये थे।कर्नल टॉड राजपूतों के गुणों की अत्यधिक प्रशंसा करता है। राजपूत शूरवीर थे और निर्भिकता,साहस तथा वीरोचित सम्मान की दृष्टि से उनका चरित्र तुर्कों से कहीं ऊॅचा था। उन्हें अपनी तलवार चलाने की कला पर घमण्ड था और युद्ध उनके लिए एक मनोरंजन का साधन था। किन्तु जाति श्रेष्ठता पर घमण्ड की भावना ने उनके इन गुणों को ढक लिया था। उनके सामाजिक संगठन का आधार मुख्यतया सामन्तवादी था और सैनिक यश प्राप्त करने की भावना उनमें इतनी बलवती थी कि उनके अन्य सभी काम केवल इसी उद्देश्य से किये जाते थे।यही दुर्गुण वास्तव में उनके पतन का कारण सिद्ध हुआ।

4.4.4.1 अन्हिलवाड़ा के चालुक्य

पश्चिमी भारत में सबसे अधिक महत्वपूर्ण राजवंश अन्हिलवाड़ा के चालुक्यों का था। उनका राज्य मुस्लिमों द्वारा शासित उत्तर-पश्चिमी प्रान्तों से लगा हुआ था। जयसिंह सिद्धराज (1102-1143ई0) के समय में इस वंश का अधिक उत्कर्ष हुआ। उसने मालवा के परमार राज्य का अधिकांश भाग जीतकर अपने राज्य में मिला लिया। चित्तौड़ के गुहिलौतों को उसने पराजित किया और काठियावाड में गिरनार को जीतकर अपने राज्य का अंग बनाया। लेकिन अजमेर के चौहानों से

उसका संघर्ष में चालुक्यों को बहुत क्षति उठानी पड़ी थी और चालुक्यों की शक्ति बहुत क्षीण हो गयी थी इसके उपरांत उनकी गणना द्वितीय श्रेणी के राजवंशों में होने लगी। धीरे-धीरे मालवा, चित्तौड़,पश्चिमी और दक्षिणी राजपूताना के क्षेत्रों ने पुनः अपनी स्वाधीनता स्थापित कर ली और केवल गुजरात और काठियावाड़ चालुक्यों के अधीन रह गये मुहम्मद गोरी के आक्रमण के समय यहां का शासक मूलराज द्वितीय था।

4.4.4.2 अजमेर के चौहान

राजपूतों का दूसरा महत्वपूर्ण राज्य अजमेर के चौहानों का था। इस वंश की स्थापना एक सामन्त ने की थी। बीसलदेव (विग्रहराज तृतीय) इस वंश का प्रतापी शासक था,उसने 1151 ई0 में तोमरों से दिल्ली और कुछ समय उपरान्त गजनवी वंश के लोगों से हॉसी छीन ली। पृथ्वी राज द्वितीय इस वंश का महत्वपूर्ण शासक हुआ। उसने 1167 से 1169 ई0 तक राज्य किया। उसी का पुत्र पृथ्वीराज तृतीय (1178-1193 ई0) था जो रायपिथौरा के नाम से विख्यात था। पृथ्वीराज तृतीय ने चन्देल राजा परमर्दी देव को हराकर महोबा पर अधिकार कर लिया। किन्तु अपने पड़ोसियों से उसके सम्बन्ध अच्छे न थे।

4.4.4.3 कन्नौज के गहड़वाल

इस युग में सबसे अधिक महत्वपूर्ण राजपूत राजवंश कन्नौज के गहड़वालों का था। प्रारम्भ में गहड़वाल राज्य में केवल काशी,कोसल, कौशिक (इलाहाबाद), तथा इन्द्रप्रस्थ सम्मिलित थे। किन्तु गहड़वाल राजाओं ने धीरे-धीरे अपने राज्य का विस्तार प्रारम्भ किया। समय के साथ उनकी इस विजय नीति के कारण कन्नौज की गणना देश के सबसे बड़े राज्यों में होने लगी। गोविन्दचन्द्र इस वंश का एक प्रतापी शासक था। उसके समय में कन्नौज की पूर्वी सीमा पटना तक पहुंच गयी थी। उसका उत्तराधिकारी विजय चन्द्र था जिसने 1155 से 1170 ई0 तक राज्य किया। उसने भी अपने पूर्वजों की नीति जारी रखी। मुहम्मद गोरी का समकालीन जयचन्द्र इस वंश का अन्तिम शासक हुआ।

4.4.4.4 बुन्देलखण्ड के चन्देल तथा कलचुरी के चेदि

दो अन्य राजपूत वंश, कालिजर और महोबा के चन्देल तथा कलचुरी के चेदि थे। चन्देलों ने 11 वीं शताब्दी में गंगा यमुना दोआब के दक्षिणी भाग पर अधिकार कर लिया था। बुन्देलखण्ड भी उनके राज्य में सम्मिलित था। मदनवर्मन इस वंश का प्रतापी शासक था। उसने मालवा के परमारों तथा गुजरात के जयसिंह सिद्धराज को पराजित किया। त्रिपुरी के कलचुरियों को भी उसने पराजित किया था। लगभग 12 वीं शताब्दी के अन्त में कलचुरी चन्देलों अधीनस्थ सामन्त हो गये थे। किन्तु आगे चलकर चन्देलों को भी गहड़वालों से पराजित होना पड़ा। परमर्दी देव इस वंश का अन्तिम

महत्वपूर्ण शासक था। अजमेर के पृथ्वीराज द्वितीय ने उसे हराकर उसके राज्य का बड़ा भाग चौहान राज्य में मिला लिया था। इस युग के प्रारम्भ में चन्देल राज्य में महोबा, कालिंजर, खजुराहो तथा अजयगढ़ शामिल थे। मालवा के परमारों की राजधानी धार थी। भोज (1010-1055 ई0 के लगभग) के समय में परमार बहुत शक्तिशाली और प्रसिद्ध हो गये थे। किन्तु 12वीं शताब्दी में इस राज्य का अधःपतन हो गया। मुहम्मद गोरी के समय में इस वंश का शासक एक महत्वहीन सामन्त था और गुजरात के चालुक्यों के अधीन था।

4.4.4.5 उत्तरी बंगाल के पाल

पूर्वी भारत में पाल और सेन दो प्रसिद्ध राजपूत राज्य थे। 12 वीं शताब्दी में पाल वंश के एक राजा रामपाल ने उत्कल, कलिंग और कामरूप को जीतकर कुछ समय के लिए पुनः अपने पूर्वजों की साम्राज्यवादी प्रतिष्ठा की स्थापना की। किन्तु उसकी मृत्यु के बाद पुनः पाल राज्य का अधःपतन हो गया, ब्रहमपुत्र की घाटी स्वतन्त्र हो गयी,दक्षिण बंगाल भी पाल राज्य से पृथक हो गया। कुमारपाल (1126-1130 ई0), मदनपाल (1130-1150 ई0) आदि परवर्ती शासक अत्यन्त दुर्बल थे। उनके समय में विशाल पाल साम्राज्य संकुचित होकर छोटा सा राज्य रह गया। बिहार उनके हाथों से निकल गया तथा हजारीबाग में नये राजवंश ने सत्ता संभाली। पाल राज्य में केवल उत्तरी बंगाल रह गया।

4.4.4.6 बंगाल का सेन राज्य

सेन वंश के विषय में यह माना जाता है कि उनका मूल दक्षिण भारत था। राजेन्द्र चोल के वे सामन्त थे और राजेन्द्र चोल के दक्षिण वापस चले जाने के बाद वे बंगाल में रह गये और 11 वीं शताब्दी में उन्होंने पूरबी भारत में अपनी सत्ता की नींव डाली थी। इस वंश के एक सदस्य विजयसेन (1097-1159 ई0) ने पूर्वी बंगाल पर अधिकार कर लिया। उसने कामरूप, कलिंग और दक्षिण बंगाल से निरन्तर युद्ध किया और मिथिला (उत्तरी बिहार) को भी हराया। बल्लाल सेन (1159-1170 ई0) और लक्ष्मण सेन (1170-1203 ई0) इस वंश के अन्तिम शासक हुए। उनके राज्य में उत्तरी तथा पूर्वी बंगाल, मिथिला और पश्चिम में मिथिला से लगे हुए कुछ जिले सम्मिलित थे। लक्ष्मण सेन के समय में उसकी वृद्धावस्था तथा आन्तरिक फूट के कारण सेन राज्य दुर्बल हो गया।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

कृपया निम्नांकित प्रश्नों के समक्ष सत्य अथवा असत्य लिखिए।

1. करामाथी लोग मुल्तान में राज्य करते थे, फतेह दाऊद उनका शासक था।

2. महमूद के आक्रमण के समय में कश्मीर की रानी दिद्दा थी।

3. कन्नौज पर महमूद गजनवी ने 1018 ई0 में आक्रमण किया

4. चोल राजा राजेन्द्र चोल महमूद का समकालीन था

5. पृथ्वीराज तृतीय रायपिथौरा के नाम से विख्यात था

6. गहड़वाल वंश का जयचन्द्र महमूद गजनवी का समकालीन था

7. बल्लाल सेन, सेन वंश का अन्तिम शासक था

8. मुहम्मद गोरी के समय बंगाल पर चोल शासक राजेन्द्र चोल का आक्रमण हुआ

4.5 सामाजिक तथा धार्मिक दशा

अरबों की सिन्ध विजय के बाद लगभग 300 वर्षों तक हमारा देश वाह्य आक्रमणों से मुक्त रहा। इस प्रकार दीर्घकाल तक विदेशी आक्रमणों के भय से मुक्त रहने के कारण हमारी जनता में यह भावना उत्पन्न हो गयी कि भारत भूमि को कोई विदेशी शक्ति आक्रान्त कर ही नहीं सकती। हमारे शासक सैनिक विषयों में असावधान हो गये थे। उन्होंने उत्तर-पश्चिमी सीमाओं की किलेबन्दी नहीं की और न उन पर्वतीय देशों की रक्षा का ही प्रबन्ध किया जिनमें होकर विदेशी सेनाऐं हमारे देश में प्रवेश कर सकती थी। इसके अतिरिक्त हमारे लोगों ने उस नवीन रण नीति और युद्ध प्रणाली में भी सम्पर्क नहीं रखा जिसका विकास अन्य देशों में हो चुका था। आठवीं से ग्यारहवीं शताब्दी तक के युग में विचारों की संकीर्णता हमारे देशवासियों के चरित्र का एक अंग बन गयी थी। अलबरूनी नामक प्रसिद्ध विद्वान महमूद गजनवी के साथ हमारे देश में आया था। उसने यहॅा रहकर संस्कृत भाषा, हिन्दू धर्म तथा दर्शन का अध्ययन किया। वह लिखता है कि ''हिन्दुओं की धारणा यह है कि हमारे जैसा देश, हमारी जैसी जाति, हमारे जैसा राजा, धर्म, ज्ञान और विज्ञान संसार में कहीं नहीं है।'' वह यह भी लिखता है कि हिन्दुओं के पूर्वज इतने संकीर्ण विचारों के न थे जितने इस युग के लोग थे। उसे यह देक्षकर भी बडा आश्चर्य हुआ था कि ''हिन्दू लोग यह नहीं चाहते कि जो चीज एक बार अपवित्र हो चुकी है, उसे पुनः शुद्ध करके अपना लिया जाये।''

उस युग में हमारा देश शेष संसार से लगभग पूर्णतया पृथक था। यही कारण था कि हमारे देशवासियों का अन्य देशों से सम्पर्क टूट गया और वे वाह्य जगत में होने वाली राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक घटनाओं से भी सर्वथा अनभिज्ञ रहे। अपने से भिन्न जातियों और संस्कृति से सम्पर्क में न रहने के कारण हमारी सभ्यता गतिहीन होकर सड़ने लगी थी । वास्तविकता तो यह है कि इस युग में हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पतन के स्पष्ट लक्षण दिखायी देने लगे। इस युग के संस्कृत साहित्य में हम उतनी सजीवता और सुरूचि नहीं पाते, जितनी कि पांचवीं और छठी

शताब्दियों के साहित्य में। हमारी स्थापत्य, चित्रकला तथा अन्य ललित कलाओं पर भी बुरा प्रभाव पड़ा। हमारा समाज गतिहीन हो गया, जातिबन्धन अधिक कठोर हो गये, स्त्रियों को वैधव्य के नियमों का कठोरता से पालन करने पर बाध्य किया गया। उच्च वर्णों में विधवा विवाह की प्रथा पूर्णतया समाप्त हो गयी और खानपान के सम्बन्ध में भी अनेक प्रतिबन्धों का पता चलता है। अछूतों को नगर से बाहर रहने के लिए बाध्य किये जाने की सूचनाऐं भी मिलती हैं।

धार्मिक क्षेत्र में भी अधःपतन होने लगा था। शंकराचार्य ने हिन्दू धर्म को पुनः संगठित किया था और उसे एक सुदृढ़ दार्शनिक आधार पर खड़ा किया था, किन्तु सामाजिक दोषों को वे भी दूर नहीं कर सके। इस युग में वाममार्गी सम्प्रदायों की लोकप्रियता बढ़ने लगी। इन संप्रदायों में सुरापान, मांसाहार, व्यभिचार आदि दुर्व्यसन आम थे, उनका दुष्प्रभाव भी समाज में पड़ रहा था। उनके दूषित विचार शिक्षा संस्थाओं में भी प्रवेश कर गय थे, विशेषकर बिहार में विक्रमशिला के विश्वविद्यालय में तन्त्रवाद एवं वाममार्गी शिक्षा का बोलबाला बड़ रहा था। इस काल में सन्यासियों का महत्व घट रहा था, यद्यपि साधारण जनता की उनके प्रति श्रद्धा बनी रही। देवदासी प्रथा इस युग का एक महान दोष थी। प्रत्येक मन्दिर में देवता की सेवा के लिए अनेक अविवाहित लड़कियां रखी जाती थीं। इससे भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिल रहा था और वैश्यागमन मन्दिरों में एक सामान्य नियम बन गया। निकृष्ट कोटि की अश्लीलता से पूर्ण तान्त्रिक साहित्य की इस युग में अधिक वृद्धि हुई। हमारे नैतिक जीवन पर इसका दूषित प्रभाव पड़ा। इस काल में महानतम विद्वानों के लिए अश्लील ग्रन्थ रचना बुरा न माना जाता था। काश्मीर के राजा क्षेमेन्द्र ने ‘‘समय मैत्रक ‘ (वैश्या की आत्मकथा) नामक ग्रन्थ रचा। इस प्रकार की सब चीजों ने समाज के उच्च तथा मध्यम वर्गों के लोगों को भ्रष्ट कर दिया। सम्भवतः साधारण जनता प्रचलित साहित्य और वाममार्गी धर्म के दूषित प्रभाव से मुक्त रही।

4.6 आर्थिक जीवन

आर्थिक दृष्टि से देश समृद्ध था। आन्तरिक एवं विदेशी व्यापार, उन्नत कुटीर उद्योगों,खानों और खेती से उत्पन्न होने वाली सम्पत्ति अनेक पीढ़ियों से जमा होती चली आयी थी। समाज के उच्च वर्ग ने खूब धन संचित कर लिया था और मन्दिर तो उसके भण्डार थे। किन्तु आर्थिक दृष्टि से समाज के विभिन्न वर्गों में गहरी असमानता थी। राजपरिवारों के सदस्यों, सामन्तों तथा दरबारियों का जीवन अत्यन्त समृद्ध तथा विलासपूर्ण था। व्यापारी लोग धनपति थे और करोड़ों रूपया दान आदि में व्यय किया करते थे। गांव के साधारण लोग दरिद्र थे, यद्यपि अभाव पीड़ित वे भी न थे। फिर भी संचित धन, शान्ति तथा व्यापार के कारण साधारणतया देश की आर्थिक दशा अच्छी थी। इसी अपार सम्पत्ति के लालच ने ही वास्तव में महमूद गजनवी को भारत पर आक्रमण करने को प्रेरित किया। राजनीतिक ढांचा अत्यन्त दुर्बल था। नौकरशाही भ्रष्ट थी और जनता की शक्ति भी अनेक दूषित प्रभावों के कारण क्षीण हो चुकी थी।

महमूद गजनवी और मुहम्मद गोरी के समय के भारत की यह दशा थी कि बाहर से शक्तिशाली दिखायी देने पर भी वह इस योग्य न था कि अपने धर्म और स्वाधीनता की रक्षा कर सके।

स्पष्ट है कि उत्तरी भारत अनेक छोटे-छोटे राज्यों में विभक्त था जिनका एक दूसरे के प्रति शत्रुतापूर्ण व्यवहार था। बहुधा एक राज्य पर अनेक राजवंशों के लोग अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहते थे। जब विदेशियों ने भारत में आक्रमण किये तो आपसी वैमनस्य के कारण वे एकजुट न हो सके और अलग-अलग पराजित होते रहे। इन्हीं परिस्थितियों में भारत में गुलाम वंश की नींव पड़ी थी।

4.7 साराशं

तुर्की आक्रमण की पूर्व संध्या में भारत शेष संसार से लगभग पूर्णतया पृथक था। यही कारण था कि हमारे देशवासियों का अन्य देशों से सम्पर्क टूट गया और वे वाह्य जगत में होने वाली राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक घटनाओं से भी सर्वथा अनभिज्ञ रहे। आठवीं से ग्यारहवीं शताब्दी तक के युग में विचारों की संकीर्णता हमारे देशवासियों के चरित्र का एक अंग बन गयी थी।धार्मिक क्षेत्र में भी अधःपतन होने लगा था। आर्थिक दृष्टि से देश समृद्ध था। आन्तरिक एवं विदेशी व्यापार उन्नत था,कुटीर उद्योगों,खानों और खेती की दशा अच्छी थी। लेकिन समाज के विभिन्न वर्गों में गहरी असमानता थी। शासक वर्ग तथा व्यापारी लोग धनपति थे, अपार सम्पत्ति के लालच ने ही वास्तव में महमूद गजनवी को भारत पर आक्रमण करने को प्रेरित किया।राजनीतिक ढांचा अत्यन्त दुर्बल था। महमूद गजनवी और मुहम्मद गोरी के समय के भारत की यह दशा थी कि बाहर से शक्तिशाली दिखायी देने पर भी वह इस योग्य न था कि अपने धर्म और स्वाधीनता की रक्षा कर सके।

4.8 तकनीकी शब्दावली

देवदासी प्रथा - सुन्दर बालिकाओं को मंदिर में अर्पण करने की कुप्रथा

वाममार्ग - तन्त्र साधना का वह मार्ग जिसमें पंच मकारों का आश्रय लिया जाता है

गंगईकोण्डचोलपुरम - राजेन्द्र चोल की उपाधि जिसका अर्थ गंगा घाटी का विजेता था

4.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

भाग 4.4 के प्रश्न 1 का उत्तर- सत्य
भाग 4.4 के प्रश्न 2 का उत्तर- सत्य

भाग 4.4 के प्रश्न 3 का उत्तर- सत्य

भाग 4.4 के प्रश्न 4 का उत्तर- सत्य

भाग 4.4 के प्रश्न 5 का उत्तर- सत्य

भाग 4.4 के प्रश्न 6 का उत्तर- असत्य

भाग 4.4 के प्रश्न 7 का उत्तर- असत्य

भाग 4.4 के प्रश्न 8 का उत्तर- असत्य

4.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Habibullah, A.B.M. – *Foundation of Muslim Rule in India*
2. Prasad Ishwari – *History of Medieval India*
3. Prasad Ishwari – *A History of the Quraunah Turks in India*
4. Srivastav, A.L. – *The Sultanat of Delhi*
5. Majumdar (General Editor) – *Struggle for Empire*
6. Elliot & Dowson – *The History of India as Told by Its Own Historians*
7. Hodivala, S. H. – *Studies in IndoMuslim History*
8. Jackson, Peter – *The Delhi Sultanate: A Political and Military History*
9. हबीब, मुहम्मद – *दिल्ली सल्तनत* भाग 1
10. श्रीवास्तव,ए.एल.– दिल्ली सल्तनत
11. पाण्डेय, विमल चन्द्र – मध्यकालीन भारत का इतिहास
9. हबीब, मुहम्मद - दिल्ली सल्तनत भाग 1
10. श्रीवास्तव,ए.एल.- दिल्ली सल्तनत
11. पाण्डेय, विमल चन्द्र - मध्यकालीन भारत का इतिहास

4.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Minhaj-i-Siraj – *Tabqat-i-Nasiri* (Eng Tr. Raverty, H. G.)
2. Isami – *Futu-us-Salatin* (Edited by Husain, A. M.)
2. Lane Poole – *The Mohammadan Dynasties*
3. Lane Poole – *Medieval India under Mohammadan Rule*

4.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. तुर्की आक्रमण की पूर्व संध्या में भारत की राजनीतिक अवस्था का वर्णन कीजिए।

इकाई एक- गुलाम वंशः कुतुबुद्दीन ऐबक , इल्तुतमिश, रजिया तथा बलवन

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 कुतबुद्दीन ऐबक द्वारा तथाकथित गुलाम वंश की स्थापना
    1.3.1 सुल्तान बनने से पहले कुतबुद्दीन ऐबक के कार्य
    1.3.2 कुतबुद्दीन ऐबक के सुल्तान बनने के समय की राजनीतिक दशा
    1.3.3 सुल्तान के रूप में कुतबुद्दीन ऐबक
    1.3.4 कुतबुद्दीन ऐबक की मृत्यु के बाद आरामशाह का सुल्तान के पद पर प्रतिष्ठित होना
1.4 सुल्तान के रूप में इल्तुतमिश
    1.4.1 इल्तुतमिश का प्रारम्भिक जीवन
    1.4.2 सुल्तान बनने के बाद इल्तुतमिश की प्रारम्भिक समस्याएं
    1.4.3 इल्तुतमिश द्वारा अपनी कठिनाइयों का निराकरण
1.5 इल्तुतमिश के प्रशासनिक कार्य
    1.5.1 वंशानुगत शासन
    1.5.2 इक्ता प्रणाली
    1.5.3 न्याय व्यवस्था
    1.5.4 मुद्रा सम्बन्धी सुधार
    1.5.5 तुर्कान‍े चहलगानी
    1.5.5 तुर्कान‍े चहलगानी
1.6 सुल्तान रज़िया
    1.6.1 रज़िया का राज्यारोहण
    1.6.2 रज़िया द्वारा विरोधियों का दमन
    1.6.3 रज़िया का पतन
1.7. सुल्तान बलबन
    1.7.1 बलबन का राज्यारोहण
    1.7.2 बलबन की रक्त एवं लौह की नीति
    1.7.3 जहांदारी
    1.7.4 बलबन का राजत्व का दैविक सिद्धान्त
1.8 साराशं
1.9 पारिभाषिक शब्दावली
1.10 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर
1.11 संदर्भ ग्रंथ सूची
1.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.13 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

सन् 1192 में तराइन के द्वितीय युद्ध में मुहम्मद गोरी की निर्णायक विजय तथा भारत में राजनीतिक सत्ता के परिवर्तन के फलस्वरूप दिल्ली सल्तनत की स्थापना 1206 ईसवी में हुई थी। दिल्ली सल्तनत के प्रारम्भिक चरण में तीन राज्य वंशों के संस्थापक अपने प्रारम्भिक जीवन में गुलाम रह चुके थे इसलिए भ्रमवश इन तीन राज्य वंशों को एक साथ मिलाकर प्रायः गुलाम वंश के नाम से जाना जाता है। दिल्ली संल्तनत के पहले सुल्तान कुतबुद्दीन ऐबक ने दिल्ली सल्तनत को गज़नी साम्राज्य से अलग कर व्यावहारिक दृष्टि से एक स्वतन्त्र राज्य का रूप प्रदान किया परन्तु उसको ठोस प्रशासनिक ढांचा व राजनीतिक स्थायित्व प्रदान करने का श्रेय इल्तुतमिश को जाता है। इल्तुतमिश की पुत्री रज़िया ने सुल्तान के रूप में अपनी योग्यता का परिचय दिया परन्तु अमीरों के प्रबल विरोध के कारण उसका पतन हो गया।

सुल्तान नासिरुद्दीन महमूद के शासनकाल में वास्तविक शक्ति उसके वज़ीर गियासुद्दीन बलबन के हाथों में रही। सुल्तान नासिरुद्दीन महमूद की मृत्यु के बाद बलबन खुद सुल्तान बन बैठा। बलबन तथाकथित गुलाम वंश का सबसे शक्तिशाली एवं सफल शासक था, उसने लौह एवं रक्त की नीति को अपना कर अपने राज्य को सुदृढ़ किया। बलबन ने अपने राज्य में शान्ति एवं व्यवस्था स्थापित करने में सफलता प्राप्त की। उसने राजत्व के दैविक सिद्धान्त का पोषण कर सुल्तान के पद और उसकी प्रतिष्ठा में अपार वृद्धि की और शासक के अधिकार व उसके कर्तव्य को एक नया आयाम प्रदान किया।

तथाकथित गुलाम वंश के शासकों ने 13 वीं शताब्दी में उत्तर भारत में मुस्लिम शासन को स्थायित्व प्रदान करने में आंशिक सफलता अवश्य प्राप्त की किन्तु प्रशासनिक दृष्टि से उनकी उपलब्धियां बहुत सीमित रहीं। इस काल में आन्तरिक विद्रोह तथा वाह्य आक्रमणों की समस्या निरन्तर बनी रही। इस काल में शासकों ने प्रजा के हित में कार्य करने का कोई उल्लेखनीय प्रयास नहीं किया और न ही प्रशासनिक ढांचे को सुदृढ़ करने में कोई सफलता प्राप्त की, उनको प्रजा के हृदय पर राज करने में तनिक भी सफलता नहीं मिली और उनका अस्तित्व केवल तलवार के बल पर बना रह सका।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई्र का उद्देश्य आपकों को भारत में मुस्लिम शासन काल के प्रारम्भिक चरण की चुनौतियों, इस काल के प्रमुख शासकों की उपलब्धियों तथा उनकी असफलताओं से परिचित कराना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1- तथाकथित गुलाम वंश के प्रमुख शासकों के समक्ष कठिनाइयां तथा उनका निराकरण करने हेतु उनके प्रयास।

2- भारत में मुस्लिम शासन के प्रारम्भिक चरण का प्रशासनिक ढांचा।

3- उत्तराधिकार का नियम, सुल्तान-अमीर सम्बन्ध तथा राजत्व का सिद्धान्त।

4. तथाकथित गुलाम वंश के सुल्तानों द्वारा आन्तरिक विद्रोहों एवं वाह्य आक्रमणों से निपटने के प्रयास।

1.3 कुतबुद्दीन ऐबक द्वारा तथाकथित गुलाम वंश की स्थापना

1.3.1 सुल्तान बनने से पहले कुतबुद्दीन ऐबक के कार्य

तुर्क माता-पिता की संतान कुतबुद्दीन ऐबक पहले काज़ी फ़खरुद्दीन का गुलाम था। उसके स्वामी ने उसे शिक्षित किया। उसके स्वामी की मृत्यु के बाद उसके पुत्रों ने कुतबुद्दीन को बेच दिया और वह मुहम्मद गोरी का गुलाम बन गया और अपनी प्रतिभा के बल पर वह मुहम्मद गोरी का महत्वपूर्ण अमीर बन गया। ऐबक ने तराइन के युद्ध में मुहम्मद गोरी को विजय दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। मुहम्मद गोरी ने उसे अपने साम्राज्य के भारतीय भाग का वाइसराय नियुक्त किया और अपने प्रतिनिधि के रूप में उसे राजकाज चलाने का अधिकार प्रदान किया। मुहम्मद गोरी की अनुपस्थिति में ऐबक ने अजमेर व मेरठ में विद्रोहियों का दमन कर दिल्ली पर अधिकार कर लिया। जयचन्द के विरुद्ध हुए युद्ध में मुहम्मद गोरी की विजय में भी उसकी महत्वपूर्ण भूमिका रही। ऐबक ने कोइल, अजमेर, अन्हिलवाड़, बदायूं, चन्दवार, कन्नौज, बुन्देलखण्ड पर अधिकार कर गोरी के साम्राज्य का विस्तार किया। इसी दौरान बख्तियार खल्जी ने बिहार तथा बंगाल के एक भाग पर अधिकार कर गोरी के साम्राज्य का विस्तार किया। मुहम्मद गोरी ने ऐबक को 'मलिक' की उपाधि से विभूषित किया। मुहम्मद गोरी ऐबक को ही अपने साम्राज्य के भारतीय भाग का उत्तराधिकारी बनाना चाहता था। उसकी सन् 1206 में जब मृत्यु हुई तो गज़नी साम्राज्य के भारतीय अंग पर शासन करने का दायित्व कुतबुद्दीन ऐबक को ही सौंपा गया।

1.3.2 कुतबुद्दीन ऐबक के सुल्तान बनने के समय की राजनीतिक दशा

मुहम्मद गौरी की उत्तर भारत की विजय को स्थायित्व प्रदान करने के लिए यह आवश्यक था कि और भी अधिक सैनिक अभियानों से इसे सवंर्द्धित किया जाए परन्तु उसकी आकस्मिक मृत्यु ने उसके ग़ज़नी साम्राज्य की जड़ें भी हिला दी थीं। ख्वारिज़्म का शाह अब हिन्दू कुश के पार अपने साम्राज्य की सीमा बढ़ाकर गौर साम्राज्य पर भी अपने अधिकार के लिए अग्रसर हो सकता

था। चूंकि भारतीय प्रान्त इसी गौर साम्राज्य का अंग थे इसलिए मध्य एशिया की अस्थिर राजनीतिक दशा का उन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। इधर भारत में तुर्क शासन का निरन्तर विरोध हो रहा था। कालिन्जर पर चन्देलों ने तथा दोआब पर गहड़वालों ने पुनराधिकार कर लिया था। आसाम में बख्तियार खल्जी की पराजय हुई थी। भारत में इस समय संगठित तुर्क शक्ति-प्रदर्शन की अतीव आवश्यकता थी। पुत्रहीन मुहम्मद गौरी का विलासी भतीजा गियासुद्दीन महमूद फ़ीरोज़कोह के आसपास के क्षेत्र पर अधिकार तथा अन्य प्रान्त पतियों पर नाम मात्र के आधिपत्य से संतुष्ट था। मुहम्मद गौरी की राजधानी गज़नी पर उसके गुलाम ताजुद्दीन एल्दौज़ ने अधिकार कर लिया था और इस आधार पर वह उसके अन्य गुलामों - सिंध के सूबेदार नासिरुद्दीन कुबाचा और भारतीय प्रान्तों के लिए नियुक्त वाइसराय कुतबुद्दीन ऐबक की तुलना में अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करना चाहता था।

1.3.3 सुल्तान के रूप में कुतबुद्दीन ऐबक

जून, 1206 में, लाहौर में ऐबक ने सत्ता सम्भाली किन्तु उसने न तो कोई राजसीय उपाधि धारण की और न ही अपने नाम के सिक्के ढलवाए परन्तु उसने अपने अधीन क्षेत्र का गज़नी साम्राज्य से सम्बन्ध विच्छेद कर उसे व्यावहारिक दृष्टि से एक स्वतन्त्र राज्य का दर्जा दिलाने का उल्लेखनीय कार्य अवश्य किया। ऐबक का ऐसा साहसिक कदम एल्दौज़ की उस पर नाराज़गी का कारण बना। एल्दौज़ से निपटने के लिए कुतबुद्दीन मुख्यतः लाहौर में ही बना रहा और उसने अपने राज्य-विस्तार से अधिक महत्व उसकी सुरक्षा को दिया। उसने बंगाल में खिल्जियों के विद्रोह का दमन कर अली मर्दान को वहां अपना सूबेदार नियुक्त किया। राज्य के पश्चिम में परिस्थितियों के बदलने से कुतबुद्दीन को लाभ हुआ। ख्वारिज़्म के शाह ने 1208 ईसवी में एल्दौज़ को गज़नी से निकाल बाहर किया। एल्दौज़ ने पंजाब में शरण ली किन्तु कुतबुद्दीन ने उसे वहां से खदेड़ दिया। कुतबुद्दीन ने कुबाचा को सिंध से निकालने का कोई प्रयास नहीं किया अपितु उससे समझौता कर उसे सिंध तथा मुल्तान का गवर्नर नियुक्त कर दिया। सन् 1210 में चौगान खेलते समय घोड़े से गिरकर चोट लगने से जब उसकी आकस्मिक मृत्यु हुई तब तक उसका राज्य राजनीतिक स्थायित्व प्राप्त नहीं कर सका था। उसे अपनी बहुसंख्यक प्रजा के विरोध और राजपूत प्रतिरोध का मुकाबला करते हुए इसके लिए समय ही नहीं मिल पाया था परन्तु अपनी दान-प्रियता और न्यायप्रियता के कारण एक शासक के रूप में उसकी ख्याति निर्विवाद है। अपने राज्य में शान्ति एवं व्यवस्था स्थापित करने की दिशा में भी उसने सार्थक प्रयास किए। उसके द्वारा बनाए गए अमीरों को कुतबी अमीर कहा गया। दिल्ली की कुव्वत-उल इस्लाम' मस्जिद, अजमेर की अढ़ाई दिन का झोंपड़ा मस्जिद और विश्व प्रसिद्ध कुतुब मीनार के निर्माण का प्रारम्भ उसी के काल में हुआ। इतिहाकार मिनहाज़-उद्दीन सिराज़ तथा हसन निज़ामी कुतबुद्दीन ऐबक को एक शासक के रूप में सफल मानते हैं।

1.3.4 कुतबुद्दीन ऐबक की मृत्यु के बाद आरामशाह का सुल्तान के पद परप्रतिष्ठित होना

कुतबुद्दीन ऐबक के पुत्र आरामशाह को उसकी मृत्यु के बाद लाहौर में सुल्तान बनाया गया। आरामशाह एक अयोग्य सुल्तान सिद्ध हुआ। दिल्ली में उसके राज्य के अधिकांश अमीर बरनं के मुक्ती (सूबेदार) और कुतबुद्दीन ऐबक के दामाद इल्तुतमिश को सुल्तान बनाना चाहते थे। आरामशाह एक वर्ष से भी कम समय के लिए सुल्तान रह पाया। विद्रोहियों के दमन हेतु दिल्ली की ओर अभियान करते समय वह मारा गया और कुतबुद्दीन द्वारा स्थापित राज्य वंश अपनी स्थापना के पाँच वर्ष बाद ही समाप्त हो गया।

1.4 सुल्तान के रूप में इल्तुतमिश

1.4.1 इल्तुतमिश का प्रारम्भिक जीवन

शाम्सुद्दीन इल्तुतमिश को गज़नी में कुतबुद्दीन ऐबक ने खरीद कर अपना गुलाम बनाया था। 1205 ईसवी में खोक्खरों के विरुद्ध युद्ध में साहस व वीरतापूर्ण प्रदर्शन के पुरस्कार में मुहम्मद गोरी के आदेश पर उसे दासत्व से मुक्त कर दिया गया। तुर्कों द्वारा ग्वालियर विजय के उपरान्त उसे ग्वालियर का किलेदार बना दिया गया और फिर उसे बरन का सूबेदार बनाया गया। कुतबुद्दीन ऐबक ने अपनी बेटी का उसके साथ विवाह कर उसे अपना एक प्रमुख अमीर बना दिया। कुतबुद्दीन ऐबक की मृत्यु के बाद उसके अयोग्य पुत्र आरामशाह के सुल्तान बनने पर दिल्ली के प्रभावशाली उलेमाओं व अमीरों का गुट उसके विरुद्ध हो गया। दिल्ली के काज़ी के नेतृत्व में इस गुट ने इल्तुतमिश को सुल्तान बनने के लिए आमंत्रित किया। दिल्ली के बागियों को कुचलने के अपने अभियान में आरामशाह असफल रहा और वह मारा गया। आरामशाह को पराजित करने में इल्तुतमिश की प्रमुख भूमिका रही। जनता व अमीरों के समर्थन के बाद सुल्तान के रूप में उसके निर्वाचित होने का मार्ग प्रशस्त हो गया।

1.4.2 सुल्तान बनने के बाद इल्तुतमिश की प्रारम्भिक समस्याएं

1. सन् 1211 में शाम्सुद्दीन इल्तुतमिश सुल्तान बना परन्तु उसके अधिकार में केवल दिल्ली का प्रान्त था। लाहौर के कुतबी अमीर इल्तुतमिश को अपना सुल्तान नहीं मान रहे थे। मुल्तान पर नासिरुद्दीन कुबाचा ने अधिकार कर लिया था और लखनौती (बंगाल) में अली मर्दान ने अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी थी। पश्चिमी पंजाब पर एल्दौज़ ने अधिकार कर रखा था।

2. ऐबक की मृत्यु का लाभ उठाकर जालौर व रणथम्भौर के नेतृत्व में राजपूत प्रतिरोध मुखर हो उठा था। अजमेर, ग्वालियर, बयाना और दोआब के राजपूतों ने भी स्वयं को स्वतन्त्र घोषित कर दिया था।

3. गज़नी का शासक एल्दौज़ कुतबुद्दीन ऐबक के काल से ही दिल्ली सल्तनत पर अपने अधिकार का दावा कर रहा था। एल्दौज़ ने ऐबक की मृत्यु के बाद दिल्ली सल्तनत के संकट का लाभ उठाकर दिल्ली सल्तनत को अपने राज्य में मिलाने के प्रयास तेज़ कर दिए।

4. शम्सुद्दीन इल्तुतमिश पर गुलाम (कुतबुद्दीन ऐबक) के गुलाम होने का कलंक था।

1.4.3 इल्तुतमिश द्वारा अपनी कठिनाइयों का निराकरण

1. गज़नी का शासक एल्दौज़ जो कि उसके पूर्व स्वामी कुतबुद्दीन ऐबक की तुलना में भी स्वयं को श्रेष्ठ मानता था, उसे अपनी आधीनता स्वीकार करने के लिए विवश कर रहा था। चारों ओर शत्रुओं घिरे इल्तुतमिश ने कूटनीति का आश्रय लिया और एल्दौज़ को संतुष्ट करने के लिए उसकी सार्वभौमिकता अंगीकार करते हुए उसके द्वारा भेजे गए राज चिह्नों को स्वीकार कर लिया।

2. कुतबी अमीरों और दिल्ली के सैनिक रक्षकों के संयुक्त विद्रोह को इल्तुतमिश ने कठोरतापूर्वक कुचल दिया।

3. सन् 1214 में ख्वारिज़्म के शाह ने एल्दौज़ की राजधानी गज़नी पर अधिकार कर लिया। एल्दौज़ भागकर लाहौर आ गया और फिर दिल्ली पर अपना दावा पेश करते हुए उसने दिल्ली की ओर कूच किया परन्तु इल्तुतमिश ने उसे तराइन में पराजित कर बन्दी बना लिया और इस प्रकार एल्दौज़ द्वारा उत्पन्न संकट का उसने सफलतापूर्वक निपटारा किया।

4. इल्तुतमिश के शासनकाल में सन् 1220 में चंगेज़ खां के नेतृत्व में मंगोल आक्रमण का संकट दिल्ली सल्तनत के लिए उठ खड़ा हुआ था। ख्वारिज़्म के युवराज मांगबर्नी का पीछा करते हुए मंगोल दिल्ली सल्तनत की उत्तर-पश्चिमी सीमा तक पहुंच गए थे। मांगबर्नी ने इल्तुतमिश से शरण मांगी परन्तु उसने नम्रतापूर्वक शरण देने से इंकार कर दिया। मांगबर्नी निराश होकर फ़ारस चला गया और उसका पीछा करने वाले मंगोल भी दिल्ली सल्तनत की उत्तर-पश्चिमी सीमा छोड़ कर लौट गए।

5. इल्तुतमिश ने सन् 1217 में कुबाचा से लाहौर छीन लिया था परन्तु फिर भी उसका वह पूर्ण दमन नहीं कर पाया था। कुबाचा की शक्ति को कुचलने में ख्वारिज़्म के युवराज मांगबर्नी की महत्वपूर्ण भूमिका रही। कुबाचा की दुर्बल स्थिति का लाभ उठाकर सन् 1225 में इल्तुतमिश ने लाहौर, भटिण्डा तथा कोहराम पर अधिकार कर लिया। कुबाचा का पीछा करते हुए इल्तुतमिश खक्खर पहुंचा जहां सिंधु नदी में डूब जाने से कुबाचा की मृत्यु हो गई। इल्तुतमिश ने सुगमता से पंजाब तथा सिंध पर अपना अधिकार कर लिया।

6. विद्रोही अली मर्दान की हत्या कर खिल्जी सरदार एवाज़ ने स्वयं को लखनौती का स्वतन्त्र शासक घोषित कर दिया था। जैसे ही मंगोल संकट समाप्त हुआ, इल्तुतमिश ने सन् 1226 में लखनौती की ओर प्रस्थान कर एवाज़ को अपनी आधीनता स्वीकार करने के लिए बाध्य किया। बाद में फिर से लखनौती में विद्रोह हुए किन्तु सन् 1230 में इल्तुतमिश को लखनौती पर अपना अधिकार करने में सफलता मिली।

7. इल्तुतमिश ने सन् 1226 में हाल ही में फिर से स्वतन्त्र हुए राजपूत राज्यों पर पुनराधिकार हेतु अभियान छेड़ा। उसने रणथम्भौर, मंदौर, जालौर, बयाना, अजमेर तथा नागौर आदि राज्यों पर विजय प्राप्त की। इल्तुतमिश को बुंदेलखण्ड पर पुनर्विजय में विशेष सफलता नहीं मिली किन्तु दोआब व अवध पर उसका पुनराधिकार अवश्य स्थापित हो गया।

8. इल्तुतमिश पर गुलाम के गुलाम होने का कलंक लगा था। अपनी सत्ता को सुदृढ़ कर अब वह अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाना चाहता था। इस उद्देश्य से उसने खलीफ़ा अल-मुस्तगीर बिल्लाह से सुल्तान पद हेतु वैधानिक अधिकार पत्र व खिलअत प्राप्त की। इस प्रकार वैधानिक व धार्मिक दृष्टि से वह दिल्ली सल्तनत का प्रथम सुल्तान कहलाने का अधिकारी बना।

1.5 इल्तुतमिश के प्रशासनिक कार्य

1.5.1 वंशानुगत शासन

इल्तुतमिश ने 25 वर्ष सुल्तान के रूप में शासन किया और उसकी मृत्यु के बाद लगभग 30 वर्षों तक उसी के वंशज शासन करते रहे। दिल्ली सल्तनत के इतिहास में पहली बार वंशाननुगत शासन स्थापित करने में इल्तुतमिश को ही सफलता मिली।

1.5.2 इक्ता प्रणाली

इल्तुतमिश ने दिल्ली सल्तनत को न केवल वाह्य आक्रमणों तथा आन्तरिक विद्रोहों के संकट से मुक्त किया अपितु उसे शक्ति, सुरक्षा, प्रतिष्ठा, राजनीतिक स्थिरता व सैनिक श्रेष्ठता प्रदान की। वास्तव में भारत में मुस्लिम प्रभुसत्ता का श्री-गणेश करने का श्रेय इल्तुतमिश को ही जाता है। तेरहवीं शताब्दी में दिल्ली सल्तन्त के सुल्तानों में इल्तुतमिश ही पहला सुल्तान था जिसने भारत में सांमती प्रथा को समाप्त करने, अपने राज्य के सभी भागों को केन्द्र से जोडने के लिए इक्ता प्रणाली की शुरूवात की । इस प्रणाली के प्रारम्भ होने से तुर्की शासक वर्ग की धन से सम्बन्धित लिप्सा की समाप्ति हुई और नये विजित प्रदेशों में कानून व्यवस्था की बहाली के साथ ही राजस्व वसूली की समस्या का समाधान हुआ।

1.5.3 न्याय व्यवस्था

इल्तुतमिश ने न्याय प्रशासन को सुव्यवस्थित करने के लिए सभी नगरों में क़ाज़ियों की नियुक्ति की।

1.5.4 मुद्रा सम्बन्धी सुधार

कुतुबुद्दीन ऐबक ने अपने नाम के सिक्के नहीं चलवाए। इल्तुतमिश दिल्ली सल्तनत का पहला सुल्तान था जिसने अपने नाम के सिक्के चलवाए। इल्तुतमिश ने 175 ग्रेन का शुद्ध चाँदी का टंका तथा तांबे का जीतल चलवाया। इन पर पर अरबी भाषा में उसका नाम अंकित रहता था। टंका और जीतल मध्यकाल में मूल मुद्राओं के रूप में प्रतिष्ठित रहे।

1.5.5 तुर्कांने चहलगानी

दिल्ली सल्तनत पर मुइज़्ज़ी तथा कुतबी अमीरों के प्रभाव को कम करने के लिए इल्तुतमिश ने अपने विश्वस्त दासों में से चालीस अमीरों का एक दल - तुर्कान-ए-चहलगानी गठित किया। बलबन इसी गुट का एक सदस्य था। इल्तुतमिश के प्रति वफ़ादारी की शपथ लेने वाले इन अमीरों के कारण ही उसकी मृत्यु के तीस वर्ष तक उसके राज्यवंश का अस्तित्व बना रहा किन्तु उनकी निष्ठा उसके उत्तराधिकारियों के प्रति सदैव संदिग्ध ही रही।

1.6 सुल्ताना रज़िया

1.6.1 रज़िया का राज्यारोहण

अपने पुत्र नासिरुद्दीन महमूद की मृत्यु के बाद अपने शेष पुत्रों में से किसी को भी इल्तुतमिश ने अपना उत्तराधिकारी बनाना उचित नहीं समझा। सामाजिक व राजनीतिक परम्पराओं को तोड़ते हुए उसने रज़िया को अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया परन्तु उसकी मृत्यु के बाद उसके प्रभावशाली अमीरों ने उसके पुत्र रुकनुद्दीन फ़िरोज़ शाह को सुल्तान बनाया। फ़िरोज शाह की माँ शाह तुर्कन ने रज़िया को बन्दी गृह में डलवा दिया परन्तु शीघ्र ही नए सुल्तान तथा उसकी माँ के अनाचार से प्रजा तथा अमीर उनके विरुद्ध हो गए। रज़िया ने दिल्ली की जनता के समर्थन से सुल्तान का पद प्राप्त किया परन्तु उसे प्रान्तीय सूबेदारों का समर्थन प्राप्त नहीं हो सका।

1.6.2 रज़िया द्वारा विरोधियों का दमन

सुल्तान का चयन करना, तुर्क अमीर अपना विशेषाधिकार मानते थे। मात्र जनसमर्थन के बल पर रज़िया का सुल्तान बनाया जाना उन्हें स्वीकार्य नहीं था। प्रान्तीय सूबेदारों के साथ-साथ वज़ीर निज़ामुलमुल्क जुनैदी भी उसके राज्यारोहण के विरुद्ध था। रज़िया ने अमीरों में फूट डालकर

मलिक सालारी तथा मलिक सालारी को अपने पक्ष में कर लिया तथा अपने विरोधियों निज़ामुलमुल्क जुनैदी, मलिक कूची और मलिक जानी आदि का सुगमता से दमन कर दिया। अब केन्द्रीय शासन में व प्रान्तों में रज़िया के समर्थकों की ही नियुक्ति की गई। उच्च पदों पर तुर्क अमीरों के एकाधिकार को तोड़ते हुए एक अबीसीनियन, मलिक याकूत को अमीर-ए-अखुर नियुक्त किया गया। रणथम्भौर पर राजपूतों द्वारा पुनराधिकार के प्रयास को रज़िया ने विफल कर दिया तथा ग्वालियर के किलेदार के विद्रोह को भी उसने सुगमता से कुचल दिया। रज़िया ने अपने शासनकाल में अपने साहस, चातुर्य व योग्यता का परिचय देते हुए विद्रोहियों की हर साज़िश को नाकाम कर दिया।

1.6.3 रज़िया का पतन

रज़िया ने एक स्वतन्त्र और शक्तिशाली सुल्तान के रूप में प्रतिष्ठित किया और तुर्कान चहलगानी के प्रभाव को सीमित रखा। उसको तुर्कान चहलगानी का समर्थन कभी भी प्राप्त नहीं हुआ, वह केवल उनमें फूट डालकर अपना सिंहासन बचाए रखने में सफल रही परन्तु अबीसीनियन मलिक याकूत से उसकी निकटता व उसको अत्यधिक महत्व दिए जाने से तुर्क अमीर उसके विरुद्ध संगठित हो गए। रज़िया ने लाहौर के सूबेदार कबीर खाँ के विद्रोह का दमन करने में सफलता प्राप्त की किन्तु अमीर-ए-हाजिब मलिक एतगीन, भटिण्डा के सूबेदार अल्तूनिया आदि का वह दमन नहीं कर सकी। मलिक याकूत मारा गया, रज़िया को बन्दी बना लिया गया और रज़िया के भाई बहराम शाह को सुल्तान बनाया गया। रज़िया ने असन्तुष्ट अल्तूनिया को अपने पक्ष में कर उसके साथ विवाह कर लिया और फिर से सत्ता प्राप्त करने का अभियान प्रारम्भ किया किन्तु असफलता ही उसके हाथ लगी। पराजित होने के बाद भागते हुए रज़िया तथा अल्तूनिया कैथल में डाकुओं द्वारा मारे गए। रज़िया के पतन का कारण मुख्यतः मलिक याकूत के प्रति उसका प्रेम माना जाता है परन्तु वास्तव में पुरुष प्रधान समाज में एक स्त्री का इतना शक्तिशाली होना तथा उसके द्वारा तुर्कान चहलगानी के प्रभाव को क्षीण करने के लिए सतत प्रयत्नशील होना उसके लिए घातक सिद्ध हुआ। इतिहासकार मिनहाज-उद्-दीन सिराज़ ने एक सुल्तान के रूप में उसकी योग्यता की प्रशंसा करते हुए उसके पतन का मुख्य कारण उसका स्त्री होना माना है।

1.7. सुल्तान बलबन

1.7.1 बलबन का राज्यारोहण

बलबन तुर्कान चहलगानी का सदस्य था। रज़िया के पतन में उसकी भी भूमिका थी। सुल्तान अलाउद्दीन मसूद शाह के शासनकाल में मंगोलों के आक्रमणों को विफल कर उसने अपनी शक्ति में वृद्धि की। बलबन सुल्तान नासिरुद्दीन महमूद का वज़ीर बना और उसके लगभग दो दशकों के

शासनकाल में उसी की प्रधान भूमिका रही। बलबन ने स्वयं अपना विवाह इल्तुतमिश की विधवा से तथा अपनी बेटी का विवाह सुल्तान के साथ कर अपना राजनीतिक कद और ऊँचा कर लिया। वज़ीर के रूप में दोआब में हिन्दू प्रतिरोध को कुचलने, मंगोल आक्रमणों का सफलतापूर्वक मुकाबला करने के अतिरिक्त बलबन ने बंगाल के सूबेदार तुगरिल खाँ, मुल्तान, उच के सूबेदार किश्लू खाँ तथा अवध के सूबेदार कुतलुग खाँ के विद्रोहों को भी विफल करने में सफलता प्राप्त की। सुल्तान नासिरुद्दीन महमूद की मृत्यु में बलबन का हाथ होना प्रमाणित नहीं हो सका है किन्तु यह निश्चित है कि अवसरवादी बलबन ने उसकी मृत्यु के बाद उत्पन्न राजनीतिक अस्थिरता का लाभ उठाकर स्वयं को सुल्तान के रूप में प्रतिष्ठित कर लिया।

1.7.2 बलबन की रक्त एवं लौह की नीति

1. प्रशा के कूटनीतिज्ञ बिस्मार्क से लगभग छह सौ साल पहले सुल्तान बलबन ने रक्त एवं लौह की नीति अपना कर अराजकता, कुशासन, सैनिक दुर्बलता, राजनीतिक षडयन्त्र व नैतिक पतन पर अंकुश लगाने में सफलता प्राप्त की थी। बलबन स्वयं प्रभावशाली तुर्काने चहलगानी का एक सदस्य था। वह अमीरों की महत्वाकांक्षा व उनकी षडयन्त्रकारी प्रवृत्तियों से भलीभांति अवगत था। तुर्काने चहलगानी का दमन करना उसके लिए पहली चुनौती था। उसने अमीरों की गतिविधियों पर तीखी नज़र रखने के लिए अपने गुप्तचर विभाग को अत्यन्त सक्षम बनाया। केन्द्र, प्रान्त, जिलों और नगरों के गुप्तचरों को अपने आसपास घटित सभी गतिविधियों की दैनिक जानकारी सुल्तान तक पहुंचानी होती थी और ऐसा न कर पाने पर उन्हें कठोर से कठोर दण्ड का भागी होना पड़ता था। अमीरों का मान मर्दन करने का उसने हर सम्भव उपाय अपनाया। अपने कर्तव्यों के प्रति असावधान रहने के कारण बदायूं के सूबेदार मलिक बकबक को पिटवा-पिटवा कर मार डाला और अवध के सूबेदार हैबात खाँ के कोड़े लगवाए। बंगाल में विद्रोहियों से पराजित होकर लौटे हुए एक अमीर को उसने नगर के फाटक पर लटकवा दिया। उसने अपने चचेरे भाई शेर खाँ की योग्यता से सशंकित होकर उसे विष देकर मरवा डाला। बंगाल के विद्रोही सूबेदार तुगरिल को पराजित कर उसने उसे उसके हज़ारों समर्थकों सहित सार्वजनिक स्थान पर प्राण दण्ड दिया।

2. सुल्तान बनने पर बलबन को विरासत में एक असंगठित सेना मिली थी। राज्य की सैन्य शक्ति मुख्यतः अमीरों की सैनिक टुकड़ियों की अनुकम्पा पर आश्रित थी। बलबन ने एक केन्द्रीय सेना का संगठन किया। उसने सैनिकों के वेतन के लिए इक्ता प्रणाली को समाप्त कर उनके नकद वेतन की व्यवस्था की। सैनिकों की भर्ती का आधार उनकी शारीरिक क्षमता व सैन्य कौशल रखा गया।

3. केन्द्रीय सत्ता के शिथिल होने के कारण अराजकतावादी तत्वों का दुःसाहस बढ़ता जा रहा था। दिल्ली नगर को मेवाती लुटेरे दिन-दहाड़े लूटते रहते थे। दिल्ली के असपास के जंगल उनके छिपने का ठिकाना बने हुए थे। बलबन ने दिल्ली के आसपास के जंगलों को साफ़ करवाया, दिल्ली

की सुरक्षा के लिए उसके दक्षिण में एक दुर्ग का निर्माण करवा कर उसमें अपनी पुनर्संगठित सेना को रखा। मेवातियों के उन्मूलन के लिए निरन्तर अभियान कर लगभग एक लाख मेवातियों को मार दिया गया। दोआब, कटेहर तथा पंजाब प्रान्त के नमक में विद्रोहियों को उसने निर्ममतापूर्वक कुचल कर वहां शान्ति एवं व्यवस्था स्थापित की।

4. 12 वीं शताब्दी में दिल्ली सल्तनत के अस्तित्व के लिए मंगोल आक्रमण एक बड़ा संकट बने हुए थे। बलबन ने इस समस्या के निराकरण के लिए ठोस उपाय के रूप में जहां एक शक्तिशाली सेना का संगठन किया वहीं दूसरी ओर राज्य की सुरक्षा के लिए सल्तनत की उत्तर-पश्चिमी सीमा पर दुर्गों की श्रृंखला का निर्माण करवाया। शेर खाँ जैसे योग्य सेनानायक को मंगोलों का सामना करने के लिए राज्य की उत्तर-पश्चिमी सीमा पर नियुक्त किया गया और सन् 1270 में उसकी मृत्यु के बाद उसने यह दायित्व क्रमशः अपने पुत्रों बुगरा खाँ व मुहम्मद को सौंपा। सन् 1286 में मुहम्मद मंगोलों से लड़ता हुआ मारा गया। मंगोलों से अपने राज्य को सुरक्षित रखने में बलबन आमतौर पर सफल रहा।

1.7.3 जहांदारी

बलबन ने अपने साम्राज्य को स्थायित्व देने के लिए यह आवश्यक समझा कि नवीन विजय-अभियानों की नीति (जहांगीरी) का परित्याग कर केवल उसको सुरक्षित एवं सुसंगठित रखने की नीति (जहांदारी) को महत्व दिया जाए। इस नीति के अन्तर्गत विद्रोहों के दमन, सीमा सुरक्षा के समुचित प्रबन्ध, राज्य में शान्ति एवं व्यवस्था को कायम रखने को विजय-अभियानों पर वरीयता दी गई।

1.7.4 बलबन का राजत्व का दैविक सिद्धान्त

बलबन का राजत्व का सिद्धान्त प्रत्यक्षतः निरंकुश, स्वेच्छाचारी शासन का समर्थक दिखाई देता है परन्तु वास्तव में यह अनेक उपयोगी नियमों, नैतिक व धार्मिक आदर्शों से बंधा हुआ था। बलबन ने सुल्तान के पद की खोई हुई प्रतिष्ठा फिर से स्थापित करने और जनता व आभिजात्य वर्ग में सुल्तान के प्रति श्रद्धा तथा भय का भाव फिर से संचारित करने के लिए राजत्व के दैविक सिद्धान्त का पोषण किया। इस्लाम के इतिहास से यह विदित होता है किं खलीफ़ा का चयन किया जाता था और खलीफ़ा के अधिकारों का उसके कर्तव्यों से अटूट सम्बन्ध था किन्तु राजत्व के दैविक सिद्धान्त के अन्तर्गत शासक पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि माना जाता है और उसके आदेश में ईश्वर का आदेश प्रतिध्वनित होता है। राज्य में शासक का कोई समकक्ष नहीं हो सकता और न ही शासक के रूप में उसका कोई सम्बन्धी हो सकता है। शासक के सगे रक्त सम्बन्धियों के लिए भी उसके प्रति श्रद्धा और स्वामिभक्ति का प्रदर्शन करना, उनका कर्तव्य होता है। इस परिकल्पना को व्यवहार में

लाने के लिए उसने वैभवशाली एवं गरिमापूर्ण दरबार लगाया। शासक के लिए आम इंसान की तरह हँसना या रोना निषिद्ध हो गया। बलबन ने दरबार में अपने पुत्र महमूद की मृत्यु का समाचार सुनकर भी रोना उचित नहीं समझा। आभिजात्य वर्ग, उलेमा तथा विद्वानों के अतिरिक्त उसने आम आदमियों से मिलना-जुलना बिलकुल बन्द कर दिया। बलबन ने स्वयं को पौराणिक अफ़ीसियाबों का वंशज घोषित किया।

यह सिद्धान्त इस्लाम की मूल अवधारणाओं के विरुद्ध था किन्तु तत्कालीन विषम परिस्थितियों को देखते हुए इसका अपनाया जाना अनुचित नहीं था। बलबन के राजत्व के सिद्धान्त को हम पूर्ववर्ती कौटिल्य के अर्थशास्त्र तथा परवर्ती मैकियावेली के दि प्रिंस में उल्लिखित राजत्व के सिद्धान्त के समकक्ष रख सकते हैं।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्नांकित पर चर्चा कीजिए-

1. गुलाम वंश की स्थापना
2. इल्तुतमिश की प्रारम्भिक कठिनाइयां
3. तुर्कानि चहलगानी
4. रज़िया का पतन
5. रक्त एवं लौह की नीति
6. बलबन का राजत्व का दैविक सिद्धान्त

1.8 सारांश

दिल्ली सल्तनत के प्रारम्भिक चरण में तीन राज्य वंशों के संस्थापक अपने प्रारम्भिक जीवन में गुलाम रह चुके थे इसलिए भ्रमवश इन तीन राज्य वंशों को एक साथ मिलाकर प्रायः गुलाम वंश के नाम से जाना जाता है। तथाकथित गुलाम वंश के प्रमुख शासक कुतबुद्दीन ऐबक, इल्तुतमिश, रज़िया तथा बलबन थे। इनमें सबसे अधिक योग्य तथा शक्तिशाली इल्तुतमिश तथा बलबन थे। दिल्ली संल्तनत का वास्तविक संस्थापक इल्तुतमिश को माना जाता है। इल्तुतमिश ने दिल्ली के सुल्तान के पद को वैधानिक मान्यता दिलाई तथा वंशानुगत शासन का प्रारम्भ किया। उसने राज्य को एक ठोस प्रशासनिक ढांचा भी दिया। अपनी योग्यता के बावजूद रज़िया सुल्तान का स्त्री होना

उसके पतन का मुख्य कारण बना। बलबन तथाकथित गुलाम वंश का सबसे शक्तिशाली एवं सफल शासक था, उसने लौह एवं रक्त की नीति को अपना कर अपने राज्य को सुदृढ़ किया। उसने मंगोल आक्रमणों को विफल किया। उसने अपने राज्य में शान्ति एवं व्यवस्था स्थापित करने में सफलता प्राप्त की। उसने राजत्व के दैविक सिद्धान्त का पोषण कर सुल्तान के पद और उसकी प्रतिष्ठा में अपार वृद्धि की और शासक के अधिकार व उसके कर्तव्य को एक नया आयाम प्रदान किया।

1.9 पारिभाषिक शब्दावली

तुर्कानें चहलगानी - इल्तुतमिश के पूर्व दासों में से मुक्त एवं प्रोन्नत किए गए चालीस तुर्की अमीरों का दल

दोआब - दो नदियों के बीच का क्षेत्र। उत्तर भारत में इससे तात्पर्य मुख्यतः गंगा और यमुना नदी के बीच का भाग होता है।

खिलअत - अपने अधीनस्थ को शासक द्वारा प्रदत्त राजसी चिह्न, पोशाक आदि।

अमीर-ए-अखुर - शाही अस्तबल का प्रमुख

जहांदारी - संगठन

1.10 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 1.3.3 सुल्तान के रूप में कुतबुद्दीन ऐबक

2. देखिए 1.4.2 सुल्तान बनने के बाद इल्तुतमिश की प्रारम्भिक समस्याएं

3. देखिए 1.5.5 तुर्कानें चहलगानी

4. देखिए 1.6.3 रज़िया का पतन

5. देखिए 1.7.2 रक्त एवं लौह की नीति

6. देखिए 1.7.4 बलबन का राजत्व का दैविक सिद्धान्त

1.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Habibullah, A.B.M. – *Foundation of Muslim Rule in India*
2. Prasad Ishwari – *History of Medieval India*

3. Prasad Ishwari – *A History of the Quraunah Turks in India*
4. Srivastav, A.L. – *The Sultanat of Delhi*
5. Majumdar (General Editor) – *Struggle for Empire*
6. Elliot & Dowson – *The History of India as Told by Its Own Historians*
7. Hodivala, S. H. – *Studies in IndoMuslim History*
8. Jackson, Peter – *The Delhi Sultanate: A Political and Military History*
9. हबीब, मुहम्मद - दिल्ली सल्तनत भाग 1

1.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Minhaj-i-Siraj – *Tabqat-i-Nasiri* (Eng Tr. Raverty, H. G.)
2. Isami – *Futu-us-Salatin* (Edited by Husain, A. M.)
2. Lane Poole – *The Mohammadan Dynasties*
3. Lane Poole – *Medieval India under Mohammadan Rule*

1.13 निबंधात्मक प्रश्न

तथाकथित गुलाम वंश में सुल्तान-अमीर सम्बन्धों पर विस्तृत चर्चा कीजिए।

इकाई दो- जलालुद्दीन खिलजी, अलाउद्दीन खिलजी, बाजार नियंत्रण नीति, एवं सैनिक उपलब्धियाँ

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 जलालुद्दीन खिलजी

2.3.1 जलालुद्दीन खिलजी का राज्यारोहण

2.3.2 बलबन की रक्त एवं लौह की नीति का परित्याग

2.3.3 जलालुद्दीन खिलजी के शासनकाल में अलाउद्दीन खिलजी के सैनिक अभियान

2.4 अलाउद्दीन का राज्यारोहण

2.5 सुल्तान के रूप में अलाउद्दीन

2.5.1 अलाउद्दीन का राजत्व का सिद्धान्त

2.5.2 मंगोल आक्रमणों की समस्या के निवारण के प्रयास

2.6 अलाउद्दीन की बाज़ार नियन्त्रण की नीति

2.6.1 बाज़ार नियन्त्रण की नीति लागू करने का कारण

2.6.2 सैनिकों के वेतन का निर्धारण

2.6.3 मूल्य नियन्त्रण

2.6.4 बाज़ार नियन्त्रण की व्यवस्था

2.6.5 कानून तोड़ने वालों के लिए कठोर दण्ड व्यवस्था

2.6.6 व्यापारियों, किसानों तथा आम आदमी को हानि

2.7 अलाउद्दीन का विजय अभियान

2.7.1 उत्तर भारत की विजय

2.7.2 दक्षिण भारत की विजय

2.8. एक शासक के रूप में अलाउद्दीन का आंकलन

2.9 साराशं

2.10 पारिभाषिक शब्दावली

2.11 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

2.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

2.13 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

2.14 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

1287 ईसवी में सुल्तान बलबन की मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु के बाद उसके अयोग्य वंशज मात्र तीन वर्ष तक ही सत्ता सम्भाल सके। जून, 1290 में सेनापति के रूप में उत्तर-पश्चिमी सीमा पर मंगोलों का मुकाबला करने में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका और तत्कालीन आरिज़-ए-मुमालिक मलिक फ़िरोज़ खिलजी सुल्तान क्यूमर्स की हत्या कर स्वयं जलालुद्दीन फिरोज़ शाह के नाम से सुल्तान बन बैठा। 6 वर्ष तक जलालुद्दीन खिलजी का, 20 वर्ष तक अलाउद्दीन खिलजी का तथा 4 वर्ष तक कुतबुद्दीन मुबारक शाह का शासन रहा। ।

खिलजी शासकों में अलाउद्दीन खिलजी ने मध्यकालीन भारतीय इतिहास पर एक अमिट छाप छोड़ी है। सैनिक दृष्टि से उसकी उपलब्धियां दिल्ली सल्तनत के इतिहास में अद्वितीय हैं। एक प्रशासक के रूप में उसकी बाज़ार नियन्त्रण की नीति की अनेक अर्थशास्त्री आज भी प्रशंसा करते हैं किन्तु इस नीति का राज्य के व्यापार एवं वाणिज्य पर अनुकूल प्रभाव नहीं पड़ा । उत्तर-पश्चिमी सीमा से हो रहे मंगोल आक्रमणों को विफल करने में अलाउद्दीन अन्य सभी सुल्तानों की तुलना में अधिक सफल रहा। अलाउद्दीन खिलजी ने जनता के हित को कभी भी सर्वोपरि नहीं रखा किन्तु उसके शासन में दीर्घकाल तक शान्ति एवं व्यवस्था बनी रही।

अलाउद्दीन की नीतियों का प्रभाव परवर्ती शासकों की नीतियों पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। शेरशाह, अकबर यहां तक कि कुछ मायनों में ब्रिटिश भारतीय शासकों की नीतियों पर भी उनका प्रभाव देखा जा सकता है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य मध्यकालीन भारतीय इतिहास को खिलजी राजवंश, विशेषकर अलाउद्दीन खिलजी की देन का आकलन करना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1- तथाकथित गुलाम वंश के पतन के बाद दिल्ली सल्तनत की राजनीति में तुर्की प्रभाव का क्षीण होना।

2- उत्तर भारत एवं दक्षिण भारत की विजयों द्वारा अलाउद्दीन खिलजी का दिल्ली सल्तनत को भारतीय साम्राज्य के रूप में विकसित करने का प्रयास।

3- मध्यकालीन अर्थ-व्यवस्था में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन।

2.3 जलालुद्दीन खिलजी

2.3.1 जलालुद्दीन खिलजी का राज्यारोहण

जलालुद्दीन खिलजी ने बलबन तथा उसके उत्तराधिकारियों के काल में मंगोलों का सामना करते हुए एक कुशल सेनापति के रूप में ख्याति अर्जित की थी। सुल्तान कैकुबाद ने उसे आरिज़-ए-मुमालिक का पद तथा शायिस्ता खाँ की उपाधि प्रदान की थी। 1290 ईसवी के प्रारम्भ में कैकुबाद के पतन के बाद वह बालक सुल्तान क्यूमर्स का संरक्षक बना किन्तु यह व्यवस्था नितान्त अस्थायी थी। जून, 1290 में जलालुद्दीन खिल्जी सुल्तान क्यूमर्स तथा कैकुबाद की हत्या कर स्वयं जलालुद्दीन फिरोज़ शाह के नाम से सुल्तान बन बैठा।

2.3.2 बलबन की रक्त एवं लौह की नीति का परित्याग

इल्बारी तुर्कों के दीर्घकालीन प्रभुत्व के बाद अफ़गानिस्तान में लम्बे समय से बसे हुए खिलजियों (जिनको कि भ्रमवश अफ़गान माना जाता था) द्वारा दिल्ली के तख्त पर अधिकार किए जाने का प्रबल विरोध हुआ। असन्तुष्ट इल्बारी अमीरों तथा अपनी प्रजा के तुष्टीकरण के लिए सुल्तान जलालुद्दीन ने सुल्तान बलबन की निरंकुश स्वेच्छाचारी शासन का पोषण करने वाली रक्त एवं लौह की नीति का परित्याग कर दिया। अब राजनीतिक दमन, प्रतिशोध और रक्तपात की अनवरत प्रक्रिया को विराम दे दिया गया और तलवार की शक्ति का प्रदर्शन करने वाले सैनिक अभियानों की आवृत्तियों व उनके आकार को भी बहुत कम कर दिया गया। उसने अपने रक्त सम्बन्धियों तथा विश्वस्त अमीरों को महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किया किन्तु इल्बारी तुर्क अमीरों को भी उच्च पदों पर बने रहने दिया। उसने बलबन के भतीजे मलिक छज्जू के अधिकार में कड़ा और मानिकपुर की जागीर बनी रहने दी। बलबन व कैकुबाद के शासनकाल के वज़ीर ख्वाजा खातिर और दिल्ली के कोतवाल फ़खरुद्दीन को भी अपने-अपने पदों पर बने रहने दिया गया। सत्तर वर्ष की आयु में सुल्तान बने जलालुद्दीन खिलजी में अब मंगोलों का वीरतापूर्वक दमन करने वाले जांबाज़ सेनापति वाला पुराना दमखम नहीं रह गया था। उसने रणथम्भौर के किले का घेरा केवल इसलिए उठवा लिया क्योंकि इससे नाहक मुसलमानों का खून बहता। उसने मलिक छज्जू की बगावत का दमन करने के बाद उसको दण्ड देने के स्थान पर क्षमा कर दिया। उसने दुर्दम्य ठगों को पकड़े जाने बाद उन्हें प्राण दण्ड देने के स्थान पर समस्या प्रधान लखनौती निर्वासित कर दिया। 1202 ईसवी में हलाकू के पौत्र अब्दुल्ला के नेतृत्व मंगोलों के आक्रमण को विफल करने के बाद उसने उससे संधि कर उसे वापस लौटने के लिए राज़ी कर लिया और चंगेज़ खाँ के वंशज उलगू को इस्लाम में दीक्षित होने के बाद अपने 4000 समर्थकों के साथ दिल्ली में बसने की अनुमति दे दी। सुल्तान की उदारता

और शिथिलता से इल्बारी तुर्क व खिलजी अमीरों में उसके प्रति असन्तोष पनपने लगा और उसकी प्रजा में भी उसके प्रति भय व श्रद्धा का भाव तिरोहित होने लगा।

2.3.3 जलालुद्दीन खिलजी के शासनकाल में अलाउद्दीन खिलजी के सैनिकअभियान

1. मलिक छज्जू के विद्रोह के दमन के बाद सुल्तान के भतीजे और दामाद अलाउद्दीन को कड़ा और मानिकपुर का सूबेदार बनाया गया था। इस महत्वाकांक्षी एवं साहसी युवक की नज़र दिल्ली के तख्त पर थी परन्तु इसके लिए उसे आवश्यक धन तथा संसाधनों की आवश्यकता थी। अलाउद्दीन को मालवा की राजनीतिक अस्थिरता व उसकी अपार धन-सम्पदा की जानकारी प्राप्त हुई और उसने वहां आक्रमण करने की योजना बनाई। दिल्ली के दरबार में स्थित उसके भाई उलुग खाँ ने उसके लिए इस अभियान हेतु सुल्तान की अनुमति प्राप्त कर ली। सन् 1293 में अलाउद्दीन ने भिलसा (विदिशा) पर सफल आक्रमण कर अपार धनराशि लूट ली। इस लूट का एक भाग सुल्तान को अर्पित कर उसने पुरस्कार में कड़ा व मानिकपुर के अतिरिक्त अवध की सूबेदारी भी प्राप्त कर ली और साथ ही साथ उसे कड़ा व मानिकपुर के राजस्व के शाही भाग को चन्देरी अभियान हेतु सैनिकों की भर्ती के लिए खर्च करने का अधिकार भी प्राप्त हो गया।

2. भिलसा अभियान के दौरान अलाउद्दीन ने यादव राज्य देवगिरि की अथाह धन-सम्पदा के बारे में सुना था। सफल भिलसा अभियान के बाद उसने सुल्तान से चन्देरी पर आक्रमण करने की अनुमति प्राप्त की थी किन्तु वास्तव में उसकी योजना दक्षिण में देवगिरि पर आक्रमण करने की थी। कड़ा की देखभाल का दायित्व अपने विश्वस्त अला-उल-मुल्क को सौंपकर अलाउद्दीन फ़रवरी, 1296 में चन्देरी पर आक्रमण करने के बहाने एक विशाल सेना लेकर चन्देरी और भिलसा होते हुए देवगिरि की ओर चल पड़ा। सुल्तान जलालुद्दीन से इस देवगिरि अभियान को पूर्णरूपेण गुप्त रखा गया। लासुरा के अधिपति को पराजित कर वह देवगिरि पहुंचा। इसं राज्य की सेना का एक बड़ा भाग युवराज शंकर के साथ दक्षिण में था। आक्रमणकारी से बचने के लिए देवगिरि के शासक रामचन्द्रदेव के पास किले में छिपने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं था। अलाउद्दीन ने देवगिरि नगर को जमकर लूटा। रामचन्द्रदेव ने अलाउद्दीन से सन्धि करने का प्रस्ताव किया जिसे उसने स्वीकार कर लिया परन्तु देवगिरि के युवराज शंकर की अपनी सेना के साथ वापसी के कारण उसे युद्ध करना पड़ा। नुसरत खाँ के सहयोग से अलाउद्दीन यादव सेना को पराजित करने में सफल रहा। 25 दिनों तक देवगिरि अभियान में व्यतीत करने के बाद अलाउद्दीन अथाह धन-सम्पदा तथा वार्षिक पेशकश के आश्वासन के साथ तथा रामचन्द्रदेव की पुत्री से विवाह कर उत्तर भारत वापस लौट आया।

भिलसा के और देवगिरि के अभियानों से जहां एक ओर अलाउद्दीन का राजनीतिक, सैनिक और आर्थिक कद बहुत ऊँचा हो गया था वहीं सुल्तान जलालुद्दीन को हटाकर अलाउद्दीन को

सुल्तान बनाए जाने के लिए अनुकूल वातावरण भी तैयार होने लगा था। दक्षिण भारत पर यह पहला मुस्लिम आक्रमण था। इसी आक्रमण से प्राप्त धन-सम्पदा और संसाधनों के कारण अलाउद्दीन का सुल्तान बनने का स्वप्न साकार हो पाया था।

2.4 अलाउद्दीन का राज्यारोहण

भिलसा तथा देवगिरि के अभियानों के बाद अलाउद्दीन का अगला अभियान दिल्ली का तख्त हासिल करना था। बूढ़े और शिथिल सुल्तान के प्रति बढ़ते हुए असन्तोष से दिल्ली के तख्त तक पहुंचने की उसकी राह आसान होती जा रही थी। अलाउद्दीन के प्रति अनुरक्त सुल्तान को अहमद चप ने उसके गुपचुप देवगिरि अभियान का हवाला देकर उससे सावधान रहने की सलाह भी दी थी पर सुल्तान का अपने भतीजे की वफ़ादारी पर भरोसा ज्यों का त्यों बना रहा। अपने भाई अलमास बेग के माध्यम से अलाउद्दीन ने सुल्तान से देवगिरि अभियान गुप्त रखने की क्षमा मांगी और उसे कड़ा आने का निमन्त्रण दिया जिसे उसने स्वीकार कर लिया। कड़ा में सुल्तान को देवगिरि की लूट सौंपे जाने का वादा किया गया था। अलमास बेग ने सुल्तान को इस बात के लिए भी राज़ी कर लिया कि वह मानिकपुर में अलाउद्दीन से बिना अपने सैनिकों को साथ लिए बिना अकेला मिले। दूसरी ओर अलाउद्दीन सुल्तान का विधिवत स्वागत करने के बहाने अपनी सेना के साथ था। सुल्तान से मिलते ही अलाउद्दीन के अधिकारियों, मुहम्मद सलीम और इख्तियारुद्दीन हुद ने सुल्तान पर हमला कर दिया। सुल्तान अपने सभी अनुचरों के साथ मारा गया। भाले पर टंगे हुए सुल्तान जलालुद्दीन के सिर के सामने अलाउद्दीन की ताजपोशी की गई। इस षडयन्त्र में शामिल अलमास खाँ, ज़फ़र खाँ, हिज़ाब्रुद्दीन, मलिक संजर, अल्प खाँ, नुसरत खाँ आदि को पुरस्कृत किया गया। परन्तु दिल्ली पर अभी भी जलालुद्दीन के समर्थकों का अधिकार था। देवगिरि अभियान से प्राप्त अथाह धन-सम्पदा के बल पर अलाउद्दीन ने जहां एक ओर विशाल सेना संगठित की वहीं उसने इसके बल पर अपने विरोधियों को भी अपनी ओर मिला लिया। अहमद चप जलालुद्दीन के बेटे और उसकी बेगम के साथ मुल्तान चले गए। दिल्ली में 22 अक्टूबर, 1296 को बलबन के लालमहल में अलाउद्दीन की विधिवत ताजपोशी हुई। मुल्तान में उलुग खाँ और ज़फ़र खाँ ने जलालुद्दीन के समर्थकों को पराजित कर मौत के घाट उतार दिया।

2.5 सुल्तान के रूप में अलाउद्दीन

2.5.1 अलाउद्दीन का राजत्व का सिद्धान्त

अलाउद्दीन छल-कपट, विद्रोह, तलवार और सोने के बल पर सुल्तान बना था। उसको अमीरों का समर्थन दौलत के बल पर खरीदना पड़ा था और प्रजा को उसने तलवार के ज़ोर पर

अपना सुल्तान मानने के लिए विवश किया था। अलाउद्दीन की ताजपोशी को उलेमा वर्ग का समर्थन भी प्राप्त नहीं था। इन परिस्थितियों में उसका अस्तित्व सदैव खतरे में था। बलबन की मृत्यु के बाद राजनीति में जहां सुल्तान का रुतबा घटा था वहीं अमीरों का दबदबा बना हुआ था। अनेक अमीर स्वयं सुल्तान बनने का स्वप्न देख रहे थे। अलाउद्दीन ने बलबन के राजत्व के दैविक सिद्धान्त का पोषण किया। उसने शासक को ईश्वर के प्रतिनिधि के रूप में स्थापित किया। अलाउद्दीन ने अमीरों की शक्ति व प्रतिष्ठा में कमी की। उसने जलाली अमीरों का पूर्णतया दमन कर दिया और अपने वफ़ादार अमीरों की शक्तियों को भी नियन्त्रित किया। गुप्तचरों का जाल बिछाकर अमीरों के आपस में मिलने-जुलने, वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने आदि पर उसने राज्य का नियन्त्रण स्थापित किया। विद्रोह व षडयन्त्र करने वालों का समूल विनाश कर उसने सभी को भविष्य में विद्रोह करने का दुःसाहस करने से रोक दिया। अलाउद्दीन ने उलेमा वर्ग की भी उपेक्षा की। उलेमाओं को मिलने वाली आर्थिक सुविधाओं और रियायतों को उसने समाप्त कर उन्हें साधनहीन बना दिया। अलाउद्दीन चूंकि शासक को ईश्वर का प्रतिनिधि मानता था इसलिए धर्म के नाम पर उलेमा वर्ग द्वारा राजकाज में हस्तक्षेप करना उसे स्वीकार्य नहीं था। उसने राज्य पर से धर्म का नियन्त्रण हटा दिया। अलाउद्दीन ने खलीफ़ा से खिलअत अथवा उपाधि प्राप्त करने का कोई प्रयास नहीं किया।

2.5.2 मंगोल आक्रमणों की समस्या के निवारण के प्रयास

अलाउद्दीन के सुल्तान बनने के सवा साल बाद ही कंदर के नेतृत्व में मंगोलों की एक लाख की सेना पंजाब तक चढ़ आई। फ़रवरी, 1298 में उलुग खाँ और ज़फ़र खाँ ने उन्हें जालन्धर में पराजित किया। इसी वर्ष के अन्त में साल्दी के नेतृत्व में मंगोलों ने सिवस्तान के किले पर अधिकार कर लिया किन्तु ज़फ़र खाँ ने उस पर दोबारा अधिकार कर साल्दी और वह उसके भाई सहित अनेक मंगोलों को बन्दी बनाकरं दिल्ली ले आया। सन् 1299 में कुतलुग ख्वाजा के नेतृत्व में दो लाख मंगोलों की सेना ने दिल्ली को घेर लिया। अलाउद्दीन और ज़फ़र खाँ के संयुक्त प्रयास से मंगोलों की भयंकर पराजय हुई और फिर भारी नुक्सान के बाद उन्हें वापस लौटना पड़ा। सन् 1303 में अलाउद्दीन जब स्वयं चित्तौड़ पर विजय प्राप्त करने में व्यस्त था और उसकी सेना का एक बड़ा भाग तेलंगाना विजय अभियान के लिए गया हुआ था तब तरगी के नेतृत्व में मंगोल सेना ने एक बार फिर दिल्ली पर घेरा डाल दिया। इस बार अलाउद्दीन को सीरी के किले में शरण लेनी पड़ी। मंगोलों ने दिल्ली के आसपास का इलाका खूब लूटा किन्तु घेरा डालने की तकनीक से अपरिचित मंगोलों को शीघ्र ही वापस लौटना पड़ा। अलाउद्दीन ने अब मंगोल समस्या से निपटने के लिए ठोस कदम उठाए। उसने उत्तर-पश्चिमी सीमा से लेकर दिल्ली तक किलों की मरम्मत कराई और उनमें अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित विशाल सेना तैनात की। उसने अपनी सेना का पुनर्गठन किया। भारी संख्या में नए सैनिकों की भर्ती की गई और उनके लिए नकद वेतन की व्यवस्था की गई। इतनी बड़ी संख्या में सैनिकों को नकद वेतन देने में कठिनाई देखते हुए उसने आवश्यक वस्तुओं के मूल्यों पर नियन्त्रण रखने के लिए

बाज़ार नियन्त्रण की नीति अपनाई। मंगोलों को अब दिल्ली पर आक्रमण करने का साहस नहीं हो सका किन्तु उन्होंने दिसम्बर, 1305 में अली बेग, के नेतृत्व में दोआब पर हमला कर दिया किन्तु मलिक नायक ने अमरोहा में उन्हें पराजित किया। बन्दी मंगोलों के सिरों को काटकर सीरी के किले की दीवारों में चुनवा दिया गया। सन् 1306 में कबाक, इक़बाल व ताइबू के आक्रमण मलिक नाइब काफ़ूर तथा ग़ाज़ी मलिक द्वारा विफल किए गए। इसके बाद हज़ारों बन्दी मंगोलों को दिल्ली लाकर मौत के घाट उतारा गया। मंगोलों की आन्तरिक समस्याओं और अलाउद्दीन के उनके विरुद्ध उठाए गए कठोर कदमों के कारण सन् 1307 से लेकर अलाउद्दीन के शासनकाल के अन्त तक मंगोल उसके राज्य पर आक्रमण करने से दूर ही रहे।

2.6 अलाउद्दीन की बाज़ार नियन्त्रण की नीति

2.6.1 बाज़ार नियन्त्रण की नीति लागू करने का कारण

ख़ैरुल मजालिस के लेखक शेख नासिरुद्दीन ने अलाउद्दीन की बाज़ार नियन्त्रण की नीति को जन-कल्याण हेतु उठाया गया कदम बताया है परन्तु इस दावे में सत्य का लेशमात्र भी नहीं है। तत्कालीन राजनीतिक अस्थिरता, मुद्रा अवमूल्यन, शाही खजाने में धन की कमी के बावजूद सैनिक खर्च में सीमातिरेक वृद्धि की आवश्यकता ने अलाउद्दीन को इस जटिल, कठिन और लगभग अव्यावहारिक नीति को अपनाने के लिए प्रेरित किया था। ज़ियाउद्दीन बर्नी की फ़तवा-ए-जहांदारी के अनुसार इस नीति का उद्देश्य राज्य पर मंगोल आक्रमणों के संकट को जड़ से समाप्त करने के लिए एक विशाल सेना का सीमित संसाधन में खर्च चलाना था। इसके अतिरिक्त आन्तरिक विद्रोहों का दमन करने के लिए तथा साम्राज्य का विस्तार करने के लिए भी अलाउद्दीन को अपने नियन्त्रण में एक विशाल और स्थायी सेना की आवश्यकता थी। इस विशाल सेना के सैनिकों को नकद वेतन का भुगतान करने के लिए राजकोष में सीमित धन था। सैनिकों की क्रय क्षमता के अनुरूप उनके जीवन से जुड़ी सभी आवश्यक वस्तुओं के मूल्यों पर नियन्त्र रखने के लिए अलाउद्दीन ने बाज़ार नियन्त्रण की नीति अपनाई थी।

2.6.2 सैनिकों के वेतन का निर्धारण

राजकोष की क्षमता का आकलन कर एक घुड़सवार को मात्र 234 टंके का वार्षिक वेतन ही दिया जा सकता था। अलाउद्दीन ने इस बात का खयाल रखा था कि अपने वेतन में हर-एक सैनिक अपने परिवार और अपने काम के लिए ज़रूरी मवेशियों का खर्च सुगमतापूर्वक निकाल सके।

2.6.3 मूल्य नियन्त्रण

मध्यकालीन इतिहास में अलाउद्दीन पहला शासक था जिसने सुनियोजित आर्थिक नीति अपनाई थी। परवर्ती शासकों में शेरशाह तथा अकबर ने उसका अनुकरण किया था। मुद्रा अवमूल्यन के कारण वस्तुओं के दाम आसमान छू रहे थे। मंगोल आक्रमणों के कारण आयातित घोड़ों की कीमत बहुत बढ़ गई थी। आवश्यक वस्तुओं की कालाबाज़ारी हो रही थी। इन विषम परिस्थितियों में सैनिकों की क्रय क्षमता के अनुरूप उनके जीवन से जुड़ी सभी आवश्यक वस्तुओं के मूल्यों पर नियन्त्र रखने के लिए अलाउद्दीन ने बाज़ार नियन्त्रण की नीति अपनाई थी। उसने खाद्यानों, कपड़ों, घोड़ों, गुलामों, बांदियों आदि सभी के मूल्य निर्धारित किए गए। खाद्यानों में गेहूँ 7.5 जीतल प्रति मन, चावल 5 जीतल प्रति मन, नमक 2 जीतल प्रति मन और शक्कर 1.25 जीतल प्रति सेर पर बेची जानी निश्चित की गई। अच्छा सूती कपड़ा 1 टंके में 20 गज़ और मोटा कपड़ा 1 टंके में 40 गज़, सूती चादर का दाम 10 जीतल प्रति नग निर्धारित हुआ किन्तु रेशमी कपड़ा काफ़ी महंगा रहा। मवेशियों के बाज़ार में अच्छे घोड़े का दाम 100 से 120 टंका, मध्यम श्रेणी के घोड़े का 80 से 90 टंका और टट्टू का दाम 10 से 20 टंका रखा गया। घोड़ों की तुलना में गुलाम और बांदियों की कीमत बहुत कम रखी गई थी। अलाउद्दीन ने बाज़ार से बिचौलियों और दलालों की उपस्थिति लगभग समाप्त कर दी थी। बाज़ार नियन्त्रण की नीति लागू किए जाने से लेकर अलाउद्दीन की मृत्यु तक वस्तुओं के दाम स्थिर रहे परन्तु इस व्यवस्था का लाभ मुख्य रूप से वेतन भोगियों को और वह भी दिल्ली और उसके आसपास के निवासियों को ही मिल पाया था।

2.6.4 बाज़ार नियन्त्रण की व्यवस्था

बाज़ारों का नियन्त्रण दीवान-ए-रियासत करता था। मलिक याकूब इस विभाग का अध्यक्ष था। अलाउद्दीन ने विभिन्न आवश्यक वस्तुओं के लिए चार अलग-अलग बाज़ार स्थापित किए थे। ये थे - खाद्यान्न बाज़ार, निर्मित वस्तुओं का बाज़ार (सराय-ए-अद्ल), सामान्य वस्तुओं का बाज़ार, मवेशियों, गुलाम तथा बांदियों का बाज़ार। प्रत्येक बाज़ार एक शुहना-ए-मण्डी के नियन्त्रण में होता था। सभी व्यापारियों का पंजीकरण किया जाता था और सुल्तान तक रोज़ाना बाज़ार की गतिविधियों की सूचना पहुंचाने का दायित्व शुहना, बरीद तथा मुंशियों का था। महंगी तथा आयातित किन्तु आवश्यक वस्तुओं को कम कीमत पर उपलब्ध कराए जाने के लिए सरकारी सहायता उपलब्ध कराई जाती थी किन्तु इसके लिए खरीदार को परवाना रईस (अनुज्ञप्ति अधिकारी) से परमिट प्राप्त करना होता था। अलाउद्दीन ने संकटकालीन स्थिति से निपटने के लिए बड़ी संख्या में राजकीय गोदामों में खाद्यान्न जमा करने की व्यवस्था की थी। अकाल, बाढ़ आदि प्राकृतिक विपदाओं की स्थिति में खाद्यान्न की कमी की आपूर्ति इन्हीं सरकारी गोदामों में जमा खाद्यान्न से की जाती थी।

2.6.5 कानून तोड़ने वालों के लिए कठोर दण्ड व्यवस्था

अलाउद्दीन ने कीमतों में फेर बदल, माप-तौल में गड़बड़ी, जमाखोरी, मिलावट आदि करने वालों के लिए कठोर दण्ड की व्यवस्था की थी। भ्रष्ट अधिकारी भी उसके कोप का भाजन बनते थे।

2.6.6 व्यापारियों, किसानों तथा आम आदमी को हानि

बाज़ार नियन्त्रण की नीति कृत्रिम, दमनकारी तथा शोषक थी। इसके दूरगामी परिणाम लाभकारी नहीं हो सकते थे। इससे व्यापारियों को मिलने वाले लाभ में बहुत कमी आई। प्रॉफ़िट इन्सेन्टिव समाप्त होने के कारण एक प्रकार से वे कमीशन एजेण्ट या मज़दूर बन कर रह गए। व्यापारियों ने व्यापार एवं वाणिज्य के विकास में रुचि लेना छोड़ दिया। किसानों को अपने उत्पादों को निर्धारित मूल्यों पर बेचने के कारण कम धन प्राप्त होता था जबकि उन्हें लगान नकदी में देना होता था। इससे कृषि के विकास पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। आम आदमी के पास तो सस्ती वस्तुएं खरीदने के लिए भी पैसे नहीं थे। ज़ियाउद्दीन बर्नी कहता है - 'सुना है कि बाज़ार में ऊँट एक दाम का बिक रहा था पर किसी की जेब में उसे खरीदने के लिए एक भी दाम नहीं था।'

2.7 अलाउद्दीन का विजय अभियान

2.7.1 उत्तर भारत की विजय

अलाउद्दीन ने सुल्तान जलालुद्दीन के शासनकाल में ही एक विजेता के रूप में ख्याति अर्जित कर ली थी। वह सिकन्दर महान की भांति एक विश्व विजेता बनना चाहता था। उसने अपनी मुद्राओं में स्वयं के लिए 'सिकन्दर सानी (द्वितीय) शब्द अंकित किया। दिल्ली के कोतवाल अला-उल-मुल्क ने उसे विश्व विजय अभियान प्रारम्भ करने से पहले हिन्दुस्तान के अविजित राज्यों को जीतने की सलाह दी थी।

1. भविष्य में दक्षिण विजय की योजना के लिए गुजरात विजय उपयोगी सिद्ध हो सकती थी। गुजरात के पड़ौस के क्षेत्र सिंध और मुल्तान में उसका विश्वस्त उलुग खाँ नियुक्त था। सन् 1298 के उत्तरार्ध में नुसरत खाँ तथा उलुग खाँ को गुजरात अभियान का दायित्व सौंपा गया जिन्होंने वहां के शासक कर्ण बघेला को उसके विश्वासघाती मन्त्री माधव की सहायता से पराजित किया और उसकी राजधानी अन्हिलवाड़ पर अधिकार कर लिया। भारी लूट के साथ कर्ण बघेला की रानी कमलादेवी को अलाउद्दीन को सौंप दिया गया। रानी कमलादेवी से अलाउद्दीन ने निकाह कर लिया।

2. रणथम्भौर पर विजय प्राप्त करने में सुल्तान जलालुद्दीन खिलजी असफल रहा था। रणथम्भौर के किले का अत्यधिक सामरिक महत्व था। वहां के चौहान शासक हम्मीरदेव द्वारा बागी नव-मुस्लिम

मंगोलों को शरण दिया जाना और उनको उसे वापस सौंपे जाने से इंकार किया जाना, सुल्तान के कोप के कारण बने। जब नुसरत खाँ तथा उलुग खाँ को रणथम्भौर के किले पर अधिकार करने में असफलता मिली तब स्वयं अलाउद्दीन ने वहां पर आकर घेरा डाला किन्तु उसे भी एक साल तक सफलता नहीं मिली। बाद में हम्मीरदेव के विश्वासघाती मन्त्री रनमल को अपने पक्ष में कर सुल्तान ने किले पर सन् 1301 में अधिकार कर लिया। हम्मीरदेव अपने साथियों के साथ वीरगति को प्राप्त हुआ और वहां की महिलाओं ने जौहर किया। अपने स्वामी के विश्वासघाती रनमल को अलाउद्दीन ने प्राणदण्ड दिया।

3. अलाउद्दीन द्वारा मेवाड़ अभियान के पीछे अनुपम सौन्दर्य के लिए प्रसिद्ध राणा रतन सिंह की रानी पद्मिनी को अपने अधिकार में करने की लालसा मानी जाती है। मलिक मुहम्मद जायसी ने इस प्रसंग को आधार बनाकर अपने महाकाव्य पद्मावत की रचना की है। सन् 1303 में अलाउद्दीन ने मेवाड़ की राजधानी चित्तौड़ पर घेरा डाला। पाँच महीने के घेरे के बाद संसाधनों की कमी के कारण रतन सिंह और उसके सैनिकों ने किले से बाहर निकल कर युद्ध किया और सभी वीरगति को प्राप्त हुए। अलाउद्दीन पद्मिनी को अपने हरम में सम्मिलित नहीं कर सका क्योंकि उसने किले में उपस्थित हज़ारों स्त्रियों के साथ जौहर कर लिया। अमीर खुसरो के अनुसार सुल्तान ने चित्तौड़ पर अधिकार करने के बाद 20000 राजपूतों का वध किया। उसने चित्तौड़ का नाम खिज्राबाद रखकर उसे खिज्र खाँ को सौंप दिया परन्तु चित्तौड़ पर उसका अधिकार स्थायी नहीं रहा।

4. सन् 1305 में आइन-उल-मुल्क मुल्तानी के नेतृत्व में सुल्तान की सेना ने मालवा के शासक महलकदेव को पराजित कर मार डाला और माण्डू, धार व चन्देरी पर अधिकार कर लिया। इसके बाद जालौर के शासक कान्हणदेव ने आइन-उल-मुल्क मुल्तानी के समक्ष बिना युद्ध किए आत्म-समर्पण कर दिया। सुल्तान ने आइन-उल-मुल्क मुल्तानी को मालवा का सूबेदार नियुक्त किया।

5. 1309 में अलाउद्दीन ने स्वयं अभियान का नेतृत्व कर मारवाड़ के शासक शीतलदेव को पराजित कर व उसको मार कर सिवाना के किले पर अधिकार कर लिया और वहां कमालुद्दीन को अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया।

6. जालौर में कान्हणदेव ने अलाउद्दीन की आधीनता का शिकंजा तोड़कर स्वयं को फिर से स्वतन्त्र घोषित कर दिया था। गुलेबहिश्त खोजा के नेतृत्व में शाही सेना ने कान्हणदेव को मारकर जालौर पर पुनराधिकार कर लिया।

2.7.2 दक्षिण भारत की विजय

सुल्तान जलालुद्दीन के शासनकाल में अपने देवगिरि के अभियान से अलाउद्दीन को दक्षिण की अथाह धन-सम्पदा व संसाधनों का ज्ञान हो चुका था किन्तु सुल्तान बनने के कई वर्षों बाद तक वह आन्तरिक समस्याओं और मंगालों का प्रतिरोध करने में व्यस्त रहा था। उत्तर भारत पर अपनी पकड़ मज़बूत कर और मंगोल आक्रमणों से सफलतापूर्वक निपटने के बाद अलाउद्दीन दक्षिण-विजय अभियान की ओर उन्मुख हुआ। मालवा, गुजरात, मेवाड़ और मारवाड़ पर अपना अधिकार हो जाने के बाद अलाउद्दीन के लिए दक्षिण विजय अपेक्षाकृत सुगम हो गई थी। अपनी विशाल स्थायी सेना को व्यस्त रखने के लिए दक्षिण अभियान उसके लिए एक लाभकारी कार्य हो सकता था। अमीर खुसरो ने अलाउद्दीन के दक्षिण अभियान का उद्देश्य इस्लाम का प्रचार करना बताया है, इसी कारण हर अभियान में मन्दिरों का विध्वंस और मस्जिदों का निर्माण किया जाता था। किन्तु ऐसा तो महमूद गज़नवी भी करता था। के0 एस0 लाल यह मानते हैं कि अलाउद्दीन का दक्षिण अभियान महमूद गज़नवी के अभियानों की भांति मुख्यतः धन-प्राप्ति के उद्देश्य से किए गए थे। अलाउद्दीन का उद्देश्य दक्षिण भारतीय राज्यों को अपने प्रत्यक्ष अधिकार में करना नहीं था क्योंकि ऐसा करने के लिए उसके पास पर्याप्त संसाधन नहीं थे। वह तो इन राज्यों को अपने आधीन कर, समस्त अधिकार उन्हीं को सौंपकर, उनसे वार्षिक भेंट और अपने अभियानों के लिए आवश्यक संसाधन की मदद चाहता था। चौथी शताब्दी में समुद्रगुप्त ने दक्षिण भारत के राज्यों पर विजय प्राप्त कर वहां के शासकों से यही अपेक्षा की थी। बाद में अकबर ने भी विभिन्न राजपूत शासकों के साथ भी ऐसा ही व्यवहार किया था। सुल्तान अलाउद्दीन के दक्षिण अभियानों की सफलता का मुख्य श्रेय नाइब मलिक काफ़ूर को जाता है।

1. सुल्तान के अधीनस्थ देवगिरि के शासक रामचन्द्रदेव ने तीन वर्षों से खिराज नहीं दिया था। उसने गुजरात के पूर्व शासक कर्ण बघेला को उसकी पुत्री देवलदेवी के साथ न केवल शरण दी थी अपितु उसे बगलाना पर अधिकार करने में मदद भी दी थी। अलाउद्दीन की बेगम कमलादेवी अपनी पुत्री देवलदेवी को दिल्ली बुलवाना चाहती थी। अलाउद्दीन ने अपने नाइब मलिक काफ़ूर को देवगिरि पर तथा अल्प खाँ को बगलाना पर अधिकार करने के लिए भेजा। मार्च, 1307 में मलिक काफ़ूर ने रामचन्द्रदेव को पराजित किया और भारी लूट के साथ उसे सपरिवार वह दिल्ली ले आया। सुल्तान की आधीनता स्वीकार करने के बाद रामचन्द्रदेव को न केवल उसका राज्य उसे वापस किया गया अपितु उसे 'राय रायन' की उपाधि और नवसारी का क्षेत्र भी प्रदान किया गया। अल्प खाँ ने कर्ण बघेला को खदेड़कर बगलाना पर अधिकार कर लिया।

2. वारंगल (तेलंगाना) के शासक प्रतापरुद्रदेव ने सन् 1303 में अपने विरुद्ध मलिक काफ़ूर के अभियान को विफल कर दिया था। नवम्बर, 1309 में एक बार फिर मलिक काफ़ूर वारंगल अभियान

का नेतृत्व प्रदान किया गया। वारंगल दुर्ग को काफ़ूर ने घेर लिया। एक समय तक प्रतिरोध करने के बाद प्रतापरुद्रदेव ने काफ़ूर के समक्ष सन्धि प्रस्ताव रखा जिसे काफ़ूर ने स्वीकार कर लिया। प्रचुर मात्रा में धन और प्रतापरुद्रदेव द्वारा वार्षिक खिराज दिए जाने के आश्वासन के साथ काफ़ूर दिल्ली लौट आया।

3. सन् 1310 में अलाउद्दीन ने मलिक काफ़ूर को तीसरी बार दक्षिण विजय के लिए भेजा। इस बार के अभियान का उद्देश्य धन-प्राप्ति के अतिरिक्त होयसल (द्वारसमुद्र) राज्य के शासक वीर बल्लाल को दिल्ली सल्तनत के आधीन करना था। वीर बल्लाल को पराजित कर मलिक काफ़ूर अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल रहा।

4. सुदूर दक्षिण में स्थित मदुरा राज्य में सुन्दर पाण्ड्य तथा वीर पाण्ड्य के मध्य हो रहे गृहयुद्ध में सुन्दर पाण्ड्य ने होयसल अभियान के दौरान मलिक काफ़ूर से सहायता मांगी। मलिक काफ़ूर ने मदुरा पर आक्रमण कर दिया। वीर पाण्ड्य भाग निकला। सुन्दर पाण्ड्य को सहायता देने का काफ़ूर का कोई इरादा नहीं था। उसने जमकर मदुरा को लूटा उसने अनेक मन्दिरों को ध्वस्त किया। काफ़ूर रामेश्वरम के मन्दिर को ध्वस्त करने पहुंचा या नहीं, यह विवादास्पद है । पाण्ड्यों में से कोई सुल्तान के प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त करने के लिए उपस्थित नहीं हुआ। सुन्दर पाण्ड्य के चाचा पाण्ड्य ने मलिक काफ़ूर की सेना बहुत हानि पहुंचाई किन्तु वह अपरिमित धन-सम्पदा लूट कर दिल्ली लौटने में सफल रहा।

5. सन् 1309 में रामचन्द्रदेव की मृत्यु के बाद शंकरदेव देवगिरि का शासक बना। शंकरदेव ने स्वय को स्वतन्त्र घोषित कर दिया। सन् 1313 में मलिक काफ़ूर ने शंकरदेव को परास्त कर मार डाला और दक्षिण में राचूर, गुलबर्गा, मुद्गल सहित विशाल क्षेत्र को जीत लिया। सुल्तान के आदेश पर हरपालदेव को देवगिरि का अधीनस्थ शासक बनाकर काफ़ूर, लूट और भेंट की राशि के साथ दिल्ली लौट आया।

2.8 एक शासक के रूप में अलाउद्दीन का आंकलन

अलाउद्दीन ने अपनी बाज़ार नियन्त्रण नीति, उत्तर भारत तथा दक्षिण भारत की विजयों से मध्यकालीन भारतीय इतिहास में अपनी अमिट छाप छोड़ी है। दिल्ली का कोई और सुल्तान उसकी व्यावहारिक बुद्धि, उसका रण-कौशल, उसकी दूरदर्शिता और अपनी महत्वाकांक्षाओं को साकार रूप देने की क्षमता में उसका मुकाबला नहीं कर सकता। वह पहला सुल्तान था जिसने धर्म को यथासम्भव राजनीति से अलग रखने में सफलता प्राप्त की थी। मुस्लिम शासकों में अकबर से पूर्व वही था जिसने कि अपने राज्य को भारत के साम्राज्य के रूप में विकसित किया था और अकबर से बहुत पहले वही था जिसने अपने अधीनस्थ शासकों को वार्षिक भेंट तथा अन्य प्रकार की

सहायताओं के बदले लगभग स्वतन्त्र शासक की भांति राज्य करने का अधिकार देकर अपनी व्यावहारिक बुद्धि का परिचय दिया था। वह एक महान भवन तथा नगर निर्माता था। अमीर खुसरो तथा ज़ियाउद्दीन बर्नी जैसे समकालीन इतिहासकारों ने उसके शासन की उपलब्धियों का विस्तार से उल्लेख किया है। किन्तु अलाउद्दीन एक क्रूर, कृतघ्न, स्वार्थी, शक्की, निरंकुश तथा विलासी शासक था। राज्य की समस्त शक्ति अपने हाथों में केन्द्रित कर उसने अपने उत्तराधिकारियों को अयोग्य बना दिया था। उसने किसानों पर करों का बोझ इतना बढ़ा दिया कि उनका जीना दूभर हो गया। उसकी बाज़ार नियन्त्रण की भूरि-भूरि प्रशंसा की जाती है किन्तु यह भी सत्य है कि इससे आम आदमी का कोई भला नहीं हुआ और व्यापार तथा वाणिज्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। यह कहना अनुचित नहीं होगा कि अपने वंश के पतन के लिए मुख्य रूप से स्वयं अलाउद्दीन ही उत्तरदायी था। किन्तु इस बात से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि अलाउद्दीन खिलजी दिल्ली सल्तनत का सबसे महत्वपूर्ण शासक था।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्नांकित पर चर्चा कीजिए-

1. जलालुद्दीन खिलजी का राज्यारोहण।

2. जलालुद्दीन खिलजी के शासनकाल में अलाउद्दीन खिलजी के सैनिक अभियान।

3. अलाउद्दीन का राजत्व का सिद्धान्त।

4. मंगोल आक्रमणों की समस्या के निवारण के प्रयास।

5.अलाउद्दीन द्वारा चित्तौड़ की विजय।

6. मलिक काफ़ूर।

2.9 सारांश

दिल्ली सल्तनत में खिलजी वंश का शासन सन् 1290 से 1320 तक रहा। जलालुद्दीन खिलजी, अलाउद्दीन खिलजी तथा कुतबुद्दीन मुबारक शाह इस वंश के प्रमुख शासक थे। जलालुद्दीन खिलजी एक उदार किन्तु शिथिल शासक था। उसके शासनकाल की सबसे बड़ी उपलब्धि उसके भतीजे अलाउद्दीन के भिलसा तथा देवगिरि अभियान थे। अलाउद्दीन खिलजी अपने उपकारी चाचा सुल्तान जलालुद्दीन की हत्या कर सुल्तान बना था। उसने अपने विरोधियों का दमन करने में कभी भी देर नहीं की। अलाउद्दीन ने बलबन के राजत्व के सिद्धान्त को अपनाया। उसने अमीरों की शक्तियों

को क्षीण किया तथा उनकी गतिविधियों पर नज़र रखने के लिए गुप्तचर नियुक्त किए। अलाउद्दीन ने धर्म को राजनीति से अलग रखने में सफलता प्राप्त की। मंगोल समस्या का समाधान करना उसकी एक बड़ी उपलब्धि थी। अलाउद्दीन की बाज़ार नियन्त्रण की नीति मुख्य रूप से राज्य के सीमित संसाधनों में एक विशाल सेना के रख-रखाव को सम्भव बनाने के लिए अपनाई गई थी। किन्तु इसके क्रियान्वयन में उसने जिस सक्षमता और व्यावहारिक बुद्धिं का परिचय दिया उसकी सभी प्रशंसा करते हैं। अलाउद्दीन दिल्ली के सुल्तानों में सबसे बड़ा विजेता था। अलाउद्दीन ने गुजरात, रणथम्भौर, मालवा, मेवाड़, जालौर और मारवाड़ पर विजय प्राप्त कर उत्तर भारत की विजय का विस्तार किया। देवगिरि, वारंगल, द्वारसमुद्र और मदुरा जीतकर उसने दिल्ली सल्तनत का दक्षिण में विस्तार कर उसे एक साम्राज्य का रूप दिया। अलाउद्दीन की मृत्यु के बाद उसके अयोग्य उततराधिकारी केवल 4 वर्ष और शासन कर सके। शक्ति के एकीकरण का दोषी अलाउद्दीन, अपने वंश के पतन के लिए एक सीमा तक स्वयं उत्तरदायी था।

2.10 पारिभाषिक शब्दावली

आरिज़-ए-मुमालिक - सैन्य मन्त्रालय का मन्त्री

जलाली अमीर - जलालुद्दीन खिलजी द्वारा नियुक्त अमीर

टंका - सामान्यतः 175 ग्रेन का चाँदी का सिक्का

जीतल - तांबे का सिक्का।

मुद्रा अवमूल्यन - मुद्राओं की क्रय क्षमता में कमी।

दीवान-ए-रियासत - व्यापार एवं वाणिज्य मन्त्री का कार्यालय।

शुहना-ए-मण्डी - खाद्यान्न के बाज़ार का मुख्य अधिकारी।

बरीद - गुप्तचर।

जौहर - विजयी शत्रुओं से अपने सम्मान की रक्षार्थ स्त्रियों द्वारा सामूहिक आत्मदाह।

खिराज - भू राजस्व अथवा अधीनस्थ शासक द्वारा शासक को दी जाने वाली पेशकश।

2.11 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 1.3.1 जलालुद्दीन खिलजी का राज्यारोहण

2. देखिए 1.3.3 जलालुद्दीन खिलजी के शासनकाल में अलाउद्दीन खिलजी के सैनिक अभियान।

3. देखिए 1.5.1 अलाउद्दीन का राजत्व का सिद्धान्त।

4. देखिए 1.5.2 मंगोल आक्रमणों की समस्या के निवारण के प्रयास।

5. देखिए 1.7.1 उत्तर भारत की विजय का बिन्दु - 3

6. देखिए 1.7.2 दक्षिण भारत की विजय।

2.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Saran Parmatma – *Studies in Medieval Indian History*
2. Saksena, B. P. – *Delhi Sultanat*
3. Lal, K. S. – *History of the Khaljis*
4. Iqkram Shaikh Mohammad – *Muslim Rule in India and Pakistan*
5. Farooqi, M. A. – *The Economic policy of the Sultans of Delhi*
6. Srivastava, K. S. - *Political, Social, Cultural History of Delhi Sultanate*
7. हबीब, मुहम्मद - दिल्ली सल्तनत भाग 1

2.13 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Nizami, K. S. – *Some Aspects of Relgion and Politics in the Thirteenth Century*
2. Quereshi, I. – *Administration of the Sultanate of Delhi*
3. Sirhindi, Yahiya bin Ahmed – *Tarikh-i-Mubarak Shahi* (Eng. Tr. Basu, K. K.)
4. Hardy, Peter – *Historians of Medieval India*
5. Khan Mohd, A. W. – *Gold and Silver Coins Sultans of Delhi*

2.14 निबंधात्मक प्रश्न

1 - अलाउद्दीन खिलजी की बाज़ार नियन्त्रण की नीति का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

इकाई तीन - तुगलक वंश : मुहम्मद बिन तुगलक की नीतियां, फिरोजशाह तुगलक के सुधार एवं धार्मिक नीति

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 गियासुद्दीन तुगलक का शासन

3.4. सुल्तान मुहम्मद तुगलक

- 3.4.1 दोआब में कर वृद्धि
- 3.4.2 राजधानी परिवर्तन
- 3.4.3 सांकेतिक मुद्रा
- 3.4.4 खुरासान तथा कराचल पर विजय की योजना

3.5 मुहम्मद तुगलक का चरित्र

3.6 सुल्तान फ़िरोज़ तुगलक

- 3.6.1 फ़िरोज़ तुगलक के उदारीकरण हेतु प्रयास
- 3.6.2 फ़िरोज़ तुगलक का राजत्व का सिद्धान्त
- 3.6.3 राजस्व सम्बन्धी सुधार
- 3.6.4 सार्वजनिक निर्माण के कार्य
- 3.6.5 कल्याणकारी राज्य
- 3.6.6 कट्टर धार्मिक नीति
- 3.6.7 तुगलक वंश के पतन के लिए फ़िरोज़ तुगलक का दायित्व

3.9 साराशं

3.10 पारिभाषिक शब्दावली

3.11 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

3.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

3.13 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

3.14 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

अप्रैल, 1320 में खिलजी वंश का पतन हो गया था। ख्यातिप्राप्त सेनानायक और पंजाब के तत्कालीन सूबेदार गाज़ी मलिक गियासुद्दीन तुगलक ने नासिरुद्दीन खुसरो शाह को पराजित कर सितम्बर, 1320 में दिल्ली के तख्त पर अधिकार कर लिया।

तुगलक वंश में दो शासकों मुहम्मद तुगलक और फिरोज़ तुगलक ने इतिहास में अपनी अलग छाप छोड़ी है। मुहम्मद तुगलक जहां अपनी विवादास्पद नीतियों और चारित्रिक दुरूहता के लिए कुख्यात है वहीं दूसरी ओर फिरोज़ तुगलक अपने प्रशासनिक सुधारों के लिए विख्यात है।

दिल्ली सल्तनत के इतिहास में तुगलक वंश का शासन, बाकी सभी राजवंशों से अधिक, कुल 94 वर्ष तक रहा था। किन्तु इस काल में तैमूर के आक्रमण जैसी विनाशकारी घटना भी हुई थी और इस आक्रमण के बाद सुल्तान दिल्ली से पालम तक के क्षेत्र के ही शासक रह गए थे। परन्तु दिल्ली सल्तनत के विघटन की प्रक्रिया मुहम्मद तुगलक के शासनकाल में बहमनी तथा विजयनगर राज्यों की स्थापना से ही प्रारम्भ हो गई थी। फिरोज़ तुगलक की सैनिक दुर्बलता और उसके उत्तराधिकारियो की अयोग्यता ने इसकी गति को और भी अधिक तेज़ कर दिया था।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य -

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1- मुहम्मद तुगलक की विवादास्पद योजनाएं तथा राज्य पर उनका हानिकारक प्रभाव।

2. फिरोज़ तुगलक के प्रशासनिक सुधार।

3. फिरोज़ तुगलक की धार्मिक कट्टरता की नीति।

4. तुगलक वंश का पतन।

3.3 गियासुद्दीन तुगलक का शासन

अलाउद्दीन के शासनकाल के अंतिम वर्षों से ही खिलजी राज्य वंश अवनति की ओर अग्रसर होने लगा था। अलाउद्दीन के अयोग्य उत्तराधिकारियों, मलिक काफ़ूर तथा नासिरुद्दीन खुसरो शाह ने तो उसका पूर्ण पतन कर दिया। अलाउद्दीन के काल से उत्तर-पश्चिमी सीमा पर मंगोलों के

विरुद्ध निरन्तर सफलता प्राप्त करने वाले और पंजाब के तत्कालीन सूबेदार गाज़ी मलिक गियासुद्दीन तुगलक ने अपने पुत्र जूना खाँ (तत्कालीन अमीर-ए-खुर्द) तथा समाना, सिविस्तान और मुल्तान के सूबेदारों के सहयोग से नासिरुद्दीन खुसरो शाह को पराजित कर मार डाला। सितम्बर, 1320 में उसने दिल्ली के तख्त पर अपना अधिकार कर लिया। सुल्तान बनते ही गियासुद्दीन तुगलक ने अलाई अमीरों को उनके पूर्व पदों पर पुनर्प्रतिष्ठित करके तथा अपने विश्वस्त समर्थकों को महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त कर अराजकता व अशान्ति की स्थिति को सुधारने का प्रयास किया। उसने भ्रष्ट अधिकारियों को अपदस्थ किया तथा योग्य कर्मचारियों को प्रोत्साहित करने के लिए उन्हें पुरस्कृत किया। अल्प काल ही में उसने अपने राज्य की स्थिति में उल्लेखनीय सुधार किया। उसकी धार्मिक नीति असहिष्णुता से ग्रस्त थी किन्तु कृषि-विकास, उद्योग तथा व्यापार को प्रोत्साहन देने में उसने अपनी धार्मिक नीति को कभी आड़े नहीं आने दिया। सैनिक सुधार कर उसने अपनी सेना में व्याप्त भ्रष्टाचार को दूर किया। गियासुद्दीन तुगलक के काल में वारंगल तथा बंगाल में विरोधी शक्तियों का सफलतापूर्वक दमन किया गया तथा मंगोलों द्वारा उसके राज्य पर आक्रमण करने के प्रयास को निष्फल किया गया। बंगाल अभियान से लौटने के बाद अपने पुत्र जूना खाँ द्वारा दिल्ली के निकट अफ़गानपुर में आयोजित स्वागत समारोह में अपने ऊपर तम्बू गिर जाने से गियासुद्दीन की सन् 1325 में मृत्यु हो गई।

3.4. सुल्तान मुहम्मद तुगलक

3.4.1 दोआब में कर वृद्धि

मुहम्मद तुगलक एक सुशिक्षित, बुद्धिमान तथा मौलिक प्रतिभा का धनी व्यक्ति था। वह जानता था कि शासन को सुदृढ़ बनाने के लिए राजस्व प्रशासन को सुव्यवस्थित बनाना आवश्यक है। उसने प्रान्तीय सूबेदारों को आदेश दिए कि वे अपने-अपने प्रान्त की आय तथा व्यय का लेखा तैयार कर उसे दीवान-ए-विज़ारत को भेजें। उसका उद्देश्य समस्त राज्य में एक सी राजस्व व्यवस्था स्थापित करना था। दिल्ली सल्तनत में दोआब (गंगा तथा यमुना के मध्य का भू-क्षेत्र) सबसे उपजाऊ क्षेत्र था। इस कारण इससे अन्य सभी क्षेत्रों की तुलना में सबसे अधिक राजस्व अपेक्षित था किन्तु वास्तविकता इससे भिन्न थी। सत्तारूढ़ होने के कुछ ही समय बाद (सन् 1325 में) मुहम्मद तुगलक ने दोआब में कर वृद्धि करने का निर्णय लिया। ज़ियाउद्दीन बर्नी के अनुसार दो दशक पूर्व दोआब के हिन्दुओं ने मंगोल - अली बेग और तार्ताक को हिन्दुस्तान पर आक्रमण करने के लिए आमन्त्रित किया था इसलिए मुहम्मद तुगलक कर वृद्धि के बहाने वहां के निवासियों को सबक सिखाना चाहता था। बर्नी के अनुसार यह कर वृद्धि पूर्व कर से 10 से 20 गुनी थी परन्तु इस कथन में अतिशयोक्ति का पुट है। वास्तव में मुहम्मद तुगलक ने गृहकर तथा चराई कर के रूप में नए अबवाब (भू-राजस्व के अतिरिक्त अन्य कर) लगाए थे जोकि पूर्व निर्धारित कर के 1/20 से लेकर 1/10 तक थे। इस योजना

के कार्यान्वयन का समय उपयुक्त नहीं था क्योंकि अनावृष्टि के कारण वहां के किसान पहले से निर्धारित कर चुकाने की भी स्थिति में नहीं थे। दोआब वासियों ने करों की अदायगी से इंकार किया। बरन, डलमऊ और कन्नौज में किसान-विद्रोह हुए। सुल्तान ने स्वयं अभियान का नेतृत्व कर उनका दमन किया। सुल्तान को बहुत देर बाद समझ में आया कि किसानों के दमन से उसका राजस्व बढ़ने के स्थान पर घट रहा है। उसने भूल-सुधार के रूप में अकाल-पीड़ितों को राहत, लगान वसूली पर रोक, किसानों को ऋण, सिंचाई के लिए कुओं का निर्माण आदि के आदेश दिए पर जन-धन की अपार हानि के कारण तब तक दोआब उजड़ चुका था।

3.4.2 राजधानी परिवर्तन

अपनी राजधानी को दिल्ली से दौलताबाद स्थानान्तरित करना मुहम्मद तुगलक की एक ऐतिहासिक भूल थी। दक्षिण में साम्राज्य विस्तार के कारण अब दिल्ली से पूरी सल्तनत पर शासन कर पाना कठिन हो गया था। मुहम्मद तुगलक एक ऐसे स्थान को अपनी राजधानी बनाना चाहता था जो उसकी सल्तनत के केन्द्र में स्थित हो। दौलताबाद नगर (पुराना नाम देवगिरि) दिल्ली, गुजरात, लखनौती, सतगांव, सुनारगांव, वारंगल, द्वारसमुद्र, माबर और कम्पिला से लगभग एक समान दूरी पर था। इसके अतिरिक्त दक्षिण भारत धन-धान्य से परिपूर्ण था और वहां अपेक्षाकृत शान्ति भी स्थापित थी। सन् 1327 में सुल्तान ने विशेषज्ञों से परामर्श किए बिना राजधानी परिवर्तन का ऐतिहासिक किन्तु मूर्खतापर्ण निर्णय ले लिया। उसने इस निर्णय के दूरगामी परिणामों पर कोई विचार नहीं किया और न ही देश की राजनीतिक राजधानी व सांस्कृतिक गतिविधियों के केन्द्र के रूप में दिल्ली के गौरवशाली इतिहास को महत्व दिया। उत्तर-पश्चिमी सीमा से निरन्तर हो रहे मंगोल आक्रमणों की समस्या से दौलताबाद जैसे दूरस्थ क्षेत्र से कैसे निपटा जाएगा, इस प्रश्न का हल खोजना भी उसने आवश्यक नहीं समझा। वह सख्ती के साथ अपने इस अव्यावहारिक और अटपटे निर्णय के कार्यान्वयन में जुट गया। इब्न बतूता ने सुल्तान पर आरोप लगाया है कि दिल्ली वासियों को उसकी गुप्त पत्रों के माध्यम से भर्त्सना करने का दण्ड, राजधानी परिवर्तन और दिल्ली से निर्वासन के रूप में दिया गया था। इस अव्यावहारिक निर्णय के विनाशकारी परिणाम हुए। इब्न बतूता के सन् 1334 के वृतान्त से ज्ञात होता है कि सुल्तान, दिल्ली के सभी निवासियों को दौलताबाद नहीं ले गया था। अपने मूर्खतापूर्ण निर्णय के विनाशकारी परिणाम देखने के बाद सन् 1337 में सुल्तान ने फिर से दिल्ली को अपनी राजधानी बनाया लेकिन इस दस वर्ष की अवधि के दौरान इतने व्यापक जन-स्थानान्तरण ने अकल्पनीय कठिनाइयां उत्पन्न कीं, इसमें हज़ारों लोग मारे गए, अपरिमित आर्थिक हानि हुई तथा सुल्तान सदैव के लिए उपहास और भर्त्सना का पात्र बन गया।

3.4.3 सांकेतिक मुद्रा

दोआब में कर-वृद्धि की योजना की असफलता, राजधानी परिवर्तन की प्रक्रिया में अपरिमित व्यय, विद्रोहों को कुचलने में और आक्रमणकारी तार्माशीरीन मंगोल को वापस लौटने के लिए भारी मात्रा में धनराशि देने के कारण मुहम्मद तुगलक का राजकोष काफ़ी खाली हो चुका था। अपने अभियानों के लिए सुल्तान को एक विशाल सेना का संगठन करना था जिसके लिए उसे अतिरिक्त धनराशि की आवश्यकता थी। सुल्तान की प्रवृत्ति नए-नए प्रयोग करने की पहले से ही थी। अपने राजकोष में अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप सोने-चाँदी की पर्याप्त मात्रा के अभाव की स्थिति में उसने सांकेतिक मुद्रा का प्रयोग किया। 13 वीं शताब्दी में चीन और ईरान में सांकेतिक मुद्रा का प्रयोग किया जा चुका था। चीन में कागज़ की सांकेतिक मुद्रा का प्रयोग सफल रहा था। मुहम्मद तुगलक ने चाँदी के टंके के स्थान पर पीतल और तांबे की सांकेतिक मुद्रा जारी करने का आदेश दिया। सुल्तान ने सांकेतिक मुद्राओं के ढाले जाने में इस प्रकार की कोई सावधानी नहीं बरती कि जाली सिक्कों को सांकेतिक मुद्रा के रूप में बाज़ार में चलाया न जा सके। बर्नी के अनुसार हिन्दुओं के घर जाली सिक्के ढालने वाली टकसाल बन गए परन्तु सत्य तो यह है कि सुल्तान की असावधानी का लाभ अनेक अवसरवादियों ने उठाया और अपने ढाले हुए तांबे और पीतल के सिक्के चाँदी के टंके के रूप में बाज़ार में चलाए। जब जाली सिक्कों से बाज़ार पटने के कारण आर्थिक जीवन ठप्प पड़ने लगा तो सुल्तान ने सांकेतिक मुद्राओं का चलन रोकने तथा जाली सिक्कों के बदले राज्य की ओर से उनकी तौल के बराबर चाँदी लौटाए जाने का आदेश दिया। जाली सिक्कों के बदले राज्य की ओर से चाँदी लेने के लिए तुगलकाबाद में जाली सिक्कों का पहाड़ खड़ा हो गया किन्तु सुल्तान ने बिना कोई आपत्ति उठाए राजकोष से उनका भुगतान करा दिया। इस प्रकार अपने जल्दबाज़ी वाले अव्यावहारिक निर्णय से राजकोष और अपनी प्रतिष्ठा, दोनों को ही सुल्तान ने एक साथ, कभी भी न भर पाने वाली चोट पहुंचाई।

3.4.4 खुरासान तथा कराचल पर विजय की योजना

1. मुहम्मद तुगलक को तार्माशीरीन मंगोल ने खुरासान तथा ईराक़ की राजनीतिक अस्थिरता की जानकारी दी थी। इन क्षेत्रों की राजनीतिक अस्थिरता का लाभ उठाकर मुहम्मद तुगलक ने उन पर विजय प्राप्त कर अपने साम्राज्य में मिलाने की महत्वाकांक्षी किन्तु अव्यावहारिक योजना बनाई। बर्नी के अनुसार उसने इसके लिए न केवल 370000 की सेना संगठित की अपितु इन सैनिकों को एक वर्ष के अग्रिम वेतन का भुगतान भी कर दिया। दूरस्थ एवं अनजान देश की युद्धप्रिय जातियों को अत्यन्त दुर्गम मार्ग से गुज़रते हुए जीतना कोई आसान बात नहीं थी। शीघ्र ही सुल्तान को अपनी योजना की अव्यावहारिकता समझ में आ गई और उसने भारी नुक्सान उठाकर अभियान शुरू होने से पहले ही उसको रद्द कर दिया।

2. सन् 1337 में मुहम्मद तुगलक ने कांगड़ा में नगरकोट पर विजय प्राप्त की थी। इस विजय से उत्साहित होकर उसने कराचल विजय की योजना बनाई। गॉर्डन ब्राउन के अनुसार यह मध्य हिमालय में स्थित कुल्लू तथा कांगड़ा का क्षेत्र था जब कि मेहंदी हुसेन इसे कुमाऊँ तथा गढ़वाल मानते हैं। फ़रिश्ता के अनुसार चूंकि कराचल हिन्दुस्तान और चीन के मध्य में स्थित था इसलिए यह अभियान उसके द्वारा चीन पर विजय प्राप्त करने हेतु सैनिक अभियान का पूर्वाभ्यास था। खुसरो मलिक के नेतृत्व में भेजे गए इस सैनिक अभियान को कराचल के शासक को सुल्तान की आधीनता स्वीकार कर खिराज देने के लिए राज़ी करने में अवश्य सफलता मिली। इब्न बतूता के अनुसार लौटते समय वर्षा और बीमारी से जूझ रही खुसरो मलिक की सेना पर पहाड़ियों पर छिपे हमलावरों ने आक्रमण कर उसे लूटा और उसे लगभग पूरी तरह नष्ट कर दिया। इस सेना के मुट्ठी भर अधिकारी और सैनिक अपनी जान बचाकर वापस आ सके। इस अभियान की असफलता से अनेक महत्वाकांक्षी अधिकारियों तथा अधीनस्थ शासकों को सुल्तान के विरुद्ध विद्रोह करने की प्रेरणा मिली और इसके बाद विधिवत साम्राज्य का विघटन प्रारम्भ हो गया।

3.5 मुहम्मद तुगलक का चरित्र

साहित्य, दर्शन, तर्कशास्त्र, इतिहास, गणित और खगोलशास्त्र का उद्भट विद्वान, एक लब्धप्रतिष्ठ कवि एवं लेखक, सुलेख में पारंगत, कुशल वक्ता, शास्त्रार्थ में निपुण और मौलिक चिन्तक सुल्तान मुहम्मद तुगलक अपनी अव्यावहारिकता, जल्दबाज़ी, अनियन्त्रित क्रोधी एवं हिंसक प्रवृत्ति के कारण 'वाइज़ैस्ट ऑफ़ फ़ूल्स' तथा 'मिक्सचर ऑफ़ अपोज़िट्स' की अपमानजनक उपाधियों से जाना जाता है। इस बदनाम छवि के पीछे उसके समकालीन ज़ियाउद्दीन बर्नी तथा इब्न बतूता के अतिरंजित वृतान्तों का कुछ भी हाथ है किन्तु इसके लिए मुख्य रूप से उसकी गलत नीतियां और उसका अपना अस्थिर व दुर्बोध चरित्र ही उत्तरदायी है। इब्नबतूता उसके द्वारा अपने महल के मुख्य द्वार पर आए दिन शवों को लटकाए जाने और अनावश्यक रक्तपात की घटनाओं का उल्लेख करता है। मेहंदी हुसेन और ईश्वरी प्रसाद सुल्तान के क्रूरतापूर्ण कृत्यों को मध्यकालीन वातावरण में आम बात मानते हैं किन्तु वे हताशा और आक्रोश में उसके द्वारा दिए गए अमानुषिक दण्ड दिए जाने की घटनाओं को उचित नहीं मानते हैं। धार्मिक संकीर्णता से परे, प्रगतिशील विचारधारा के बुद्धिवादी मुहम्मद तुगलक ने अलाउद्दीन की भांति मध्यकालीन मुस्लिम शासकों की परम्पराओं को तोड़कर धर्म को राजनीति से अलग रखने के लिए राज्य में उलेमा वर्ग की ही नहीं अपितु खलीफ़ा की भी उपेक्षा की थी। मुहम्मद तुगलक ने उलेमा वर्ग, क़ाज़ियों, खातिबों और फ़क़ीरों का न केवल अपमान किया था अपितु अनेक बार उन्हें प्रताड़ित भी किया था। इसी कारण इस वर्ग ने अक्सर उसके विरुद्ध विद्रोह करने वालों का साथ दिया था। इसामी और बर्नी मुहम्मद तुगलक को नास्तिक ठहराते हैं किन्तु वह अपने जीवन में शरियत के नियमों का पालन

करता था। उसके सिक्कों में क़लमा का अंकित किया जाना खुदा में उसकी आस्था को व्यक्त करता है। कुल मिलाकर मुहम्मद तुगलक के चरित्र में गुण-अवगण का अद्भुत एवं जटिल सम्मिश्रण दिखाई पड़ता है। वह खुद दुनिया से और दुनिया उससे परेशान थी। उसकी मृत्यु ने जहां जीवन के जंजाल से उसे मुक्ति दी वहां उसकी प्रजा को उस जैसे क्रूर और सनकी सुल्तान से छुटकारा मिल गया।

3.6 सुल्तान फ़िरोज़ तुगलक

3.6.1 फ़िरोज़ तुगलक के उदारीकरण हेतु प्रयास

सन् 1351 में मुहम्मद तुगलक की मृत्यु के बाद उसके चाचा के लड़के फिरोज़ ने अमीरों तथा विधिविज्ञों के समर्थन से ख्वाजा जहां द्वारा मुहम्मद तुगलक के पुत्र के रूप में सुल्तान बनाए गए एक बालक को अपदस्थ कर दिल्ली का तख्त हासिल किया। एक कुशल प्रशासक के रूप में ख्याति प्राप्त मलिक मक़बूल को उसने 'खाने जहां' की उपाधि प्रदान कर अपना वज़ीर नियुक्त किया। मुहम्मद तुगलक के शासनकाल में उपजी राजनीतिक अस्थिरता, विद्रोहों की पुनरावृत्ति, साम्राज्य का विघटन, अनावश्यक रक्तपात, आर्थिक संकट, सुल्तान-अमीर सम्बन्धों में कटुता, सुल्तान के प्रति उलेमा वर्ग का आक्रोश और जनता में सुल्तान के प्रति बढ़ती हुई घृणा के भाव को मिटाकर फ़िरोज़ तुगलक शान्ति, सद्भाव, सभी वर्गों के साथ ताल-मेल, आपसी विश्वास और सहयोग के साथ सु-शासन स्थापित करना चाहता था।

3.6.2 फ़िरोज़ तुगलक का राजत्व का सिद्धान्त

फिरोज़ तुगलक बलबन, अलाउद्दीन तथा मुहम्मद तुगलक की भांति न तो स्वेच्छाचारी निरंकुश शासक बनना चाहता था और न ही राजत्व के दैविक सिद्धान्त में आस्था रखते हुए उसे सुल्तान के आदेश में ईश्वर के आदेश की प्रतिध्वनि सुनाई देती थी। सुल्तान-अमीर सम्बन्ध के विषय में भी वह उदारवादी था। सुल्तान के रूप में राज्य के महत्वपूर्ण अमीरों तथा उलेमा वर्ग ने उसका चुनाव किया था। वह स्वयं को सल्तनत का स्वामी नहीं बल्कि उसका ट्रस्टी समझता था। सुल्तान ने अपने वज़ीरों तथा अधिकारियों को अपने दायित्व निर्वाहन हेतु पर्याप्त स्वतन्त्रता और अधिकार प्रदान किए। वह राज्य में अमीरों की महत्ता स्वीकार करता था और उनको वह अपने सेवकों के रूप में नहीं, अपितु अपने सहयोगियों के रूप में देखता था। उसकी दृष्टि में उलेमा वर्ग का राज्य में महत्वपूर्ण एवं सम्मानजनक स्थान था। अलाउद्दीन तथा मुहम्मद तुगलक ने राज्य में उलेमा वर्ग की भूमिका नगण्य कर दी थी किन्तु फ़िरोज़ तुगलक ने उनके साथ तुष्टीकरण की नीति अपनाई। उसने स्वयं को खलीफ़ा का नाइब घोषित किया। सन् 1356 में दिल्ली सल्तनत के वैधानिक शासक के रूप में उसने खलीफ़ा से अधिकार पत्र भी प्राप्त किया।

3.6.3 राजस्व सम्बन्धी सुधार

1. फ़िरोज़ तुगलक के तख्तनशीन होने के समय सल्तनत की आर्थिक दशा बहुत शोचनीय थी। उसने राजस्व हेतु परम्परागत कर खिराज, खम्स, जज़िया और ज़कात को ही पर्याप्त माना। किसानों के कंधों पर मुहम्मद तुगलक के काल का दो करोड़ टंकों के ऋण का बोझ था। निर्धन किसानों से ऋण की वसूली असम्भव थी। फ़िरोज़ तुगलक ने व्यावहारिक उदारता का परिचय देते हुए किसानों का ऋण माफ़ कर दिया। अब तक भू-राजस्व एकत्र करने के लिए जिन आँकड़ों को आधार बनाया जाता था (इसे जमा कहा जाता था) वे अतिरंजित होते थे और उनके आधार पर की जाने वाली वसूली (हासिल) कभी उनके बराबर नहीं होती थी। फ़िरोज़ ने जमा और हासिल के अन्तर को दूर करने के लिए ख्वाजा हिसामुद्दीन को नियुक्त किया जिसने सभी प्रान्तों के राजस्व सम्बन्धी दस्तावेज़ों का छह वर्षों की अवधि तक अध्ययन किया। अथक प्रयास के बाद राज्य का महसूल (जमा) 6 करोड 75 लाख टंका निर्धारित किया गया। अपने दीर्घकालीन शासन में फ़िरोज़ ने जमा में कोई बदलाव नहीं किया और अबवाबों के बोझ से किसानों को परेशान नहीं किया। इस प्रकार उसने राजस्व प्रशासन को सुनिश्चितता प्रदान की जिससे शासन में सुस्थिरता आई, राज्य की आय सुनिश्चित हो गई और किसानों को भी अप्रत्याशित कर वृद्धि की आशंका नहीं रही। बाद में शेरशाह ने जमा और हासिल में अन्तर कम करने में और भी अधिक सफलता प्राप्त की थी।

2. उद्योग एवं व्यापार की उन्नति के लिए यह आवश्यक था कि व्यापारियों से बार-बार चुंगी न वसूली जाए। स्वीकृत करों के अतिरिक्त अन्य करों की वसूली पर उसने रोक लगा दी। राजस्व एकत्र करने वाले अधिकारियों - खुत, मुकद्दम आदि को अपने परम्परागत करों को वसूलने के लिए बल का प्रयोग करने से रोक दिया गया।

3. मुस्लिम परम्परा के अनुसार खम्स अर्थात युद्ध में लूटे हुए धन में से शासक को 1/5 तथा सैनिक को 4/5 भाग रखने का अधिकार है किन्तु आमतौर पर शासक इसका 4/5 भाग अपने पास रख लेते थे और 1/5 भाग सैनिक को देते थे। फ़िरोज़ तुगलक ने इस विषय में मुस्लिम परम्परा को फिर से प्रचलित किया।

4. राजस्व में जज़िया का महत्वपूर्ण स्थान था। फ़िरोज़ तुगलक गैर-मुस्लिम प्रजा के प्रति असहिष्णु था। फ़िरोज़ तुगलक से पूर्व के मुस्लिम शासकों ने ब्राह्मणों को निर्धन मानकर जज़िया से मुक्त कर रखा था किन्तु उसने ब्राह्मणों से सख्ती के साथ जज़िया वसूलने का आदेश दिया।

5. राजस्व में वृद्धि के उद्देश्य से फिरोज़ तुगलक ने कृषि-विस्तार की महत्ता को समझा। उसने कृषि-प्रोत्साहन के लिए 5 बड़ी नहरों का निर्माण कराया। यमुना, सतलज और घग्घर नदी पर नहरों का निर्माण किया गया। नहरों से सिंचित क्षेत्र में हक-ए-शिर्ब (सिंचाई कर) कुल उपज का 1/10 निर्धारित

किया गया। राजस्व में वृद्धि के उद्देश्य से बागवानी को प्रोत्साहन दिया गया। सुल्तान ने दिल्ली तथा उसके आसपास 1200 बाग लगवाए।

शम्स-ए-सिराज अफ़ीफ़ ने फ़िरोज़ तुगलक के शासनकाल में किसानों की खुशहाली और बिना सरकारी नियन्त्रण के खाद्यान्न के सस्ते होने का उल्लेख किया है। जनता की खुशहाली और स्त्रियों के गहनों से लदे होने का भी वह उल्लेख करता है।

6. फ़िरोज़ तुगलक ने राजस्व एकत्र करने के लिए ठेकेदारी की प्रथा और जागीरदारी की प्रथा को पुनर्जीवित कर किसानों के शोषण तथा प्रशासनिक भ्रष्टाचार का रास्ता खोल दिया था।

3.6.4 सार्वजनिक निर्माण के कार्य

फ़िरोज़ तुगलक महान निर्माता था। फ़रिश्ता के अनुसार उसने 40 मस्जिदें, 20 महल, 100 सराय, 5 बड़ी नहरे, 5 जलाशय, 100 दवाखाने, 5 मकबरे, 100 हमाम, 10 स्तम्भ स्मारक और 150 पुलों के साथ लगभग 300 नगरों का निर्माण किया था। हिसार, फिरोज़ाबाद, फ़िरोज़पुर तथा जौनपुर उसके बनवाए हुए प्रसिद्ध नगर हैं। दिल्ली का फिरोज़ शाह कोटला उसी की देन है। बिजली गिरने से क्षतिग्रस्त कुतुब मीनार की मरम्मत भी उसने कराई थी।

3.6.5 कल्याणकारी राज्य

फ़िरोज़ तुगलक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा में विश्वास रखता था। अनाथों तथा विधवाओं की परवरिश, खैराती दवाखानों, मदरसों तथा मक़्तबों का निर्माण, गरीब कन्याओं के विवाह हेतु आर्थिक सहायता, बेरोज़गारों को उनकी योग्यतानुसार रोज़गार दिए जाने की व्यवस्था करना आदि उसके कल्याणकारी कार्यों में सम्मिलित थे किन्तु उसकी जन-कल्याण की भावना केवल मुस्लिम प्रजा तक सीमित थी।

3.6.6 कट्टर धार्मिक नीति

फ़िरोज़ तुगलक धार्मिक प्रवृत्ति का एक धर्मभीरु, आस्थावान मुसलमान था और वह इस्लाम के संरक्षक के रूप में अपनी छवि बनाने के लिए सतत प्रयत्नशील रहता था। सत्ता-प्राप्ति में उसे उलेमा वर्ग का समर्थन प्राप्त हुआ था। सुल्तान बनते ही उसने अलाउद्दीन खिलजी व मुहम्मद तुगलक की धर्म से राजनीति को अलग करने की नीति को पलटते हुए उलेमा वर्ग का राजनीतिक महत्व बढ़ा दिया और उसे आर्थिक सुविधाएं भी उपलब्ध कराई। खलीफ़ा से उसके नाइब और सुल्तान के रूप में वैधानिक अधिकार पत्र प्राप्त करने को भी उसने अत्यधिक महत्व दिया। उसने अपने राज्य को दारुल इस्लाम का रूप दिया और गैर-मुस्लिम परम्पराओं के अनुपालन पर प्रतिबन्ध लगा दिया। सुल्तान को मुसलमानों का कल्याण ही सर्वोपरि था। गैर-मुस्लिमों के प्रति उसकी नीति

असहिष्णुतापूर्ण थी। उसने ब्राह्मणों को जज़िया के दायरे में लाकर अपनी धर्मांधता का परिचय दिया था। उसने हिन्दुओं को ही नहीं अपितु शियाओं, महदवियों तथा सूफ़ियों का भी उत्पीड़न किया। उसने हिन्दुओं को इस्लाम में दीक्षित होने के लिए प्रलोभन देने की नीति अपनाई। अपनी आत्मकथा फ़ुतूहात-ए-फ़िरोज़शाही में वह बड़े दम्भ के साथ प्रलोभन देकर हिन्दुओं को इस्लाम धर्म में दीक्षित होने के लिए प्रेरित करने की बात स्वीकार करता है। नगरकोट और जाजनगर पर आक्रमण तथा वहां मन्दिरों व मूर्तियों का विनाश करना उसकी धार्मिक उत्पीड़न की नीति के उदाहरण थे।

3.6.7 तुगलक वंश के पतन के लिए फिरोज़ तुगलक का दायित्व

फिरोज़ तुगलक ने 37 वर्ष तक शासन किया। अपने प्रशासनिक सुधारों के लिए उसके समकालीन इतिहासकारों - ज़ियाउद्दीन बर्नी तथा शम्स-ए-सिराज अफ़ीफ़ ने उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है। आधुनिक इतिहाकारों ने उसके लोक-कल्याणकारी कार्यों के लिए उसकी तुलना अशोक व अकबर से की है। परन्तु फ़िरोज़ तुगलक ने दिल्ली सल्तनत के विघटन की प्रक्रिया को रोकने के स्थान पर उसकी गति को और बढ़ा दिया।

1. फिरोज़ तुगलक में सैनिक प्रतिभा का नितान्त अभाव था। उसके शासनकाल में साम्राज्य विस्तार की नीति का परित्याग कर दिया गया। सैनिक अनुशासन में कमी, सैनिकों की भर्ती के नियमों में शिथिलता, पदों को वंशानुगत करना, घोड़ों को दागने तथा सैन्य-निरीक्षण की प्रथा का स्थगन और सेना में व्याप्त भ्रष्टाचार ने राज्य की सैन्य-शक्ति को अत्यन्त क्षीण कर दिया।

2. धार्मिक कट्टरता की नीति अपना कर फ़िरोज़ तुगलक ने अपनी बहुसंख्यक हिन्दू प्रजा का सद्भाव तथा सहयोग खो दिया। उसने इस्लाम के संरक्षक का चोला पहन कर धर्मांधता तथा धार्मिक वैमनस्य को बढ़ावा दिया। उलेमा वर्ग को राजनीति में हस्तक्षेप करने का अधिकार देकर भी उसने दिल्ली सल्तनत को पतन की ओर ढकेल दिया।

3. फिरोज़ तुगलक ने दास प्रथा को बढ़ावा देकर राज्यकोष पर अनावश्यक बोझ डाला।

4. शक्ति के विकेन्द्रीकरण की नीति अपना कर फिरोज़ तुगलक ने प्रशासनिक शिथिलता को और बढ़ा दिया। उसकी अनावश्यक उदारता ने भ्रष्ट अधिकारियों तथा कर्मचारियों के दुःसाहस का पोषण किया।

5. फिरोज़ तुगलक ने अपने पुत्रों को प्रशासनिक व सैनिक प्रशिक्षण से दूर रखा। सभी परवर्ती तुगलक सुल्तानों के अयोग्य सिद्ध होने के पीछे उसका भी दायित्व है।

6. सैनिक दुर्बलता के कारण उत्तर-पश्चिमी सीमा से होने वाले आक्रमणों को रोक पाना असम्भव हो गया था। तैमूर का आक्रमण फ़िरोज़ तुगलक की मृत्यु के एक दशक बाद हुआ किन्तु उसके लिए अनुकूल परिस्थितियां उत्पन्न करने का दायित्व बहुत कुछ उसी का था।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्नांकित पर चर्चा कीजिए-

1. सुल्तान गियासुद्दीन तुगलक।
2. सुल्तान मुहम्मद बिन तुगलक द्वारा दोआब में कर वृद्धि।
3. सांकेतिक मुद्रा।
4. खुरासान अभियान की असफलता।
5. फ़िरोज़ तुगलक के राजस्व सम्बन्धी सुधार।
6. फ़िरोज़ तुगलक की धार्मिक नीति।

3.7 सारांश

तुगलक वंश में दो शासकों मुहम्मद तुगलक और फिरोज़ तुगलक ने इतिहास में अपनी अलग छाप छोड़ी है। मुहम्मद तुगलक जहां अपनी विवादास्पद नीतियों और चारित्रिक दुरूहता के लिए कुख्यात है वहीं दूसरी ओर फिरोज़ तुगलक अपने प्रशासनिक सुधारों के लिए विख्यात है। मुहम्मद तुगलक की अव्यावहारिक योजनाओं - दोआब में कर वृद्धि, राजधानी परिवर्तन, सांकेतिक मुद्रा तथा खुरासान व कराचल अभियान, ने दिल्ली सल्तनत को खोखला कर दिया। सल्तनत के विघटन की प्रक्रिया मुहम्मद तुगलक के शासनकाल में बहमनी तथा विजयनगर राज्यों की स्थापना से प्रारम्भ हो गई। फिरोज़ तुगलक प्रशासनिक सुधार कर राज्य में शान्ति स्थापित करने एवं कृषि, उद्योग तथा व्यापार का विकास करने में सफल रहा किन्तु उसकी सैनिक दुर्बलता, अनावश्यक उदारता और धर्मांधता ने उसके राज्य को इतना कमज़ोर बना दिया कि वह वाह्य आक्रमणकारियों से अपनी रक्षा करने में नितान्त असमर्थ हो गया। यद्यपि तैमूर के आक्रमण से तुगलक वंश का पतन अवश्यम्भावी हो गया था किन्तु तुगलक वंश के दोनों महत्वपूर्ण शासक - मुहम्मद तुगलक तथा फ़िरोज़ तुगलक, तुगलक वंश के पतन के लिए एक सीमा तक उत्तरदायी कहे जा सकते हैं।

3.8 पारिभाषिक शब्दावली

दीवान-ए-विज़ारत - वित्त मन्त्रालय।

वाइज़ैस्ट ऑफ़ फूल्स - मूर्खों के मध्य सबसे बड़ा विद्वान।

मिक्सचर ऑफ़ अपोज़िट्स - विरोधी प्रवृत्तियों का सम्मिश्रण।

कलमा - ला इलाहा लिल्लिलाह मुहम्मदुर्रसूलिल्लिाह (ईश्वर के अतिरिक्त कोई नहीं है और मुहम्मद उसका पैगम्बर है।)

ज़क़ात - मुसलमानों से लिया जाने वाला धार्मिक कर।

जमा - अनुमानित राजस्व।

हासिल - वास्तव में वसूला गया राजस्व।

दारुल इस्लाम - मुसलमानों का देश।

3.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 3.3 गियासुद्दीन तुगलक का शासन।
2. देखिए 3.4.1 दोआब में कर वृद्धि।
3. देखिए 3.4.3 सांकेतिक मुद्रा।
4. देखिए 3.4.4 खुरासान तथा कराचल पर विजय की योजना का पहला बिन्दु।
5. देखिए 3.6.3 फ़िरोज़ तुगलक के राजस्व सम्बन्धी सुधार।
6. देखिए 3.6.6 कट्टर धार्मिक नीति।

3.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Husain, M. – *Life and Times of Muhammad bin Tughlaq*
2. Surhone, Lambert, M. – Tughlaq Dynasty
3. Nizami, K. A. (Editor) – *Politics and Society in Early Medieval Period*
4. Ahmed, M. – *Sultan Firoz Shah Tughlaq*
5. हबीब, मुहम्मद - दिल्ली सल्तनत भाग 2

3.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Venkatramanyya, N. – *The Early Muslim Expansion in South India*
2. Habib, M. – *Hazrat Amir Khusro of Delhi*
3. फ़िरोज़ शाह - फ़ुतूहात-ए-फ़िरोज़शाही (हिन्दी अनुवाद - उमर, एम0)
4. रिजवी, अतहर अब्बास - तुगलक कालीन भारत भाग 1, 2

3.12 निबंधात्मक प्रश्न

मुहम्मद तुगलक के चरित्र का आकलन कीजिए। क्या वह विरोधी प्रवृत्तियों का सम्मिश्रण था?

इकाई चार- बहलोल लोदी , सिकन्दर लोदी , इब्राहिम लोदी एवं सामाजिक स्थिति

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 सुल्तान बहलोल लोदी
4.3.1 अफ़गान राजत्व का सिद्धान्त
4.3.2 बहलोल लोदी की उपलब्धियां
4.3.2.1 जौनपुर के शर्की राज्य पर विजय
4.3.2.2 विद्रोहियों का दमन
4.3.2.3 दिल्ली सल्तनत के सम्मान की पुनर्प्रतिष्ठा
4.4 सुल्तान सिकन्दर लोदी
4.4.1 राज्यारोहण के समय की समस्याएं
4.4.2 समस्याओं का निराकरण
4.4.2.1 राज्य के बटवारे को समाप्त करना
4.4.2.2 हुसैन शाह शर्की का दमन
4.4.2.3 अमीरों पर नियन्त्रण तथा राजत्व के सिद्धान्त में बदलाव
4.4.3 साम्राज्य विस्तार
4.5 धार्मिक नीति
4.6 सुल्तान इब्राहीम लोदी
4.6.1 अमीरों से टकराव
4.6.2 पानीपत का प्रथम युद्ध तथा दिल्ली सल्तनत का पतन
4.7 सल्तनत काल में सामाजिक स्थिति
4.7.1 हिन्दुओं तथा अन्य गैर-मुस्लिम समुदायों की जीवन शैली
4.7.2 मुसलमानों की जीवन शैली
4.7.3 स्त्रियों की दशा
4.7.4 हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्ध
4.8 सारांश
4.9 पारिभाषिक शब्दावली
4.10 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर
4.11 संदर्भ ग्रंथ सूची
4.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
4.13 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

सुल्तान फिरोज़ शाह तुगलक के शासनकाल के अंतिम वर्षों में जिस राजनीतिक अस्थिरता ने दिल्ली सल्तनत को जकड़ा था वह अगले साठ वर्षों से भी अधिक काल तक बनी रही। वास्तव में 1451 में बहलोल लोदी के सुल्तान बनने पर ही स्थिति में कुछ सुधार आया परन्तु राज्य को पुनर्संगठित करना और विरोधी शक्तियों का स्थायी रूप से दमन कर पाना लोदी शासकों की सामर्थ्य से परे था। राज्य के आर्थिक संसाधन भी सीमित थे। अफ़गान राजत्व के सिद्धान्त का अनुपालन करते हुए सुल्तान बहलोल ने स्वयं को राज्य संघ का प्रमुख माना न कि राज्य का सार्वभौमिक शासक। जौनपुर राज्य का दिल्ली सल्तनत में विलय बहलोल लोदी की सबसे बड़ी उपलब्धि थी।

बहलोल लोदी की मृत्यु के बाद सुल्तान सिकन्दर लोदी ने सुल्तान को सर्वोपरि स्थान देकर राजत्व के सिद्धान्त में परिवर्तन किया और अमीरों की शक्ति को नियन्त्रित किया। सिकन्दर लोदी की साम्राज्य विस्तार की नीति एक सीमा तक सफल रही किन्तु उसके शासनकाल में सुल्तान-अमीर सम्बन्धों में कटुता आ गई। सिकन्दर लोदी की धर्मांधता ने हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य को बढ़ावा दिया। सिकन्दर लोदी की मृत्यु के बाद सिंहासनारूढ़ इब्राहीम लोदी अपने दम्भ और असहिष्णुता के कारण एक असफल शासक सिद्ध हुआ। सीमा सुरक्षा का समुचित प्रबन्ध न कर पाना और अपने विरुद्ध पनप रहे षडयन्त्रों के प्रति असावधान रहने के कारण पानीपत के प्रथम युद्ध में बाबर से पराजित होने पर उसका अन्त हुआ।

दिल्ली सल्तनत काल का समाज वर्ग भेद, जाति भेद और लिंग भेद से ग्रस्त था। हिन्दू और मुसलमान दोनों ही समुदायों के सामाजिक जीवन में परम्परा के नाम पर रूढ़िवादिता, धर्म के नाम पर कर्म काण्ड और आस्था के नाम पर अंधविश्वास का बोलबाला था। इस काल का ग्राम्य जीवन सादगी का और शहरी, विशेषकर आभिजात्य वर्ग के शहरियों का जीवन विलासिता से परिपूर्ण था। इस काल में स्त्रियां सामान्यतः अभिशप्त जीवन व्यतीत करने के लिए विवश थीं।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1- अफ़गान राजत्व का सिद्धान्त, बहलोल लोदी द्वारा राज्य की अराजकतापूर्ण स्थिति में सुधार।

2- सिकन्दर लोदी के सैनिक अभियान तथा उसकी कट्टर धार्मिक नीति।

3. इब्राहीम लोदी की दोषपूर्ण नीतियां तथा पानीपत के प्रथम युद्ध में बाबर की विजय के उपरान्त भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना।

4. दिल्ली सल्तनत काल की सामाजिक स्थिति।

4.3 सुल्तान बहलोल लोदी

4.3.1 अफ़गान राजत्व का सिद्धान्त

बहलोल अफ़गान जाति का था। अफ़गानों की कबाइली राजनीतिक अवधारणा में विश्वास करता था। शासक की पूर्ण सम्प्रभुता और उसकी निरंकुश शक्ति में अफ़गानों की आस्था नहीं थी। उनका विश्वास शासक अथवा मुखिया के चुनाव में था न कि राजत्व के दैविक सिद्धान्त और वंशानुगत शासन की अवधारणा में। अपनी कबाइली संस्कृति में विश्वास रखते हुए अफ़गानों के विभिन्न कबीले, शासक को अपनी बिरादरी का मुखिया मानते थे न कि अपना स्वामी। बलबन, अलाउद्दीन खिलजी और मुहम्मद तुगलक के राजत्व के दैविक सिद्धान्त के विपरीत, सुल्तान बहलोल लोदी अफ़गानों के कबाइली और कुनबे की राजनीतिक अवधारणा में विश्वास करता था। बहलोल ने कभी भी एक स्वेच्छाचारी, निरंकुश एवं पूर्णसम्प्रभुता प्राप्त शासक की भांति व्यवहार नहीं किया। वह स्वयं को राज्य संघ का प्रमुख मात्र मानता था। उसने अपने पुरखों के स्थान रोह से अपने कबीले वालों को अपने राज्य में आने के लिए निमन्त्रित किया था। अपनी बिरादरी के अमीरों को उसने अपनी बराबरी का दर्जा दिया और सल्तनत में उनको अपना हिस्सेदार माना। उनके रूठने पर उनको मनाने के लिए उनके घर तक जाने में उसे कोई ऐतराज़ नहीं था और उनके साथ एक ही मसनद पर बैठने में उसे कोई संकोच नहीं था। उसने अपने राज्य के विभिन्न क्षेत्रों को अपने सम्बन्धियों और अपने अमीरों में बांटने का निर्णय लिया था। अफ़गान राजत्व के सिद्धान्त का पोषण कर बहलोल लोदी ने अमीरों की महत्वाकांक्षाओं को बढ़ावा तो दिया था किन्तु उसने सुल्तान-अमीर सम्बन्धों में बढ़ती हुई कटुता को दूर करने में और स्वजातीय अफ़गान अमीरों के सहयोग से विघटित होती हुई दिल्ली सल्तनत में राजनीतिक स्थायित्व स्थापित करने में सफलता अवश्य प्राप्त की थी।

4.3.2 बहलोल लोदी की उपलब्धियां

4.3.2.1 जौनपुर के शर्की राज्य पर विजय

सुल्तान बनने के बाद बहलोल लोदी को विद्रोही अमीरों तथा शत्रु पड़ौसी राज्यों से घिरा, आर्थिक दृष्टि से बहुत कमज़ोर और एक अस्थिर राज्य प्राप्त हुआ था। जौनपुर के शर्की शासक दिल्ली सल्तनत के लिए सबसे बड़ा खतरा थे। सन् 1452, 1457, 1473, 1474 तथा 1479 में

जौनपुर के सुल्तानों दिल्ली पर तथा दोआब पर अधिकार करने के लिए असफल सैनिक अभियान किए। जौनपुर के शासकों ने विद्रोही अमीरों का गुप्त समर्थन प्राप्त कर बहलोल के लिए दोआब में कठिनाइयां खड़ी कीं किन्तु उसने उनका भी सफलतापूर्वक सामना किया। दीर्घकालीन संघर्ष के बाद बहलोल सन् 1479 में जौनपुर पर निर्णायक विजय प्राप्त करने में सफल रहा। उसने अपने पुत्र बरबक शाह को जौनपुर का सूबेदार नियुक्त किया। जौनपुर पर विजय प्राप्त करने के बाद बहलोल के राज्य का क्षेत्रफल व उसके संसाधन पहले की तुलना में दो गुने हो गए।

4.3.2.2 विद्रोहियों का दमन

राज्य की राजनीतिक अस्थिरता का लाभ उठाकर मुल्तान, मेवात तथा दोआब के अमीरों तथा जागीरदारों ने न केवल बहलोल को राजस्व देना रोक दिया अपितु शर्की सुल्तानों से उसके विरुद्ध सांठगांठ करना भी प्रारम्भ कर दिया। बहलोल ने मेवात, सम्भल, कोल, साकित, इटावा, रापरी, भोगाँव, ग्वालियर आदि के विरुद्ध अभियान किए तथा जौनपुर पर विजय प्राप्त करने के बाद इन क्षेत्रों के अमीरों, जागीरदारों तथा शासकों को अपनी आधीनता स्वीकार करने के लिए विवश भी किया।

4.3.2.3 दिल्ली सल्तनत के सम्मान की पुनर्प्रतिष्ठा

बहलोल लोदी ने राज्य की आर्थिक स्थिति में सुधार किया। यद्यपि उसने अपने राज्य के लिए इस्लाम के सिद्धान्तों को आधार बनाया किन्तु बहुसंख्यक गैर-मुस्लिम प्रजा का उत्पीड़न करने में उसने कोई रुचि नहीं ली। अनेक हिन्दू शासक व जागीरदारों से उसके मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध थे। बहलोल लोदी ने साठ वर्ष से भी अधिक समय से चली आ रही राजनीतिक अस्थिरता को समाप्त कर साम्राज्य-विघटन की प्रक्रिया पर अंकुश लगाने में पर्याप्त सफलता प्राप्त की।

4.4 सुल्तान सिकन्दर लोदी

4.4.1 राज्यारोहण के समय की समस्याएं

1. निज़ाम खाँ 16 जुलाई, 1489 को सिकन्दर लोदी के रूप में दिल्ली का सुल्तान बना। बहलोल लोदी ने अपने पुत्र निज़ाम खाँ (सुल्तान बनने के बाद सिकन्दर लोदी) को पंजाब, दिल्ली और दोआब देकर अपना उत्तराधिकारी घोषित किया था किन्तु अपनी मृत्यु से पूर्व उसने अपने अन्य सम्बन्धियों तथा अमीरों में अपने शेष राज्य का बटवारा कर दिया था। उसने अपने पुत्र बरबक शाह को जौनपुर का राज्य, आलम खाँ को मानिकपुर, अपने भांजे काला पहाड़ को बहराइच और अपने पौत्र आज़म हुमायूं को लखनऊ एवं कालपी तथा खान जहां लोदी को बदायूं का क्षेत्र दिया था।

2. बहलोल की मृत्यु के बाद अमीरों का एक प्रभाशाली वर्ग निज़ाम खाँ के स्थान बरबक शाह यां आज़म हुमायूं को सुल्तान बनाए जाने का पक्षधर था।

3. जौनपुर के अपदस्थ शर्की शासक हुसेन शाह ने जौनपुर के बागी अमीरों के सहयोग से उस पर पुनराधिकार का प्रयास किया।

4. बहलोल की उदारता के कारण राजकोष रिक्त हो गया था। ग्वालियर तथा बयाना आदि ने खिराज देना बन्द कर दिया था।

4.4.2 समस्याओं का निराकरण

4.4.2.1 राज्य के बटवारे को समाप्त करना

सुल्तान बनते ही सिकन्दर लोदी ने अपने विरोधियों के दमन हेतु आवश्यक कदम उठाए। उसने अपने भाई आलम खाँ को अपनी ओर मिलाया तथा अपने भतीजे आज़म हुमायूं व चाचा ईसा खाँ को पराजित किया। बरबक शाह को अनेक बार पराजित और क्षमा प्रदान करने के बाद उसने उसे अपदस्थ कर जौनपुर अपने अधिकार में कर लिया।

4.4.2.2 हुसेन शाह शर्की का दमन

जौनपुर के अपदस्थ शर्की शासक हुसेन शाह को सिकन्दर लोदी ने पराजित किया। हुसेन शाह बंगाल चला गयया। कुछ वर्षों के अन्तराल के बाद हुसेन शाह ने फिर सर उठाया किन्तु सन् 1494 में सिकन्दर ने एक बार फिर हुसेन शाह को पराजित किया।

4.4.2.3 अमीरों पर नियन्त्रण तथा राजत्व के सिद्धान्त में बदलाव

सिकन्दर लोदी के अमीर उसको अपना स्वामी नहीं, अपितु अपना मुखिया मात्र मानते थे। उसके अनेक अमीर उसके स्थान पर बरबक शाह अथवा आज़म हुमायूं को सुल्तान बनाना चाहते थे। सिकन्दर ने बहलोल द्वारा पोषित राजत्व के सिद्धान्त में बदलाव कर सुल्तान पद की गरिमा को बढ़ाया और अमीरों के महत्व को कम किया। सुल्तान ने अपने अमीरों को अपने साथ एक ही मसनद पर बिठाने के स्थान पर उन्हें अपने सामने खड़े रहकर सम्मान प्रदर्शित करने के लिए विवश किया। अमीरों को सुल्तान के आदेश को पैदल चलकर ग्रहण करने के लिए बाध्य किया गया। अनुशासनहीन एवं भ्रष्ट अमीरों को उसने दण्डित किया और उनकी गतिविधियों पर दृष्टि रखने के लिए गुप्तचर नियुक्त किए। जौनपुर के सूबेदार मुबारक खाँ लोदी को गबन करने पर दण्डित किया गया और अपने छोटे भाई फ़तेह खाँ को सुल्तान बनाने का षडयन्त्र करने वाले 22 अमीरों को उसने निर्वासित किया। इस प्रकार सिकन्दर ने बहलोल द्वारा पोषित राजत्व के सिद्धान्त में बदलाव कर

सुल्तान पद की गरिमा को बढ़ाया और अमीरों के महत्व तथा उनकी महत्वाकांक्षाओं को कम किया किन्तु बुजुर्ग अमीरों के साथ उसने सम्माजनक व्यवहार किया। सिकन्दर लोदी ने विद्रोही अमीरों का कठोरतापूर्वक दमन किया।

4.4.3 साम्राज्य विस्तार

1. हुसेनशाह शर्की ने बिहार में रहकर जौनपुर पर पुनराधिकार करने के लिए सन् 1494 में आक्रमण किया किन्तु सिकन्दर लोदी ने उसे पराजित किया और उसका पीछा करते हुए वह पटना जा पहुंचा। वहां उसने बिहार को अपने अधिकार में किया। इसी अभियान के दौरान उसने तिरहुत के शासक को भी अपनी आधीनता स्वीकार करने के लिए बाध्य किया।

2. सन् 1502 में सिकदर ने धौलपुर के शासक विनायक देव को पराजित कर धौलपुर अपने राज्य में मिला लिया। ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर पर उसने कई आक्रमण किए परन्तु वह ग्वालियर पर अधिकार करने में असफल रहा। उसने ग्वालियर राज्य के नरवर, मन्दर तथा उतगिर पर अधिकार करने में अवश्य सफलता प्राप्त की।

3. राजपूत राज्यों पर नियन्त्रण रखने के लिए उसने बयाना पर अधिकार किया और उसके एक अंग आगरा को अपनी राजधानी के रूप में विकसित किया। सन् 1509 में सिकन्दर ने नागौर के शासक मुहम्मद खाँ को अपनी आधीनता स्वीकार करने के लिए बाध्य किया। सन् 1513 में चन्देरी भी उसके अधिकार में आ गया।

4.5 धार्मिक नीति

सिकन्दर लोदी यद्यपि विवाह से पूर्व हिन्दू रही माँ का पुत्र था, उसने एक हिन्दू कन्या से विवाह भी किया था किन्तु उसने स्वयं को इस्लाम के संरक्षक के रूप में प्रस्तुत किया। बहुसंख्यक गैर-मुस्लिम प्रजा के साथ उसने दमन की नीति अपनाई। नरवर, उतगिर तथा मन्दर पर अधिकार करने के बाद उसने मन्दिों को ध्वस्त करके उनके स्थान पर मस्जिदों का निर्माण कराया। नरवर के मन्दिरों की मूर्तियों को खण्डित कर उसने उनके टुकड़ों को बांट के रूप में प्रयुक्त करने के लिए कसाइयों में वितरित कर दिया। मथुरा में उसने भक्तों का पवित्र घाटों पर स्नान करना तथा मुण्डन कराना निषिद्ध कर दिया। बोधन नामक ब्राह्मण को उसने केवल इसलिए प्राणदण्ड दिया क्योंकि वह अपने धर्म और इस्लाम में एक ही सत्य का वास मानता था। सूफ़ियों की उदार परम्पराओं पर भी उसने प्रतिबन्ध लगाया। मुहर्रम के समय ताज़ियों को निकालने और स्त्रियों के पीरों-फ़कीरों की मज़ार पर जाने पर उसने प्रतिबन्ध लगा दिया। जनश्रुति के अनुसार सन्त कबीर से भी उनकी नीतियों को लेकर उसका वाद-विवाद हुआ था। सुल्तान सिकन्दर लोदी की असहिष्णु धार्मिक नीति ने न केवल हिन्दू-मुस्लिम

सम्बन्ध में कटुता को बढ़ावा दिया अपितु राजपूत शासकों को मुस्लिम सत्ता के विरुद्ध संगठित होने के लिए प्रेरित भी किया।

4.6 सुल्तान इब्राहीम लोदी

4.6.1 अमीरों से टकराव

सन् 1517 में जब इब्राहीम लोदी दिल्ली का सुल्तान बना तब इब्राहीम लोदी के छोटे भाई जलाल खाँ समर्थक दल ने उस पर राज्य के विभाजन के लिए दबाव डाला और जलाल खाँ को जौनपुर का स्वतन्त्र शासक बनवाने में सफलता प्राप्त की। जलाल खाँ के विद्रोह से लेकर उसके पतन, कारावास तथा हत्या के दौरान इब्राहीम लोदी को आज़म हुमायूं सरवानी तथा मलिक आदम की सक्रिय भूमिका से निपटना पड़ा। इब्राहीम लोदी इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि सुल्तान के पद की पुनर्प्रतिष्ठा हेतु उसे अफ़गानों के कबाइली मूल्यों पर आधारित राजत्व के सिद्धान्त के स्थान पर तुर्कों द्वारा पोषित राजत्व के दैविक सिद्धान्त को स्थापित करना होगा। सुल्तान की निरंकुश, स्वेच्छाचारी शक्ति के पोषण की नीति स्वाभिमानी तथा स्वतन्त्रताप्रिय अफ़गान अमीरों के लिए अपमानजनक था। जलाल खाँ के विद्रोह के बाद सुल्तान अमीरों के प्रति सशंकित हो गया था। उसने पुराने अमीरों के स्थान पर अपने विश्वस्तों व वफ़ादारों को अमीर बनाया और अपने विरोधी अमीरों का दमन किया। उसने अमीर मियाँ भोजा, आज़म हुमायूं सरवानी तथा उसके पुत्र फ़तेह खाँ कैद कर लिया। आज़म हुमायूं के एक अन्य पुत्र इस्लाम खाँ ने आगरा पर आक्रमण कर दिया। विद्रोही सेना तथा सुल्तान की सेना में भयंकर युद्ध हुआ जिसमें सुल्तान की जीत हुई। सुल्तान को विद्रोह का दमन करने की भारी कीमत चुकानी पड़ी। योग्यतम अफ़गान सैनिक इस गुह युद्ध में मारे गए। सुल्तान के विरुद्ध बिहार के सूबेदार दरिया खाँ नूहानी, उसके पुत्र मुहम्मद शाह तथा खानेजहां लोदी ने विद्रोह किए। सुल्तान ने चन्देरी के सूबेदार शेखहसन करमली की हत्या करवा दी। अपने पुत्र दिलावर खाँ को सुल्तान द्वारा दिल्ली में धमकाए जाने के कारण पंजाब का सूबेदार दौलत खाँ लोदी नाराज़ हो गया और उसने मुगल बादशाह बाबर को सुल्तान पर आक्रमण करने के लिए निमन्त्रित किया। इब्राहीम लोदी ने अमीरों के दमन के प्रयास में खुद को अकेला और असुरक्षित कर दिया।

4.6.2 पानीपत का प्रथम युद्ध तथा दिल्ली सल्तनत का पतन

बाबर ने 1504 में काबुल पर अधिकार कर लिया था। सन् 1519 में उसने भारत पर पहला सैनिक अभियान किया था। 1524 में उसने सुल्तान के चाचा आलम खाँ लोदी तथा पंजाब के सूबेदार दौलत खाँ लोदी के निमन्त्रण पर पंजाब पर आक्रमण कर बहार खाँ लोदी के नेतृत्व में शाही सेना को परास्त किया और लाहौर व दीपलपुर पर अधिकार कर लिया। सन् 1525 में पंजाब पर पूर्ण अधिकार कर बाबर ने दिल्ली की ओर कूच किया। अपने अधिकांश अमीरों का अब तक समर्थन

खो चुका इब्राहीम लोदी उसका मुकाबला करने के लिए पानीपत पहुंचा। 21 अप्रैल, 1526 को दोनों सेनाओं के मध्य युद्ध हुआ। बाबर की सेना से संख्या में अधिक होते हुए भी इब्राहीम लोदी की सेना, बाबर के कुशल सेनानायकत्व व तुलुगमा (तोपखाने तथा घुड़सवार सेना का अप्रत्याशित संयुक्त आक्रमण) रणनीति के समक्ष पराजित हुई। इब्राहीम लोदी लड़ते हुए मारा गया। इस निर्णायक युद्ध में विजय प्राप्त करने के बाद बाबर ने भारत में मुगल साम्राज्य की नींव डाली।

4.7 सल्तनत काल में सामाजिक स्थिति

4.7.1 हिन्दुओं तथा अन्य गैर-मुस्लिम समुदायों की जीवन शैली

दिल्ली सल्तनत काल में हिन्दुओं तथा अन्य गैर-मुस्लिम समुदायों के सामाजिक जीवन में कोई उल्लेखनीय बदलाव नहीं आया। वर्ण-व्यवस्था जन्मनाजाति की अवधारणा पर आधारित रही और सामाजिक असमानता को धार्मिक समर्थन भी प्राप्त रहा। ब्राह्मणों एवं क्षत्रियों का सामाजिक प्रभुत्व पूर्ववत स्थापित रहा। धनाढ्य वैश्य समुदाय साधन-सम्पन्न होते हुए भी सम्मान का पात्र नहीं बन पाया। शूद्रों की स्थिति पहले की भांति दयनीय रही। सामाजिक जीवन में धर्म की प्रधानता रही परन्तु धर्म के नाम पर कर्मकाण्ड और आस्था के नाम पर अंधविश्वास का बोलबाला रहा। धनाढ्यों एवं निर्धनों के खानपान में बहुत अन्तर था। जहां गरीब के लिए भरपेट भोजन के नाम पर दाल-रोटी पर्याप्त होती थी वहां समृद्ध वर्ग छप्पन भोग का आनन्द उठाता था। ब्राह्मण तथा वैश्य मुख्यतः शाकाहारी थे और क्षत्रियों व शूद्रों के मध्य मांसाहार प्रचलित था। इस काल के आभिजात्य वर्ग में सुरा का सेवन प्रचलित था। ग्रामों में पंचायतों, चौपाल और पनघट का सामुदायिक जीवन में बहुत अधिक महत्व था। ग्रामीणों की भेषभूषा बहुत साधारण होती थी, उनमें सिले हुए कपड़ों का चलन कम था। जूते पहनना उनके मध्य अपवाद था। शहरी जीवन में भौतिकतावादी सुखों के प्रति अधिक रुझान था। शहरों में अमीर-गरीब के मध्य खाई और अधिक चौड़ी थी।

4.7.2 मुसलमानों की जीवन शैली

मुस्लिम समाज में जन्मनाजाति की अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था का चलन नहीं था किन्तु अमीर-गरीब, मालिक-गुलाम, शहरी-ग्रामीण आदि के मध्य गहरी खाई अवश्य थी। मुसलमानों में भी धर्म की महत्ता बहुत अधिक थी। उलेमा वर्ग का समाज में सम्मानपूर्ण स्थान था। मुसलमानों में जादू-टोटके, गण्डा, ताबीज़, जिन्न, परी, मन्नत, नज़र लगना आदि अंधविश्वास व्याप्त थे। मुसलमानों में मांसाहार का चलन था। आभिजात्य वर्ग के खानपान में बहुत अधिक विविधता थी और मदिरापान एक आम बात थी। मुसलमानों में अचकन, शेरवानी, कुर्ता, चूड़ीदार पाजामा, शरारा, गरारा, सलवार, कमीज़, लहंगा आदि पहनावों का चलन था। गांवों में बसे मुसलमान और हिन्दू के

रहन सहन में कोई अन्तर खोज पाना कठिन था किन्तु शहरों में आभिजात्य मुस्लिम वर्ग अन्य समुदायों के सभ्य समाज की तुलना में अधिक विलासिता की जीवन व्यतीत करता था।

4.7.3 स्त्रियों की दशा

हिन्दू समाज में सती प्रथा, विधवा-विवाह निषेध, दहेज की प्रथा, स्त्री की आर्थिक पराधीनता, स्त्री-शिक्षा पर प्रतिबन्ध आदि के कारण स्त्रियों का जीवन अभिशप्त था। मुस्लिम समाज में भी स्त्री शोषण और दमन का शिकार थी। इस्लाम में पुरुषों के लिए चार विवाह तक जायज़ होने के कारण लाखों मुस्लिम स्त्रियों को बहुपत्नीवाद की त्रासदी से गुज़रना पड़ता था। अन्य समुदायों में भी पुरुषों में बहु विवाह का प्रचलन था, किन्तु मुसलमानों की तुलना में यह कम था। पर्दा प्रथा के कारण मुस्लिम स्त्रियों को आमतौर पर घर की चहारदीवारी में कैद रहकर ही अपना सारा जीवन बिताना पड़ता था। मुस्लिम प्रभाव से अन्य समुदायों में स्त्रियों को पर्दे में रखने का चलन हो गया था। सभी समुदायों की स्त्रियां आभूषणों के प्रति अनुरक्त थीं और अपने परिवार की आर्थिक स्थिति के अनुरूप उन्हें बनवाती थीं। स्त्री-शिक्षा का चलन एक अपवाद होने के कारण स्त्री समाज में अंधविश्वासों का व्यापक प्रसार था। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि इस काल में स्त्रियों की दशा सामान्यतः शोचनीय तथा दयनीय थी।

4.7.4 हिन्दू - मुस्लिम सम्बन्ध

इस काल में हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्ध धूप-छांव की तरह रहे। दोनों समुदायों में वैमनस्य रहा। हिन्दुओं के लिए मुसलमान म्लेच्छ थे तो मुसलमानों के लिए हर गैर-मुस्लिम काफ़िर था। मुसलमान मूर्तिभंजक थे तो हिन्दू मूर्तिपूजक। दोनों के आचार-विचार, खान-पान, वेशभूषा, भाषा आदि सभी में अन्तर था। इसी कारण दोनों समुदायों के मध्य एक तनावपूर्ण और कटुतापूर्ण वातावरण रहता था किन्तु समय के साथ-साथ दोनों समुदायों को एक-दूसरे को समझने का अवसर मिला। सूफ़ी फ़कीरों और भक्त सन्तों ने दोनों को आपस में मिलजुल कर रहने का उपदेश दिया। जहां मुस्लिम संस्कृति ने भारत की प्राचीन संस्कृति को प्रभावित कर उसमें बदलाव किया वहीं भारतीय संस्कृति ने भी मुसलमानों के जीवन और उनके विचारों को प्रभावित किया। दो महान किन्तु भिन्न-भिन्न समुदायों की संस्कृतियों के संगम से भारत में गंगा-जमुनी संस्कृति अथवा तहज़ीब का विकास हुआ।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्नांकित पर चर्चा कीजिए-

1. बहलोल लोदी द्वारा दिल्ली सल्तनत के सम्मान की पुनर्प्रतिष्ठा।
2. जौनपुर पर अधिकार।
3. सिकन्दर लोदी की साम्राज्य विस्तार की नीति।

4. सिकन्दर लोदी की धार्मिक नीति।
5. पानीपत का प्रथम युद्ध।
6. हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्ध।

4.8 सारांश

1451 में बहलोल लोदी के सुल्तान बनने पर पिछले साठ वर्षों से व्याप्त राजनीतिक अराजकता में कुछ सुधार आया। बहलोल लोदी अफ़गान राजत्व के सिद्धान्त में विश्वास रखते हुए स्वयं को अपने अमीरों का मुखिया मानता था, उनका स्वामी नहीं। जौनपुर राज्य का दिल्ली सल्तनत में विलय बहलोल लोदी की सबसे बड़ी उपलब्धि थी किन्तु प्रशासनिक सुधार के क्षेत्र में उसकी कोई उल्लेखनीय उपलब्धि नहीं है।

बहलोल लोदी की मृत्यु के बाद सुल्तान सिकन्दर लोदी ने अपने पिता द्वारा राज्य के विभाजन के निर्णय को अस्वीकार कर दिया। एकछत्र शासक बनने के लिए उसने सुल्तान के पद की गरिमा को बढ़ाया अमीरों की शक्ति तथा उनकी महत्वाकांक्षाओं को नियन्त्रित किया। सिकन्दर लोदी की साम्राज्य विस्तार की नीति सफल रही किन्तु उसके शासनकाल में सुल्तान-अमीर सम्बन्धों में कटुता आ गई। उसकी धर्मांधता ने हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य को बढ़ावा दिया।

सिकन्दर लोदी की मृत्यु के बाद सिंहासनारूढ़ इब्राहीम लोदी अपने दम्भ और असहिष्णुता के कारण एक असफल शासक सिद्ध हुआ। वह न तो सीमा सुरक्षा का समुचित प्रबन्ध कर सका और न ही अपने विरुद्ध पनप रहे षडयन्त्रों के प्रति सावधान रहा। पानीपत के प्रथम युद्ध में बाबर से पराजित होने पर उसका तथा उसके राज्यवंश का अन्त हुआ।

दिल्ली सल्तनत काल में असमानता, सामुदायिक वैमनस्य, रूढ़िवादिता, अंधविश्वास, दलितों तथा स्त्रियों का शोषण आदि सामाजिक पतन के लिए उत्तरदायी थे। धर्म के नाम पर कर्म काण्ड का बोलबाला था। इस काल का ग्राम्य जीवन सादगी पूर्ण और आभिजात्य वर्ग के शहरियों का जीवन विलासितापूर्ण था। इस काल में स्त्रियों की दशा सामान्यतः शोचनीय थी। इस काल में हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्धों में आमतौर पर वैमनस्य बना रहा किन्तु दोनों समुदायों के मध्य सांस्कृतिक आदान-प्रदान हुआ और इसके परिणाम स्वरूप भारत में गंगा-जमुनी सभ्यता का विकास हुआ।

4.9 पारिभाषिक शब्दावली

कबाइली संस्कृति - कबीले के सभी लोगों का एक परिवार की तरह रहना।
बिरादरी -वृहत्तर परिवार रूपी जाति-समूह।
बागी - विद्रोही।

ताजिया - मुर्हरम के अवसर पर जुलूस में निकाले जाने वाले प्रतीक।

छप्पन भोग - नाना प्रकार के व्यंजन

गंगा-जमुनी संस्कृति अथवा तहज़ीब - हिन्दू संस्कृति तथा मुस्लिम संस्कृति के संगम के फलस्वरूप विकसित संस्कृति।

4.10 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 4.3.2.3 दिल्ली सल्तनत के सम्मान की पुनर्प्रतिष्ठा।
2. देखिए 4.3.2.1 जौनपुर के शर्की राज्य पर विजय।
3. देखिए 4.4.3 साम्राज्य विस्तार।
4. देखिए 4.5 धार्मिक नीति।
5. देखिए 4.6.2 पानीपत का प्रथम युद्ध तथा दिल्ली सल्तनत का पतन।
6. 4.7.4 हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्ध

4.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Lal, K. S. – *Twilight of the Delhi Sultanate*
2. Habib, M., Habib, I. – *Delhi Sultanate & Its Times*
3. Srivastava, K. L. – *The Position of Hindus Under the Delhi Sultanate*
4. Nand, Lokesh Chandra – *Women in Delhi Sultanate*
5. हबीब, मुहम्मद - दिल्ली सल्तनत भाग 2

4.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Husain, Y. – *Glimpses of Medieval Indian Culture*
2. Ashraf, K. M. - *Life and Condition of the People of Hindostan*
3. Tara Chand – *Influence of Islam on Indian culture*
4. Jafar, S. M. – *Some Cultural Aspects of the Muslim ule in India*

4.13 निबंधात्मक प्रश्न

लोदी काल के परिप्रेक्ष्य में अफ़गान राजत्व के सिद्धान्त की समीक्षा कीजिए।

इकाई एक- बहमनी तथा विजयनगर साम्राज्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 विजयनगर का राजवंश

1.4 शासन प्रबन्ध

1.4.1 कर व्यवस्था

1.4.2 न्याय व्यवस्था

1.4.3 सैन्य प्रशासन

1.4.4 नायकारा प्रणाली

1.4.5 अयागार प्रणाली

1.5 विजयनगर में सांस्कृतिक जीवन

1.6 बहमनी एवं विजयनगर साम्राज्य

1.7 बहमनी राज्य का विघटन

1.8 साराशं

1.9 तकनीकी शब्दावली

1.10 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

1.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1.13 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

दक्षिण भारत की राजनीतिक परिस्थितियों से लाभ उठाकर 14वीं शताब्दी में अनेक स्थानीय शक्तियों ने छोटे-छोटे राज्य स्थापित किये, शीघ्र ही संगम के पुत्रों द्वारा स्थापित विजयनगर साम्राज्य और हसन गंगू द्वारा स्थापित बहमनी राज्य ने प्रतिष्ठा प्राप्त की और दीर्घकाल तक ये राज्य दक्षिण भारत की राजनीति के नियन्ता बने रहे।

विजयनगर साम्राज्य और बहमनी साम्राज्य का संपूर्ण काल एक-दूसरे के साथ निरंतर युद्धों में व्यतीत हुआ और कभी एक पक्ष विजयी होता तो कभी दूसरा। लेकिन आपसी युद्धों के बावजूद भी इन दोनों ही राज्यों ने कला ,साहित्य और स्थापत्य के क्षेत्र में अभूतपूर्व उपलब्धियां हासिल की और इस काल में अनेक विदेशी यात्रियों ने इन राज्यों का भ्रमण किया और अपने प्रंक्षण लिखे जो इन राज्यों के पूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं।

दक्षिण के इन राज्यों के आपसी संघर्ष के अलावा उत्तर के विस्तारवादी मुगल साम्राज्य के साथ भी इनका संघर्ष हुआ। राजनीतिक प्रतिद्वंदिता के चलते बहमनी साम्राज्य का विघटन हो गया और बीजापुर गोलकुण्डा, बीदर, बरार और अहमदनगर की रियासतें अस्तित्व में आयीं लेकिन विजयनगर के साथ इनकी प्रतिद्वन्दता बनी रही। सन् 1565 ई. को राक्षसटंगड़ी के युद्ध में विजयनगर साम्राज्य की पराजय हुई और साम्राज्य का विजयी राज्यों ने बंटवारा किया हांलाकि विजयनगर राज्य पुनर्जीवित हुआ लेकिन यह पुनर्जीवन अल्पावधि का था और धीरे-धीरे विस्तारवादी मुगल साम्राज्य में दक्षिण के इन राज्यों को समाहित कर लिया गया।

1.2 उद्देश्य

पिछली ब्लाक की इकाइयों में आपको सल्तनतकालीन उत्तर भारतीय राज्यों के इतिहास के विविध पक्षों की जानकारी दी गयी थी और आपको उक्त से संबंधित जानकारी हो पायी।इस इकाई का उद्देश्य आपको विजयनगर साम्राज्य और बहमनी राज्य के समाज, संस्कृति एवं अर्थब्यवस्था से संबंधित तथ्यों से अवगत कराना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आपको निम्नांकित तथ्यों के विषय में जानकारी हो सकेगी-

1. विजयनगर का राजवंश

2. विजयनगर का शासन प्रबन्ध

3. विजयनगर में सांस्कृतिक जीवन

4. बहमनी एवं विजयनगर साम्राज्य के आपसी संबंध

1.3 विजयनगर का राजवंश

विजयनगर का प्रारम्भिक इतिहास स्पष्ट नहीं है, बताया गया है कि संगम के पांच पुत्रों ने (जिनमें से दो का नाम हरिहर और बुक्का था) तुंगभद्रा नदी के दक्षिणी तट पर उसके उत्तरी तट वाले अनागोण्डी दुर्ग के सामने विजयनगर साम्राज्य की नींव डाली थी। हरिहर प्रथम व बुक्का प्रथम द्वारा संस्थापित वंश संगम वंश के नाम से प्रसिद्ध है। हरिहर और बुक्का ने कोई शाही उपाधि ग्रहण न की क्योंकि होयसल वंश का बल्लाल तृतीय अभी जीवित था जब होयसल वंश का अंतिम राजा विरूपाक्ष बल्लाल 1346 में मदुरा के सुल्तान से लड़ते हुए मारा गया तो हरिहर और बुक्का ने होयसल राज्य को अपने अधीन कर लिया। लगभग 1353 में हरिहर की मृत्यु हो गयी और बुक्का का राज्यारोहण हुआ। बुक्का ने 1353 से 1379 तक राज्य किया। उसने विजयनगर के शहर का निर्माण कार्य पूर्ण कराया और साम्राज्य भी बढाया, उसने चीन के सम्राट के पास अपना दूत भेजा। बुक्का प्रथम एक उदार शासक था एक बार उसने जैनियों तथा वैष्णवों के बीच एक समन्वय करवाया। बुक्का के बाद उसका पुत्र हरिहर द्वितीय गद्दी पर बैठा उसने 1379 से 1406 तक शासन किया। हरिहर द्वितीय के बाद उसका पुत्र देवराय प्रथम राजा बना जिसने 1406 से 1422 तक शासन किया, देवराय द्वितीय 1422 से 1446 तक राजा बना , 1442 में फारस का दूत अब्दुर्रज्जाक विजयनगर आया, उसने विजयनगर का आखों देखा विवरण दिया है।

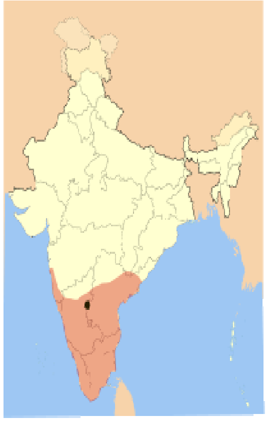

विजयनगर साम्राज्य

विरूपाक्ष मंदिर

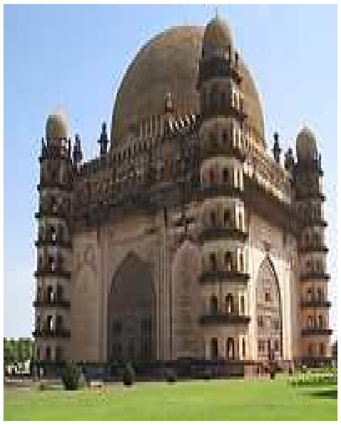

गोलगुंबज , बीजापुर

देवराय द्वितीय के बाद उसका पुत्र मल्लिकार्जुन (1446-1465) गद्दी पर बैठा। उसके बाद विरूपाक्ष द्वितीय (1465-863) गद्दी पर बैठा, वह एक अयोग्य शासक था, विजयनगर साम्राज्य को बचाने के लिए 1486 में नरसिंह ने विरूपाक्ष द्वितीय को अपदस्थ कर दिया और स्वयं गद्दी पर

अधिकार कर लिया इसे प्रथम अपहरण कहते हैं इससे संगम वंश का अन्त हुआ और उसके स्थान पर सलूवा वंश की सत्ता आरम्भ हुई। 1486 से 1492 तक नरसिंह सलवा के दो पुत्रों की हत्या कर दी, किन्तु अभिलेखों से पता चलात है कि नरेश नायक ने नरसिंह सलूबा के पुत्र इम्मादी नरसिंह को गद्दी पर बैठा दिया, 1505 में नरेश नायक की मृत्यु हो गयी और उसके पुत्र वीर नर सिंह ने सलूवा वंश के अन्तिम शासक को हटा कर गद्दी का अपहरण कर लिया इसे द्वितीय अपहरण कहते है। वीर नरसिंह तलूवा वंश का संस्थापक हुआ उसने 1505 से 1509 तक शासन किया। वीर नरसिंह के बाद उसके भाई कृष्णदेवराय ने 1509 से 1530 तक राज्य किया। पुर्तगाली यात्री डोमिन्गो पेस उसके शासन काल में आया। कृष्णदेवराय स्वंय एक विद्वान ही नहीं वरन् विद्या प्रेमी भी था। यद्यपि उसकी व्यक्तिगत रूचि वैष्णव धर्म की ओर थी किन्तु अन्य धर्मो के प्रति भी वह सहिष्णु था। कृष्णदेवराय के सम्बन्ध पुर्तगालियों से बहुत मैत्रीपूर्ण रहे, उसने उन्हें बहुत सी सुविधाऐं दीं, क्योंकि घोड़ों और अन्य वस्तुओं के आयात से उसे बहुत लाभ हुआ था, 1510 में पुर्तगाली अलबुकर्क ने बटकल में दुर्ग बनाने की स्वीकृति मांगी जो उसे मिल गयी। कृष्णदेव राय के बाद अच्युत राय आया जिसने 1530 से 1542 तक शासन किया, उसके बाद उसका भतीजा रामराय एक योग्य व्यक्ति था, कुछ समय तक उसके प्रयत्न सफल रहे किन्तु अन्त में साम्राज्य के लिए घातक सिद्ध हुए। राक्षस व टंगड़ी के गा्रमों के बीच मित्र दक्षिण राज्यों ने विजयनगर के विरूद्ध युद्ध किया और इसमें मुसलमानों की विजय हुई, इसे तलीकोटा का युद्ध भी कहते हैं। तालीकोटा के युद्ध ने विजयनगर के साम्राज्य को बहुत क्षति पंहुचायी।वेंकटा द्वितीय राजा विजयनगर का अन्तिम महान शासक हुआ जिसने साम्राज्य को सुरक्षित रखा, वेंकटा द्वितीय की मृत्यु के बाद साम्राज्य का विघटन प्रारम्भ हो गया, पारस्परिक संघर्षों ने मुसलमानों को उनके विरूद्ध विजय पाने में सफलता प्रदान की, इन्हीं परिस्थितियों के वश में आकर विजयनगर का साम्राज्य समाप्त हो गया।

1.4 शासन प्रबन्ध

साम्राज्य का शासक राज्य की सारी सत्ता का सर्वोच्च स्त्रोत था, कृष्णदेवराय ने अपने ''अमुक्तमाल्यदा'' में राजपद का आदर्श स्थापित किया। विजयनगर का साम्राज्य एक विशाल सामन्ती संगठन था और राजा सारी व्यवस्था के उपर था, उसे कार्य में एक परिषद सहायता करती थी, जिसमें मंत्री, प्रान्तीय अध्यक्ष गण, सेनानी, पुरोहित होते थे, परिषद के सदस्यों का चुनाव नहीं होता था वरन् राजा उन्हें मनोनीत करता था, मन्त्रिगण क्षत्रिय तथा वैश्यों से भी लिये जाते थे ब्राहमणों के अलावा एक मन्त्री का पद कभी पैतृक और कभी अपैतृक होता था। नुनिज के अनुसार, पुलिस संरक्षक को नगर में होने वाली चोरी व डकैतियों का उत्तर देना पडता था।

शासक प्रबन्ध के लिए विजयनगर बहुत से प्रान्तों में बंटा हुआ था, प्रान्त के लिए राज्य, मंडल और चवादी शब्दों का प्रयोग किया जाता था, तमिल के भाग में कोट्टम, पारू और नादू नाम

के प्रान्तीय टुकडे थे और कर्नाटक भाग में नादू, सीमा, बैंथ और स्थल नामक प्रान्तीय भाग थे। प्रत्येक प्रान्त एक नायक (नाइक) या अध्यक्ष के आधीन था। यदि नाइक अपनी आय का 1/3 भाग केन्द्रीय सरकार को न भेजता तो उसकी जागीर का उन्मूलन किया जा सकता था। ग्राम शासन प्रबन्ध की इकाई था प्रत्येक गाँव आत्मनिर्भर था गाँव के प्रबन्ध का उत्तरदायित्व ग्राम सभा पर था। राजा एक अधिकारी महानायकाचार्य द्वारा ग्राम पर नियंन्त्रण रखता था।

1.4.1 कर व्यवस्था

विजयनगर साम्राज्य की आय का मुख्य साधन भूमिकर था, इसका प्रबन्ध अठवणे नामक विभाग के आधीन था। भूमिकर लगाने के उद्देश्य से भूमि को तीन भागों में बांटा गया था- गीली भूमि, सूखी भूमि व उद्यान तथा वन। हिन्दू विधि के अनुसार राज्य का हिस्सा उपज का 1/6 भाग था । भूमिकर के अतिरिक्त कृषकों को अन्य कर जैसे चरागाह कर, विवाह कर इत्यादि भी देने पडते थे। राज्य की आय के साधन और भी थे जैसे चुंगी, व्यापार कर, उद्यान कर व धोबियों, व्यापारियों, सौदागरों, मजदूरों, कलाकारों, भिक्षुओं नाइयों, चमारें व वैश्याओं पर कर। वैश्याओं द्वारा होने वाली आय को पुलिस व्यवस्था में व्यय किया जाता था।

1.4.2 न्याय व्यवस्था

राजा सर्वोच्च न्यायाधीष था पर न्याय के लिए सुव्यवस्थित न्यायालय तथा विशेष न्याय संबंधी अधिकारी भी थे। स्थानीय संस्थाओं की सहायता से भी झगडों को सुलझाया जाता था। देश का एकमात्र कानून ब्राहमणों का कानून या पुरोहितों का कानून नहीं था वरन् यह प्राचीन एवं परम्परागत नियमों, रीति रिवाजों तथा देश के संवैधानिक व्यवहारों पर आधारित थे। दण्ड विधान कठोर था तथा जुर्माने , सम्पति हरण के साथ ही अंग भंग तथा मृत्यु दण्ड भी सामान्य प्रचलित दण्ड थे।

1.4.3 सैन्य प्रशासन

होयसलों की भांति ही विजयनगर का सैनिक विभाग भी सावधानी से संगठित था, इस विभाग का नाम कन्दाचार था और दण्डनायक या दण्डनायक के नियन्त्रण में था। राज्य में एक विशाल एवं कार्यक्षम सेना थी जिसकी संख्या समयानुसार धटती बढती थी। आवश्यकता के समय जागीरदारों तथा सरदारों की सहायक सेना भी सम्मिलित की जाती थी। सेना के विविध अंग थे- पदाति जिसमें मुसलमानों को भी लिया जता था, अश्वारोही सेना को पुर्तगालियों की सहायता से अच्छे अश्व लेकर सबल बनाया गया था। हाथी तथा ऊटों का भी प्रयोग होता था। तोपों का भी उल्लेख मिलता है संभवतः यह अविकसित अवस्था में रही होगी। प्रतीत होता है कि विजयनगर की सेना का अनुशासन तथा लड़ने की शक्ति दक्कन के मुस्लिम राज्यों की सेना से कम रही होगी।

1.4.4 नायकारा प्रणाली

प्रान्तीय संगठन की एक विशेषता नायकारा प्रणाली थी। इस प्रणाली में राजा जो कि भूमि का स्वामी माना जाता था, अपने आश्रितों को भूमि प्रदान करता था। इसके भूस्वामी नायक कहलाते थे। इनको बदले में दो कार्य करने होते थे प्रथमतः वे एक निश्चित वार्षिक राशि साम्राज्य के खजाने में भेजते थे, नुनिज के अनुसार यह राशि उनके कुल राजस्व का आधा होती थी। द्वितीयतः उनहें एक कुशल सेना रखनी होती जो कि आवश्यकता के समय राजा को देनी होती थी। उनहें अपने क्षेत्र में शान्ति स्थापित करनी होती थी और अपराधों का पता लगाना होता था। नायकों की संवैधानिक स्थिति, प्रान्तों के शासकों से भिन्न प्रतीत होती है हाँलाकि दोनों को ही अनेक समान कर्तव्य निभाहने होते थे। नायक तुलनात्मक दृष्टि से अपने प्रान्तों में अधिक स्वतन्त्रता का उपभोग करते थे। संभवतः नायकों का एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में स्थानान्तरण नहीं होता था। नायक उपाधि प्रारंभ में व्यक्तिगत थी परन्तु जैसे जैसे शासक केन्द्र में कमजोर होते गये यह उपाधि वंशानुगत हो गयी ।नायक दो प्रकार के अधिकारी केन्द्र में रखते थे। जिनमें से एक सैन्य अधिकारी होता था तथा दूसरा स्थानपति या नागरिक ऐजेण्ट होता था जो अपने स्वामी के हितों की राजधानी में रक्षा करता था। विजयनगर के बाद के काल में नायकों की स्वतन्त्रता पर अंकुश रखने के लिए विशेष आयुक्तों की नियुक्ति की गयी थी।

1.4.5 अयागार प्रणाली

ग्राम्य संगठन की एक प्रमुख विशेषता अयागार प्रणाली थी। इस प्रणाली के अनुसार प्रत्येक गाँव एक पृथक इकाई थी, और इसका कार्य संचालन 12 व्यक्तियों के एक निकाय द्वारा संचालित किया जाता था, जिनहें सम्मिलित रूप से आयागार पुकारा जाता था। आयागारों को सामान्यता सरकार द्वारा नियुक्त किया जाता था परन्तु एक बार आयगार बन जाने पर इनका यह वंशानुगत अधिकार हो जाता था। जब कभी किसी निश्चित कार्य क्षेत्र को लेकर विवाद उठता तो सरकार बडी सावधानी से पता लगाती थी ---- प्रजा और सुदीर्घ प्रयोग के आधार पर किस आयगार का यह क्षेत्राधिकार है। आयगारों को कर विमुक्त भूमि मिली होती थी। उन्हें अपने क्षेत्र में शान्ति स्थापित रखने का अधिकार था। बिना आयगारों के ज्ञान के सम्पत्ति का स्थानान्तरण या अनुदान नहीं दिया जा सकता था।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

कृपया निम्नांकित प्रश्नों के समक्ष सत्य अथवा असत्य लिखिए।

1- विजयनगर का सैनिक विभाग अठवणे कहलाता था सत्य/असत्य

2- निकोलो कोण्टी इंग्लैण्ड का निवासी था सत्य/असत्य

3- विजयनगर में हिन्दू विधि के अनुसार राज्य का हिस्सा उपज का 1/6 भाग था सत्य/असत्य

1.5 विजयनगर में सांस्कृतिक जीवन

कला, साहित्य और संस्कृति के क्षेत्र में विजयनगर साम्राज्य में असाधारण उन्नति हुई। विजयनगर साम्राज्य के प्रारंभिक काल में वेदों के प्रख्यात भाष्यकार सायण तथा उनके भाई माधव विधारण्य हुए थे। विजयनगर के शासक संस्कृत, तेलुगु, तमिल एवं कन्नड़ सभी भाषाओं के संरक्षक थे। अन्य क्षेत्रों की भांति ही कृष्णदेव राय का काल सांस्कृतिक उत्थान की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। वह स्वंय विद्वान, संगीतज्ञ एवं कवि था। उसने अपनी महत्पूर्ण कृति अमुक्त माल्यदा‘‘ तेलुगु में लिखी, जिसकी भूमिका में उसने संस्कृत में लिखी अपनी पांच पुस्तकों की चर्चा की है। उसके दरबार में अष्टदिग्गज थे। उसका राजकवि पेद्दन की बडी ख्याति थी, तथ तेलुगु लेखकों में उसका स्थान सर्वोपरि था। आरवीडु वंश के शासकों तक ने जिनकी आर्थिक स्थिति अपेक्षाकृत खराब हो गयी थी, साहित्य को संरक्षण दिया और उनके अधीन भी तेलुगु साहित्य की उन्नति हुइ्र। छोटे नायकों तथा राजाओं के सम्बन्धियों में लेखक थे। संगीत, नृत्य, नाटक, व्याकरण, न्याय, दर्शन इत्यादि के ग्रन्थों को समा्रटों तथा मन्त्रियों से प्रोत्साहन मिलता। इस साम्राज्य के अन्तर्गत ग्रन्थों को समा्रटों तथा मन्त्रियों से प्रोत्साहन मिला। इस साम्राज्य के अन्तर्गत माध्वाचार्य ने ‘‘पाराशरमाधव‘‘, ‘‘काल-निर्णय‘‘ तथा ‘‘स्मृति-संग्रह‘‘ गन्थ लिखें। लक्ष्मीधर ने ‘‘सरस्वती विकास‘‘ तथा ‘‘सौन्दर्य लहरी‘‘ का सृजन किया। व्यासराज ने खण्डव ‘‘मायावाद खण्डन‘‘ ग्रन्थ लिखा। विजयनगरी साम्राज्य में साहित्य निर्माण के क्षेत्र में स्त्रियों ने भी विशेष योगदान दिया। तिरूमलम्बादेवी ने ‘‘बरदाम्बिका परिरगयम्‘‘ तथा गंगादेवी ने ‘‘मथुराविजयम्‘‘ महाकाव्य लिखा। संक्षेप में संस्कृत, तेलुगु, तमिल एवं कन्नड भाषाओं में रचित विजयनगर साम्राज्य का साहित्य दक्षिण भारतीय संस्कृति का एक सुखद समन्वय है।

साहित्य के विकास के साथ साथ कला और वास्तुकला की भी विजयनगर साम्राज्य के अन्तर्गत विलक्षण उन्नति हुई। अब्दुर्रज्जाक तथ निकोलो कोण्टी ने विजयनगर का भव्य वर्णन किया है। हम्पी से भी पता चलता है कि इसके कलाकोरें ने यहां वास्तुकला, मूर्तिकला एवं चित्रकला की एक पृथक शैली का विकास किया था। विट्ठलस्वामी मन्दिर भी विजयनगर शैली का एक उत्तम नमूना है। विजयनगर के शासकों ने चित्रकला तथा संगीत को भी पर्याप्त संरक्षण दिया था। चित्रकला उत्तमता की ऊँची सीढी पर पहुंच चुकी थी और संगीत कला का भी तीव्रता से विकास हुआ। संगीत के क्षेत्र में अनेक पुस्तकें लिखी गयी। कृष्णदेव राय तथा संरक्षक रामराय संगीत कला में प्रवीण थे। नाट्यशालाओं द्वारा जनता के मनोरंजन का उल्लेख मिलता है।

अभिलेखीय तथा साहित्यिक प्रमाण स्पष्टतः बतलाते हैं कि विजयनगर के शासक धार्मिक प्रवृत्ति के तथा धर्म में अनुरक्त थे पर वे धर्मोन्मत्त नहीं थे। तत्कालीन चार सम्प्रदायों शैव, बौद्ध, वैष्णव एवं जैन तथा विदेशियों ईसाई तथा यहूदी तथा इस्लाम तक के प्रति उनका रूख उदारता पूर्ण था। तमिल, तेलुगु, कन्नड, संस्कृत को वो समान संरक्षण देते थे। उन्होंने अपनी सेना में मुसलमानों को भी रखा और विदेशियों का भी अपने दरबारों ने स्वागत किया। इस प्रकार विजयनगर साम्राज्य के अन्तर्गत दक्षिण भारतीय संयुक्त संस्कृति का विकास हुआ और धर्मरत् रहते हुए भी शासकों ने आधुनिक धर्मनिरपेक्ष तथा सहिष्णुतावादी नीतियों का पालन किया।

1.6 बहमनी एवं विजयनगर साम्राज्य

मुहम्मद तुगलक के काल में दक्षिण के अमीरों ने सम्राट के विरूद्ध विद्रोह किया और दौलताबाद के दुर्ग में अधिकार कर लिया और अफगान इस्माईल मख को नासिरूद्दीन शाह की उपाधि देकर दक्षिण का शासक घोषित कर दिया, मगर इस्माइल मख ने अपनी इच्छा से हसन, जिसकी उपाधि जफर खॉ थी के पक्ष में अपना सिंहासन त्याग दिया। 1347 में अबुल मुजफफर अलाउद्दीन बहमनशाह की उपाधि के साथ हसन गंगू का सिंहानारोहण हुआ। सिंहासनारोहण के पश्चात उसने गुलबर्गा को अपनी राजधानी चुना और उसका नाम अहसानाबाद कर दिया। उसने गैर मुस्लिम शासकों के प्रदेशों को एक-एक करके जीत लिया। अपने राज्य के प्रबन्ध के लिए उसने उसे चार प्रान्तों में – गुलबर्गा, दौलताबाद, बरार व बीदर में बांटा व प्रत्येक के प्रबन्ध के लिए उसे प्रान्ताध्यक्ष को सौंपा जिसे सेना रखना आवश्यक था। 1358 में उसकी मृत्यु हो गयी। हसन के बाद उसका बडा पुत्र मुहम्मद शाह प्रथम गद्दी पर बैठा, उसका सारा जीवन वारंगल व विजय नगर के शासकों के विरूद्ध युद्ध करने में बीता, विजयनगर के साथ युद्ध का तत्कालीन कारण यह था कि उस दूत का अपमान किया गया जिसे वहॉं कर वसूलने के लिए भेजा गया था, विजयनगर का शासक बहमनी क्षेत्र में आ गया और उसने उतने भाग का संहार कर दिया जो कृष्णा और तुंगभद्रा नदियों के बीच था। मुहम्मद शाह प्रथम के बाद मुजाहिद शाह गद्दी पर बैठा, इसके समय भी विजयनगर के साथ युद्ध हुआ रायचूर दोआब संघर्ष का मुख्य कारण था। मुसलमानों की धोर पराजय हुई और एक सन्धि कर ली गयी। अगला शासक मुहम्मद शाह द्वितीय हुआ, वह शांतिप्रिय था। उसने अपना सारा समय विज्ञान व साहित्य की खोज में व्यय किया, उसने प्रसिद्ध फारसी कवि हफीज को आमन्त्रित किया, किन्तु कठिनाईयों के कारण हफीज भारत न आ सका, उसने अपनी एक कविता भेजी जिसके बदले में उसे काफी पुरस्कार दिया गया, 1397 में मुहम्मद शाह द्वितीय का निधन हो गया।

1397 में उसके सिंहासन पर अलाउद्दीन हसन बहमनी के पौत्र फीरोज ने अधिकार जमा दिया। 1398 में विजयनगर सम्राज्य के साथ युद्ध छिड गया, जिसका शासक मुदगल के दुर्ग में अधिकार जमाने के उद्देश्य से रायचूर दोआब में घुस आया था, । 1403 में विजयनगर के साथ एक

अन्य युद्ध छिड गया, इसका तत्कालीन कारण यह था कि विजयनगर का राजा मुदुगल के एक किसान की सुन्दर कन्या को छीनना चाहता था। फीरोज शाह ने उस कन्या का विवाह, जिसके कारण यह सारा उपद्रव हुआ अपने पुत्र से कर दिया। 1420 में विजयनगर और बहमनी साम्राज्य के बीच पुनः युद्ध छिड गया और अन्त में बहमनी राज्य को पराजय मिली। 1422 में फिरोज को अपनी गद्दी विवश होकर अपने भाई अहमद शाहके पक्ष में छोडनी पडी। अहमद शाह ने 1422 से 1435 तक शासन किया। उसका अन्तिम अभियान तेलिंगाना के विरूद्ध हुआ। उसने अपनी राजधानी गुलबर्गा से हटाकर बीदर कर ली थी , 1435 में उसकी मृत्यु हो गयी। अहमदशाह के बाद उसका पुत्र अलाउद्दीन द्वितीय (1435-57) गद्दी पर बैठा, अलाउद्दीन द्वितीय इस्लाम का अनुयायी था और मुसलमानों के प्रति वह बहुत दयालु भी था। उसने मस्जिदें बनवायी सार्वजनिक शिक्षालय व कल्याणकारी संस्थाऐं स्थापित कीं जिनमें उसकी राजधानी बीदर में बना हुआ पूर्ण वैभव व शैली की शुद्धता वाला चिकित्सालय भी हैं, अलाउद्दीन द्वितीय के बाद उसका पुत्र हुमायूं गद्दी (1457-1461) पर बैठा, वह इतना निर्दयी था कि उसे ‘‘जालिम‘‘ या ‘‘र्निदयी‘‘ की उपाधि मिली। हुमायूं के बाद उसका पुत्र निजाम शाह का राज्यारोहण हुआ वह अवयस्क था, इसलिए शासन प्रबन्ध उसकी माता मख्दूम जहॉं, ख्वाजा जहॉं और महमूद गवां की सहायता से करती थी। उसके काल में एक रूसी व्यापारी निकितन 1470 में भारत आया था। यद्यपि मुहम्मद शाह तृतीय का सैनिक जीवन विजय से भरा था परनतु 1481 में उसकी एक महान् गलती महमूद गवां की हत्या कराना थी। फरिश्ता के अनुसार गवां दो पुस्तकों ‘‘रौजत-उल-इंशा‘‘ व ‘‘दीवान-ए-अशर‘‘ का लेखक है। लेकिन गवां के चरित्र पर एक धब्बा है, उसे गैर मुसलमानों को सताने में काफी आनन्द आता था, वह अपने स्वामी की भांति ही हिंदुओं के प्रति निर्दयी व उनके रक्त का प्यासा था।

मुहम्मद शाह तृतीय के पश्चात उसके पुत्र महमूद शाह का सिहासनारोहण हुआ, राज्यारोहण के समय वह अवयस्क था, युवावस्था में आते आते वह दुराचारी हो गया। फैली हुई गडबड को देखकर प्रान्तों के अध्यक्षों ने लाभ उठाया और अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया। ।बहमनी राज्य का अन्तिम शासक कलीम उल्लाह शाह था, 1524 में वह सिंहासन पर बैठा 1563 में उसकी मृत्यु हो गयी 180 वर्षों से चला आ रहा बहमनी साम्राज्य भी समाप्त हो गया।

उल्लेखनीय है कि बहमनी राज्य में 18 शासक हुए 5 की हत्या हुई, दो असंयमी होने के कारण जाते रहे तीन को पद से हटाया गया और उनमें से दो को चक्षुरहित कर दिया गया।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

कृपया निम्नांकित प्रश्नों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1- अबुल मुजफफर अलाउद्दीन बहमनशाह की ने सिंहासनारोहण के पश्चात .... को अपनी राजधानी चुना।

2-महमूद गवां दो पुस्तकों ''रौजत-उल-इंशा'' तथा............का लेखक था।

3- मुहम्मद शाह द्वितीय ने प्रसिद्ध फारसी कवि ....को आमन्त्रित किया था।

1.7 बहमनी राज्य का विघटन

बहमनी राज्य के विघटन के बार पांच स्वाधीन राज्यों का उदय हुआ। इनमें सबसे महत्वपूर्ण बीजापुर का अदिलशाही राज्य था जिसका संस्थापक युसुफ आदिलशाह था। 1489-90 में उसने अपने को बीजापुर का स्वतन्त्र शासक बना लिया, यद्यपि वह अपने शिया वर्ग के प्रति रूचि रखता था किन्तु वह अन्य धर्मों के प्रति भी सहनशील था 1686 में औरंगजेब ने बीजापुर को मुगल साम्राज्य में मिला लिया।

अहमदनगर का निजामशाही राज्य मलिक अहमद ने 1490 में स्थापित किया 1603 में बकबर ने अहमदनगरी को जीत लिया किंतु 1636 में इसे मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया।

बरार में इमादशाही राज्य का संस्थापक फतह उल्लाह इमादशाह था वह 1490 में स्वाधीन बन बैठा, 1574 में अहमदनगर ने उसकों जीत कर अपने राज्य में मिला लिया।

गोलकुण्डा का कुतुबशाही राज्य कुतुबशाह ने स्थापित किया जो बहमनी राज्य में एक तुर्क अधिकारी था, 1687 में औरंगजेब ने उसे मुगल साम्राज्य में मिला लिया।

बीदर का बारिदशाही राज्य 1526-27 में अमीर अली बारिद ने स्थापित किया, 1618-19 में बीदर को बीजापुर में मिला दिया गया।

1.8 सारांश

बहमनी और विजयनगर राज्य 14वीं शताब्दी में दक्षिण में उत्पन्न राजनीतिक अव्यवस्था के फलस्वरूप अस्तित्व में आये थे। ये दोनों ही राज्य रायचूर दोआब में अधिकार हेतु निरंतर संघर्षरत रहे। इसके बावजूद भी यह काल में दक्षिण भारत में अनेक उपलब्धियों का काल रहा और समाज तथा संस्कृति के क्षेत्र में सर्वतोभद्र उन्नति हुई। यह काल दक्षिण भारत में विजयनगर साम्राज्य के अंतर्गत आर्य संस्कृति की पराकाष्ठा का काल है। दक्षिण के इन राज्यों ने अपने राज्यों के अंदर सहिष्णुतावादी नीतियों का पालन किया। कृष्णदेवराय ने अपने ग्रंथ अमुक्तमाल्यदा में राजपद का उच्च आदर्श स्थापित किया।

1.9 तकनीकी शब्दावली

अपदस्थ - पद से हटाना
गद्दी का अपहरण - गद्दी पर कब्जा करना
पुर्तगाली - पुर्तगाल देश के निवासी
भाष्यकार - व्याख्याकर्ता
सहिष्णुतावादी - सभी के प्रति उदार होने पर विश्वास

1.10 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

भाग 1.4 के प्रश्न 1 का उत्तर- असत्य
भाग 1.4 के प्रश्न 2 का उत्तर- असत्य
भाग 1.4 के प्रश्न 3 का उत्तर- सत्य
भाग 1.6 के प्रश्न 1 का उत्तर- गुलबर्गा
भाग 1.6 के प्रश्न 2 का उत्तर- दीवान-ए-अशर
भाग 1.6 के प्रश्न 3 का उत्तर- हफीज़

1.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

Sewell : A Forgottan Empire.
Sherwani , H.K. : Mahmud Gawan.
Venkataramanayya , N : Vijaynagar : Origin of the City and Empire.
Aiyangare , S.K. : South India and her Mohammedan Invaders.
Saletore : Social and Political Life in the Vijayanagar Empire Vol. I &II.

1.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

Beg, Hindu : Gulistan -i- Ibrahimi alias Tarikh -i- Farista (English translation by Briggs).
Sewell : A Forgottan Empire.
Sherwani , H.K. : Mahmud Gawan.
Haig, Woolseley : Cambridge History of India ,Vol.III.
Venkataramanayya , N : Vijaynagar : Origin of the City and Empire.
Aiyangare , S.K. : South India and her Mohammedan Invaders.
Saletore : Social and Political Life in the Vijayanagar Empire Vol. I &II.

1.13 निबंधात्मक प्रश्न

1- विजयनगर और बहमनी राज्यों के मध्य संघर्ष का वर्णन कीजिए।
2- विजयनगर साम्राज्य की सांस्कृतिक उपलब्धियों का वर्णन कीजिए।

इकाई दो- सल्तनतकालीन अर्थव्यवस्था एवं समाज

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 सल्तनतकालीन समाज

2.3.1 सामाजिक वर्ग

2.3.2 स्त्रियों की स्थिति

2.3.3 भोजन-वस्त्र एवं मनोरंजन

2.4 आर्थिक स्थिति

2.4.1 कृषि

2.4.2 उद्योग

2.4.3 व्यापार

2.5 साराशं

2.6 तकनीकी शब्दावली

2.7 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

2.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

2.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

2.10 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

मुसलमानों के आने से पूर्व भी भारतीय समाज विभिन्न वर्गों में विभक्त था, मुसलमानों के आने से उसका विभक्तिकरण बढ़ गया। स्त्रियों की स्थिति पहले की अपेक्षा और गिर गयी थी। हिन्दु समाज में सामान्यतः लोग निरामिष भोजन करते थे यद्यपि युद्धप्रिय जातियों और शूद्रों में मांसाहार प्रचलित था। सल्तनत काल में दो विरोधी धर्मों एवं संस्कृतियों को मानने वाले व्यक्तियों को एक साथ रहने के अवसर प्राप्त हुए और दोनों ने एक दूसरे को किसी सीमा तक प्रभावित भी किया।

आर्थिक दृष्टि से भारत एक समृद्धिशाली देश था। भारत में प्रायः सभी स्थानों पर विभिन्न प्रकार के अन्न, दालें, फल आदि उत्पन्न किये जोते थे। अधिकांश फसलें वर्ष में दो बार और कहीं-कहीं तीन बार भी उत्पन्न की जाती थीं। उद्योगों की दृष्टि से भी भारत अच्छी स्थिति में था। भारत में आन्तरिक और विदेशी व्यापार उन्नत था। दूरस्थ प्रदेशों को जोडने वाली सडकें पर्याप्त मात्रा में थीं आरे भिन्न-भिन्न वस्तुओं की व्यापारिक मण्डियां विद्यमान थी। परंतु भारत की इस आर्थिक सम्पन्नता का मुख्य लाभ शासक और व्यापारी वर्ग ने प्राप्त किया था। जनसाधारण की स्थिति शोचनीय तो नहीं परंतु बहुत अच्छी भी नहीं थी।

सल्तनतकाल में भारत की सामाजिक एवं आर्थिक अवस्था की जानकारी समकालीन साहित्य के अतिरिक्त विदेशी यात्रियों के विवरण में भी मिलता है। इस काल की जानकारी का विवरण उक्त के आधार पर विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत किया जा सकता है।

2.2 उद्देश्य

पिछली इकाई में आपको विजयनगर साम्राज्य तथा बहमनी राज्य के बारे मे जानकारी दी गयी थी और आपको उक्त से संबंधित जानकारी हो पायी । इस इकाई का उद्देश्य आपको सल्तनतकालीन समाज, संस्कृति एवं अर्थब्यवस्था से संबंधित अन्य तथ्यों से अवगत कराना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आपको निम्नांकित तथ्यों के विषय में जानकारी हो सकेगी-

1. सल्तनतकालीन समाज

2. सामाजिक वर्ग , स्त्रियों की स्थिति ,भोजन-वस्त्र एवं मनोरंजन

3. सल्तनतकालीन .आर्थिक स्थिति

4. सल्तनतकालीन कृषि , उद्योग एवं व्यापार

2.3 सल्तनतकालीन समाज

सल्तनत काल में हिंदू एवं मुस्लिम समुदायों को एक साथ रहने का मौका मिला और एक समुदाय ने दूसरे समुदाय से अनेक बातें सीखीं और अनेक अवसरों पर टकराव भी हुआ, किंतु कुल मिलाकर यह काल अनेक बातों में सकारात्मक रहा।

2.3.1 सामाजिक वर्ग

मुसलमानों के आने से पूर्व भी भारतीय समाज विभिन्न वर्गों में विभक्त था, मुसलमानों के आने से उसका विभक्तिकरण बढ़ गया। सल्तनत काल में समाज का सबसे सम्मानित वर्ग विदेशी मुसलमानों का था जो तुर्क,, ईरानी, अरब, अफगान, अबिसीनियन आदि थे। समाज का दूसरा वर्ग भारतीय मुस्लिमों का था जो नस्ल, उत्पति, धर्म, शिक्षा, आजीविका आदि आधार पर बंटे हुए थे। भारतीय समाज का बहुसंख्यक वर्ग हिन्दुओं का था, जो पहले से ही जाति व्यवस्था के कारण विभिन्न वर्गों में विभाजित था। हिन्दुओं में जाति बन्धन, ऊँच-नीच, छुआछूत, व्यवसाय एवं निवास के आधार पर अनेक उपजातियाँ बन गयी थीं, जिनमें खान-पान एवं विवाह सम्बन्ध संभव न थे।

2.3.2 स्त्रियों की स्थिति

हिन्दुओं में स्त्रियों की स्थिति पहले की अपेक्षा और गिर गयी थी। यद्यपि इस काल में अवन्तिसुन्दरी, देवलरानी, रूपमती, पदमिनी और मीराबाई जैसी विदुषी स्त्रियों के उदाहरण मिलते हैं तथापि स्त्रियों की व्यावहारिक स्थिति निम्न हो गयी थी और वे कई नवीन कुप्रथाओं से पीड़ित हो गयीं थी। बहुविवाह, सती प्रथा, पर्दा प्रथा, अल्पायु विवाह, बाल हत्या, देवदासी आदि कुप्रथाओं ने स्त्री समाज को जकड दिया था। मुस्लिम समाज में भी स्त्रियों की स्थिति अच्छी नहीं थी। मुसलमानों में बहुविवाह आम था जबकि उच्च वर्ग सैकडों स्त्रियां और दासियां भी रखता था। मुस्लिम स्त्रियों में पर्दा प्रथा कठोर थी और शिक्षा का प्रसार कम था। परन्तु मुसलमान स्त्रियां इस ढंग से बेहतर स्थिति में थी कि उन्हें विधवा पुनर्विवाह, तलाक और मां व बाप की सम्पति में हिस्सा लेने का अधिकार था और उनमें सती प्रथा नहीं थी। परन्तु कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि इस युग में स्त्रियों की स्थिति खराब हुई थी और स्त्रियों का स्थान ‘‘भोग्या‘‘ के रूप में था।

2.3.3 भोजन - वस्त्र एवं मनोरंजन

हिन्दु समाज में सामान्यतः लोग निरामिष भोजन करते थे यद्यपि युद्धप्रिय जातियों और शूद्रों में मांसाहार प्रचलित था। हिन्दुओं के भोजन में दुध और दुग्ध पदार्थों को महत्व दिया जाता था, मुस्लिमों में सूफी और उनके अनुयायी मांस नहीं खाते थे अन्यथा सभी मुसलमान मांसाहारी थे। हिन्दुओं और मुस्लिमों में शराब और अफीम का प्रयोग स्वच्छदता से किया जाता था। वस्त्र, धोती,

अंगिया, पेटीकोट, चुनरी, कुर्ता, पाजामा, चोली, अंगरखा आदि का प्रयोग होता था। आभूषणों का शौक हिंदु और मुसलमान दोनों को था। सोने, चांदी, जवाहरात आदि के आभूषण बनाये जाते थे। मनोरंजन के लिए खेल-कूद, द्वन्द युद्ध, शिकार चौपड़, पशु -पक्षियों के युद्ध, चौगान आदि थे। इसके अतिरिक्त होली, दिवाली, वसन्त, ईद, शब्बेरात, नौरोज आदि त्योहार मनाये जाते थे।

सल्तनत काल में दो विरोधी धर्मों एवं संस्कृतियों को मानने वाले व्यक्तियों को एक साथ रहने के अवसर प्राप्त हुए और दोनों ने एक दूसरे को किसी सीमा तक प्रभावित भी किया। निरंतर सम्पर्क से समाज में खानपान, वेष-भूषा और रीति-रिवाजों में भी कुछ परिवर्तन आया परंतु यह युग सामान्यतः सामाजिक परिवर्तनों का होते हुए भी प्रगति का ना होकर सामाजिक मूल्यों की गिरावट का था।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

कृपया निम्नांकित प्रश्नों के समक्ष सत्य अथवा असत्य लिखिए।

1- सल्तनत काल में समाज का सबसे सम्मानित वर्ग देशी मुसलमानों का था;सत्य/असत्य

2- मुस्लिमों में सूफी और उनके अनुयायी मांस नहीं खाते थे;सत्य/असत्य

3- मुस्लिम स्त्रियों में पर्दा प्रथा नहीं थी और शिक्षा का प्रसार था;सत्य/असत्य

2.4 आर्थिक स्थिति

आर्थिक दृष्टि से भारत एक समृद्धिशाली देश था। 14वीं सदी के अन्त में भारत के एक भाग से ही तैमूर को अतुल सम्पति प्राप्त हुई थी। इसके अतिरिक्त भारत के विभिन्न भागों में बड़े-बडे नगरों और बन्दरगाहों का होना, समाज के उच्च वर्ग का शान-शौकत और विलासिता का जीवन व्यतीत करना, शानदार मकबरों, मन्दिरों, मस्जिदों, मीनारें, महलों और किलों का निर्माण होना तथा विभिन्न विदेशी यात्रियों द्वारा सोना, चॉदी, हीरे, जवाहरात और मोतियों आदि का भारत में प्रचुर मात्रा में प्रयोग बताया जाना आदि इस बात के प्रमाण है कि इस युग में भारत आर्थिक दृष्टि से अत्यधिक सम्पन्न था।

2.4.1 कृषि

भारत में प्रायः सभी स्थानों पर विभिन्न प्रकार के अन्न, दालें, फल आदि उत्पन्न किये जोते थे। अधिकांश फसलें वर्ष में दो बार और कहीं-कहीं तीन बार भी उत्पन्न की जाती थीं। इस काल में सरसुती का चावल, कन्नौज की शक्कर, मालवा का गेहूं ओर पान, ग्वालियर का गेहूं ,मालाबार के गरम मसाले, दौलताबाद के अंगूर और नाशपाती, दक्षिण भारत की सुपारी आदि प्रख्यात थी।

बारबोसा ने बहमनी राज्य की समृद्धि का वर्णन किया है जबकि डामिंगो पेइस और अब्दुर्रज्जाक ने विजयनगर साम्राज्य की समृद्धि की अत्यधिक प्रशंसा की है। बारबोसा के अनुसार बंगाल में कपास, गन्ना, चावल, अदरक, आदि अत्यधिक मात्रा में होता था। दोआब का सम्पूर्ण क्षेत्र अपनी उर्वरा शक्ति के लिए प्रसिद्ध था इस प्रकार भारत के सभी हिस्सों में कृषि की स्थिति बहुत अच्छी थी।

2.4.2 उद्योग

उद्योगों की दृष्टि से भी भारत अच्छी स्थिति में था। कपडा उद्योग भारत का प्रमुख उद्योग था। सूती, रेशमी और उनी वस्त्रों का निर्माण बहुतायत से होता था। इसके अतिरिक्त शक्कर, कागज रत्न-उद्योग, बर्तन-निर्माण, चंदन और हाथ दॉत में दस्तकारी, आदि उद्योग फल-फूल रहे थे। व्यक्तिगत प्रयासों के अतिरिक्त सुल्तानों ने भी कारखानों का निर्माण किया था ,जहॉ उनके और अमीरों के लिए श्रेष्ठतम वस्तुऐं निर्मित की जाती थीं। नगरों और ग्रामों में श्रम संघ बने थे जो उद्योगों की उन्नति में सहायक थे।

2.4.3 व्यापार

भारत में आन्तरिक और विदेशी व्यापार उन्नत था। दूरस्थ प्रदेशों को जोडने वाली सडकें पर्याप्त मात्रा में थीं आरे भिन्न-भिन्न वस्तुओं की व्यापारिक मण्डियां विद्यमान थी। इब्नबतूता ने दिल्ली को संसार की सबसे बड़ी व्यापारिक मण्डी बताया था। दौलताबाद मोतियों के व्यापार एवं दभोल तांबे के व्यापार के लिए प्रसिद्ध था। दियू, गोआ, चोल, कालीकट, कोचीन, क्यूलोन पश्चिमी तट के प्रमुख बन्दरगाह थे, पूर्वी तट पर बंगाल तथा उडीसा में अनेक प्रसिद्ध बन्दरगाह थे। विदेशी व्यापार ईरान, अरब, यूरोप, अफ्रीका, चीन, मलाया, अफगानिस्तान, मध्य एशिया आदि से होता था। अन्न, सूती और रेशमी वस्त्र, अफीम, नील, जस्ता मोती, चन्दन,, केसर, अदरक, मसाले निर्यात किये जाते थे जबकि धोडे, नमक, गन्धक, सोना, गुलाब जल आदि का आयात होता था। विदेशी व्यापार में भुगतान सन्तुलन भारत के पक्ष में था।

इस प्रकार कृषि उत्पादन उद्योगों की उपस्थिति और आन्तरिक तथा विदेशी व्यापार ने भारत को एक समृद्धशाली देश बनाया था। परंतु भारत की इस आर्थिक सम्पन्नता का मुख्य लाभ शासक और व्यापारी वर्ग ने प्राप्त किया था। जनसाधारण की स्थिति शोचनीय तो नहीं परंतु बहुत अच्छी भी नहीं थी। इसी कारण सूखा और अकाल पड़ने पर लाखों व्यक्ति मर जाते थे ओर राज्य को दान दक्षिणा अथवा तकाबी ऋण देने की आवश्यकता पड जाती थी।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

कृपया निम्नांकित प्रश्नों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

1- बारबोसा ने ....राज्य की समृद्धि का वर्णन किया है।

2- इस काल में खाद्यान्नों में सरसुती का ....और कन्नौज की ....प्रख्यात थी।

3- इब्नबतूता ने .... को संसार की सबसे बड़ी व्यापारिक मण्डी बताया था।

4- दौलताबाद ..... के व्यापार एवं दभोल.........के व्यापार के लिए प्रसिद्ध था।

2.5 सारांश

सल्तनतकालीन इतिहास अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण था , इस काल में भारत में तुर्क शासन की स्थापना हुई और मध्य एशिया की संस्कृति के अनेक तत्वों का भारतीय संस्कृति के साथ सामना हुआ। मध्य एशिया की संस्कृति स्वयं विश्व की अनेक संस्कृतियों से प्रभावित रही थी । भारत में इस्लाम की स्थापना के उपरांत शासक वर्ग ने शासन, प्रशासन,स्थापत्य,कला ,साहित्य ,दरबारी रीतिरिवाजों इत्यादि क्षेत्रों में विभिन्न तत्वों का समावेश किया जिससे भारत में नयी सांस्कृतिक प्रवृत्तियां दृष्टिगोचर होने लगीं।तुर्कों ने उद्योग, व्यापार एवं वाणिज्य के क्षेत्र में भी पर्याप्त रूचि दिखाई और विदेशी संपर्कों के नये आयाम स्थापित किये गये ।इन सबके बावजूद भी यह काल भारत में युद्धों और निरंतर युद्धों के साथ-साथ आपसी मेलमिलाप का ना होकर टकराव का था। हिन्दु संस्कृति और मुस्लिम संस्कृति एक-दूसरे को समझने का प्रयास कर रहीं थीं और सामान्यजन एक-दूसरे के श्रेष्ठ तत्वों को अपनाने का प्रयास कर रहे थे।

2.6 तकनीकी शब्दावली

विदुषी - विद्वान स्त्री

कुप्रथा - समाज में प्रचलित हानिकारक प्रथा

निरामिष - शुद्ध शाकाहारी

कारखाना- जहां वस्तुओं का निर्माण किया जाता था

बन्दरगाह- जहाजों के ठहरने का स्थान

2.7 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

भाग 2.3 के प्रश्न 1 का उत्तर- असत्य

भाग 2.3 के प्रश्न 2 का उत्तर- सत्य

भाग 2.3 के प्रश्न 3 का उत्तर- असत्य

भाग 2.4 के प्रश्न 1 का उत्तर- बहमनी

भाग 2.4 के प्रश्न 2 का उत्तर- चावल , शक्कर

भाग 2.4 के प्रश्न 3 का उत्तर- दिल्ली

भाग 2.4 के प्रश्न 4 का उत्तर- मोतियों , तांबे

2.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

Ashraf ,Kunwar Mohd. : Life and Condition of the people of Hindustan (1200-1550).

Tara Chand : Influence of Islam on Indian Culture.

Havell : Indian Architecture.

Srivastava, A.L. : The Sultanate of Delhi

Majumdar,R.C. (ed.) : The Delhi Sultanate: The History and Culture people, vol.VI

Mohammad Habib and Khaliq Ahmad Nizami(ed) : The Delhi Sultanate: A Comprehensive History of India vol.V.

2.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

Habibullah : The Foundation of Muslim Rule in India

Ashraf ,Kunwar Mohd. : Life and Condition of the people of Hindustan (1200-1550).

Tara Chand : Influence of Islam on Indian Culture.

Grierson ,Sir George : Modern Vernacular Literature of Hindustan.

Faruqhhas : Outline of the Religious Literature of India

Havell : Indian Architecture.

Haig ,Woolseley : Cambridge History of India, vol.III

Elliot & Dowson: History of India etc. vol. II &III

Srivastava, A.L. : The Sultanate of Delhi

Majumdar,R.C. (ed.) : The Delhi Sultanate: The History and Culture people, vol.VI

Mohammad Habib and Khaliq Ahmad Nizami(ed) : The Delhi Sultanate: A Comprehensive History of India vol.V.

Ghoshal, V.N. : Studies in Indian History and Culture.

2.10 निबंधात्मक प्रश्न

1- सल्तनतकालीन सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर एक निबंध लिखिए।

2- सल्तनतकालीन आर्थिक जीवन का परिचय दीजिए।

इकाई तीन- दिल्ली सल्तनत का प्रशासन , स्थापत्य एवं साहित्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 सल्तनत का प्रशासन

3.3.1 सुल्तान

3.3.2 मंत्री तथा अन्य कर्मचारी

3.3.2.1 नाइब या नाइब- ए-मामलिकत

3.3.2.2 दिवाने-वजारत या वजीर

3.3.2.3 आरिज-ए-मुमालिक

3.3.2.4 दीवान-ए-रसालत

3.3.2.5 दीवान-ए-इंशा

3.3.3 इक्ताओं का शासन

3.4 सल्तनतकालीन कला (स्थापत्य)

3.5 प्रांतीय स्थापत्य कला

3.6 सल्तनत काल में भाषा और साहित्य

3.6.1 संस्कृत,हिन्दी एवं देशी भाषा साहित्य

3.6.2 □ारसी साहित्य

3.7 साराशं

3.8 पारिभाषिक शब्दावली

3.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

3.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

3.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

3.12 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

दिल्ली सल्तनत के प्रारम्भिक चरण में तीन राज्य वंशों के संस्थापक अपने प्रारम्भिक जीवन में गुलाम रह चुके थे इसलिए भ्रमवश इन तीन राज्य वंशों को एक साथ मिलाकर प्रायः गुलाम वंश के नाम से जाना जाता है। दिल्ली सल्तनत के पहले सुल्तान कुतबुद्दीन ऐबक ने दिल्ली सल्तनत को गज़नी साम्राज्य से अलग कर व्यावहारिक दृष्टि से एक स्वतन्त्र राज्य का रूप प्रदान किया परन्तु उसको ठोस प्रशासनिक ढांचा व राजनीतिक स्थायित्व प्रदान करने का श्रेय इल्तुतमिश को जाता है। इल्तुतमिश की पुत्री रज़िया ने सुल्तान के रूप में अपनी योग्यता का परिचय दिया परन्तु अमीरों के प्रबल विरोध के कारण उसका पतन हो गया। बलबन तथाकथित गुलाम वंश का सबसे शक्तिशाली एवं सफल शासक था, उसने लौह एवं रक्त की नीति को अपना कर अपने राज्य को सुदृढ़ किया। उसने राजत्व के दैविक सिद्धान्त का पोषण कर सुल्तान के पद और उसकी प्रतिष्ठा में अपार वृद्धि की। इस काल में आन्तरिक विद्रोह तथा वाह्य आक्रमणों की समस्या निरन्तर बनी रही। इस काल में शासकों ने प्रजा के हित में कार्य करने का कोई उल्लेखनीय प्रयास नहीं किया।

1290 ईसवी से 1320 ईसवी तक दिल्ली सल्तनत पर खिलजी वंश का शासन रहा। इस वंश के शासकों में जलालुद्दीन, अलाउद्दीन तथा कुतबुद्दीन मुबारक शाह प्रमुख हैं। खिलजी शासकों में अलाउद्दीन खिलजी ने मध्यकालीन भारतीय इतिहास पर एक अमिट छाप छोड़ी है। सैनिक दृष्टि से उसकी उपलब्धियां दिल्ली सल्तनत के इतिहास में अद्वितीय हैं। एक प्रशासक के रूप में उसकी बाज़ार नियन्त्रण की नीति की अनेक अर्थशास्त्री आज भी प्रशंसा करते हैं किन्तु इस नीति का राज्य के व्यापार एवं वाणिज्य पर अनुकूल प्रभाव नहीं पड़ा । उत्तर-पश्चिमी सीमा से हो रहे मंगोल आक्रमणों को विफल करने में अलाउद्दीन अन्य सभी सुल्तानों की तुलना में अधिक सफल रहा। अलाउद्दीन खिलजी ने जनता के हित को कभी भी सर्वोपरि नहीं रखा किन्तु उसके शासन में दीर्घकाल तक शान्ति एवं व्यवस्था बनी रही कला तथा साहित्य की उन्नति भी हुयी।

अप्रैल, 1320 में खिलजी वंश का पतन हो गया था। पंजाब के तत्कालीन सूबेदार गियासुद्दीन तुगलक ने नासिरुद्दीन खुसरो शाह को पराजित कर सितम्बर, 1320 में दिल्ली के तख्त पर अधिकार कर लिया। तुगलक वंश में दो शासकों मुहम्मद तुगलक और फिरोज़ तुगलक ने इतिहास में अपनी अलग छाप छोड़ी है। मुहम्मद तुगलक जहां अपनी विवादास्पद नीतियों, चारित्रिक दुरूहता तथा साम्राज्य के विघटन के लिए कुख्यात है वहीं दूसरी ओर फिरोज़ तुगलक अपने प्रशासनिक सुधारों के लिए विख्यात है। किन्तु फ़िरोज़ तुगलक की अनावश्यक उदारता और सैनिक दुर्बलता तुगलक वंश के पतन का एक प्रमुख कारण बनी। दिल्ली सल्तनत के इतिहास में तुगलक वंश का शासन, बाकी सभी राजवंशों से अधिक कुल 94 वर्ष तक रहा था। किन्तु इस काल में तैमूर के आक्रमण जैसी विनाशकारी घटना भी हुई थी और इस आक्रमण के बाद सुल्तान की

शक्ति और उसके पद की गरिमा नाम मात्र की रह गई थी। परन्तु दिल्ली सल्तनत के विघटन की प्रक्रिया मुहम्मद तुगलक के शासनकाल में बहमनी तथा विजयनगर राज्यों की स्थापना से ही प्रारम्भ हो गई थी। फिरोज़ तुगलक की सैनिक दुर्बलता और उसके उत्तराधिकारियो की अयोग्यता ने इसकी गति को और भी अधिक तेज़ कर दिया था। सुल्तान फिरोज़ शाह तुगलक के शासनकाल के अंतिम वर्षों में जिस राजनीतिक अस्थिरता ने दिल्ली सल्तनत को जकड़ा था वह अगले साठ वर्षों से भी अधिक काल तक बनी रही। वास्तव में 1451 में बहलोल लोदी के सुल्तान बनने पर ही स्थिति में कुछ सुधार आया परन्तु राज्य को पुनर्संगठित करना और विरोधी शक्तियों का स्थायी रूप से दमन कर पाना लोदी शासकों की सामर्थ्य से परे था। अफ़गान राजत्व के सिद्धान्त का अनुपालन करते हुए सुल्तान बहलोल ने स्वयं को राज्य संघ का प्रमुख माना न कि राज्य का सार्वभौमिक शासक। जौनपुर राज्य का दिल्ली सल्तनत में विलय बहलोल लोदी की सबसे बड़ी उपलब्धि थी। बहलोल लोदी की मृत्यु के बाद सुल्तान सिकन्दर लोदी ने सुल्तान को सर्वोपरि स्थान देकर राजत्व के सिद्धान्त में परिवर्तन किया और अमीरों की शक्ति को नियन्त्रित किया। सिकन्दर लोदी की साम्राज्य विस्तार की नीति एक सीमा तक सफल रही। उसकी धर्मांधता ने हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य को बढ़ावा दिया। सिकन्दर लोदी की मृत्यु के बाद सिंहासनारूढ़ इब्राहीम लोदी अपने दम्भ और असहिष्णुता के कारण एक असफल शासक सिद्ध हुआ। अमीरों से निरन्र टकराव, सीमा सुरक्षा के समुचित प्रबन्ध में ढील और अपने विरुद्ध पनप रहे षडयन्त्रों के प्रति असावधान रहने के कारण पानीपत के प्रथम युद्ध में बाबर से पराजित होने पर उसका अन्त हुआ। सल्तनत युग में प्रशासन के क्षेत्र में नवीन प्रयोग हुए और स्थापत्य कला तथा साहित्य के क्षेत्र में अभूतपूर्व उन्नति हुई।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1. सल्तनत का प्रशासन
2. सल्तनतकालीन कला (स्थापत्य)
3. प्रांतीय स्थापत्य कला
4. सल्तनत काल में भाषा और साहित्य
5. संस्कृत,हिन्दी एवं देशी भाषा साहित्य
6. फारसी साहित्य

3.3 सल्तनत का प्रशासन

सल्तनत काल में धर्म का अत्यधिक प्रभाव था और शरीयत को प्रधान माना जाता था। इस काल में उलेमा वर्ग सबसे प्रभावशाली था और सुल्तान को शरीयत के अनुसार शासन करने के लिए समय-समय पर दबाव डालता था। सुल्तान अपनी सुन्नी प्रजा को दिखाने के लिए खलीफा को नाममात्र का प्रधान मानता था। सल्तनत काल में भारत में नवीन शासन व्यवस्था की नींव डाली गयी, सल्तनत कालीन प्रशासन को निम्नांकित शीर्षकों के अंतर्गत समझा जा सकता है-

3.3.1 सुल्तान

अपने समस्त राज्य का प्रधान सुल्तान था। इस युग में उत्तराधिकार का कोई निश्चित नियम नहीं था लेकिन इल्तुतमिश के समय एक ऐसी परंपरा बनी कि सबसे पहले सुल्तान के पुत्र अथवा पुत्री को सिंहासन प्राप्त करने का अधिकार था। सुल्तान कानून बनाने , उन्हें लागू करने और न्याय करने में प्रधान था। सेना का सर्वोच्च सेनापति भी वही होता था। सभी पदाधिकारियों की नियुक्ति , उन्हें हटाने, उपाधियों का वितरण करने आदि के कार्य वही करता था। शासन व्यवस्था लागू करना, शान्ति की स्थापना और बाह्य आक्रमणों से देश की सुरक्षा करने के साथ इस्लाम धर्म का पोषण और विस्तार उसके प्रमुख कार्य थे।

3.3.2 मंत्री तथा अन्य कर्मचारी

सल्तनत काल में सुल्तान की सहायता के लिए कुछ मंत्रियों और अधिकारियों का उल्लेख भी मिलता है; यथा-

3.3.2.1 नाइब या नाइब- ए-मामलिकत

यह पद बहरामशाह के समय शुरू हुआ , इस समय शक्तिशाली सरदारों ने सुल्तान पर अंकुश लगाने के लिए इस पद को प्रारंभ किया। अत: नाइब का पद सुल्तान के पश्चात था और यह राज्य के वजीर से भी श्रेष्ठ होता था। शक्तिशाली सुल्तानों के समय या तो यह पद रखा ही नहीं गया या केवल योग्य सरदारों को केवल सम्मान देने के लिए दिया गया।

3.3.2.2 दिवाने-वजारत या वजीर

इस काल में राज्य के प्रधानमंत्री को वजीर कहा जाता था। वह मुख्यत: दिवाने-विजारत या राजस्व विभाग का प्रधान था। वह लगान, कर-व्यवस्था , दान , सैनिक व्र्यय इत्यादि की देखभाल करता था। सुल्तान की अनुपस्थिति में राज्य का प्रबंध, विभिन्न अधिकारियों की नियुक्ति करना

उसके अधिकार थे। वजीर की सहायता के लिए नाइब वजीर, मुंसरिफ-ए-मुमालिक , मुस्तौफी-ए-मुमालिक जैसे अधिकारी होते थे।

3.3.2.3 आरिज-ए-मुमालिक

यह सेना विभाग का प्रधान था लेकिन वह सेना का सेनापति नहीं था, सुल्तान समय-समय पर युद्धों के लिए अलग-अलग सेनापतियों की नियुक्ति करता था। सैनिकों की भर्ती, घोड़ों पर दाग लगवाना, सैनिकों का हुलिया रखना,समय-समय पर उनका निरीक्षण करना , उनकी रसद की व्यवस्था करना उसके मुख्य कार्य थे।

3.3.2.4 दीवान-ए-रसालत

यह विदेश संबधी मामलों का प्रधान था। विदेशी पत्र-व्यवहार के साथ ही राजदूतों के आवागमन , देखभाल इत्यादि के कार्य भी करता था।

3.3.2.5 दीवान-ए-इंशा

यह शाही पत्र-व्यवहार का प्रधान था। सुल्तान के सभी आदेशों को राज्य के विभिन्न भागों में भेजना, सरकारी डाक देखना , उनके उत्तर तैयार करना उसी के कार्य थे। उसकी सहायता के लिए अनेक दबीर(लेखक) होते थे।

सल्तनत काल में उपरोक्त चार विभाग ही मुख्य थे, इनके अलावा केन्द्र सरकार में सद्र-उस-सदूर धर्म विभाग का प्रधान था। इस्लाम के कानूनों का पालन कराना उसका मुख्य कर्तव्य था। योग्य व्यक्तियों, कस्जिदों, मकतबों, मदरसोंको आर्थिक सहायता तथा शाही खैरात का प्रबंध करना उसका मुख्य कार्य था। काजी-उल-कजात न्याय विभाग का प्रधान था और बरीए-ए-मुमालिक गुप्तचर विभाग का संगठन देखता था। इसके अलावा दिल्ली के सुल्तानों ने समय-समय पर अपनी इच्छा के अनुसार नये विभाग भी खोले थे।

3.3.3 इक्ताओं का शासन

दिल्ली सुल्तानों ने शासन की सुविधा के लिए एवं अपने सरदारों के वेतन आदि के भुगतान के लिए इक्तादारी व्यवस्था को भी अपनाया था। इक्ता का तात्पर्य प्रांत से है। इनका प्रधान मुक्ती, नाजिम, वली या नाइब सुल्तान पुकारा जाता था। मुक्ती की सहायता के लिए एक प्रांतीय वजीर , एक अरीज और काजी होते थे। 13वीं सदी के पश्चात इक्ता से छोटी इकाइयों अर्थात शिक का अस्तित्व मिलता है, जहां का मुख्य अधिकारी शिकदार होता था।शिक पुन: परगनों में विभाजित थे

जहां एक आमिल, एक मुंशरिफ, एक खजांची और दो कारकून होते थे। शासन की सबसे छोटी इकाई गांव थे जो स्वशासन और पैत्रक अधिकारियों की व्यवस्था के अंतर्गत थे।

3.4 सल्तनतकालीन कला (स्थापत्य)

तुर्कों की भारत विजय के समय तक मध्य एशिया की विभिन्न जातियों ने स्थापत्य कला की एक ऐसी शैली विकसित कर ली थी जो एक ओर ट्रान्स ऑक्सियाना, ईरान, अफगानिस्तान, ईराक, मिस्र, उत्तरी अफ्रीका तथा दक्षिण पश्चिमी यूरोप की स्थानीय शैलियों और दूसरी ओर अरब की मुस्लिम शैली के समन्वय से बनी थी। 12 वीं सदी में जिस स्थापत्य कला को साथ लेकर तुर्क आक्रमणकारियों ने भारत में प्रवेश किया, वह पूर्णतः अरबी अथवा मुस्लिम नहीं थी। इसकी चार मुख्य विशेषताऐं थीं- 1. गुम्बद 2. ऊँची मीनारें 3. मेहराब तथा मेहराबी डाटदार छत। परन्तु भारत में उन्हें एक अत्यन्त विकसित स्थापत्य निर्माण कला के दर्शन हुए जो बीम ब्रेकेट सिद्धान्त पर आधारित थी, इसकी प्रमुख विषेषताऐं 1. पटी हुयी छतें, 2. आगे बडे हुए ब्रेकेट, 3. शिखर 4. टोडियों पर स्थित मेहराब तथा 5. गोल व चौकोर खम्बे थे। तुर्क अपने साथ कलाकारों को नहीं लाये थे अतः भारतीय कलाकारों की सहायता से उन्होंने जिन भवनों का निर्माण कराया उन पर भारतीयता की छाप स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

हिन्दु मुस्लिम कला के सम्पर्क ने एक नवीन शैली को जन्म दिया जिसे इण्डोइस्लामिक कला कहा जा सकता है। अलंकरण के लिए तुर्कों ने मानव और पशु आकृतियों का प्रयोग नहीं किया, इसके स्थान पर इन्होंने ज्यामितीय और पुष्प अलंकरण को अपनाया। कुरान की आयतें खुदवाना भी अलंकरण का एक तरीका था, इसमें अरबी लिपि कला का नमूना बन गया। अलंकरण की यह संयुक्त विधि 'अरबस्क' कहलायी। तुर्कों ने हिन्दू अलंकरण के नमूने घटियां, बेल, स्वास्तिक, कमल आदि का भी प्रयोग किया। तुर्क लाल पत्थर का प्रयोग करके अपनी इमारतों को रंगीन भी बनाते थे। लाल रंग को हल्का र खने के लिए इसमें पीला पत्थर और संगमरमर का प्रयोग भी किया गया है।

दिल्ली सल्तनत के प्रथम सुल्तान कुतुबदीन ऐबक ने ''कुव्वत-उल-इस्लाम''मजिद, अजमेर में 'अढाई दिन का झोपड़ा'' बनवाया तथा कुतुबमीनार का निर्माण प्रारंभ किया। अल्तमश ने कुतुबुमीनार को पूरा कराया, नासिरूदीन का मकबरा, सुलतानगढ़ी, हौज-ए-शम्मी, शम्सी ईदगाह, बदायूं की जामी मस्जिद और नागौर का अतरकीन का दरवाजा बनवाया। बलबन ने स्वयं का मकबरा और लाल महल का निर्माण करवाया। अलाउद्दीन एक महान निर्माता था उसने कुतुब के समीप एक बड़ी मीनार और बड़ी मस्जिद बनाने का प्रयास किया परंतु वह उस कार्य को न कर सका। उसने सीरी का नगर बनाया, उसमें हजार स्तंभों वाला महल बनवाया, जमैयतखाना मस्जिद, अलाई

दरवाजा, हौज-ए-अलाइ या हौज-ए-खास का निर्माण भी करवाया। तुगलक काल की इमारतें संभवतः उनकी आर्थिक कठिनाइयों के कारण इतनी भव्य और सुन्दर नहीं बन सकी हैं। गयासुद्दीन तुगलक ने तुगलकाबाद नामक नवीन नगर और उसमें स्वयं का मकबरा एवं महल बनवाया। मुहम्मद तुगलक ने जहांपनाह नामक नवीन नगर का निर्माण किया और आदिलाबाद का किला बनवाया। फीरोज ने अनेक इमारतें बनवायी परंतु वे अत्यधिक साधारण थीं।उसने इमारतों के अतिरिक्त फीरोजाबाद, फतेहाबाद, जौनपुर आदि नगरों की नींव भी डाली, उसके पुत्र जूनाशाह ने खानेजहां तिलंगानी का मकबरा, काली मस्जिद, खिरकी मस्जिद तथा कलन मस्जिद की रचना की। सैयद ओर लोदी शासकों के काल की मुख्य इमारतों में मुबारकशाह सैयद, मुहम्मदशाह सैयद और सिकन्दर लोदी का मकबरा तथा मोठ की मस्जिद उल्लेखनीय है।

उपर्युक्त इमारतों में अधिकांश नगर, किले और महल नष्ट हो गये हैं परन्तु मकबरे, मजिदें तथा मीनारें अभी भी विद्यमान हैं। ये कला के अद्वितीय तो नहीं परन्तु पर्याप्त अच्छे नमूने माने जा सकते हैं। कला की दृष्टि से कुतुबमीनार और अलाई दरवाजा का प्रमुख स्थान है।

3.5 प्रांतीय स्थापत्य कला

विभिन्न प्रान्तों में विभिन्न शासकों ने भी महत्वपूर्ण, किलों, मस्जिदों एवं मकबरों का निर्माण करवाया। मूल आधार पर उनकी इमारतें भी दिल्ली अथवा शाही स्थापत्य कला की भांति थी परन्तु उनकी परिस्थितियों ने उनकी इमारतों को दिल्ली सल्तनत की इमारतों से कुछ भिन्न स्वरूप प्रदान किया।

मुल्तान की इमारतों में शाह युसुफ-उल-गर्दिजी, शमसुद्दीन और रूकने आलम के मकबरे हैं। इनमें रूकने आलम के मकबरे को कला की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ माना गया है। बंगाल में बनी इमारतें बहुत श्रेष्ठ नहीं बन सकीं, उनमें अधिकांशतः ईटों का प्रयोग किया गया है। बंगाली शैली की इमारतों के अवशेष लखनौती, त्रिवेनी, गौड़ और पांडुआ में मिले हैं। इनमें सिकन्दर शाह की अदीना मस्जिद, गौड़ का मकबरा, पांडुआ का एकलखी मकबरा, गौड़ की लोटन मस्जिद, बड़ा सोना मस्जिद, छोटा सोना मस्जिद, कदम रसूल मस्जिद आदि महत्वपूर्ण हैं। बंगाली शैली की प्रमुख विशेषताओं में छोटे-छोटे स्तभों पर नुकीले मेहराब, लहरदार कार्निसें छत के ऊपर झोपड़ी के समान ढलाव और उससे संलग्न अर्द्ध गुम्बद है। जौनपुर के शर्की शासकों ने स्थापत्य को बहुत प्रोत्साहन दिया। शर्की शैली में चौकोर स्तंभ, छोटी दहलीजें होना और मीनारों का अभाव महत्वपूर्ण विशेषताऐं हैं। यहाँ की इमारतों में अटाला मस्जिद, जामा मस्जिद और लाल दरवाजा मस्जिद प्रमुख हैं।

मालवा शैली की इमारतों में मांडू की हिंडोला महल, जहाज महल, हुशंगशाह का मकबरा व रूपमती व बाजबहादुर के महल हैं। कला की दृष्टि से ये दिल्ली सुल्तानों द्वारा बनायी गयी इमारतों

के काफी निकट हैं तथा अत्यन्त सुन्दर और दृढ़ हैं। गुजरात में हिन्दू मुस्लिम कला का सबसे अच्छा समन्वय मिलता है। यहां की इमारतों में काम्बे की जामा मस्जिद, अहमदाबद की जामा मस्जिद, ढेलवा का हिलाल खॉ काजी का मकबरा, आदि इमारतें महत्वपूर्ण हैं। काश्मीर में जैनुल आब्दीन के काल में सुन्दर इमारतों का निर्माण हुआ इनमें मदानी का मकबरा अति भव्य है। बहमनी राज्य में गुलबर्गा और बीदर की मस्जिदें, आदिलशाह का मकबरा, गोल गुम्बद, दौलताबाद की चार मीनार आदि कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं इस काल में हिन्दू स्थापत्य के नमूने मुख्यतः राजस्थान में मिलते हैं, हॉलाकि विजयनगर में भी भव्य और सुन्दर इमारतें रही होगीं, किन्तु तलीकोटा के युद्ध के बाद आक्रमणाकारियों ने उन्हें नष्ट कर दिया था। राजस्थान की इमारतों में कुंभलगढ़ का किला, चित्तौड़ का कीर्ति स्तंभ या जय स्तंभ तथा मान मन्दिर प्रमुख हैं।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि सल्तनत काल स्थापत्य निर्माण की दृष्टि से महत्वपूर्ण युग था, इस काल में स्थापत्य के द्वारा भारत की संयुक्त संस्कृति की नींव पड़ी थी।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

कृपया निम्नांकित प्रश्नों के समक्ष सत्य अथवा असत्य लिखिए।

1. कुतुबदीन ऐबक ने कुतुबमीनार का निर्माण प्रारंभ किया।

2. मुहम्मद तुगलक ने जहांपनाह नामक नवीन नगर का निर्माण किया

3. मालवा शैली की इमारतों में रूपमती व बाजबहादुर के महल शामिल हैं

4. मुल्तान की इमारतों में कुंभलगढ़ का किला, चित्तौड़ का कीर्ति स्तंभ या जय स्तंभ तथा मान मन्दिर प्रमुख हैं

5. राजस्थान की इमारतों में शाह युसुफ-उल-गर्दिजी, शमसुद्दीन और रूकने आलम के मकबरे हैं।

3.6 सल्तनत काल में भाषा और साहित्य

3.6.1 संस्कृत,हिन्दी एवं देशी भाषा साहित्य

सल्तनत काल में संस्कृत हिन्दुओं के मध्य उच्च विचारों के सम्प्रेषण और साहित्य का माध्यम बनी रही। वस्तुतः विभिन्न विधाओं में संभवत् पूर्व काल से भी अधिक संस्कृत ग्रन्थों की रचना हुई। शंकराचार्य के अनुसरण में अद्वैत दर्शन पर रामानुज, मध्व, वल्लभ आदि की रचनाऐं प्रकाश में आयीं, उनके विचारों के तेजी से प्रसार और उन पर हुई बहसों से पता चलता है कि संस्कृत कितनी महत्वपूर्ण भाषा थी। इस काल में रामायण और महाभारत के अनेक नये संस्करण लिखे गये।

काव्य नाट्य, कला, चिकित्सा, ज्योतिष और संगीत इत्यादि भी संस्कृत में लिखा गया। इस काल में अधिकांश संस्कृत साहित्य दक्षिण भारत में लिखा गया हॅलाकि इसमें अधिकांश पुनरावृत्ति है और मौलिकता के दर्शन नहीं होते हैं।

इस काल के संस्कृत जातकों में ‘‘हरिकेलि नाटक‘‘, ललित विग्रहराज नाटक, प्रसन्न राघव, हम्मीर मदमदर्न,पार्वती परिणय, विदग्ध माधव, ललित माधव तथा गीत गोविन्द हैं। ऐतिहासिक ग्रन्थों में जोनराज्य का ‘‘द्वितीय राजतंरगिनी‘‘ तथा श्रीधर ‘‘तृतीय राजतंरगिनी है। संस्कृत साहित्य में कानून ग्रन्थों के अन्तर्गत विज्ञानेश्वर का ‘‘मिताक्षरा,‘‘ तथा जीमूतवाहन का ‘‘दायभाग‘‘ लिखा गया। इस काल के प्रमुख गद्य ग्रन्थों में वेताल पंचविंशति, कथार्णव, पुरूष परीक्षा तथा भू-परिक्रमा है। विजयनगर साम्राज्य में भारप्पा ने ‘‘शिवागम स्तोत्र लिखा, सायण ने वेदो का भाष्य किया और स्वयं कृष्णदेव राय ने भी संस्कृत में ग्रन्थ रचना की।

इस काल में अनेक क्षेत्रीय भाषाओं का भी विकास हुआ और उनमें उच्चकोटि की साहित्य रचना हुई। इनमें से कुछ भाषाओं जैसे हिन्दी, बंगाली, और मराठी की उत्पत्ति आठवीं सदी के आसपास हुई थी। 14 वीं सदी के कवि अमीर खुसरो ने क्षेत्रीय भाषाओं का अस्तित्व पहचानते हुए कहा था कि ये जबानं रोजमर्रा की जिंदगी में बहुत लम्बे वक्त से इस्तेमाल की जाती रही हैं।‘‘ इन भाषाओं द्वारा परिपक्वता प्राप्त करना और साहित्यिक भाषाओं के रूप में उनका प्रयोग मध्यकाल की एक विशेषता है। डॉ0 ईश्वरी प्रसाद हिन्दी का प्रथम कवि चन्दबरदाई को मानते हैं। हिन्दी लेखन का मुख्य केन्द्र राजस्थान और गुजरात रहा जहॉं अपभ्रंश साहित्य रचा गया। यद्यपि यह साहित्य राजाओं के यशोगान तथा धार्मिक पुस्तकों तक ही सीमित था। इसी प्रकार दक्षिण में विजयनगर साम्राज्य में तेलुगु साहित्य, बहमनी साम्राज्य के प्रशासन में मराठी पनपी, बंगाल के नुसरत शाह ने बंगाली भाषा को प्रोत्साहन दिया। सूफी संतों ने अपनी संगीत सभाओं ‘‘समा‘‘ में हिन्दी या हिन्दवी भाषा को प्रोत्साहन दिया। सूफी कवियों ने फारसी की मसनवी शैली को लोकप्रिय बनाया।

इस काल के प्रमुख ग्रन्थों में रासौ ग्रन्थों के अन्तर्गत पृथ्वीराज रासौ, बीसलदेव रासौ, खुमान रासौ, हम्मीर रासौ, विजयपाल रासौ, आल्हा खण्ड आदि महत्वपूर्ण हैं। प्रसिद्ध सूफी सन्त गेसूदराज ने अतर अल आशकीन की रचना हिन्दी में की। सन्त साहित्य के अन्तर्गत रामानन्द, कबीर, नानक, दादू, मलूकदास, सुन्दरदास आदि की रचनाऐं महत्वपूर्ण हैं। अमीर खुसरो ने भी हिन्दी में अनेक पदों की रचना की। अब्दुल वहीद बिलग्रामी ने ‘‘हकायके-ए-हिन्दी‘‘ नामक टीका लिखी।

3.6.2 □रसी साहित्य

हॅलाकि मुसलमानों का अधिकांश साहित्य अरबी में लिखा गया है जो पैगम्बर की भाषा थी और अरब से लेकर बगदाद तक साहित्य की भाषा थी, लेकिन भारत आने वाले तुर्की फारसी से

बहुत प्रभावित थे। तुर्कों ने प्रारंभ से ही साहित्य और प्रशासन के लिए फारसी का प्रयोग किया, इस प्रकार फारसी के विकास के लिए लाहौर पहला केन्द्र बना। इस काल का सबसे प्रमुख फारसी लेखक अमीर खुशरो था उसने अनेक काव्यों की रचना की जिनमें ऐतिहासिक रोमांस भी है। उसने सभी काव्य शैलियों को लेकर प्रयोग किया और एक नयी फारसी शैली का निर्माण किया जो बाद में सबक-ए-हिन्दी या भारतीय शैली कहलाई। फारसी भाषा के माध्यम से भारत मध्य एशिया और ईरान के साथ नजदीकी सांस्कृतिक संबंध बना सका । धीरे-धीरे फारसी न सिर्फ प्रशासन और राजनीति की भाषा बनी वरन् उच्च वर्गों की भाषा भी बन गया। पहले यह उत्तर भारत में प्रशासनिक भाषा बनी और बाद में दिल्ली सल्तनत के विस्तार के साथ दक्षिण भारत में तथा देश के विभिन्न भागों की प्रमुख भाषा बन गयी।

गुलाम वंश के प्रथम शासक कुतुबुद्दीन ऐबक के राज्य काल में हसन निजामी ने ताज-उल-मासिर की रचना की थी। इल्तुतमिश के दरबार में अबू नसर, ताजुद्दीन दबीर, नूरूद्दीन मुहम्मद आदि प्रसिद्ध फारसी विद्वानों को आश्रय प्राप्त था। तबकाते-नासिरी का लेखक मिनहास-उस-सिराज उसके संरक्षण में था बलबन का पुत्र मुहम्मद स्वयं उच्चकोटि का कवि था, उसने अमीर खुसरो एवं मीर हसन देहलवी को संरक्षण प्रदान किया था। खुसरो ने नूह-ए-सिपेहर, खजाइन-उल-फतुह, तुगलकनामा, शिरीन खुशरो, देवलरानी-खिज्र खॅं आदि प्रसिद्ध रचनाऐं की। मीर हसन ने फबायद-उल-फतूह, तुगलकनामा, देवलरानी-खिज्र खॉं आदि प्रसिद्ध रचनाऐं कीं। खिलजी युग में सदरूदीन, मौलाना,आरिफ, फरवरूद्दीन, अब्दुल हकीम, हमीदुदीन राजा और शिहाबुदीन आदि फारसी के प्रसिद्ध कवि थे। मुहम्मद तुगलक विद्वानों का आश्रय दाता ही नहीं स्वयं भी एक सुशिक्षित विद्वान था। इतिहासकार बरनी उसके दरबार में रहा, उसने तारीखे फीरोजशाही, फतवा-ऐ-जहांदारी, सनाय-ए-मुहम्मदी, हसरतनामा आदि ग्रन्थ लिखे। मीर हसन देहलवी को उसने आश्रय दिया था। प्रसिद्ध कवि मुहम्मद-बद्र-ए चाच ने दीवान ए चाच तथा शाहनामा की रचना की। इमामी ने फुतुह उल सलातीन इसी संमय पूरा किया। मुहम्मद के उत्तराधिकारी फिरोज ने स्वयं फतुहात ऐ फीरोजशाही की रचना की। प्रसिद्ध इतिहासकार अफीफ ने उसके संरक्षण में तारीखे फीरोजशाही पूरा किया। इसी समय याहिया बिन अहमद सरहिन्दी ने तीरीख ए मुबायकशाहही की रचना की। सिकन्दर लोदी स्वयं एक कवि और विद्वाना था उसने ''गुलरूख'' उपनाम से काव्य रचना की। सल्तनत काल में अनेक संस्कृत ग्रन्थों का फारसी में अनुवाद भी किया गया इनमें दलायल ए फीरोजशाही , तथा तिब्बी-ए-सिकन्दरी महत्वपूर्ण ग्रन्थ थे।

इस प्रकार स्पष्ट है कि कुतुबुद्दीन से लेकर लोदी सुल्तान सिकंदर लोदी तक सभी शासकों ने दरबार में लेखकों, दार्शनिकों एवं साहित्यकारों को आश्रय प्रदान कर उच्चकोटि के साहित्य का सृजन किया।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

कृपया निम्नांकित प्रश्नों के समक्ष सत्य अथवा असत्य लिखिए।

1. विजयनगर साम्राज्य में सायण ने वेदो का भाष्य किया

2. डॉ0 ईश्वरी प्रसाद हिन्दी का प्रथम कवि चन्दबरदाई को मानते हैं

3. अब्दुल वहीद बिलग्रामी ने ''हकायके-ए-हिन्दी'' नामक टीका लिखी

4. सिकन्दर लोदी ने ''गुलरूख'' उपनाम से काव्य रचना की

5. याहिया बिन अहमद सरहिन्दी ने तारीखे फीरोजशाही, फतवा-ऐ-जहांदारी, सनाय-ए-मुहम्मदी, हसरतनामा आदि ग्रन्थ लिखे

6. बरनी ने तीरीख ए मुबायकशाहही की रचना की

3.7 सारांश

हिन्दु मुस्लिम कला के सम्पर्क ने एक नवीन शैली को जन्म दिया जिसे इण्डोइस्लामिक कला कहा जा सकता है। अलंकरण के लिए तुर्कों ने मानव और पशु आकृतियों का प्रयोग नहीं किया, इसके स्थान पर इन्होंने ज्यामितीय और पुष्प अलंकरण को अपनाया। कुरान की आयतें खुदवाना भी अलंकरण का एक तरीका था, इसमें अरबी लिपि कला का नमूना बन गया। अलंकरण की यह संयुक्त विधि 'अरबस्क' कहलायी। सल्तनत कालीन इमारतों में अधिकांश नगर, किले और महल नष्ट हो गये हैं परन्तु मकबरे, मजिदें तथा मीनारें अभी भी विद्यमान हैं। ये कला के अद्वितीय तो नहीं परन्तु पर्याप्त अच्छे नमूने माने जा सकते हैं। कला की दृष्टि से कुतुबमीनार और अलाई दरवाजा का प्रमुख स्थान है।

सल्तनत काल में संस्कृत हिन्दुओं के मध्य उच्च विचारों के सम्प्रेषण और साहित्य का माध्यम बनी रही। वस्तुतः विभिन्न विधाओं में संभवत् पूर्व काल से भी अधिक संस्कृत ग्रन्थों की रचना हुई। इस काल में अनेक क्षेत्रीय भाषाओं का भी विकास हुआ और उनमें उच्चकोटि की साहित्य रचना हुई। इनमें से कुछ भाषाओं जैसे हिन्दी, बंगाली, और मराठी की उत्पत्ति आठवीं सदी के आसपास हुई थी। डॉ0 ईश्वरी प्रसाद हिन्दी का प्रथम कवि चन्दबरदाई को मानते हैं। हिन्दी लेखन का मुख्य केन्द्र राजस्थान और गुजरात रहा जहॉं अपभ्रंश साहित्य रचा गया। यद्यपि यह साहित्य राजाओं के यशोगान तथा धार्मिक पुस्तकों तक ही सीमित था। इसी प्रकार दक्षिण में विजयनगर साम्राज्य में तेलुगु साहित्य, बहमनी साम्राज्य के प्रशासन में मराठी पनपी, बंगाल के नुसरत शाह ने

बंगाली भाषा को प्रोत्साहन दिया। फारसी भाषा के माध्यम से भारत मध्य एशिया और ईरान के साथ नजदीकी सांस्कृतिक संबंध बना सका । धीरे-धीरे फारसी न सिर्फ प्रशासन और राजनीति की भाषा बनी वरन् उच्च वर्गों की भाषा भी बन गया। पहले यह उत्तर भारत में प्रशासनिक भाषा बनी और बाद में दिल्ली सल्तनत के विस्तार के साथ दक्षिण भारत में तथा देश के विभिन्न भागों की प्रमुख भाषा बन गयी।

3.8 पारिभाषिक शब्दावली

मकबरा – मृतक की याद में बना स्मृति भवन

सार्वभौमिक शासक- समस्त शक्तिसंपन्न शासक

मस्जिद - इबादत या पूजा करने का स्थान

अद्वैत दर्शन - वह विचारधारा जिसके अनुसार ईश्वर एक है

समा – सूफी संतों की संगीत सभा

रासौ ग्रन्थ – राजाओं की यशोगाथा से संबंधित ग्रंथ

3.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

इकाई 3.5 के प्रश्न संख्या 1 का उत्तर- सत्य

इकाई 3.5 के प्रश्न संख्या 2 का उत्तर- सत्य

इकाई 3.5 के प्रश्न संख्या 3 का उत्तर- सत्य

इकाई 3.5 के प्रश्न संख्या 4 का उत्तर- असत्य

इकाई 3.5 के प्रश्न संख्या 5 का उत्तर- असत्य

इकाई 3.6 के प्रश्न संख्या 1 का उत्तर- सत्य

इकाई 3.6 के प्रश्न संख्या 2 का उत्तर- सत्य

इकाई 3.6 के प्रश्न संख्या 3 का उत्तर- सत्य

इकाई 3.6 के प्रश्न संख्या 4 का उत्तर- सत्य

इकाई 3.6 के प्रश्न संख्या 5 का उत्तर- असत्य

इकाई 3.6 के प्रश्न संख्या 6 का उत्तर- असत्य

3.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Lal, K. S. – *Twilight of the Delhi Sultanate*

2. Habib, M., Habib, I. – *Delhi Sultanate & Its Times*

3. Srivastava, K. L. – *The Position of Hindus Under the Delhi Sultanate*

4. Nand, Lokesh Chandra – *Women in Delhi Sultanate*

5. हबीब, मुहम्मद - दिल्ली सल्तनत भाग 2

3.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Husain, Y. – *Glimpses of Medieval Indian Culture*

2. Ashraf, K. M. - *Life and Condition of the People of Hindostan*

3. Tara Chand – *Influence of Islam on Indian culture*

4. Jafar, S. M. – *Some Cultural Aspects of the Muslim ule in India*

3.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. सल्तनकालीन प्रशासन पर प्रकाश डालिए।

2. सल्तनकालीन स्थापत्य कला एवं साहित्य पर एक निबंध लिखिए।

इकाई चार- सल्तनतकालीन राजस्व व्यवस्था

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 राजस्व नीति

4.3.1 आय के साधन

4.3.1.1 जजिया

4.3.1.2 आय-कर

4.3.1.3 भू-राजस्व

4.3.2 व्यय के साधन

4.8 साराशं

4.9 पारिभाषिक शब्दावली

4.10 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

4.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

4.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

4.13 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

दिल्ली सल्तनत के पहले सुल्तान कुतबुद्दीन ऐबक ने दिल्ली सल्तनत को ग़ज़नी साम्राज्य से अलग कर व्यावहारिक दृष्टि से एक स्वतन्त्र राज्य का रूप प्रदान किया परन्तु उसको ठोस प्रशासनिक ढांचा व राजनीतिक स्थायित्व प्रदान करने का श्रेय इल्तुतमिश को जाता है। इल्तुतमिश की पुत्री रज़िया ने सुल्तान के रूप में अपनी योग्यता का परिचय दिया परन्तु अमीरों के प्रबल विरोध के कारण उसका पतन हो गया। बलबन तथाकथित गुलाम वंश का सबसे शक्तिशाली एवं सफल शासक था, इस काल में शासकों ने प्रजा के हित में कार्य करने का कोई उल्लेखनीय प्रयास नहीं किया।

1290 ईसवी से 1320 ईसवी तक दिल्ली सल्तनत पर खिलजी वंश का शासन रहा। इस वंश के शासकों में जलालुद्दीन, अलाउद्दीन तथा कुतबुद्दीन मुबारक शाह प्रमुख हैं। खिलजी शासकों में अलाउद्दीन खिलजी की प्रशासक के रूप में उसकी बाज़ार नियन्त्रण की नीति की अनेक अर्थशास्त्री आज भी प्रशंसा करते हैं। अलाउद्दीन खिलजी ने जनता के हित को कभी भी सर्वोपरि नहीं रखा किन्तु उसके शासन में दीर्घकाल तक शान्ति एवं व्यवस्था बनी रही।

अप्रैल, 1320 में खिलजी वंश का पतन हो गया था। तुगलक वंश में दो शासकों मुहम्मद तुगलक और फिरोज़ तुगलक ने इतिहास में अपनी अलग छाप छोड़ी है। मुहम्मद तुगलक जहां अपनी विवादास्पद नीतियों, चारित्रिक दुरूहता तथा साम्राज्य के विघटन के लिए कुख्यात है वहीं दूसरी ओर फिरोज़ तुगलक अपने प्रशासनिक सुधारों के लिए विख्यात है। किन्तु फ़िरोज़ तुगलक की अनावश्यक उदारता और सैनिक दुर्बलता तुगलक वंश के पतन का एक प्रमुख कारण बनी। 1451 में बहलोल लोदी के सुल्तान बनने पर ही स्थिति में कुछ सुधार आया परन्तु राज्य को पुनर्संगठित करना और विरोधी शक्तियों का स्थायी रूप से दमन कर पाना लोदी शासकों की सामर्थ्य से परे था। यह युग निरंतर संघर्ष और उठापठक का था और विभिन्न सुल्तानों ने समय-समय पर राज्य की आय में वृद्धि करने के लिए भिन्न-भिन्न प्रयोग किये और अपनी राजस्व नीति निर्धारित करने की कोशिश की। इसकी जानकारी आपको इस इकाई में दी जायेगी।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य आपकों को भारत में मुस्लिम शासन काल के प्रारम्भिक चरण अर्थात सल्तनत युग की राजस्व व्यवस्था ,इस काल के प्रमुख शासकों की उपलब्धियों तथा उनकी असफलताओं से परिचित कराना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

4.3 राजस्व नीति

राजस्व नीति के अंतर्गत किसी शासन की आय-व्यय का अध्ययन शामिल होता है। यहां हम संपूर्ण सल्तनत युग की राजस्व व्यवस्था का विवरण दे रहे हैं अतः हम यहां केवल सल्तनत युग के उन सुल्तानों की नीति पर चर्चा करेंगे जिन्होंने राजस्व सुधार के क्षेत्र में कार्य किया था। इसका विवरण अग्रांकित अंतर्गत किया जा सकता है-

4.3.1 वित्त

सल्तनत-युग की वित्त-नीति सुन्नी विधिविज्ञों की हनीफी शाखा के वित्त सिद्धान्तों पर आधारित थी। भारत के प्रारम्भिक तुर्की सुल्तानों ने गजनवी सुल्तानों की यह प्रथा अपना ली थी। मुस्लिम धार्मिक कानून शरियत में राजस्व के मुख्य साधन अग्रांकित बताये गये हैं - (1) उश्र, (2) खराज, 3. खम्स, 4. जकात और 5. जजिया। इनके अतिरिक्त इस काल में आय के कई अन्य साधनों का भी उल्लेख मिलता है- जैसे खानों से होने वाली आय, भूमि से प्राप्त गड़ा हुआ धन, लावारिस इत्यादि। उश्र, भूमि कर था और मुसलमान भूमिधरों की उस भूमि पर लगाया जाता था जिसकी सिंचाई प्राकृतिक साधनों से होती थी। यह उपज के 1/10 की दर से वसूल किया जाता था। गैर मुसलमानों की भूमि पर लगाया जाने वाला कर खराज कहलाता था। इस्लामी कानून के अनुसार इसकी दर 1/10 से 1/2 तक होती थी। खम्स उस लूट के धन को कहते थे जो युद्ध में प्राप्त होता था, सिद्धान्ततः उसका 4/5 भाग सेना में बांट दिया जाता था और 1/5 सुल्तान द्वारा रखा जाता था लकिन व्यवहार में सदैव इसका विपरीत ही होता था। जकात धार्मिक कर था जो केवल मुसलमानों से प्राप्त किया जाता था। यह कर कुछ निश्चित मूल्य से अधिक की सम्पत्ति पर ही लगता था। इसकी दर 2.5 प्रतिशत थी। इस कर से होने वाली आय मुसलमानों के लाभ के लिए व्यय की जाती थी जैसे इा कर से प्राप्त धन को मस्जिदों और कब्रों की मरम्मत, धर्मस्व और धार्मिक लोगों तथा दरिद्रों को दिये जाने वाले भत्ते इत्यादि में खर्च किया जाता था।

4.3.1.1 जजिया

जजिया केवल गैर-मुसलमानों पर लगाया जाता था। कुछ विद्वानों का मानना है कि वह धार्मिक कर था और गैर-मुसलमानों से वसूल किया जाता था और इसके बदले में उन्हें अपने जीवन तथा सम्पत्ति की रक्षा का आश्वासन मिलता था और वे सैनिक-सेवा से मुक्त रहते थे। सुन्नी विचारधारा के अनुसार गैर-मुसलमानों को मुसलमानों के राज्य में रहने का अधिकार नहीं हैं। किन्तु कुछ अन्य मुस्लिम विद्वानों का मत है कि जजिया धर्मनिरपेक्ष कर था और गैर-मुसलमानों पर इसलिए लगाया जाता था क्योंकि वे सैनिक सेवा से मुक्त थे। मुसलमानों को कम से कम सिद्धान्ततः अनिवार्य रूप से राज्य की सैनिक सेवा करनी पड़ती थी। प्रारम्भिक मुसलमान विधिविज्ञों ने करों को

दो वर्गों में विभक्त किया, धार्मिक और धर्मनिरपेक्ष कर, और जजिया को उन्होंने दूसरी कोटि में रखा। प्रारम्भ में भारत के बाहर इस्लामी देशों में इस कर के लगाने का कुछ भी उद्देश्य रहा हो, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि भारत में उस समय जजिया धार्मिक कर समझा जाता था। वह गैर मुसलमानों पर इसलिए लगाया जाता था कि राज्य उनके जीवन और सम्पत्ति की रक्षा करता और सैनिक सेवा से उन्हें मुक्त रखता था। दिल्ली के सुल्तान कठोरता से इस कर को वसूल करना अपना धार्मिक कर्तव्य समझते थे। स्त्रियॉं, बच्चे, भिखारी तथा लंगड़े जजिया से मुक्त थे। इस कर के लिए समस्त हिन्दू जनता को तीन वर्गों में विभक्त किया गया था। पहले वर्ग को 48 दिरहम, दूसरे को 24 दिरहम और तीसरे को 12 दिरहम कर चुकाना पड़ता था।

4.3.1.2 आय-कर

आयात पर भी कर लगता था, जिसकी दर व्यापारिक वस्तुओं के लिए 2.5 प्रतिशत और घोड़ों के लिए 5 प्रतिशत थी। आयात-कर की दर गैर-मुसलमानों के लिए मुसलमानों से दूनी थी। इसके अतिरिक्त मकान-कर, चरागाह-कर, पानी पर कर तथा अन्य साधारण कर भी वसूल किये जाते थे। खनिज पदार्थों तथा गढ़े धन का 1/5 राजकोष में जमा करना होता था। लावारिस लोगों की सम्पत्ति भी राज्य की हो जाती थी। आय के एक अन्य महत्वपूर्ण साधन के अंतर्गत प्रतिवर्ष सुल्तान को जनता, पदाधिकारियों तथा अमीरों से बहुत सा धन भेंट के रूप में मिलता था।

4.3.1.3 भू-राजस्व

दिल्ली सल्तनत की आय का सबसे महत्वपूर्ण साधन, भू-राजस्व या लगान था था। भूमि को चार प्रमुख वर्गों में विभाजित किया गया था, यथा- 1. खालसा भूमि, 2. मुक्तियों की भूमि जो उन्हें कुछ निश्चित वर्षों अथवा जीवन भर के लिए दे दी जाती थी , 3. अधीनस्थ हिन्दू सामन्तों के राज्य की भूमि और 4. मुसलमान विद्वान तथा सन्तों को इनाम अथवा मिल्क अथवा वक्फ के रूप में दी गयी भूमि।

खालसा भूमि का प्रबन्ध सीधा केन्द्रीय सरकार द्वारा होता था किन्तु सरकार प्रत्येक किसान से सीधा नहीं, बल्कि चौधरी, मुकद्दम, खुत आदि स्थानीय राजस्व पदाधिकारियों द्वारा भूमि कर वसूल करती थी। ये पदाधिकारी किसानों से लगान वसूल करते थे और हर एक शिक में आमिल नाम का एक पदाधिकारी रहता, जो कर संग्रहित कर राजकोष में जमा करता था। राजस्व की दर उपज के आधार पर सावधानी से हिसाब लगाकर नहीं, बल्कि अनुमान से ही निश्चित की जाती थी। इक्ता में राजस्व निर्धारित तथा वूसल करने का काम मुक्ती का था। वह अपना भाग काटकर बचत को केन्द्रीय सरकार के कोष में जमा कर देता था। मुक्ती पर नियंत्रण के लिए सुल्तान प्रत्येक इक्ते में ख्वाजा नामक एक पदाधिकारी को नियुक्त करता था जिसका काम राजस्व वसूली की देखरेख करना

तथा मुक्ती पर नियन्त्रण रखना था। गुप्तचरों के कारण ख्वाजा तथा मुक्ती में झगड़ा होने की सम्भावना कम रहती थी, क्योंकि वे स्थानीय पदाधिकारियों के कामों की खबरें केन्द्र सरकार को देते थे। अधीन हिन्दू राजा अपने अपने राज्यों में पूर्ण स्वायत्तता का उपभोग करते थे। उन्हें केवल सुल्तान को कर देना पड़ता था। जमींदार भी सरकार को निश्चित कर दिया करते थे और उनके अधिकार क्षेत्रों में रहने वाले किसानों को अपने जमीदारों को छोड़कर अन्य किसी अधिकारी से सम्बन्ध नहीं था। वक्फ अथवा इनाम के रूप में दी गयी भूमि राजस्व से मुक्त थी।

अलाउद्दीन खलजी पहला सुल्तान था जिसने राजस्व नीति तथा व्यवस्था में महत्वपूर्ण परिवर्तन किये । उसकी नीति दो मुख्य सिद्धान्तों पर आधारित थी- 1. राज्य की आय में अधिक से अधिक वृद्धि करना और 2. लोगों को आर्थिक अभाव की दशा में रखना जिससे वे विद्रोह अथवा आज्ञा के उल्लंघन का विचार भी न कर सके। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए उसने निम्नलिखित उपाय कियेः

सबसे पहले उसने मुसलमान अमीरों की तथा मिल्क, इनाम ,इद्रात और वक्फ के रूप में धर्म के नाम पर दी गयी भूमि को जब्त कर लिया। इस प्रकार की अधिकतर भूमि पर राज्यका अधिकार हो गया, किन्तु कुछ लोग पूर्ववत अपने अधिकारों का उपभोग करते रहे। मुकद्दम, खुत,चौधरी आदि राजस्व पदाधिकारी जो सभी हिन्दू थे, उनको जो विशेषाधिकार मिले हुए थे उनसे छीन लिये गये और अब उन्हें भी अन्य लोगों की भांति अपनी भूमि पर राजस्व तथा मकान और चरागाह कर देने पड़ते थे। भू-राजस्व की दर उपज का 1/2 भाग निर्धारित कर दी गयी। अलाउद्दीन ने भू-राजस्व तथा अन्य विद्यमान करों के अतिरिक्त भी किसानों पर मकान कर तथा चरागाह कर लगाये और जजिया और जकात पूर्व की भांति ही था। अलाउद्दीन ने भूमि की वास्तविक उपज जानने के लिए भूमि की नाप करने की परिपाटी प्रचलित की और पटवारियों के अभिलेखों की जांच करवायी, जिससे कि राजस्व विभाग लगान निर्धारित करने के लिए सही जानकारी प्राप्त कर सके। अलाउद्दीन ने सब प्रकार का राजस्व कठोरता से वसूल करने के लिए उसने एक विभाग का निर्माण किया और फसल की किसी प्रकार की हानि होने पर भी राजस्व में छूट देने का नियम नहीं रखा।

अलाउद्दीन की नीति अत्यधिक कठोर तथा अप्रिय थी इसलिए उसके उत्तराधिकारी उसका अनुसरण नहीं कर सके। उसके अनेक कठोर नियम त्याग दिये गये, किन्तु उसके द्वारा निश्चित की गयी लगान की दर में परिवर्तन नहीं किया गया। गियासुद्दीन तुगलक ने भू-राजस्व कर की दर किसी प्रकार से नहीं घटायी और वह पूर्ववत् उपज का 1/2 कायम रही । गियासुद्दीन तुगलक ने फसल को प्राकृतिक अथवा अन्य किन्हीं कारणों से हानि होने पर छूट देने के सिद्धान्त को स्वीकार किया और उचित अनुपात में राजस्व की छूट दी। गियासुद्दीन तुगलक ने खुत, मुकद्दम और चौधरी लोगों को भूमि कर तथा चरागाह कर से मुक्त कर दिया। गियासुद्दीन तुगलक ने नियम बनाया कि किसी इक्ते में

1 वर्ष में 1/10 अथवा 1/11 से अधिक राजस्व में वृद्धि न की जाय। किंतु गियासुद्दीन की राजस्व नीति में दो मुख्य दोष थे। एक तो गियासुद्दीन तुगलक ने भूमि की नाप कराने की परिपाटी त्याग दी और पूर्ववत अनुमति से राजस्व निर्धारित करने की नीति को अपनाया। दूसरे, गियासुद्दीन तुगलक ने सैनिक तथा असैनिक पदाधिकारियों को जागीरें देने की प्रथा को पुनः प्रचलित कर दिया।

मुहम्मद तुगलक राजस्व शासन को सुव्यवस्थित करने का इच्छुक था। उसकी आज्ञानुसार राजस्व विभाग ने सल्तनत की आय और व्यय का विस्तृत लेखा तैयार करना आरम्भ किया, जिससे राज्य में एक सी राजस्व व्यवस्था स्थापित की जा सके और कोई गांव भूमि कर से न बच सके। किन्तु यह कार्य अधूरा ही रह गया। उसका दूसरा प्रयोग भूमि कर की दर पहले की भॉति 50 प्रतिशत ही कायम रही। रैयतों ने इस नीति के विरूद्ध घोर असन्तोष प्रकट किया किन्तु सुल्तान ने बढ़े हुए करों को वसूल करना जारी रखा। अनावृष्टि के कारण दुर्भिक्ष पड़ गया जिसकी भी उसने चिन्ता नहीं की। परिणामस्वरूप भयंकर विद्रोह उठ खड़ा हुआ, किन्तु सुल्तान ने अपने अध्यादेश को वापस नहीं लिया। बाद में उसने तकावी ऋण बांटा और सिंचाई के लिए कुएं भी खुदवाये किन्तु तब तक बहुत देर हो चुकी थी। अतः दोआब का सम्पूर्ण प्रदेश बरबाद हो गया। सुल्तान का एक अन्य सुधार था, कृषि विभाग की स्थापना करना, जिसे दीवाने-कोही करते थे। इसका उद्देश्य कृषि के क्षेत्र में विस्तार करना था, किन्तु यह योजना भी निष्फल रही।

फीरोज तुगलक के सिंहासन पर बैठने के समय से दिल्ली सल्तनत की कृषि नीति का एक नया युग आरम्भ हुआ। उसने राजस्व सम्बन्धी विषयों की ओर ध्यान दिया और जनता की भौतिक अभिवृद्धि के लिए हृदय से प्रयत्न किया। उसने तकावी ऋण, माफ कर दिया, राजस्व विभाग के पदाधिकारियों के वेतन बड़ा दिये और उन शारीरिक यातनाओं को बन्द कर दिया जो सूबेदारों और राजस्व पदाधिकारियों को भुगतनी पड़ती थी। इसके अतिरिक्त उसने राजस्व सम्बन्धी लेखों की बड़ी सावधानी और परिश्रम से जांच करवायी और समस्त खालसा भूमि का राजस्व स्थारी रूप से निश्चित कर दिया। फीरोज तुगलक ने 24 कष्टप्रद कर हटा दिये जिनमें घृणित मकान कर, तथा चरागाह कर भी सम्मिलित थे। कुरान में बताये गये केवल पांच कर खराज, खम्स, जजिया, जकात तथा सिंचाई कर कायम रखे। फीरोज तुगलक ने खेती की सिंचाई के लिए पांच नहरों का निर्माण कराया और अनेक कुएं खुदवाये। फीरोज तुगलक ने गन्ना, तिलहन, अफीम आदि उत्तम फसलों की कृषि को प्रोत्साहन दिया। फीरोज तुगलक ने अनेक बाग लगवाये और फलों के उत्पादन को बढ़ाने का प्रयत्न किया। इन सुधारों से राज्य की आय में बहुत वृद्धि और सामान्य जनता की आर्थिक दशा में उन्नति हुई।

किन्तु फीरोज की राजस्व व्यवस्था में तीन दोष थे 1-भू-राजस्व को ठेके पर उठाने के सिद्धान्त को पुनः लागू करना, 2. भू राजस्व के रूप में वेतन देना और पदों को बेचने की आज्ञा देना तथा 3.जजिया के क्षेत्र में वृद्धि करना और कठोरता से उसे वसूल करना।

जब लोदियों के हाथों में राजशक्ति आयी तो उन्होंने अपने राज्य की समस्त भूमि महत्वपूर्ण अफगान परिवारों में बांट दी। खालसा भूमि का क्षेत्र तथा महत्व बहुत कम हो गया। सिकन्दर लोदी ने भूमि की नाप करने की परिपाटी पुनः प्रचलित करने का प्रयत्न किया, अन्यथा उसने राजस्व नियमों तथा उपनियमों में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं किया।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

कृपया निम्नांकित प्रश्नों के समक्ष सत्य अथवा असत्य लिखिए।

1. सल्तनत-युग की वित्त-नीति शियाओं की हनीफी शाखा के वित्त सिद्धान्तों पर आधारित थी

2. मुहम्मद तुगलक की बाज़ार नियन्त्रण की नीति की अनेक अर्थशास्त्री प्रशंसा करते हैं

3. जकात धार्मिक कर था इसकी दर 5.5 प्रतिशत थी

4. आयात कर की दर व्यापारिक वस्तुओं के लिए 2.5 प्रतिशत थी

5. अलाउद्दीन ने भू-राजस्व की दर उपज का 1/2 भाग निर्धारित की

6. फीरोज तुगलक ने कुरान में बताये गये केवल पांच कर खराज, खम्स, जजिया, जकात तथा सिंचाई कर लगाये थे

4.3.2 व्यय के साधन

सल्तनत काल में व्यय की मुख्य मदें थीं, सुल्तान या शाही परिवार का व्यय, सैनिक के वेतन,भत्ते इत्यादि पर खर्च तथा असैनिक सेवाओं पर व्यय, धर्मस्व तथा दान, युद्ध और विद्रोह, खलीफा को बहुमूल्य भेंटें तथा भारत के बाहर धार्मिक स्थानों के लिए दान। इन सभी मदों में पर्याप्त धन व्यय होता था। आम किसानों तथा साधारण जनता की स्थिति शोचनीय थी। प्राकृतिक आपदाओं, बाढ़, सूखा तथा दैवी आपदाओं हैजा इत्यादि के समय हजारों की संख्या में जानमाल की हानि होती थी।

4.8 सारांश

भारत में प्रायः सभी स्थानों पर विभिन्न प्रकार के अन्न, दालें, फल आदि उत्पन्न किये जोते थे। अधिकांश फसलें वर्ष में दो बार और कहीं-कहीं तीन बार भी उत्पन्न की जाती थीं। इस काल में सरसुती का चावल, कन्नौज की शक्कर, मालवा का गेहूं ओर पान, ग्वालियर का गेहूं ,मालाबार के गरम मसाले, दौलताबाद के अंगूर और नाशपाती, दक्षिण भारत की सुपारी आदि प्रख्यात थी। बारबोसा ने बहमनी राज्य की समृद्धि का वर्णन किया है जबकि डामिंगो पेइस और अब्दुर्रज्जाक ने विजयनगर साम्राज्य की समृद्धि की अत्यधिक प्रशंसा की है। बारबोसा के अनुसार बंगाल में कपास, गन्ना, चावल, अदरक, आदि अत्यधिक मात्रा में होता था। दोआब का सम्पूर्ण क्षेत्र अपनी उर्वरा शक्ति के लिए प्रसिद्ध था इस प्रकार भारत के सभी हिस्सों में कृषि की स्थिति बहुत अच्छी थी।

उद्योगों की दृष्टि से भी भारत अच्छी स्थिति में था। कपड़ा उद्योग भारत का प्रमुख उद्योग था। सूती, रेशमी और उनी वस्त्रों का निर्माण बहुतायत से होता था। इसके अतिरिक्त शक्कर, कागज रत्न-उद्योग, बर्तन-निर्माण, चंदन और हाथ दॉत में दस्तकारी, आदि उद्योग फल-फूल रहे थे। व्यक्तिगत प्रयासों के अतिरिक्त सुल्तानों ने भी कारखानों का निर्माण किया था ,जहॉं उनके और अमीरों के लिए श्रेष्ठतम वस्तुऐं निर्मित की जाती थीं। नगरों और ग्रामों में श्रम संघ बने थे जो उद्योगों की उन्नति में सहायक थे।

इस प्रकार कृषि उत्पादन,उद्योगों की उपस्थिति और आन्तरिक तथा विदेशी व्यापार ने भारत के एक समृद्धशाली देश बनाया था। परंतु भारत की इस आर्थिक सम्पन्नता का मुख्य लाभ शासक और व्यापारी वर्ग ने प्राप्त किया था। जनसाधारण की स्थिति शोचनीय तो नहीं परंतु बहुत अच्छी भी नहीं थी। इसी कारण सूखा और अकाल पड़ने पर लाखों व्यक्ति मर जाते थे ओर राज्य को दान दक्षिणा अथवा तकाबी ऋण देने की आवश्यकता पड जाती थी।

4.9 पारिभाषिक शब्दावली

भूमिधर - भू-स्वामी

दिरहम - मुद्रा का एक प्रकार

मिल्क - स्वामित्व अधिकार

इनाम - निशुल्क भेंट

इद्रात - पेंशन

वक्फ - धर्मस्व

4.10 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

इकाई 4.3.1.3 के प्रश्न संख्या 1 का उत्तर -असत्य

इकाई 4.3.1.3 के प्रश्न संख्या 2 का उत्तर -असत्य

इकाई 4.3.1.3 के प्रश्न संख्या 3 का उत्तर -असत्य

इकाई 4.3.1.3 के प्रश्न संख्या 4 का उत्तर -सत्य

इकाई 4.3.1.3 के प्रश्न संख्या 5 का उत्तर -सत्य

इकाई 4.3.1.3 के प्रश्न संख्या 6 का उत्तर -सत्य

4.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Habibullah, A.B.M. – *Foundation of Muslim Rule in India*
2. Prasad Ishwari – *History of Medieval India*
3. Prasad Ishwari – *A History of the Quraunah Turks in India*
4. Srivastav, A.L. – *The Sultanat of Delhi*
5. Majumdar (General Editor) – *Struggle for Empire*
6. Elliot & Dowson – *The History of India as Told by Its Own Historians*
7. Hodivala, S. H. – *Studies in IndoMuslim History*

4.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Minhaj-i-Siraj – *Tabqat-i-Nasiri* (Eng Tr. Raverty, H. G.)
2. Isami – *Futu-us-Salatin* (Edited by Husain, A. M.)
2. Lane Poole – *The Mohammadan Dynasties*
3. Lane Poole – *Medieval India under Mohammadan Rule*

4.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. सल्तनतकालीन अर्थव्यवस्था पर प्रकाश डालिए।

इकाई एक-मुगल राज्य व्यवस्थाः बाबर , हुमायूं तथा शेरशाह

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 बादशाह बाबर
1.3.1 बाबर का काबुल पर अधिकार
1.3.2 भारत में राजनीतिक अस्थिरता का लाभ उठाकर पंजाब पर आक्रमण
1.3.3 पानीपत का प्रथम युद्ध
1.3.4 भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना
1.3.4.1 पादशाह बाबर
1.3.4.2 खनवा, चन्देरी तथा घाघरा के युद्ध
1.3.4.3 शासक के रूप में बाबर का मूल्यांकन
1.4 बादशाह हुमायूं
1.4.1 प्रारम्भिक कठिनाइयां
1.4.2 बहादुर शाह से संघर्ष
1.4.3 शेर खाँ से संघर्ष
1.4.4 हुमायूं का पतन और हिन्दुस्तान से निष्कासन
1.4.5 हिन्दुस्तान पर पुनराधिकार एवं मृत्यु
1.4.6 शासक के रूप में हुमायूं का आकलन
1.5 बादशाह शेर शाह
1.5.1 फ़रीद से लेकर शेर शाह बनने की जीवन-यात्रा
1.5.2 शेर शाह की साम्राज्य विस्तार की नीति
1.5.3 शेर शाह का प्रशासन
1.5.3.1 केन्द्रीय प्रशासन
1.5.3.2 प्रान्तीय तथा सरकार प्रशासन
1.5.3.3 परगना तथा ग्राम प्रशासन
1.5.3.4 सैन्य-प्रशासन
1.5.3.5 न्याय प्रशासन एवं शान्ति व्यवस्था
1.5.3.6 भू-राजस्व प्रशासन
1.5.3.7 मुद्रा सुधार
1.5.3.8 व्यापार एवं वाणिज्य का विकास
1.5.3.9 सार्वजनिक निर्माण के कार्य
1.5.3.10 शासक के रूप में शेर शाह का आकलन
1.6 सारांश
1.7 पारिभाषिक शब्दावली
1.8 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर
1.9 संदर्भ ग्रंथ सूची
1.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.11 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

भारत में सन् 1526 में मुगल साम्राज्य की स्थापना हुई। राजनीतिक स्थिरता, शान्ति एवं प्रशासनिक सुव्यवस्था, आर्थिक समृद्धि, सांस्कृतिक विकास तथा साम्राज्य विस्तार की दृष्टि से भारतीय इतिहास में एक नए युग का प्रारम्भ हुआ। काबुल का शासक बाबर, पिता की ओर से तैमूर का तथा माँ की ओर से चंगेज़ खाँ का वंशज था। भारत की राजनीतिक अस्थिरता का लाभ उठाकर उसने पानीपत के प्रथम युद्ध में इब्राहीम लोदी को पराजित कर भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना की तथा अगले वर्ष उसने खनवा के युद्ध में राजपूत राज्य संघ के प्रमुख व मेवाड़ के शासक राणा सांगा को पराजित किया।

हिन्दुस्तान के पहले बादशाह के रूप में बाबर ने पूर्ण सम्प्रभुता प्राप्त शासक की अवधारणा का विकास किया। हुमायूं बाबर और अकबर महान के मध्य एक कमज़ोर कड़ी था। दस वर्षों तक वह अपने आलस्य और विलासप्रियता, भाइयों तथा अपने अमीरों के विश्वासघात व बहादुर शाह के विरोध से जूझता रहा लेकिन इस अवधि में शेर खाँ उसके पतन और उसके भारत से निष्कासन का कारण बना। 15 वर्ष के अंतराल के बाद हुमायूं ने एक बार फिर दिल्ली पर अधिकार कर लिया किन्तु छह महीने बाद ही उसकी मृत्यु हो गई।

शेर खाँ, शेर शाह के रूप में सन् 1540 में बादशाह बना। अपने पाँच वर्षों के सुशासन से उसने इतिहास में एक अमिट छाप छोड़ी है। प्रशासनिक सुव्यवस्था और कल्याणकारी राज्य की कल्पना को साकार करने के प्रयास की दृष्टि से हम शेर शाह को अकबर का मार्गदर्शक कह सकते हैं। ब्रिटिश भारतीय शासकों ने भी अपने प्रशासन में इस अफ़गान शासक की अनेक नीतियों का अनुकरण किया था।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य आपको मुगल साम्राज्य की स्थापना की परिस्थितियों से लेकर शासक के रूप में बाबर, हुमायूं तथा शेरशाह के कार्यों की जानकारी देना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1- बाबर द्वारा भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना तथा पूर्ण सम्प्रभुता प्राप्त शासक की अवधारणा का विकास।

2. शासक के रूप में बाबर का आकलन

3. बादशाह हुमायूं की कठिनाइयां, उसकी असफलता और हिन्दुस्तान के बादशाह के रूप में उसकी वापसी।

4. शेर शाह का उत्थान तथा एक प्रशासक के रूप में भारत को उसकी देन।

1.3 बादशाह बाबर

1.3.1 बाबर का काबुल पर अधिकार

उमर शेख मिर्ज़ा का पुत्र और फ़रगना का शासक बाबर, पिता की ओर से तैमूर का तथा माँ की ओर से चंगेज़ खाँ का वंशज था। उज़बेक शैबानी खाँ से पराजित होने और अपने फ़रगना हाथ से चले जाने के बाद बाद वह पूर्व की ओर अग्रसर हुआ। सन् 1504 में उसने काबुल तथा गज़नी पर अधिकार कर लिया। सन् 1507 में उसने पूर्ण सम्प्रभुता प्राप्त शासक का ज्ञापन करने वालीपादशाह की उपाधि धारण की। सन् 1513-14 के समरकन्द अभियान में असफल होने के बाद बाबर ने मध्य एशिया पर विजय की योजना का हमेशा के लिए परित्याग कर दिया और सन् 1525 तक वह अपने सैनिक अभियानों को छोड़कर शेष समय काबुल में ही बना रहा।

1.3.2 भारत में राजनीतिक अस्थिरता का लाभ उठाकर पंजाब पर आक्रमण

काबुल पर अधिकार करने के तुरन्त बाद से ही बाबर भारत की समृद्धि और उसकी साधन-सम्पन्नता की ओर आकर्षित हो गया था। अपने पूर्वज तैमूर के भारत अभियान ने उसे भी भारत पर आक्रमण करने की प्रेरणा मिली थी। अपनी आत्मकथा तुज़ुक-ए-बाबरी में बाबर ने अपनी काबुल विजय के तुरन्त बाद से ही हिन्दुस्तान फ़तेह करने की अपनी महत्वाकांक्षा का उल्लेख किया है। काबुल विजय के बाद वह रसद प्राप्त करने के उद्देश्य से दो बार हिन्दुस्तान आया था।

1. सन् 1519 में उसने यूसुफ़जाही जाति को राजस्व देने के लिए विवश किया और बाजौर व भेरा पर आक्रमण कर उन्हें लूटा व उन पर अधिकार कर लिया। उसने अपने राजदूत मुल्ला मुर्शिद को इब्राहीम लोदी के पास तैमूर के वंशज के रूप में पंजाब के पश्चिमी क्षेत्र पर अपने वैधानिक अधिकार का दावा पेश करने के लिए भेजा।

2. सन् 1519 में ही यूसुफ़जाहियों के दमन के लिए बाबर ने दुबारा पंजाब पर आक्रमण किया।

3. भेरा के विद्रोहियों के दमन हेतु बाबर ने सन् 1520 में पंजाब पर तीसरा आक्रमण किया।

4. बाबर ने पंजाब पर चौथा आक्रमण सन् 1524 में पंजाब के सूबेदार दौलत खाँ लोदी और इब्राहीम लोदी के चाचा आलम खाँ लोदी के निमन्त्रण पर किया था। इसमें उसने लाहौर व दीपलपुर पर अधिकार कर लिया।

5. बाबर अपने अन्तिम तथा पाँचवे आक्रमण के लिए अपने तोपखाने और 12000 की सेना के साथ दिसम्बर, 1525 में पंजाब पहुंचा और उस पर अधिकार कर लिया।

1.3.3 पानीपत का प्रथम युद्ध

आलम खाँ लोदी तथा इब्राहीम लोदी से असन्तुष्ट अनेक लोदी अमीरों ने बाबर से दिल्ली पर अधिकार करने हेतु अभियान करने का अनुरोध किया। पंजाब पर अधिकार करने के बाद बाबर सरहिन्द और अम्बाला होता हुआ पानीपत पहुंचा। तुज़ुक-ए-बाबरी में बाबर के अनुसार उसकी सेना में 12000 और इब्राहीम की सेना में 100000 सैनिक थे किन्तु यह कथन अतिशयोक्तिपूर्ण है। बाबर की सेना कम से कम 25000 की थी। 21 अप्रैल, 1526 को पानीपत पानीपत का प्रथम युद्ध हुआ। इब्राहीम लोदी परम्परागत मध्यकालीन आक्रामक रणनीति अपना रहा था जब कि बाबर ने आक्रामक एवं रक्षात्मक दोनों रणनीतियां अपनाई थीं। अग्रिम टुकड़ी के लिए अराबा और तोपचियों की रक्षा के लिए टूरा (बचाव स्थान) बनाए गए थे। आक्रामक रणनीति के अन्तर्गत उज़बेग शैबानी खाँ से सीखी हुई तुलुगमा पद्धति का प्रयोग होना था। इब्राहीम की सेना में बन्दूकों का अभाव था तथा तोपें थी ही नहीं। बाबर की सेना ने इब्राहीम लोदी की सेना का भयंकर विनाश किया। इस एक तरफ़ा युद्ध में बाबर विजयी हुआ और इब्राहीम लोदी लड़ते हुए मारा गया।

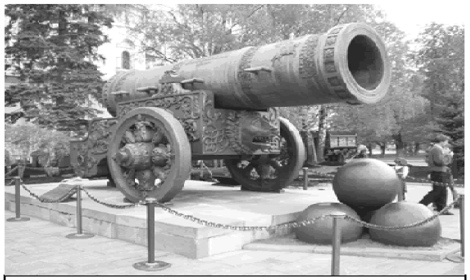

मुगलकालीन तोप

1.3.4 भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना

1.3.4.1 पादशाह बाबर

पानीपत का निर्णायक युद्ध इब्राहीम लोदी, अफ़गान शक्ति तथा दिल्ली सल्तनत के लिए विनाशकारी सिद्ध हुआ। इस युद्ध के परिणामस्वरूप भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना हुई। बाबर ने सुल्तान के स्थान पर पादशाह की उपाधि धारण की। पादशाह अथवा बादशाह पद, सुल्तान पद की तुलना में अधिक मान, प्रतिष्ठा और शक्ति का पद था। इस नए राजत्व के सिद्धान्त के अनुसार शासक पूर्ण सम्प्रभुता प्राप्त हुआ और सिद्धान्तः उसको खलीफ़ा से वैधानिक मान्यता प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं रही।

1.3.4.2 खनवा, चन्देरी तथा घाघरा के युद्ध

1. मेवाड़ के शासक राणा संग्राम सिंह के नेतृत्व में राजपूत राज्य संघ उत्तर भारत की सर्व-प्रमुख शक्ति के रूप में स्थापित हो चुका था। अपनी सत्ता को स्थायित्व प्रदान करने के लिए बाबर को राजपूत शक्ति को हराना आवश्यक था। कालपी, बयाना और धौलपुर पर मुगलों द्वारा अधिकार किए जाने के विरोध में राजपूतों और मुगलों में युद्ध हुआ। राणा संग्राम सिंह की विजयों से आतंकित एवं हतोत्साहित मुगल सेना में जोश भरने के लिए बाबर ने न केवल एक ओजस्वी भाषण दिया अपितु राजपूतों के विरुद्ध इस युद्ध को जिहाद का नाम दिया। 16 मार्च, 1527 को खनवा में हुए 10 घण्टों तक चले युद्ध में अपने तोपखाने के बल पर मुगलों की विजय हुई। इस युद्ध के बाद राणा संग्राम सिंह के नेतृत्व में संगठित राजपूत राज्य संघ नष्ट हो गया और मुगलों के लिए हिन्दुस्तान में सबसे बड़ा सबसे बड़ा खतरा दूर हो गया।

2. चन्देरी को मालवा तथा राजपूताने का प्रवेश द्वार कहा जाता था। बाबर ने चन्देरी की ओर अभियान कर 21 जनवरी, 1528 को मेदिनीराय को पराजित किया।

3. बंगाल के शासक नुसरत शाह के समर्थन से पूर्व में अफ़गान शक्ति के पुनर्गठन को असफल करने के उद्देश्य से बाबर ने जनवरी, 1529 में आगरा से पूर्व की ओर प्रस्थान किया। 6 मई, 1529 को घाघरा के युद्ध में उसने महमूद खाँ लोदी के नेतृत्व वाली अफ़गान सेना को पराजित किया। नुसरत शाह से सन्धि कर बाबर ने यह आश्वासन प्राप्त किया कि वह मुगलों के विरुद्ध अफ़गानों को कोई सहयोग नहीं देगा।

1.3.4.3 शासक के रूप में बाबर का मूल्यांकन

26 दिसम्बर, 1530 को बाबर की मृत्यु हो गई। भारत में अपने अल्प शासनकाल में बाबर ने एक नए राजत्व के सिद्धान्त का पोषण करने वाले एक साम्राज्य की स्थापना जिसका कि विस्तार अफ़गानिस्तान से लेकर बिहार तक था। उसने मध्यकालीन भारतीय सैन्य-शक्ति के स्तर को अपने तोपखाने के बल पर एक नए शिखर तक पहुंचा दिया। राजपूतों के विरुद्ध युद्धों को बाबर ने जिहाद का नाम अवश्य दिया किन्तु उसने एक धर्मांध मुस्लिम शासक की भांति धार्मिक उत्पीड़न के लिए कोई अभियान नहीं किया। अपने नव-स्थापित साम्राज्य के प्रशासनिक ढांचे में उसने आमूल परिवर्तन न करके अपनी व्यावहारिक सद्बुद्धि का परिचय दिया। उसने अपने अधिकारियों को यह निर्देश दिया कि वो अपने प्रशासनिक कार्यों के निर्वाहन में स्थानीय परम्पराओं को पर्याप्त सम्मान दें किन्तु उसके कामचलाऊ प्रशासन में प्रजा के हितों की नितान्त उपेक्षा की गई थी और उसके राज्य की आय मुख्यतः युद्धों के द्वारा लूटी गई राशि पर आधारित थी। वह अपने राज्य को आर्थिक तथा राजनीतिक स्थायित्व देने में असफल रहा। शेर शाह, मालदेव तथा हेमू विक्रमादित्य के परवर्ती

काल में उत्थान से यह सिद्ध हो गया कि उसने अफ़गान तथा राजपूत शक्तियों के पूर्ण दमन में सफलता प्राप्त नहीं की थी। उसने हुमायूं के लिए चुनौतियों से भरा साम्राज्य छोड़ा था और ऊपर से उसने अपने पुत्रों में अपने साम्राज्य का विभाजन कर हुमायूं के लिए और भी अधिक कठिनाइयां खड़ी कर दी थीं।

1.4 बादशाह हुमायूं

1.4.1 प्रारम्भिक कठिनाइयां

सन् 1530 में बाबर की मुत्यु के बाद हुमायूं को बादशाह बनते ही अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

1. हुमायूं को विरासत में आर्थिक रूप से दुर्बल और प्रशासनिक स्तर पर अव्यवस्थित एवं राजनीतिक दृष्टि से अस्थिर एक ऐसा साम्राज्य मिला था जो कि केवल सैन्य-बल पर टिका हुआ था। उसकी सेना मुगलों, तुर्कों, उज़बेको, ईरानियों, अफ़गानों और हिन्दुस्तानियों का जमावड़ा थी और इसमें जातीय, भाषागत एवं सांस्कृतिक भिन्नता के कारण एकता और संगठन का अभाव था।

2. बाबर ने हमायूं को अपना उत्तराधिकारी घोषित करने के साथ ही अपने शेष तीन बेटों - कामरान, अस्करी और हिन्दाल में भी अपना साम्राज्य विभाजित कर दिया था। कामरान को काबुल और कान्धार का शासक बनाया गया था। कामरान ने प्रारम्भ से ही हुमायूं के लिए कठिनाइयां खड़ी कर दी थीं। अस्करी और हिन्दाल भी कामरान के मोहरे बन कर हुमायूं को परेशान कर रहे थे।

3. हुमायूं के अन्य सम्बन्धी - मुहम्मद ज़मां, मुहम्मद सुल्तान मिर्ज़ा तथा मीर मुहम्मद महदी ख्वाजा न केवल शक्तिशाली, साधन-सम्पन्न थे अपितु स्वयं बादशाह बनने की महत्वाकांक्षा भी रखते थे। ये सभी नए बादशाह के प्रति निष्ठावान नहीं थे।

4. बंगाल के शासक नुसरत शाह ने मुगलों से पराजित अफ़गानों को शरण दी थी और इब्राहीम लोदी की पुत्री से विवाह कर दिल्ली के तख्त पर स्वयं अधिकार करने की योजना भी बनाई थी।

5. सिंध और मुल्तान के अरघुन शासकों से बाबर ने काबुल छीन लिया था और खनवा के युद्ध में विजय के बाद उन्हें अपनी आधीनता स्वीकार करने के लिए विवश किया था। बंगाल और गुजरात में बादशाह हुमायूं की व्यस्तता देखकर अरघुन शासकों ने स्वयं को न केवल स्वतन्त्र घोषित किया अपितु हुमायूं के विद्रोही भाई कामरान मिर्ज़ा से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध भी स्थापित कर लिए थे।

5. भारत में नवजात मुगल साम्राज्य को पूर्व में शेर खाँ के नेतृत्व में अफ़गान शक्ति के पुनर्गठन से सबसे बड़ा खतरा था।

6. दक्षिण में गुजरात का शासक बहादुर शाह मालवा और चित्तौड़ पर अधिकार करना चाहता था और फिर उत्तर भारत की ओर भी बढ़ना चाहता था।

1.4.2 बहादुर शाह से संघर्ष

गुजरात का शासक बहादुरशाह मालवा तथा राजपूताने पर अधिकार करना चाहता था। उसने शेर खाँ से मित्रता कर ली और बागी मुगल ज़मां मिर्ज़ा को अपने यहां शरण दी और हुमायूं द्वारा उसको मुगलों को सौंपने की मांग ठुकरा दी। सन् 1535 में जब बहादुर शाह ने चित्तौड़ पर घेरा डाला तो वहां की रानी कर्णवती ने हुमायूं से सहायता मांगी। हुमायूं बहादुर शाह के विरुद्ध अभियान के लिए निकला किन्तु एक विधर्मी से जिहाद करते हुए एक मुसलमान के विरुद्ध उसने युद्ध न करने का मूर्खतापूर्ण निर्णय लेकर एक ओर जहां राजपूतों से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने का मौका खा दिया, वहीं उसने मुश्किल में पड़े हुए बहादुर शाह को चित्तौड़ जीतने का अवसर भी प्रदान कर दिया। हुमायूं और बहादुर शाह की सेनाओं का मन्दसौर में आमना-सामना हुआ जिसमें मुगल सेना की विजय हुई । भागते हुए बहादुर शाह का हुमायूं ने मन्दसौर, चम्पानेर और खम्भात तक पीछा किया और फिर अहमदाबाद पर अधिकार कर लिया। अस्करी को गुजरात का सूबेदार नियुक्त किया गया किन्तु एक वर्ष के अन्दर ही मालवा तथा गुजरात की मुगल विजय निरर्थक सिद्ध हुई और बहादुर शाह को एक बार फिर गुजरात पर अधिकार करने का अवसर मिल गया।

1.4.3 शेर खाँ से संघर्ष

अगस्त, 1532 में दौहरिया के युद्ध में मुगलों ने अफ़गानों को पराजित कर बिहार-बंगाल के प्रवेश द्वार चुनार के किले पर अपना दावा किया था जिस पर कि शेर खाँ ने अधिकार कर लिया था। शेर खाँ बाबर का सैनिक पदाधिकारी रह चुका था। उसने हुमायूं को अपना स्वामी स्वीकार करते हुए चुनार का किला उसी के पास रहने देने की प्रार्थना की। हुमायूं ने किले को घेर लिया परन्तु छह महीने के घेरा डालने के बाद भी वह उस पर अधिकार नहीं कर सका। इधर ग्वालियर पर बहादुरशाह द्वारा कब्ज़ा किए जाने से परेशान हुमायूं उसे रोकने के लिए वापस जाना चाहता था। शेर खाँ द्वारा मुगलों की दिखावे मात्र की आधीनता और ज़मानत के तौर पर अपने बेटे कुतुब खाँ को हुमायूं को सौंपने के प्रस्ताव के बदले में हुमायूं ने चुनार का किला उसी के पास रहने दिया और वह स्वयं आगरा लौट गया। गुजरात में हुमायूं की व्यस्तता का लाभ उठाकर शेर खाँ ने दक्षिणी बिहार पर अधिकार कर लिया। उसने हुमायूं को कोई भेंट नहीं भेजी और हुमायूं के कब्ज़े से कुतुब खाँ के वापस निकल आने के बाद सन् 1534 में बंगाल के शासक महमूद शाह को सूरजगढ़ के युद्ध में पराजित कर उससे भारी

रकम वसूली। सन् 1537 में शेर खाँ द्वारा बंगाल पर दुबारा आक्रमण के समय वहां के शासक महमूद शाह के अनुरोध पर हुमायूं सन् 1537 में शेर खाँ के दमन हेतु पूर्व की ओर बढ़ा लेकिन बंगाल में उससे निपटने से पहले हुमायूं ने नवम्बर, 1537 में चुनार किले का घेरा डाला और जून, 1538 में उसे जीत लिया। इस बीच शेर खाँ ने बंगाल पर अधिकार कर लिया था। शेर खाँ के दमन के उद्देश्य से मई, 1538 में हुमायूं बंगाल के लिए निकला। शेर खाँ के पुत्र जलाल खाँ द्वारा उसका मार्ग अवरुद्ध किए जाने के कारण वह चार महीने बाद बंगाल की राजधानी गौड़ पहुंच सका। शेर खाँ तब तक रोहतास गढ़ पहुंच गया था। हुमायूं ने चार महीने का समय गौड़ में व्यतीत किया। उसके द्वारा बिहार की रक्षा के लिए नियुक्त उसका भाई हिन्दाल बिहार को असुरक्षित छोड़कर आगरा चला गया और वहां उसने तख्त पर अधिकार कर लिया। आगरा वापस लौटने के लिए उत्सुक हुमायूं ने चौसा से शेर खाँ के समक्ष अप्रैल, 1539 को सन्धि का प्रस्ताव भेजा जिसे स्वीकार करने में टालमटोल करते हुए उसने तीन महीने बिता दिए। बरसात के मौसम में, पश्चिम से पूरी तरह कटे हुए, रसद की कमी से जूझ रहे, शेर खाँ सन्धि की प्रत्याशा के कारण पूर्णतया असावधान हुमायूं पर 25 जून की रात में हमला कर दिया और मुगल सेना को पराजित किया। भारी नुक्सान उठाकर हुमायूं जान बचाकर वापस आगरा पहुंच सका। चौसा के युद्ध के बाद शेर खाँ ने शेर शाह की उपाधि धारण कर ली। शेर शाह से युद्ध करने हेतु हुमायूं ने अपनी सेना का पुनर्संगठन किया। अप्रैल, 1540 तक शेर शाह बंगाल से बढ़ते हुए कन्नौज पहुंच चुका था और अपनी सेना के साथ हुमायूं भी आगरा से वहां पहुंच गया था। कन्नौज में दोनों सेनाएं एक महीने तक एक-दूसरे के सामने थीं किन्तु हुमायूं की सेना का पड़ाव निचली सतह पर था। मई माह में अप्रत्याशित हुई बारिश से हुमायूं के शिविर में पानी भर गया और उसकी तोपें बेकार हो गईं। इसका लाभ उठाकर शेर शाह ने मुगलों पर हमला बोल दिया। 17 मई, 1540 को बिलग्राम के युद्ध में शेर शाह ने मुगल सेना को पराजित किया। शेर शाह ने सुगमता से आगरा तथा दिल्ली पर अधिकार कर लिया और फिर उसने हुमायूं को हिन्दुस्तान से पूरी तरह निष्कासित कर दिया।

1.4.4 हुमायूं का पतन और हिन्दुस्तान से निष्कासन

शेरशाह से पराजित, अपनी बादशाहत खो चुका और दिल्ली तथा आगरा से निर्वासित हुमायूं लाहौर पहुंचा किन्तु कामरान मिर्ज़ा के असहयोग के कारण वह वहां भी टिक नहीं सका। शेर शाह ने मुगलों के विरुद्ध अभियान कर लाहौर पर अधिकार कर लिया और उनको हिन्दुस्तान छोड़ने के लिए विवश किया। बादशाह शेर शाह ने पश्चिमोत्तर प्रदेश में मुगलों की वापसी की सभी सम्भावनाओं को समाप्त करने के लिए आवश्यक कदम उठाए और हुमायूं को निर्वासित जीवन व्यतीत करने के लिए मजबूर किया।

1.4.5 हिन्दुस्तान पर पुनराधिकार एवं मृत्यु

हमायं का मकबरा

ईरान के बादशाह की सहायता से हुमायूं ने अस्करी को पराजित करने के बाद कान्धार पर अधिकार कर लिया। इसके बाद उसने काबुल पर भी अधिकार कर लिया। उसने कामरान मिर्ज़ा को अपने विरुद्ध इस्लाम शाह सूर से सहायता प्राप्त करने के लिए दिल्ली की ओर प्रस्थान करने से पहले ही पकड़ कर उसको अंधा कर दिया। हिन्दाल की पहले ही मृत्यु हो चुकी थी। भाइयों की समस्याओं से मुक्त होकर अब हुमायूं ने हिन्दुस्तान की अराजकतापूर्ण स्थिति का लाभ उठा कर उसे फिर से जीतने की योजना बनाई। सन् 1554 में हुमायूं ने लाहौर पर अधिकार कर लिया। 27 अप्रैल, 1555 को सरहिन्द में उसने अफ़गान सेना को पराजित किया और 27 जुलाई, 1555 को एक विजेता के रूप में उसने दिल्ली में फिर से प्रवेश किया किन्तु ठीक छह महीने बाद 27 जनवरी, 1556 को सीढ़ियों से लुढ़कने से गम्भीर रूप से घायल होने के कारण उसकी मृत्यु हो गई।

1.4.6 शासक के रूप में हुमायूं का आकलन

1. भावुक प्रकृति के हुमायूं में व्यावहारिकता की कमी थी। उसने अपने पिता बाबर द्वारा अपने भाइयों में राज्य के बटवारे की वसीयत को स्वीकार कर अपने लिए मुश्किलें खड़ी कर दीं और स्वधर्मी शत्रु गुजरात के शासक बहादुर शाह को चित्तौड़ विजय का अवसर प्रदान कर दिया था।

2. अपनी क्षमाशीलता से उसने अपने भाइयों, विशेषकर कामरान मिर्ज़ा को बार-बार विद्रोह और षडयन्त्र करने का मौका दिया।

3. अपनी विलासप्रियता, नशा करने की लत और आलसी स्वभाव के दुर्गुणों के कारण उसने शेर खाँ को अपनी शक्ति पुनर्संगठित करने का अवसर दिया।

4. शत्रुओं और षडयन्त्रकारियों के आश्वासनों पर भरोसा कर हुमायूं ने बार-बार अपनी जड़ें खुद ही खोदी थीं। शेर खाँ, बहादुर शाह और कामरान मिर्ज़ा की बातों पर विश्वास कर उसने अपना भारी नुक्सान किया था।

5. हुमायूं एक वीर सैनिक था किन्तु उसका यह दुर्भाग्य था कि उसे बहादुर शाह और शेर खाँ जैसे योग्य शत्रु मिले थे।

6. हुमायूं में दूरदर्शिता की कमी थी और प्रशासनिक कार्यों में उसकी कोई अभिरुचि नहीं थी। सन् 1530 से 1540 तक के अपने शासनकाल में वह नवोदित मुगल साम्राज्य को सुसंगठित एवं सुदृढ़ करने में नितान्त असफल रहा।

7. 'हुमायूं' का शाब्दिक अर्थ 'भाग्यशाली' होता है किन्तु दुर्भाग्य ने कभी भी उसका पीछा नहीं छोड़ा। अपनी चारित्रिक दुर्बलताओं के कारण वह जीवन भर भटकता रहा और उसका अन्त भी सीढ़ियों से लुढ़कने के कारण हुआ।

1.5 बादशाह शेर शाह

1.5.1 फ़रीद से लेकर शेर शाह बनने की जीवन-यात्रा

फ़रीद खाँ बिहार में सहसराम और खवासपुर टांडा के अफ़गान जागीरदार हसन का ज्येष्ठतम पुत्र था। जौनपुर में उच्च शिक्षा प्राप्त कर फ़रीद खाँ ने लगभग 20 वर्षों तक अपने पिता की जागीर का कुशल प्रबन्धन किया। पारिवारिक विवाद के कारण फ़रीद खाँ आगरा चला गया। बाद में उसने बिहार के सूबेदार बहार खाँ लोहानी तदन्तर सुल्तान मुहम्मद के यहां नौकरी कर ली। सुल्तान मुहम्मद ने फ़रीद द्वारा तलवार के एक वार से शेर मारने पर उसे शेर खाँ की उपाधि दी और साथ ही उसे अपने अल्पवयस्क पुत्र का शिक्षक भी नियुक्त किया। लोहानी कबीले के अमीरों के विरोध के कारण शेर खाँ बाबर की सेना में का एक पदाधिकारी बन गया। अपनी 15 महीने की मुगल सेवा में उसने मुगल सैन्य प्रणाली का अवलोकन किया।

मुगलों की सेवा छोड़कर शेर खाँ एक बार फिर बिहार के शासक सुल्तान मुहम्मद की सेवा में आ गया और उसके पुत्र जलाल खाँ का फिर से शिक्षक बन गया। अपने पिता की मृत्यु के बाद जलाल खाँ बिहार का शासक बना किन्तु वास्तविक सत्ता उसके संरक्षक शेर खाँ के पास रही। बाद में जलाल खाँ तथा अपने विरोधी अफ़गान अमीरों को पराजित कर शेर खाँ स्वयं बिहार का शासक बन बैठा। शेर खाँ ने किस प्रकार बंगाल के शासक और हुमायूं पर विजय प्राप्त की और आगरा और दिल्ली पर अधिकार कर तथा मुगलों को हिन्दुस्तान से निष्कासित कर किस प्रकार वह शेर शाह के रूप में हिन्दुस्तान का बादशाह बना, इसका उल्लेख इसी इकाई में - 1.4.3 **शेर खाँ से संघर्ष**, शीर्षक के अन्तर्गत किया जा चुका है।

1.5.2 शेर शाह की साम्राज्य विस्तार की नीति

1. शेर शाह अपनी उत्तर-पश्चिमी सीमा की सुरक्षा कर वहां से मुगलों के आक्रमणों की सम्भावना को समाप्त करना चाहता था। इसके लिए मुगलों के मित्र गक्खरों और बलूचों को नियन्त्रित करने के लिए उसने झेलम नगर के निकट रोहतास गढ़ का निर्माण कर वहां एक विशाल अफ़गान सेना तैनात की। शेर शाह की ओर से हैबत खाँ ने बलूचियों का दमन किया।

2. बंगाल के सूबेदार खिज्र खाँ के विद्रोह को शेर शाह ने स्वयं अभियान कर कुचला।

3. सन् 1542 में ग्वालियर और मालवा पर अधिकार करने के लिए शेर शाह ने सफल अभियान किया और फिर उसने रायसीन व चन्देरी के शासक पूरनमल पर आक्रमण कर उसे पराजित किया।

4. शेर शाह के आदेश पर हैबत खाँ ने फ़तेह खाँ जाट को पराजित किया और फिर उसने मुल्तान में स्वतन्त्र शासक बन बैठे बख्सू लंगाह को पराजित किया। सिंध के शासक ने भी शेरशाह की आधीनता स्वीकार कर ली।

5. शेर शाह ने राजपूताने के सबसे शक्तिशाली मारवाड़ के मालदेव के दमन हेतु अभियान किया। मार्च, 1544 में उसने मारवाड़ के विरुद्ध सफलता प्राप्त की। मेवाड़ के विरुद्ध अभियान कर शेरशाह ने बिना युद्ध किए ही अल्पवयस्क राणा उदय सिंह को अपनी आधीनता स्वीकार करने के लिए विवश किया और चित्तौड़ दुर्ग पर अधिकार कर वहां अपने अधिकारी नियुक्त किए।

6. राजपूताने की विजय के बाद बुन्देलखण्ड पर अधिकार करने के लिए शेरशाह ने कालिन्जर के किले का घेरा डाला। एक वर्ष तक घेरा डालने के बाद बारूद से किले की दीवारों को ध्वस्त कराते समय वह विस्फोट से वह धायल हो गया किन्तु वह अपनी मृत्यु से पूर्व कालिंजर का किला जीतने में सफल रहा।

अपनी मृत्यु से पूर्व शेर शाह ने उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में विंध्याचल तक और पश्चिम में गक्खर से लेकर पूर्व में सोनारगांव तक अपने साम्राज्य का विस्तार कर लिया था।

1.5.3 शेर शाह का प्रशासन

1.5.3.1 केन्द्रीय प्रशासन

1. शेर शाह ने अफ़गान राजत्व के सिद्धान्त का तिरस्कार करते हुए तुर्कों की शासक की निरंकुशता के सिद्धान्त को अपनाया। अपने अधीनस्थों की महत्वाकांक्षाओं और उनके संसाधनों पर अंकुश लगाने के लिए शासन की समस्त शक्तियां उसने अपने हाथ में रखीं और अपने किसी भी अधिकारी को उसने स्वतन्त्र प्रभार नहीं दिया साथ ही साथ उसने किसी भी उच्च अधिकारी को एक ही स्थान

पर टिक कर अपनी शक्ति बढ़ाने का मौका न देने के लिए अधिकारियों के नियमित स्थानान्तरण की व्यवस्था की।

2. शेर शाह के केन्द्रीय प्रशासन में चार विभाग मुख्य थे -

दीवान-ए-विज़ारत का प्रमुख वज़ीर था। उसका दायित्व वित्तीय प्रशासन था और उसे प्रान्तीय वित्त प्रशासन पर भी नज़र रखनी थी।

दीवान-ए-अर्ज़ का प्रमुख आरिज़-ए-मुमालिक होता था जो कि सैन्य प्रशासन सम्भालता था।

दीवान-ए-रसालत के प्रमुख को विदेश विभाग देखना होता था।

दीवान-ए-इंशा का प्रमुख दबीर-ए-खास था जो कि केन्द्र तथा प्रान्तों के मध्य आदेश, पत्र-व्यवहार आदि काम देखता था।

इन चार विभागों के अतिरिक्त दो अन्य विभाग भी महत्वपूर्ण थे -

दीवान-ए-कज़ा का प्रमुख मुख्य काज़ी-उल-कज़ात होता था। इसका दायित्व न्याय प्रशासन था।

बरीद-ए-मुमालिक गुप्तचर विभाग का प्रमुख होता था। प्रान्तीय गुप्तचरों की रिपोर्ट पर कार्यवाही करना भी उसका दायित्व था।

1.5.3.2 प्रान्तीय तथा सरकार प्रशासन

प्रान्तों में मुख्य सैनिक एवं प्रशासनिक अधिकारी शिक़दार होता था तथा उसके ऊपर नज़र रखने के लिए एक नागरिक अधिकारी काज़ी फ़ज़ीलत होता था। शेर शाह ने बंगाल में भविष्य में महत्वाकांक्षी सूबेदारों द्वारा विद्रोहों की सम्भावना समाप्त करने के उद्देश्य से सूबेदारी की संस्था को समाप्त कर प्रान्त को सरकारों में विभाजित कर दिया था। प्रोफ़ेसर के0 आर0 कानूनगो के अनुसार शेर शाह ने अपने साम्राज्य में प्रान्तीय इकाइयों को भंग कर सबसे बड़ी इकाई सरकार को बना दिया था। सरकार में मुख्य सैनिक एवं प्रशासनिक अधिकारी शिक़दार-ए-शिक़दारान होता था तथा न्यायाधिकारी मुन्सिफ़-ए-मुन्सिफ़ान होता था।

1.5.3.3 परगना तथा ग्राम प्रशासन

शेरशाह ने परगनों में सरकारों की भांति एक-दूसरे से स्वतन्त्र दो मुख्य अधिकारी शिक़दार तथा मुन्सिफ़ नियुक्त किए। इनके अतिरिक्त फ़ोतदार (खजान्ची) तथा हिन्दी और फ़ारसी भाषा के दो कारकुन (लेखक) होते थे। शेर शाह ने ग्राम प्रशासन लगभग स्थानीय निवासियों के ऊपर ही छोड़

दिया था। ग्राम का एक मुखिया होता था तथा लेखा-जोखा रखने का दायित्व सरकार द्वारा नियुक्त पटवारी का होता था।

1.5.3.4 सैन्य - प्रशासन

शेर शाह ने अपने नियन्त्रण में एक स्थायी सेना का गठन किया। इसके चार अंग थे -

घुड़सवार सेना, पैदल सेना, हस्ति सेना और तोप खाना। नियमित निरीक्षण, हुलिया रखने और घोड़ों को दागने की प्रथा को फिर से लागू कर उसने सैन्य प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार को दूर किया तथा अनुशासन स्थापित किया। सैनिकों की भर्ती और उनकी पदोन्नति में उनकी योग्यता को ही आधार बनाया जाता था। शेर शाह ने पुराने दुर्गों की मरममत और नए दुर्गों का निर्माण कर सीमा सुरक्षा का समुचित प्रबन्ध किया तथा उनमें सेना तैनात की।

1.5.3.5 न्याय प्रशासन एवं शान्ति व्यवस्था

शेर शाह निष्पक्ष न्याय वितरण को सबसे पुनीत धार्मिक कर्तव्य मानता था। उसकी निष्पक्ष न्याय व्यवस्था में जाति, धर्म, आर्थिक अथवा सामाजिक स्थिति के आधार पर कोई भेदभाव नहीं था। उसका दण्ड विधान कठोर था। फ़ौजदारी के मामले शिक़दार तथा दीवानी के मामले काज़ी निपटाते थे। शेरशाह ने अपराध के नियन्त्रण के लिए स्थानीय दायित्व का सिद्धान्त लागू किया था। अपराधी न पकड़ पाने पर सम्बन्धित अधिकारी को उस अपराध के लिए दण्डित किया जाता था। गांवों के मुकद्दमों पर भी अपराध नियन्त्रण हेतु इसी प्रकार का दायित्व होता था।

1.5.3.6 भू - राजस्व प्रशासन

सहसराम तथा टांडा-खवासपुर के अपने भू-राजस्व प्रशासन के अनुभव का लाभ उठाकर बादशाह शेर शाह ने भू-राजस्व प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार को दूर कर उसे अधिक सक्षम, निष्पक्ष और पारदर्शी बनाया। भू-राजस्व के निर्धारण को वैज्ञानिक आधार देने के लिए उसने भूमि की नापजोख तथा औसत उपज के आधार पर ज़मीन का तीन किस्मों (उत्तम, मध्यम और निम्न) में वर्गीकरण किया। उसने अनुमानित लगान (जमा) और वास्तव में वसूला गया लगान (हासिल) का अन्तर कम करने के लिए ठोस उपाय किए। लगान का भुगतान नकदी में किया जाना निश्चित किया गया। किसानों को भूमि पर अधिकार सम्बन्धी पट्टे दिए गए तथा उनको लगान सम्बन्धी अपने कर्तव्यों के लिए कुबूलियत भी देनी पड़ी। सैनिक अभियानों के समय किसानों को उनकी फ़सल के नुक्सान की भरपाई की वयवस्था की गई तथा आपदाकाल में उनको लगान में छूट व अन्य प्रकार की सहायता की व्यवस्था भी की गई।

1.5.3.7 मुद्रा सुधार

शेर शाह ने स्वर्ण, रजत तथा ताम्र मुद्राएं चलाईं। उसकी मुद्राए गोलाकार तथा वर्गाकार थीं। शेर शाह के सिक्कों में अरबी लिपि में उसका नाम अंकित होता था तथा कुछ मुद्राओं इस हेतु देवनागरी लिपि क प्रयोग भी किया गया था। उसके राज्य में 23 टकसाल थीं। शेर शाह का चाँदी का 178 ग्रेन का चाँदी का सिक्का अकबर तथा ब्रिटिश भारतीय शासकों के चाँदी के रुपये का आधार बना।

1.5.3.8 व्यापार एवं वाणिज्य का विकास

शेर शाह ने व्यापार एवं वाणिज्य के प्रोत्साहन के लिए साम्राज्य में व्यापार कर केवल दो बार - साम्राज्य में प्रवेश करते समय तथा सामान की बिक्री के समय लिया जाना सीमित किया। व्यापारिक केन्द्रों तक पहुंचने के लिए सड़कों तथा सरायों के निर्माण और मार्ग की समुचित सुरक्षा द्वारा भी व्यापारियों को सुविधाएं दी गईं।

1.5.3.9 सार्वजनिक निर्माण के कार्य

शेर शाह एक महान निर्माता था। उसने झेलम नदी पर रोहतासगढ़ का निर्माण करवाया। दिल्ली में उसने एक नगर बसाया। चार प्रमुख राजमार्गों, सैकड़ों अन्य मार्गों तथा 1700 सरायों के निर्माण व मरम्मत के अतिरिक्त उसने हज़ारों कुओं, सैकड़ों तालाबों, मस्जिदों, दवाखानों और मदरसों का निर्माण कराया। दिल्ली की किला-ए-कोहना मस्जिद तथा सहसराम में उसका मक़बरा मध्यकालीन वास्तुकला की अनुपम धरोहर हैं। उसने सड़कों के किनारे लाखों पेड़ लगवाए।

1.5.3.10 शासक के रूप में शेर शाह का आकलन

शेर शाह ने अपनी दृढ़ इच्छा शक्ति, लगन, सदाशयता, कठोर अनुशासन, न्याय प्रियता तथा दूरदृष्टि से अपने पाँच वर्ष के शासनकाल में अविश्वसनीय शान्ति एवं व्यवस्था स्थापित की। उसने साम्राज्य विस्तार के साथ उसकी सुरक्षा के भी समुचित प्रबन्ध किए। शेर शाह हमेशा

ज़मीन से जुड़ा रहने के कारण व्यावहारिक बुद्धि का प्रयोग करता था। उसने लोक-कल्याणकारी राज्य की परिकल्पना को साकार करने में पर्याप्त सफलता प्राप्त की। शेर शाह की उपलब्धियां अशोक महान अथवा अकबर महान की उपलब्धियों के समकक्ष नहीं रखी जा सकतीं पर इसमें सन्देह नहीं कि वह मध्यकालीन भारतीय इतिहास के महानतम शासकों में से एक था।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्नांकित पर चर्चा कीजिए-

1. पानीपत का प्रथम युद्ध।
2. मुगल राजत्व का सिद्धान्त।
3. हुमायूं की प्रारम्भिक कठिनाइयां।
4. हुमायूं-शेर खाँ संघर्ष।
5. शेर शाह की विजयें।
6. शेर शाह का सार्वजनिक निर्माण विभाग।

1.6 सारांश

भारत की राजनीतिक अस्थिरता का लाभ उठाकर काबुल के शासक बाबर ने पानीपत के प्रथम युद्ध में इब्राहीम लोदी को पराजित कर भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना की। हिन्दुस्तान के पहले बादशाह के रूप में बाबर ने पूर्ण सम्प्रभुता प्राप्त शासक की अवधारणा का विकास किया। हुमायूं बाबर और अकबर महान के मध्य एक कमज़ोर कड़ी था। उसने दस वर्षों तक शासन किया किन्तु वह इस काल में अपनी चारित्रिक दुर्बलताओं, भाइयों तथा सम्बन्धियों के विश्वासघातों व बहादुर शाह और शेर खाँ जैसे प्रबल प्रतिद्वन्दियों से जूझता रहा। शेर खाँ उसके पतन और उसके भारत से निष्कासन का कारण बना। दिल्ली के बादशाह के रूप में 15 वर्ष के अंतराल के बाद हुमायूं की फिर वापसी हुई किन्तु छह महीने बाद ही उसकी मृत्यु हो गई।

शेर खाँ, शेर शाह के रूप में सन् 1540 में बादशाह बना। अपने पाँच वर्षों के सुशासन से उसने इतिहास में एक अमिट छाप छोड़ी है। उसने अपने साम्राज्य में अभूतपूर्व शान्ति एवं व्यवस्था स्थापित की। उसने साम्राज्य की सुरक्षा, व्यापार-वाणिज्य की उन्नति और कृषि विकास हेतु समुचित प्रबन्ध किए। प्रशासनिक सुव्यवस्था और लोक-कल्याणकारी राज्य की परिकल्पना को साकार करने के प्रयास की दृष्टि से हम शेर शाह को अकबर का मार्गदर्शक कह सकते हैं।

1.7 पारिभाषिक शब्दावली

पादशाह - बादशाह।

जिहाद - विधर्मियों के विरुद्ध मुसलमानों का धर्मयुद्ध।

दीवान-ए-विज़ारत - वित्त मन्त्रालय।

दीवान-ए-अर्ज़ - सैन्य मन्त्रालय।

दीवान-ए-रसालत - विदेश मन्त्रालय।

दीवान-ए-कज़ा - मुख्य न्यायाधिकारी

बरीद-ए-मुमालिक - मुख्य गुप्तचर अधिकारी।

शिक़दार-ए-शिक़दारान - मुख्य सैनिक एवं प्रशासनिक अधिकारी।

मुन्सिफ़-ए-मुन्सिफ़ान - मुख्य न्यायिक अधिकारी।

पट्टा - किसानों को दिया जाने वाला अधिकार पत्र।

कुबूलियत - किसानों से लिया जाने वाला लगान सम्बन्धी दायित्व पत्र।

1.8 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 4.1.3.3 पानीपत का प्रथम युद्ध।

2. देखिए पादशाह बाबर 4.1.3.4.1

3. देखिए 4.1.3.4.1 प्रारम्भिक कठिनाइयां।

4. देखिए 4.1.3.4.3 शेर खाँ से संघर्ष।

5. देखिए 4.1.5.2 शेर शाह की साम्राज्य विस्तार की नीति।

6. देखिए 4.1.5.3.8 सार्वजनिक निर्माण के कार्य।

1.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Williams, Rushbrook – *An Empire Builder of the Sixteenth Century*

2. Banerjee, S. K. – *Humayun Badshah*
3. Qanungo, K. R. – Sher Shah
4. Lane Poole, S. – *Babur* (*Rulers of India Series*)
5. Grenard, Fernand – *Babar – First of the Mughals*
6. निगम, एस0 बी0 पी0 - सूर वंश का इतिहास भाग 1
7. विद्या भास्कर - शेर शाह सूरी

1.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Babur – *Baburnama* (Eng. Tr. – Mrs Beveridge)
2. Gulbadan Begum – *Humayun Nama* (Eng. Tr. – Mrs Beveridge)
3. Sarwani, Abbas Khan – *Tarikh-i-Sher Shahi* (English tr. – Dowson, John)
4. करनाड, गिरीश - मुगलकालीन भारत (बाबर)
5. श्रीवास्तव, हरिशंकर - मुगल सम्राट हुमायूं

1.11 निबंधात्मक प्रश्न

एक प्रशासक के रूप में शेर शाह का आकलन कीजिए।

इकाई दो- अकबर उसकी धार्मिक एवं राजपूत नीति तथा जहांगीर

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 बादशाह अकबर की धार्मिक नीति

2.3.1 भारत में अकबर से पूर्व धार्मिक सहिष्णुता तथा धार्मिक-सांस्कृतिक समन्वय

2.3.2 अकबर का उदार धार्मिक परिवेश

2.3.3 उलेमा वर्ग के राजनीतिक प्रभाव पर नियन्त्रण

2.3.4 धार्मिक उदारता की नीति

2.3.4.1 धार्मिक उत्पीड़न की नीति का परित्याग

2.3.4.2 अकबर की विचारधारा पर सूफ़ी प्रभाव

2.3.4.3 अकबर की विचारधारा पर हिन्दू प्रभाव

2.3.4.4 जैनों, पारसियों, ईसाइयों तथा अन्य धर्मावलम्बियों का प्रभाव

2.3.4.5 तौहीद-ए-इलाही अथवा दीन-ए-इलाही

2.4 अकबर की राजपूत नीति

2.4.1 राजपूताने में प्रारम्भिक विजय तथा राजपूतों से वैवाहिक सम्बन्ध

2.4.2 चित्तौड़ विजय तथा महाराणा प्रताप का प्रतिरोध

2.4.3 अकबर की विजयों तथा उसके प्रशासन में राजपूतों का योगदान

2.4.4 मुगल-राजपूत सामाजिक-सांस्कृतिक आदान-प्रदान

2.5 बादशाह जहांगीर

2.5.1 जहांगीर द्वारा अकबर की नीतियों का अनुगमन

2.5.2 जहांगीर के शासन में नूरजहां का प्रभाव

2.5.3 बादशाह के रूप में जहांगीर का आकलन

2.6 सारांश

2.7 पारिभाषिक शब्दावली

2.8 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

2.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

2.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

2.11 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

व्यावहारिक दृष्टि से मुगल साम्राज्य का संस्थापक अकबर कहा जा सकता है। भौगोलिक भिन्नताओं के क्षेत्रों में विभिन्न जातियों, धर्मों और संस्कृतियों के समूहों वाले भारत देश को राजनीतिक, प्रशासनिक, आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से एकसूत्र में बांधने का जो सफल प्रयास अकबर ने किया था, उसके लिए हम उसे राष्ट्रीय शासक कह सकते हैं। अकबर की समन्वयवादी विचारधारा और उसकी उदार धार्मिक नीति मध्यकालीन विश्व इतिहास में अपनी अमिट छाप छोड़ने में सफल रही है। जिस काल में यूरोप में धर्म के नाम पर विभिन्न मतावलम्बी एक-दूसरे को ज़िन्दा जला रहे थे और जिस काल में अन्य धर्मावलम्बियों का उत्पीड़न एक धार्मिक कर्तव्य माना जा रहा था, उस काल में अकबर ने अपने साम्राज्य में सभी धर्मों का आदर किया और सभी धर्मावलम्बियों को अपने-अपने धर्म का अनुपालन व उसका विकास करने के खुली छूट दी। उसके द्वारा प्रतिपादित मत - तौहीद-ए-इलाही अथवा दीन-ए-इलाही धार्मिक समन्वय की अनूठी मिसाल है।

अकबर की राजपूत नीति मध्यकालीन मुस्लिम शासकों में सबसे उदार और व्यावहारिक थी। उसने अपनी शक्ति का प्रदर्शन करते हुए अधिकांश राजपूतों को अपनी आधीनता स्वीकार करने के लिए विवश किया किन्तु उसके बाद उसने उन्हें अपनी आधीनता में व्यावहारिक दृष्टि से स्वतन्त्र शासक के रूप में शासन करने का अधिकार देकर सदैव के लिए अपना मित्र और अपने साम्राज्य का हितैषी बना लिया। राजपूतों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर उसने राजपूत-मुगल मैत्री को एक नया आयाम दिया। अकबर के साम्राज्य विस्तार हेतु अभियानों, प्रशासनिक एवं आर्थिक सुधारों, एक गंगा-जमुनी संस्कृति के विकास और भारत को एकसूत्र में बांधने में तथा दीर्घकाल तक उसे राजनीतिक स्थिरता प्रदान करने में राजपूतों की सक्रिय और सृजनात्मक भूमिका रही।

शिथिल एवं विलासी जहांगीर के सफल सैनिक अभियानों में मुख्य भूमिका शहज़ादे खुर्रम ने निभाई थी और उसके प्रशासन में तथा उसके काल की राजनीतिक गतिविधियों में और भवन निर्माण में उसकी बेगम नूरजहां की प्रधान भूमिका थी किन्तु जहांगीर ने अपने पिता की राजनीतिक, प्रशासनिक एव सांस्कृतिक विरासत को यथा सम्भव बनाए रखा। उसके काल में चित्रकला अपने शिखर पर पहुंच गई। उपलब्धियों की दृष्टि से हम उसे एक मध्यम स्तर का शासक कह सकते हैं।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य अकबर महान की धार्मिक नीति तथा राजपूत नीति के भारत के राजनीतिक, प्रशासनिक एवं सांस्कृतिक इतिहास पर पड़ने वाले दूरगामी प्रभावों से तथा बादशाह

जहांगीर की एक शासक के रूप में उपलब्धियों व दुर्बलताओं आपको परिचित कराना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1- अकबर से पूर्व धार्मिक एवं सांस्कृतिक समन्वय के प्रयास।

2. अकबर द्वारा धार्मिक संकीर्णता की नीति का परित्याग।

3. अकबर के धार्मिक प्रयोग।

4. मुगलों के प्रबलतम शत्रु राजपूतों को अपना सबसे बड़ा मित्र बनाने में अकबर की सफलता।

5. मुगल साम्राज्य को सुदृढ़ बनाने में राजपूतों का योगदान।

6. जहांगीर के शासन में नूरजहां का प्रभाव।

7. जहांगीर की उपलब्धियां तथा उसकी असफलताएं।

2.3 बादशाह अकबर की धार्मिक नीति

2.3.1 भारत में अकबर से पूर्व धार्मिक सहिष्णुता तथा धार्मिक-सांस्कृतिक समन्वय

प्राचीन भारत में सामान्यतः धार्मिक सहिष्णुता का वातावरण रहता था और विभिन्न मतावलम्बी बिना किसी कठिनाई के अपने-अपने धर्म व अपनी-अपनी विचारधारा के अनुरूप अपना जीवन व्यतीत कर सकते थे। इस काल में सांस्कृतिक आदान-प्रदान एक सामान्य प्रक्रिया थी। हज़ारों वर्षों तक भारत में विदेशी जातियों का आगमन होता रहा और उनमें से अनेक ने अपनी सत्ता स्थापित कर भारत में अपना स्थायी ठिकाना बना लिया किन्तु उन्होंने अपने जातीय संस्कारों और मूल सांस्कृतिक मूल्यों तथा आस्थाओं का भारतीय संस्कृति और धर्म में समाहित कर दिया। आठवीं शताब्दी में पहली बार मुस्लिम अरब आक्रमणकारियों से भारत में विधिवत धार्मिक उत्पीड़न की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। दसवीं शताब्दी के अन्त से महमूद गज़नवी के आक्रमणों ने मन्दिरों व मूर्तियों के विनाश तथा विधर्मियों के संहार का एक नया युग प्रारम्भ किया जिसे 12 वीं शताब्दी के अन्तिम दशक में उत्तर भारत में तुर्क शासन की स्थापना ने गैर-मुस्लिमों के लिए और भी अधिक कष्टकारी बना दिया। एक ओर जहां धार्मिक उत्पीड़न, राजनीतिक पराभव, आर्थिक हानि और सामाजिक अपमान ने पराजित जाति में विजेताओं के प्रति गहरा आक्रोश और घृणा का भाव भर दिया तो दूसरी ओर विजेताओं के धार्मिक, जातीय व सांस्कृतिक अहंकार ने उन्हें पराजित जातियों से दूर रखा। पारस्परिक अविश्वास, और द्वेष ने एक अनवरत टकराव की स्थिति उत्पन्न कर दी। किन्तु दो

महान संस्कृतियों का मिलन दो तलवारों का टकराव न होकर दो नदियों के संगम के समान होता है जिसमें दोनों का जल एक-दूसरे में घुलमिल जाता है। भारतीय संस्कृति और मुस्लिम संस्कृति के मिलन से भी एक समन्वयात्मक संस्कृति का उद्भव तथा विकास हुआ।

इस्लाम के अन्तर्गत सूफ़ी सिलसिलों की विचारधारा पर भारतीय दर्शन का व्यापक प्रभाव पड़ा था। सूफ़ी विचारधारा ने भक्त संतों को भी प्रभावित किया था। सूफ़ी सन्तों की सर्वेश्वरवादी विचारधारा शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की भावना की पोषक थी। कबीर, गुरुनानक, चैतन्य महाप्रभु और नर सिंह मेहता जैसे सन्तों ने सूफ़ियों के प्रेममार्ग को अपने जीवन में उतारा था। भवानी के भक्तों जहां एक ओर मुसलमान सम्मिलित थे वहां दूसरी ओर सूफ़ी सन्तों की मज़ारों पर मन्नत मांगने वालों में हज़ारों गैर मुस्लिम होते थे। मुस्लिम शासकों में अनेक ने व्यावहारिक उदारता की नीति अपनाई थी। कश्मीर का ज़ैनुल आब्दीन पहला मुस्लिम शासक था जिसने कि जज़िया समाप्त किया था। शेर शाह के राजस्व प्रशासन तथा न्याय वितरण में सभी धर्मावलम्बियों को समान दृष्टि से देखा जाता था। बंगाल के शासक अलाउद्दीन हुसेन शाह तथा नुसरत शाह ने अपनी गैर-मुस्लिम प्रजा के साथ सहिष्णुता की नीति अपनाई थी। अनेक मुस्लिम शासकों ने हिन्दुओं को अपने राज्य में उच्च पदों पर नियुक्त किया था और हिन्दू शासकों ने भी मुसलमानों को अपने राज्य में महत्वपूर्ण पद प्रदान किए थे। हिन्दू-मुस्लिम वैवाहिक सम्बन्ध भी अब दुर्लभ नहीं थे। भाषा, वेशभूषा, खान-पान, रीतिरिवाज, रहन-सहन, तीज-त्यौहार, आचार-विचार, स्थापत्य कला, शिष्टाचार आदि में समन्वय की प्रक्रिया प्रारम्भ हो गई थी। इस सांस्कृतिक समन्वय के दो सर्वश्रेष्ठ उदाहरणों के रूप में अमीर खुसरो और कबीर को देखा जा सकता है।

2.3.2 अकबर का उदार धार्मिक परिवेश

समकालीन परिवेश की तुलना में अकबर को विरासत में उदार धार्मिक वातावरण मिला था। उसके पितामह बाबर और पिता हुमायूं सुन्नी थे पर दोनों ही सामान्यतः धार्मिक संकीर्णता से ग्रस्त नहीं थे। अकबर की माँ हमीदा बानो शिया थी और हुमायूं अपने ईरान प्रवास के दौरान थोड़ी अवधि के लिए शिया मतावलम्बी हो गया था। अकबर का जन्म अमरकोट में एक राजपूत शरणदाता के घर में हुआ था। अकबर का संरक्षक बैरम खाँ शिया था। उसका शिक्षक अब्दुल लतीफ़ एक उदार विचारक था। अपने बचपन से ही अकबर का सूफ़ियों से सम्पर्क रहा। किन्तु इन सबसे ऊपर उसकी जिज्ञासु प्रकृति, उसका बौद्धिक दृष्टिकोण, उसकी सत्यान्वेषण की प्रवृत्ति, उसकी आदर्शवादिता और उसकी व्यावहारिकता ने उसे उदार धार्मिक नीति अपनाने के लिए प्रेरित किया था।

2.3.3 उलेमा वर्ग के राजनीतिक प्रभाव पर नियन्त्रण

सामान्यतः मुस्लिम शासकों में अपने राज्य को 'मुस्लिम राज्य' घोषित करने की प्रथा थी और इन परिस्थितियों में इस्लाम के संरक्षण तथा उलेमा वर्ग को संतुष्ट रखने हेतु उन्हें राज्य की ओर से विशेष प्रयास भी करने पड़ते थे। दिल्ली सल्तनत काल में अलाउद्दीन खिलजी और मुहम्मद तुगलक के अतिरिक्त सभी सुल्तान उलेमा वर्ग को राजनीतिक महत्व देते थे। अकबर की बौद्धिकता उसे अपने बहुसंख्यक गैर मुस्लिम प्रजा वाले साम्राज्य को 'मुस्लिम राज्य' स्वीकार करने से रोकती थी। वह मुसलमानों का यह दावा भी स्वीकार नहीं करता था कि पृथ्वी पर विद्यमान सभी धर्मों में से केवल इस्लाम में ही सत्य का वास है। अकबर ने स्वयं को सदैव एक आस्तिक मुसलमान के रूप में प्रस्तुत किया परन्तु उसको यह स्वीकार्य नहीं था कि धर्म, राजनीति पर हावी हो। उसने राज्य-सत्ता पर अपना वास्तविक अधिकार होने के कुछ समय बाद ही उलेमा वर्ग के राजनीतिक हस्तक्षेप पर और राज्य की ओर से उन्हें मिलने वाले आर्थिक अनुदानों पर नियन्त्रण स्थापित किया। सन् 1579 में महज़र की घोषणा द्वारा उसने मुसलमानों के धार्मिक विवादों में सर्वोच्च निर्णायक की भूमिका ग्रहण कर उलेमा वर्ग की शक्ति को सीमित किया। अकबर की नीतयों से असन्तुष्ट उलेमा वर्ग ने जब उसको अपदस्थ करने के षडयन्त्र में भाग लिया तब उसने उनके प्रभाव और प्रतिष्ठा को और भी क्षीण कर दिया।

2.3.4 धार्मिक उदारता की नीति

2.3.4.1 धार्मिक उत्पीड़न की नीति का परित्याग

1. सन् 1562 में अकबर ने आमेर के राजपूत शासक भारमल की पुत्री से विवाह किया और बाद में उसने न केवल स्वयं, अपितु अपने परिवार के अन्य पुरुष सदस्यों के भी राजपूतों में विवाह किए। भारत में मुस्लिम शासकों ने इससे पहले भी हिन्दू कन्याओं से विवाह किए थे और उन सभी का धर्म-परिवर्तन कर उन्हें मुसलमान बनाया गया था किन्तु अकबर ने न केवल विवाह के समय हिन्दू रीति-रिवाजों का पालन किया अपितु उसने अपनी हिन्दू रानियों को हिन्दू बने रहकर ही अपने धर्म का पालन करने का पूर्ण अधिकार भी प्रदान किया।

2. राज्य सत्ता पर अपना वास्तविक नियन्त्रण स्थापित होते ही अकबर ने हिन्दुओं से लिया जाने वाला तीर्थयात्रा कर समाप्त कर दिया और गैर-मुस्लिम युद्ध-बन्दियों की इस्लाम में बलात् धर्म-परिवर्तन की प्रथा को भंग कर दिया। सन् 1564 में उसने धार्मिक उत्पीड़न के प्रतीक गैर-मुसलमानों से लिए जाने वाले धार्मिक कर -जज़िया को समाप्त कर दिया। अकबर ने अपने साम्राज्य में सभी धर्मावलम्बियों को अपना धर्म पालन करने की स्वतन्त्रता प्रदान की।

2.3.4.2 अकबर की विचारधारा पर सूफ़ी प्रभाव

अपनी बाल्यावस्था में अकबर ने सूफ़ी अब्दुल लतीफ़ से वहदुतुल वुंजूद तथा सुलेह कुल का पाठ पढ़ा था। बदायूंनी के अनुसार अकबर स्वयं एक सूफ़ी साधक था। वह अजमेर वाले ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती की दरगाह पर सजदा करने नियमित रूप से जाता था और शेख सलीम चिश्ती का वह मुरीद था। सूफ़ियों की सहिष्णुता, उनके समन्वयवाद और उनके प्रेम मार्ग ने अकबर की विचारधारा पर गहरा प्रभाव डाला था। शेख मुबारक और उनके पुत्रों फ़ैज़ी तथा अबुल फ़ज़्ल के सम्पर्क में आने के बाद अकबर उदार समन्वयात्मक सूफ़ी विचारों की ओर और अधिक झुकने लगा था।

2.3.4.3 अकबर की विचारधारा पर हिन्दू प्रभाव

राजपूतों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने के बाद अकबर हिन्दुओं के घनिष्ठ सम्पर्क में आया था। हिन्दुओं के आत्मा के अमरत्व, पुनर्जन्म और कर्म सिद्धान्त ने उसे प्रभावित किया था किन्तु वह सती प्रथा तथा विधवा-विवाह निषेध का विरोधी था। वह रक्षा बन्धन, जन्माष्टमी और वसन्त के त्यौहार मनाता था। उसने महाभारत और रामायण का न केवल फ़ारसी भाषा में अनुवाद कराया अपितु उनके कथानकों पर आधारित चित्रों के निर्माण को भी प्रोत्साहित किया। उसने गो-हत्या पर प्रतिबन्ध लगा दिया। हिन्दुओं के प्रभाव में उसने उनकी सी वेशभूषा अपनाली तथा माथे पर तिलक लगाना भी प्रारम्भ कर दिया।

2.3.4.4 जैनों, पारसियों, ईसाइयों तथा अन्य धर्मावलम्बियों का प्रभाव

1. जैनों के अहिंसा के सिद्धान्त ने अकबर को अत्यधिक प्रभावित किया था। जगद्गुरु हीर विजय सूरी तथा भानुचन्द्र के प्रभाव में उसने पशु हत्या पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। वह अपने निजी जीवन में लगभग शाकाहारी हो गया था।

2. नवसारी के दस्तूर मेहरजी राना से सम्पर्क के बाद अकबर पारसियों की सूर्य-पूजा व अग्नि-पूजा में विश्वास करने लगा था।

3. अकबर ईसाई धर्म के मानवतावाद तथा सेवा भाव से प्रभावित था। उसने जेसुइट धर्म प्रचारकों को धार्मिक विचार-विमर्श के लिए अपने राज्य में आमन्त्रित किया। अकबर के अनुरोध पर पुर्तगाली ठिकाने गोआ से तीन जेसुइट मिशन अकबर के दरबार में भेजे गए। अंग्रेज़ मिशनरियों ने भी अकबर से सम्पर्क किया किन्तु किसी भी ईसाई मिशन ने अकबर पर विशेष प्रभाव नहीं छोड़ा।

4. गुरुनानक देव के सिक्ख मत की समन्वयवादी विचारधारा से भी अकबर प्रभावित हुआ था। उसने सिक्ख गुरु रामदास को अमृतसर में ज़मीन दी जहां पर कि स्वर्ण मन्दिर का निर्माण करवाया गया।

5. अकबर ने धार्मिक विचार-विमर्श के उद्देश्य से सन् 1575 में फ़तेहपुर सीकरी में इबादतखाना बनवाया। यहां पर पहले केवल सुन्नी मत के विद्वानों को आमन्त्रित किया गया किन्तु सन् 1578 में सभी मतावलम्बियों को धार्मिक एवं दार्शनिक वाद-विवाद में सम्मिलित होने की अनुमति प्रदान कर दी गई।

2.3.4.5 तौहीद-ए-इलाही अथवा दीन-ए-इलाही

सन् 1582 में दीन-ए-इलाही की योजना को प्रस्तुत किया गया था। अकबर इस नवीन मत का प्रणेता, आध्यात्मिक गुरु पुरोहित तथा पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि था। इसके मतावलम्बी अकबर से रविवार को दीक्षा लेते थे और अपने अहंकार तथा स्वार्थ को त्याग कर उसके प्रति अपनी पूर्ण निष्ठा एवं भक्ति व्यक्त करते थे।

तौहीद-ए-इलाही (दैविक एकेश्वरवाद) अथवा दीन-ए-इलाही को बदायूंनी ने अकबर द्वारा धर्म प्रवर्तक के रूप में अपने साम्राज्य की समस्त प्रजा को स्वनिर्मित एक राष्ट्रीय धर्म के अन्तर्गत लाने की महत्वाकांक्षी योजना कहा है। कुछ अन्य विद्वानों ने उसके द्वारा स्वयं को एक पैगम्बर या खलीफ़ा के रूप में प्रस्तुत करने का षडयन्त्र कहा है किन्तु ये आरोप तथ्यों पर आधारित नहीं है। वास्तव में यह एक नया धर्म न होकर एक मत था जिसमें अनेक धर्मों के श्रेष्ठ तत्वों - यथा इस्लाम के एकेश्वरवाद, ईश्वर के निर्गुण रूप की उपासना, विश्व बंधुत्व की भावना, इस्लाम के ही अन्तर्गत सूफ़ियों की रहस्यानुभूति एवं उनका समन्वयवाद, हिन्दुओं के आत्मा के अमरत्व तथा पुनर्जन्म के सिद्धान्त, जैनों की अहिंसा, बौद्धों के मध्यम मार्ग, पारसियों की सूर्य एवं अग्नि पूजा तथा ईसाइयों के मानवतावाद का समावेश किया गया था। दीन-ए-इलाही के अन्तर्गत 10 सद्गुणों में विनम्रता, मृदु एवं सत्य-भाषण, क्रोध पर नियन्त्रण, भौतिक सुखों के प्रति विरक्ति, आत्मा के परमात्मा में लीन होने हेतु आत्म-शोधन के बाद ईश्वर का ध्यान आदि का समावेश किया गया था। विन्सेन्ट स्मिथ दीन-ए-इलाही को अकबर की मूर्खता का स्मारक मानते हैं। अकबर ने अपने मतावलम्बी बनाने के लिए कभी बल का प्रयोग नहीं किया लेकिन इस मत में केवल उसके प्रशंसक और अवसरवादी चाटुकार ही सम्मिलित हुए। अकबर के जीवनकाल में ही दीन-ए-इलाही का प्रयोग असफल हो गया। निश्चित रूप से यह एक अहंकारी बादशाह की महत्वाकांक्षी, अव्यावहारिक, निराधार एवं हवाई योजना थी किन्तु सर्व-धर्म सम्भाव एवं राष्ट्र को भावनात्मक रूप से एकसूत्र में बांधने के प्रयास के कारण इसे अपने समय से बहुत आगे की योजना कहा जा सकता है।

2.4 अकबर की राजपूत नीति

2.4.1 राजपूताने में प्रारम्भिक विजय तथा राजपूतों से वैवाहिक सम्बन्ध

अकबर की महत्वाकांक्षा मुगल साम्राज्य को सुदृढ़ करने के साथ-साथ उसका सभी दिशाओं में विस्तार करने की थी। अफ़गानों के पराभव के बाद उत्तर भारत में राजपूत मुगलों के लिए सबसे बड़ा खतरा थे। राजपूत शक्ति का मुख्य केन्द्र राजपूताना, दिल्ली और आगरा के बहुत निकट था इसलिए उत्तर भारत पर अपना स्थायी प्रभुत्व बनाए रखने के लिए मुगलों का सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण राजपूताने पर विजय प्राप्त करना आवश्यक था। इसके अतिरिक्त राजपूताने पर नियन्त्रण स्थापित किए बिना बुन्देलखण्ड, मालवा, गुजरात तथा दक्षिण भारत में मुगल अपने साम्राज्य का विस्तार नहीं कर सकते थे। अकबर को राजपूताने के सीमित संसाधनों, राजपूतों की जुझारू प्रकृति और उनकी वीरता की जानकारी थी। राजपूताने पर उसका विजय अभियान न तो मुख्यतः साम्राज्य विस्तार के लिए था और न ही साम्राज्य के संसाधनों में वृद्धि करने के लिए। अकबर राजपूत शासकों से केवल यह अपेक्षा करता था कि वो उसकी आधीनता स्वीकार कर लें, अपनी वाह्य नीतियों पर उसका नियन्त्रण स्थापित होने दें और उसे वार्षिक खिराज देते रहें। इसके बदले में अकबर उनके सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक जीवन में कोई हस्तक्षेप किए बिना उन्हें व्यावहारिक दृष्टि से स्वतन्त्र शासक के अधिकार देने को तैयार था।

1. आमेर के कछवाहा राजपूत शासक भारमल तथा उनके पुत्र भगवानदास ने मुगलों की आधीनता स्वीकार की। भारमल ने अपनी पुत्री का विवाह अकबर के साथ कर दिया। अजमेर से बीस कोस दूर मेड़ता के किले पर मारवाड़ के शासक मालदेव के सेनानायक जयमल का अधिकार था। अकबर के सेनानायक मिर्ज़ा शरीफ़ुद्दीन हुसेन ने जयमल की सेना को पराजित कर मेड़ता के किले पर अधिकार कर लिया। रणथम्भौर पर अधिकार करने के लिए भी अकबर को अपनी शक्ति का प्रयोग करना पड़ा किन्तु मारवाड़, बीकानेर, जैसलमेर आदि ने बिना प्रतिरोध के अकबर की आधीनता स्वीकार कर ली। मेवाड़ के आधीन राज्य - डूंगरपुर, बांसवाड़ा तथा प्रतापगढ़ आदि ने बिना प्रतिरोध के अकबर की आधीनता स्वीकार कर ली। इस प्रकार मेवाड़ छोड़कर पूरा राजपूताना मुगलों के आधीन हो गया।

1. आमेर के शासक भारमल ने अपनी पुत्री का विवाह अकबर के साथ कर दिया। आमेर के शासक की भांति जैसलमेर तथा बीकानेर के शासकों ने भी अपनी कन्याओं के विवाह मुगलों के साथ कर दिए। अकबर ने अपने राजपूत सम्बन्धियों को न केवल सम्मान दिया अपितु उसने उन्हें अपनी सेना तथा प्रशासन में अत्यन्त महत्वपूर्ण पद प्रदान किए। राजपूतों के साथ वैवाहिक सम्बन्धों में अकबर

की उदारता का उल्लेख हम इसी इकाई के - **2.3.4 धार्मिक उदारता की नीति** - शीर्षक के अन्तर्गत भी कर चुके हैं।

2.4.2 चित्तौड़ विजय तथा महाराणा प्रताप का प्रतिरोध

चित्तौड़ गढ़

1. मेवाड़ के राणा उदय सिंह ने अकबर की आधीनता स्वीकार करने से इंकार कर दिया था। राजपूताने के राज्यवंशों में मेवाड़ की सर्वाधिक प्रतिष्ठा थी। अकबर ने सन् 1567 में चित्तौड़ पर स्वयं आक्रमण किया। उदय सिंह ने भागकर अरावली की पहाड़ियों में शरण ली किन्तु जयमल और पट्टा ने वीरतापूर्वक मुगलों का सामना किया। अन्त में मुगलों ने चित्तौड़ दुर्ग पर अधिकार किया। अकबर ने चित्तौड़ दुर्ग में भयंकर विनाश और नरसंहार कर उस पर अधिकार किया। इस कृत्य से वह अन्य राजपूत शासकों को प्रतिरोध न करने का सबक देना चाहता था। अकबर ने सन् 1569 में रणथम्भौर भी जीत लिया। अगले वर्ष तक मेवाड़ छोड़कर सभी राजपूत शासकों ने अकबर की आधीनता स्वीकार कर ली।

2. राणा उदय सिंह की सन् 1572 में मृत्यु के बाद महाराणा प्रताप ने भी मुगलों की नाम मात्र की आधीनता स्वीकार नहीं की। महाराणा प्रताप के भाइयों ने भी मुगलों की आधीनता स्वीकार कर ली परन्तु महाराणा ने अकबर द्वारा वार्ता के छह प्रस्ताव ठुकरा दिए। अकबर ने मानसिंह को सेनानायक बनाकर महाराणा के विरुद्ध सेना भेजी। हल्दीघाटी के मैदान में सन् 1576 में युद्ध हुआ जिसमें मुगलों को विजय प्राप्त हुई किन्तु अरावली की पहाड़ियों में जा छुपे महाराणा प्रताप का प्रतिरोध आजीवन जारी रहा। उन्होंने भामाशाह की आर्थिक सहायता लेकर और भीलों के सहयोग व गुरिल्ला युद्ध नीति अपना कर चित्तौड़ और मण्डलगढ़ छोड़कर शेष मेवाड़ मुगलों से वापस जीत लिया।

2.4.3 अकबर की विजयों तथा उसके प्रशासन में राजपूतों का योगदान

अकबर ने साम, दाम, दण्ड, भेद की नीति अपना कर मेवाड़ छोड़कर सभी राजपूत राज्यों को अपने आधीन कर लिया था। अपनी कूटनीति से उसने राजपूत शासकों को अपना सबसे महत्वपूर्ण व भरोसेमन्द मित्र बना लिया। पारस्परिक लाभ की नीति अपना कर राजपूतों की वचन बद्धता, उनके सैन्य कौशल तथा उनके प्रशासनिक अनुभव का अकबर ने भरपूर लाभ उठाया।

भगवानदास और उसके पुत्र मानसिंह को तो उसने अपने सर्वोच्च मनसबदारों में सम्मिलित किया था। मानसिंह पर भरोसा जताते हुए अकबर ने उसे महाराणा प्रताप के विरुद्ध अभियान की कमान सौंपी थी और मानसिंह ने महाराणा प्रताप को पराजित कर उसके निर्णय को उचित सिद्ध किया था। अकबर के विजय अभियानों में उसके राजपूत सहयोगियों ने बढ़ चढ़कर भाग लिया था। अकबर सन् 1581 के सत्ता परिवर्तन के राजनीतिक संकट का निवारण, राजपूत सहयोग के बल पर ही कर सका था। अकबर के प्रशासन को सुदृढ़ एवं सक्षम बनाने में भी राजपूतों का महत्वपूर्ण योगदान था। सन् 1562 से लेकर औरंगज़ेब के विरुद्ध सन् 1680 के राजपूत स्वतन्त्रता संग्राम तक, राजपूत मुगल साम्राज्य को सुदृढ़ करने में पूर्ण निष्ठा के साथ संलग्न रहे। परन्तु राजपूत शासकों ने अपनी स्वतन्त्रता खोकर मुगलों की छत्रछाया में विलासिता का जीवन व्यतीत करना भी प्रारम्भ कर दिया और उनके शासन में अनेक दोष उत्पन्न हो गए।

2.4.4 मुगल-राजपूत सामाजिक-सांस्कृतिक आदान-प्रदान

राजपूतों के सम्पर्क में आने के बाद अकबर के दार्शनिक एवं धार्मिक विचारों में और अधिक उदारता आ गई। आचार-विचार, वेशभूषा, खान-पान, रीति-रिवाज, तीज-त्यौहार, स्थापत्य कला, चित्रकला, संगीत, भाषा, साहित्य, शिष्टाचार, शाही दरबार, हरम-रनिवास की संरचना आदि सभी क्षेत्रों में मुगल-राजपूत आदान-प्रदान हुआ। एक ओर जहां अकबर द्वारा बनवाए गए आगरा के लाल किले में जहांगीर महल, फ़तेहपुर सीकरी के दीवान-ए-खास और उसके काल के चित्रों के कथानकों में राजपूत प्रभाव देखा जा सकता है तो दूसरी ओर राजपूत शासकों की स्थापत्य कला और उनके चित्रों के कलात्मक पक्ष पर मुगल प्रभाव देखा जा सकता है। इस प्रकार सांस्कृतिक क्षेत्र में मुगल-राजपूत मैत्री का सुपरिणाम गंगा-जमुनी संस्कृति के विकास के रूप में दिखाई पड़ा।

2.5 बादशाह जहांगीर

2.5.1 जहांगीर द्वारा अकबर की नीतियों का अनुगमन

एक शहज़ादे के रूप में सलीम ने अपने पिता के विरुद्ध कई बार बगावत की थी किन्तु जहांगीर के रूप में बादशाह बनने पर उसने सामान्यतः अकबर महान की नीतियों का अनुगमन कर अपनी बुद्धिमत्ता का परिचय दिया था।

1. अपने राज्यारोहण के समय जहांगीर ने 12 अध्यादेश (दस्तूर-उल-अमल) निर्गत किए थे जो कि मूलतः अकबर की लोक-कल्याण की भावना तथा उसकी उदार नीतियों पर आधारित थे। व्यावहारिक दृष्टि से उसने अपने पिता की धार्मिक नीति में कोई परिवर्तन नहीं किया। गैर-मुस्लिम जज़िया से पूर्ववत मुक्त रहे और सभी धर्मावलम्बियों को आमतौर पर अपने-अपने धर्म का

स्वतन्त्रतापूर्वक पालन करने का अधिकार मिला रहा। जहांगीर ने अकबर की भू-राजस्व व्यवस्था, मनसबदारी व्यवस्था, उद्योग एव व्यापार को प्रोत्साहन देने की नीति, धर्म-निर्पेक्ष न्याय व्यवस्था आदि का भी निष्ठापूर्वक अनुगमन किया।

2. राजपूत पहले की ही तरह मुगलों के अधीनस्थ मित्र व सहयोगी बने रहे।

3. जहांगीर के शासनकाल में भी अकबर के शासनकाल की ही भांति साहित्य, कला और संगीत को राज्य की ओर से प्रोत्साहन मिलता रहा।

2.5.2 जहांगीर के शासन में नूरजहां का प्रभाव

जहांगीर का मकबरा

अपने समय की विख्यात सुन्दरी मेहरुन्निसा के पति शेर अफ़गन की सन् 1607 में हत्या में जहांगीर का हाथ था। सन् 1611 में जहांगीर ने उसके साथ विवाह किया और तभी से उसने राज्य की नीतियों में हस्तक्षेप करना प्रारम्भ कर दिया। 'नूर महल' और बाद में 'नूरजहां' की उपाधि प्राप्त कर वह और भी अधिक प्रभावशाली हो गई। सन् 1611 से 1622 तक मुगल राजनीति पर 'नूरजहां जुन्टा' (मुख्य रूप से नूरजहां, उसका पिता उत्मात्-उद्- दौला, उसका भाई आसफ़ खाँ तथा शहज़ादा खुर्रम) का प्रभुत्व रहा और सन् 1622 से 1627 तक व्यावहारिक दृष्टि से अकेली नूरजहां, जहांगीर के शासनकाल की संचालिका बनी रही।

ताजमहल

1. जहांगीर के शासनकाल की सांस्कृतिक गतिविधियों में नूरजहां का योगदान प्रशंसनीय था। नूरजहां अपने काल की सबसे सुसंस्कृत महिला थी। उसके निर्देशन में तैयार किए गए वस्त्र पूरे साम्राज्य के आभिजात्य वर्ग में लोकप्रिय हुए। गुलाब के इत्र का आविष्कारक नूरजहां को माना जाता है। जहांगीर के काल की दोनों प्रसिद्ध इमारतों - एत्मात्-उद्-दौला

का मक़बरा तथा जहांगीर का मक़बरा, का निर्माण नूरजहां की देखरेख में हुआ था।

2. जहांगीर ने अपने सिक्कों में अपने साथ नूरजहां का नाम भी अंकित कराया।

3. जहांगीर ने नूरजहां के पिता गियासुद्दीन बेग को अपने साम्राज्य का वज़ीर बनाया और उसे एत्मात्-उद्-दौला की उपाधि प्रदान की। नूरजहां के भाई आसफ़ खाँ को उच्च मनसब प्रदान किया गया तथा उसकी पुत्री अर्जुमन्द बानो से शहज़ादे खुर्रम का विवाह किया गया।

नूरजहां की मदद से बागी शहज़ादे खुसरो को शहज़ादे खुर्रम को सौंप दिया गया जिसने उसकी हत्या करवा दी। खुर्रम को शाहजहां का खिताब दिलाने के पीछे नूरजहां का हाथ था।

4. नूरजहां-शेर अफ़गन की पुत्री लाडली बेगम का विवाह शहज़ादे शहरयार से कर दिया गया। इसके बाद नूरजहां का झुकाव शाहजहां के स्थान पर शहरयार की ओर हो गया। सन् 1622 में एत्मात्-उद्-दौला की मृत्यु के बाद नूरजहां का अपने भाई आसफ़ खाँ से भी मनमुटाव हो गया। जहांगीर के गिरते स्वास्थ्य का लाभ उठाकर नूरजहां ने अकेले ही शासन पर अपनी पकड़ मज़बूत कर ली। शहरयार को आवश्यकता से अधिक महत्व देकर उसने शाहजहां और आसफ़ खाँ को अपना विरोधी बना लिया। शाहजहां के विद्रोह का भी मुख्यतः यही कारण था।

5. प्रसिद्ध सेनानायक महाबत खाँ ने जहांगीर द्वारा एक महिला को इतने अधिक अधिकार दिए जाने की उसके मुहँ पर आलोचना की थी। नूरजहां के राजनीतिक उत्पीड़न से क्रुद्ध महाबत खाँ ने जहांगीर के विरुद्ध विद्रोह कर उसे कुछ समय के लिए नज़रबन्द भी कर दिया था।

6. नूरजहां द्वारा राजनीतिक तनाव एव अविश्वास की स्थिति उत्पन्न किए जाने के कारण दक्षिण भारत में मुगलों की पकड़ कमज़ोर हो गई और उत्तर-पश्चिम में कान्धार मुगलों के हाथ से निकल गया।

7. नूरजहां ने प्रशासनिक भ्रष्टाचार और भेंट व नज़राने की प्रथा को बढ़ावा दिया। शक्ति संतुलन के समीकरणों में उसके द्वारा निरन्तर बदलाव किए जाने की उसकी प्रवृत्ति के कारण अमीरों में अपने भविष्य को लेकर अनिश्चितता रहती थी। इस राजनीतिक अनिश्चितता का साम्राज्य की प्रतिष्ठा पर तथा उसकी प्रशासनिक सक्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।

2.5.3 बादशाह के रूप में जहांगीर का आकलन

1. सन् 1605 से 1627 तक के अपने शासनकाल में जहांगीर ने विशेष उपलब्धियां अर्जित नहीं कीं परन्तु अकबर की धार्मिक, राजपूत तथा प्रशासनिक नीतियों का अनुगमन कर उसने अपनी व्यावहारिक बुद्धिमत्ता का परिचय अवश्य दिया।

2. जहांगीर ने एक न्यायप्रिय शासक के रूप में स्वयं को प्रतिष्ठित किया किन्तु वास्तव में वह एक न्यायप्रिय शासक कहलाने का अधिकारी नहीं था।

3. जहांगीर की राजपूत नीति सफल रही। मेवाड़ के शासक राणा अमर सिंह को पराजित कर जब सन् 1615 में शहज़ादे खुर्रम ने मुगलों की आधीनता स्वीकार करने के लिए तैयार कर लिया तब जहांगीर ने उसको न केवल मुगल दरबार में उपस्थित होने की बाध्यता से मुक्त किया अपितु उसे शाही सम्मान व शाही उपहारों से अलंकृत कर मेवाड़ को मुगलों का स्थायी मित्र बना लिया।

4. उसने साम्राज्य विस्तार की दृष्टि से कांगड़ा की विजय की किन्तु उसके काल में कान्धार मुगल साम्राज्य से निकल गया और अहमदनगर में मलिक अम्बर के नेतृत्व में मुगलों का सफलतापूर्वक प्रतिरोध किया गया।

5. जहांगीर स्वयं एक लब्धप्रतिष्ठ लेखक था। उसकी तुज़ुक-ए-जहांगीरी उसके शासनकाल का प्रामाणिक दस्तावेज़ है।

6. जहांगीर के शासनकाल में चित्रकला अपने शिखर पर पहुंच गई थी।

7. जहांगीर के शासनकाल के अन्तिम पाँच वर्ष नूरजहां की अनियन्त्रित शक्ति के विरोध में शाहजहां और महाबत खाँ के विद्रोहों की छाया में बीते थे। अपनी विलासप्रियता, मद्यपान के बुरे व्यसन, आलस्य और शिथिलता तथा राजकाज की बागडोर पूरी तरह नूरजहां पर छोड़ने के कारण जहांगीर ने मुगलों की प्रतिष्ठा तथा बादशाह के गौरव को अपूर्णनीय क्षति पहुंचाई थी।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्नांकित पर चर्चा कीजिए-

1. भारत में अकबर से पूर्व धार्मिक-सांस्कृतिक समन्वय।
2. अकबर की विचारधारा पर सूफ़ी प्रभाव।
3. महाराणा प्रताप का स्वतन्त्रता संग्राम।
4. मुगल-राजपूत वैवाहिक सम्बन्ध।
5. मुगल राजनीति पर नूरजहां का प्रभाव
6. एक शासक के रूप में जहांगीर।

2.6 सारांश

अकबर ने विरासत में एक अव्यस्थित, असुरक्षित, साधनहीन और क्षेत्रफल की दृष्टि से एक छोटा साम्राज्य प्राप्त किया था। इस साम्राज्य को विश्व के महानतम साम्राज्यों में विकसित करने का पूरा श्रेय अकबर को जाता है। भौगोलिक, जातीय, धार्मिक एवं सास्कृतिक भिन्नताओं वाले भारत को अकबर ने राजनीतिक, आर्थिक, प्रशासनिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से एकसूत्र में बांधा था। इन उपलबिघयों के कारण हम उसे एक राष्ट्रीय शासक कह सकते हैं। अकबर की समन्वयवादी विचारधारा और उसकी उदार धार्मिक नीति धार्मिक वैमनस्य और धार्मिक संकीर्णजता से भरपूर मध्यकालीन विश्व इतिहास में अनुपम है। अकबर ने अपने साम्राज्य में सभी धर्मों का आदर किया और सभी धर्मावलम्बियों को अपने-अपने धर्म का अनुपालन व उसका विकास करने के खुली छूट दी। उसके द्वारा प्रतिपादित मत - दीन-ए-इलाही धार्मिक समन्वय की अनूठी मिसाल है।

अकबर ने अपनी शक्ति का प्रदर्शन करते हुए अधिकांश राजपूत शासकों को अपनी आधीनता स्वीकार करने के लिए विवश किया किन्तु उसके बाद उसने उन्हें अपनी आधीनता में स्वतन्त्र शासक के समान अधिकार देकर उन्हें अपना मित्र और अपने साम्राज्य का हितैषी बना लिया। राजपूतों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर उसने राजपूत-मुगल मैत्री को एक नया आयाम दिया। अकबर की विजयों, उसके प्रशासनिक एवं आर्थिक सुधारों तथा उसकी सांस्कृतिक क्षेत्र में उपलब्धियों ने भारत को एकसूत्र में बांधने में सफलता प्राप्त की।

जहांगीर ने अपने पिता की राजनीतिक, प्रशासनिक एव सांस्कृतिक विरासत को यथा सम्भव बनाए रखा था। उसके काल में चित्रकला का अभूपूर्व विकास हुआ था। जहांगीर के सफल सैनिक अभियानों में मुख्य भूमिका शहज़ादे खुर्रम ने निभाई थी और उसके प्रशासन में तथा उसके काल की राजनीतिक एवं सांस्कृतिक गतिविधियों में उसकी बेगम नूरजहां की प्रधान भूमिका थी किन्तु नूरजहां का मुगल राजनीति पर प्रभाव हानिकारक सिद्ध हुआ। उपलब्धियों की दृष्टि से हम उसे एक साधारण शासक कह सकते हैं।

2.7 पारिभाषिक शब्दावली

तौहीद-ए-इलाही - एकेश्वरवाद।

गंगा-जमुनी तहज़ीब- मिलीजुली अथवा समन्वयात्मक संस्कृति।

महज़र - परमादेश। इसके द्वारा अकबर मुसलमानों के धार्मिक विवादों में सर्वोच्च निर्णायक बन गया था।

सिजदा - श्रद्धा के रूप में नमन।

कोस - दूरी का एक माप, लगभग 2 मील।

हरम - रनिवास।

जुन्टा - गुट।

2.8 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 4.2.3.1 भारत में अकबर से पूर्व धार्मिक सहिष्णुता तथा धार्मिक-सांस्कृतिक समन्वय।
2. देखिए 4.2.3.4.2 अकबर की विचारधारा पर सूफ़ी प्रभाव।
3. देखिए 4.2.4.2 चित्तौड़ विजय तथा महाराणा प्रताप का प्रतिरोध।
4. देखिए 4.2.4.1 राजपूताने में प्रारम्भिक विजय तथा राजपूतों से वैवाहिक सम्बन्ध।
5. देखिए 4.2.5.2 जहांगीर के शासन में नूरजहां का प्रभाव।
6. देखिए 4.2.5.3 बादशाह के रूप में जहांगीर का आकलन।

2.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Smith, V. A. – *Akbar the Great*
2. Prasad, Beni – *History of Jahangir*
3. Abu-l –Fazl – *The Ain-i-Akbari* (English Tr. Blochmann, H.)
4. Abu-l –Fazl – *Akbarnama* (English Tr. Beveridge, H.)
5. Jahangir – *Tuzuk-i-Jahangiri* (English Tr. Beveridge, Rogers)

2.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Malleson, G. B. – *Akbar and the Rise of the Mughal Empire*
2. Roy Chaudhury, M. L. – *Din-i-Ilahi or the Religion of Akbar*
3. Ahmad, Bashir – *Akbar the Great Mughal: His New Policy and His New Religion*
4. Habib, Irfan – *Akbar and His India*
5. Banks, Ellison – *Nurjahan: Empress of Mughal India*
6. Sharma, G. N. – *Maharana Pratap and His Times*
7. Ali, M. Athar – *Mughal India: Studies in Policies, Ideas, Society and Culture*
8. Chandra, S. – *Medieval India: From Sultanate to the Mughals*

2.11 निबंधात्मक प्रश्न

तौहीद-ए-इलाही अथवा दीन-ए-इलाही का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

इकाई तीन- शाहजहां, औरंगजेब : धार्मिक तथा दक्षिणी नीति

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 बादशाह शाहजहां
3.3.1 साम्राज्य विस्तार की नीति
3.3.1.1 दक्षिण-भारत अभियान
3.3.1.2 मध्य-एशिया तथा उत्तर-पश्चिम सीमा पर अभियान
3.4 मुगल काल का स्वर्ण युग कहलाए जाने का औचित्य
3.4.1 स्वर्ण युग कहलाए जाने के पक्ष में तर्क
3.4.2 स्वर्ण युग कहलाए जाने के विरोध में तर्क
3.5 उत्तराधिकार का युद्ध
3.5.1 शाहजहां की बीमारी के समय उसके पुत्रों की स्थिति
3.5.2 शहज़ादों के मध्य युद्ध
3.5.3 औरंगज़ेब का राज्यारोहण
3.5.4 उत्तराधिकार के युद्ध में औरंगज़ेब की स□लता के कारण
3.6 इस्लाम के संरक्षक के रूप में बादशाह औरंगज़ेब
3.6.1 साम्राज्य में इस्लाम के आदर्शों तथा परम्पराओं की पुनर्स्थापना
3.6.2 धार्मिक उत्पीड़न की नीति
3.6.3 धार्मिक उत्पीड़न की नीति का विरोध
3.6.3.1 जाट प्रतिरोध
3.6.3.2 सतनामी प्रतिरोध
3.6.3.3 सिक्खों का प्रतिरोध
3.6.3.4 राजपूत प्रतिरोध
3.6.3.5 बुन्देला राजपूतों का प्रतिरोध
3.6.3.6 मराठा प्रतिरोध
3.6.3.7 औरंगज़ेब की धार्मिक नीति का आकलन
3.7 औरंगज़ेब की दक्षिण नीति
3.7.1 औरंगज़ेब का दक्षिण भारत का अभियान और प्रारम्भिक स□लताएं
3.7.2 मराठा स्वतन्त्रता संग्राम
3.7.3 मुगल साम्राज्य के पतन में औरंगज़ेब की दक्षिण नीति का दायित्व
3.8 सारांश
3.9 पारिभाषिक शब्दावली
3.10 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर
3.11 संदर्भ ग्रंथ सूची
3.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
3.13 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

बादशाह के रूप में शाहजहां ने अपने लगभग 30 वर्ष के शासनकाल में इतिहास के पन्नों में एक अमिट छाप छोड़ी है। शाहजहां ने दक्षिण भारत में साम्राज्य विस्तार करने में सफलता प्राप्त की किन्तु मध्य एशिया व उत्तर-पश्चिम में उसे असफलता मिली। उसके शासनकाल में मुगल समृद्धि तथा वैभव की पराकाष्ठा पर पहुंच गए थे किन्तु इसका मूल्य उसकी प्रजा को बढ़े हुए करों द्वारा चुकाना पड़ा था। शाहजहां का शासनकाल मुगल काल का स्वर्णयुग था या नहीं, यह विवादास्पद है किन्तु अपने जीवन में ही अपने पुत्रों के मध्य उत्तराधिकार का युद्ध होते हुए देखना, अपदस्थ होकर स्वयं को बन्दी होते हुए देखना और अपने तीन पुत्रों की मृत्यु देखना, उसके शासनकाल को स्वर्णयुग मानने के मार्ग में बाधक हैं।

औरंगज़ेब ने इस्लाम के संरक्षक के रूप में उत्तराधिकार के युद्ध में सफलता प्राप्त कर सिंहासन प्राप्त किया था। हनाफ़ी सम्प्रदाय के कट्टर मुसलमान के रूप में उसने इस्लाम को राज-धर्म घोषित कर उसके विकास हेतु निरन्तर प्रयास किए किन्तु गैर-मुस्लिमों के प्रति उसकी असहिष्णुता की नीति साम्राज्य में अशान्ति और अनवरत संघर्ष का कारण बनी।

उसकी धार्मिक उत्पीड़न की नीति ने मुगलों के परम्परागत स्वामिभक्त राजपूतों को उनका शत्रु बना दिया और शान्तिप्रिय सिक्खों को एक लड़ाकू कौम बना दिया। मराठों का उत्कर्ष मुख्यतः उसी की अव्यावहारिक दक्षिण नीति का कुपरिणाम था। औरंगज़ेब की दक्षिण नीति उसके लिए विनाशकारी सिद्ध हुई और मुगल साम्राज्य के पतन का एक मुख्य कारण बनी।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य आपको शाहजहां व औरंगज़ेब की मुख्य उपलब्धियों तथा असफलताओं से अवगत कराना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1- शाहजहां की दक्षिण भारत, मध्य-एशिया तथा उत्तर-पश्चिम में साम्राज्य विस्तार की नीति।

2. शाहजहां के शासनकाल को मुगलकाल के स्वर्णयुग कहलाने का औचित्य।

3. शाहजहां के काल में उत्तराधिकार का युद्ध।

4. औरंगज़ेब की धार्मिक नीति और उसके परिणाम।

5. औरंगज़ेब की दक्षिण नीति तथा उसका मुगल साम्राज्य के पतन में दायित्व।

3.3 बादशाह शाहजहां

3.3.1 साम्राज्य विस्तार की नीति

3.3.1.1 दक्षिण-भारत अभियान

बादशाह जहांगीर के काल में दक्षिण भारत के प्रारम्भिक अभियानों में मिली सफलता का श्रेय मुख्यतः शहज़ादे खुर्रम को जाता है। शहज़ादे के रूप में शाहजहां वर्षों तक मुगल-दक्षिण का सूबेदार रहा था। इस कारण उसे दक्षिणी भारत की भौगोलक, सैनिक तथा कूटनीतिक स्थिति की भलीभांति जानकारी थी। मलिक अम्बर की मृत्यु के बाद की राजनीतिक अस्थिरता का लाभ उठाकर वह अहमदनगर पर मुगल प्रभुत्व स्थापित करना चाहता था और बीजापुर व गोलकुण्डा के शिया राज्यों की ईरान के शाह के प्रति निष्ठा के कारण वह उनका भी दमन करना चाहता था।

अहमदनगर के सुल्तान मुर्तज़ा निज़ाम शाह ने मुगलों के विद्रोही खानेजहां को शरण दी थी। अहमदनगर राज्य के वकील तथा पेशवा फ़तेह खाँ ने मुर्तज़ा निज़ाम शाह की हत्या कर उसके अल्पवयस्क पुत्र हुसेन शाह को सुल्तान बनाकर मुगलों की आधीनता स्वीकार कर ली। सन् 1633 तक मुगल सेनापति महाबत खाँ के नेतृत्व में अहमदनगर पर मुगल विजय अभियान आंशिक रूप से सम्पन्न हो गया परन्तु अगले तीन वर्ष तक शाहजी भोंसले के नेतृत्व में अहमदनगर का प्रतिरोध जारी रहा। अन्त में सन् 1636 में शाहजहां के व्यक्तिगत दक्षिण अभियान द्वारा अहमदनगर को पूरी तरह मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया। अपने दक्षिण अभियान के दौरान शाहजहां ने सन् 1636 में गोलकुण्डा तथा बीजापुर के शासकों पर सैनिक व कूटनीतिक दबाव डालकर उनको मुगल आधीनता स्वीकार कर खिराज देने के लिए विवश किया। सन् 1656 में मुगल दक्षिण के सूबेदार औरंगज़ेब ने बीजापुर को मुगल साम्राज्य में मिलाने के लिए सैनिक अभियान किया किन्तु शाहजहां की बीमारी के बाद उत्तराधिकार के युद्ध में सम्मिलित होने के कारण वह बीजापुर विजय का अभियान अधूरा छोड़कर ही उत्तर भारत की ओर चल पड़ा।

3.3.1.2 मध्य-एशिया तथा उत्तर-पश्चिम सीमा पर अभियान

1. अपने पूर्वजों की जन्मभूमि मध्य-एशिया के बल्ख तथा बदख्शाँ पर अधिकार करने के लिए शाहजहां ने सन् 1639 में काबुल से सैनिक अभियान की तैयारी की। 1640-41 में मध्य-एशिया की राजनीतिक अराजकता की स्थिति का लाभ उठाकर बल्ख पर अधिकार कर लिया किन्तु उज़बेग प्रतिरोध और मध्य-एशिया की विषम परिस्थितियों के कारण सन् 1647 में मुगलों को अपना मध्य-एशिया अभियान पूरी तरह समाप्त करना पड़ा। इस असफल अभियान में जान-माल के भारी नुक्सान के साथ-साथ मुगलों की सैनिक प्रष्ठिा पर भी गहरा आघात लगा।

2. सन् 1622 में जहांगीर के शासनकाल में कान्धार मुगलों के हाथ से निकल कर ईरान के शाह के अधिकार में आ गया था। सन् 1634 में कान्धार के ईरानी सूबेदार अलीमर्दान खाँ को अपनी ओर कर मुगल सेनापति सईद खाँ ने कान्धार पर अधिकार कर लिया किन्तु मुगलों के मध्य-एशिया अभियान की असफलता का लाभ उठाकर सन् 1648 में ईरानियों ने कान्धार पर फिर से अधिकार कर लिया। सन् 1652 तथा 1653 में कान्धार पर पुनर्विजय के दो मुगल अभियान ईरान-उज़बेग सहयोग तथा उस क्षेत्र की दुर्गमता के कारण असफल रहे। इस प्रकार शाहजहां की मध्य-एशिया तथा उत्तर-पश्चिमी सीमा पर मुगल अधिकार करने के अभियान पूर्णतया असफल रहे।

3.4 मुगल काल का स्वर्ण युग कहलाए जाने का औचित्य

3.4.1 स्वर्ण युग कहलाए जाने के पक्ष में तर्क

1. शाहजहां ने अपने दरबार को अनुपम वैभव प्रदान किया। दिल्ली के लाल किले के दीवान-ए-खास में रत्नजटित तख्त-ए-ताऊस पर आसीन शाहजहां की शान-ओ-शौकत देखकर विदेशों से आने वाले राजदूत और यात्री आदि सभी अभिभूत हो जाते थे। ट्रेवर्नियर, बर्नियर तथा मनूची जैसे विदेशी यात्रियों ने अपने वृतान्तों में इस वैभव का उल्लेख किया है। नहर-ए-बहिश्त से सज्जित उद्यान से घिरे, सफ़ेद संगमरमर से बने, सोने-चाँदी व रत्नों और कीमती पत्थरों से जड़ित तथा चित्रों से शोभित, दीवान-ए-खास का दरबार पृथ्वी पर जन्नत का नज़ारा माना जाता था। दीवान-ए-खास में अमीर खुसरो का काश्मीर के लिए कहा गया यह फ़ारसी शेर अंकित था -

अगर फ़िरदौस बर रूए ज़मींनस्त।

हमीनस्तो, हमींनस्तो, हमींनस्त।।

(पृथ्वी पर यदि कहीं स्वर्ग है, तो यहीं है, यहीं है, यहीं है।)

बादशाह के अतिरिक्त शाही परिवार के अन्य सदस्यों तथा अमीरों का जीवन भी ऐश्वर्य से भरपूर था। शहज़ादा दाराशिकोह के विवाहोत्सव पर आतिशबाज़ी पर करोड़ों रुपये खर्च किए गए थे। जहांनारा के जन्मदिन पर भी जश्न और खैरात में करोड़ों का व्यय किया गया था।

2. दिल्ली का लाल किला, दिल्ली और आगरा की जामा मस्जिद, आगरा के लाल किले का दीवान-ए-खास और आगरा में स्थित मुमताज महल का मक़बरा ताजमहल, स्थापत्य कला के चरमोत्कर्ष के जीवन्त प्रमाण हैं। ताजमहल में कलाकारों ने स्थापत्य कला के सभी श्रेष्ठ तत्वों का समावेश किया है।

3. शाहजहां के शासनकाल के अन्तिम वर्षों को छोड़कर साम्राज्य में शान्ति एवं व्यवस्था स्थापित रही और कोई भी बड़ा विद्रोह नहीं हुआ। उद्योग एवं व्यापार की उन्नति के लिए भी परिस्थितियां अनुकूल रहीं। सत्रहवीं शताब्दी के चौथे दशक में अकाल की स्थिति में राज्य की ओर से व्यापक स्तर पर राहत का कार्यक्रम चलाया गया था।

4. शाहजहां के काल में दक्षिण भारत में अहमदनगर को जीत कर मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया था और गोलकुण्डा व बीजापुर को मुगलों की आधीनता स्वीकार करने के लिए बाध्य होना पड़ा था।

3.4.2 स्वर्ण युग कहलाए जाने के विरोध में तर्क

1. प्रजा के अनवरत शोषण के बल पर ही शाहजहां ने ऐश्वर्य तथा वैभव के नए मापदण्ड स्थापित किए थे। अकेले ताजमहल के निर्माण पर उस समय 3.2 करोड़ रुपये का खर्च आया था। राज्य के बढ़े हुए खर्चों की भरपाई के लिए उसने न केवल भूमि कर कुल उत्पाद के तीसरे भाग से बढ़ाकर कुल उत्पाद का आधा कर दिया था अपितु अनेक अबवाब भी लगाए थे।

2. शाहजहां ने यद्यपि जज़िया का स्थगन कायम रखा था किन्तु उसकी धार्मिक नीति गैर-मुस्लिमों व मुसलमानों में शियाओं के प्रति असहिष्णुतापूर्ण थी। उसने नए मन्दिरों के निर्माण व पुराने मन्दिरों की मरम्मत पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। ईसाई धर्म प्रचारकों के साथ उसका व्यवहार निर्ममतापूर्ण था।

3. दक्षिण भारत में शिवाजी के नेतृत्व में नवोदित मराठा शक्ति के दमन में शाहजहां असफल रहा। उसकी इस गल्ती की सज़ा औरंगज़ेब तथा उसके परवर्ती बादशाहों को भुगतनी पड़ी। मध्य एशिया पर अधिकार करने की उसकी असफल योजना ने राज्य पर भारी आर्थिक बोझ तो डाला ही, साथ ही साथ अजेय कहलाने वाली मुगल सेना इन अभियानों में बार-बार पराजित होकर अपनी प्रतिष्ठा भी खो बैठी। इस काल में मुगलों के हाथ से कान्धार निकल गया था।

4. शाहजहां के काल में जागीरदारी प्रथा के विस्तार से मनसबदारी व्यवस्था चरमरा गई थी और राजपूतों की साम्राज्य के प्रति निष्ठा में कमी आ गई थी। रिश्वतखोरी एक आम बात हो गई थी। दलगत और गुटबन्दी की राजनीति ने निष्ठा और स्वामिभक्ति जैसे शब्दों को बेमानी कर दिया था। साम्राज्य को एकसूत्र में बांधने वाली कड़ियां कमज़ोर हो गई थी।

5. साहित्य-सृजन तथा इतिहास लेखन की दृष्टि से पूर्व की तुलना में अवनति दृष्टिगोचर हो रही थी। अब रामचरितमानस और अकबरनामा जैसे महान ग्रंथों की रचना का युग समाप्त हो गया था। चित्रकला के क्षेत्र में भी प्राकृतिक रंगों में अभिव्यक्त जहांगीर के युग की मौलिक कल्पनाशीलता का स्थान तैलीय चित्रकला ने ले लिया था जिसमें ऊपरी तड़क-भड़क पर अधिक ध्यान दिया जाता था।

6. बादशाह शाहजहां के जीवित रहते हुए भी उत्तराधिकार के युद्ध की घटना और इससे भी अधिक इसमें बादशाह का अपदस्थ होने के बाद कैद किया जाना, और उसके द्वारा घोषित उत्तराधिकारी दारा शिकोह की पराजय के बाद गिरफ़्तारी, फिर उसको प्राणदण्ड दिया जाना उसके शासनकाल को स्वर्ण युग न कहे जाने के लिए पर्याप्त कारण हैं।

3.5 उत्तराधिकार का युद्ध

3.5.1 शाहजहां की बीमारी के समय उसके पुत्रों की स्थिति

इस्लाम के अन्तर्गत कोई भी शारीरिक व बौद्धिक दृष्टि से स्वस्थ मुसलमान शासक बनने की योग्यता रखता है। इसी कारण मुस्लिम शासकों को अपना उत्तराधिकारी घोषित करने का वैधानिक अधिकार नहीं था। मुगलों में उत्तराधिकार के नियमो का सुनिश्चित न होना प्रायः शासक की मृत्यु के बाद उत्तराधिकार हेतु युद्ध का कारण बनता रहा था परन्तु मुगल इतिहास में पहली बार बादशाह के जीवित रहते ही उसके सभी पुत्रों के मध्य उत्तराधिकार का युद्ध, सितम्बर, 1657 में शाहजहां के गम्भीर रूप से बीमार पड़ने के बाद हुआ। शाहजहां की बीमारी के समय उसका परम प्रिय ज्येष्ठ पुत्र, घोषित उत्तराधिकारी तथा पंजाब, उत्तर-पश्चिम प्रान्त का सूबेदार शाह बुलन्द इक़बाल दाराशिकोह उसके पास दिल्ली में था। शाह शुजा बंगाल और उड़ीसा का, औरंगज़ेब दक्षिण का तथा मुराद गुजरात का सूबेदार था।

3.5.2 शहज़ादों के मध्य युद्ध

शाहजहां की बीमारी का समाचार सुनकर दाराशिकोह पर उसके भाइयों ने यह आरोप लगाया कि उसने बादशाह की मृत्यु का समाचार छुपाकर सत्ता अपने हाथों में कर ली है। तीनों भाइयों ने दिल्ली की ओर प्रस्थान किया और बादशाहत के लिए अपनी-अपनी दावेदारी पेश की। बादशाह द्वारा उनको अपने-अपने स्थानों पर ही रुके रहने के आदेश को उन्होंने अनसुना कर दिया और इस प्रकार चारों शहज़ादों के मध्य उत्तराधिकार का युद्ध प्रारम्भ हो गया। चारों भाइयों में मुख्य प्रतिद्वन्दी उदारपंथी दाराशिकोह तथा कट्टरपंथी औरंगज़ेब थे। दाराशिकोह को बादशाह शाहजहां का पूर्ण समर्थन प्राप्त था जब कि औरंगज़ेब की ताकत उसकी अपनी सैनिक व कूटनीतिक प्रतिभा तथा उसको कट्टरपंथी मुसलमानों से मिलने वाला समर्थन था। औरंगज़ेब ने मुराद को भी राज्य का आपस में बंटवारा करने का आश्वासन देकर अपनी ओर मिला लिया था और उसने शुजा से भी पत्र व्यवहार कर दारा के विरुद्ध एक समझौता कर लिया था।

1. 14 फ़रवरी, 1658 को पूर्व की ओर से बढ़ रहे शाह शुजा को सुलेमानशिकोह के नेतृत्व में शाही सेना ने बहादुरगढ में पराजित किया।

2. 25 अप्रैल, 1658 को औरंगज़ेब व मुराद की संयुक्त सेना ने राजा जसवंत सिंह के नेतृत्व वाली शाही सेना को धरमत में पराजित किया।

3. धरमत के युद्ध में विजयी होने के बाद औरंगज़ेब की स्थिति अत्यन्त सुदृढ़ हो गई। उसके द्वारा इस्लाम की रक्षार्थ युद्ध करने की घोषणा ने अनेक मुस्लिम अमीरों को उसका समर्थक बना दिया था। शाहजहां द्वारा समझौते के सभी प्रस्तावों को औरंगज़ेब ने ठुकरा दिया। शाही सेना औरंगज़ेब की सेना को चम्बल पार करने से नहीं रो सकी। 8 जून, 1658 को फ़तेहपुर सीकरी के निकट सामूगढ़ के निर्णायक युद्ध में औरंगज़ेब की सेना ने दाराशिकोह की सेना को पराजित किया। पराजित दारा शिकोह आगरा पहुंचकर दिल्ली चला गया। औरंगज़ेब ने आगरा के किले पर अधिकार कर लिया और शाहजहां को बन्दी बना लिया।

4. दारा का पीछा करते समय औरंगज़ेब ने धोखा देकर मुराद को कैद करवा दिया। मुराद पर अलीनकीं खाँ की हत्या का आरोप सिद्ध कर उसे प्राणदण्ड दे दिया गया। शुजा को शाही सेना ने खनवा के युद्ध में पराजित कर दिया था और वहां से बंगाल, फिर बंगाल से अराकान भागते समय उसकी हत्या कर दी गई। औरंगज़ेब ने दारा का दिल्ली से लेकर लाहौर, मुल्तान, सिंध, कच्छ और गुजरात तक पीछा किया और जसवंत सिंह व मिर्ज़ा राजा जयसिंह को अपनी ओर कर लिया। 12 मार्च, 1659 को अजमेर के निकट देवरई में दारा शाही सेना द्वारा पराजित हुआ। विश्वासघाती शरणदाता मलिक जीवन ने दारा को बन्दी बनाकर औरंगज़ेब को सौंप दिया। दाराशिकोह पर इस्लाम के शत्रु होने का आरोप सिद्ध कर अगस्त, 1659 में धार्मिक अदालत ने उसे प्राण दण्ड दिया।

3.5.3 औरंगज़ेब का राज्यारोहण

अपने तीनों भाइयों को परास्त कर औरंगज़ेब ने शानदार जुलूस के साथ दिल्ली में प्रवेश किया और 15 मई, 1659 को वहां उसका राज्याभिषेक हुआ। अपदस्थ बादशाह शाहजहां को आजीवन आगरा के लाल किले के मुसम्मन बुर्ज मे कैद रखा गया।

3.5.4 उत्तराधिकार के युद्ध में औरंगज़ेब की सफलता के कारण

1. औरंगज़ेब ने प्रारम्भ में शुजा और मुराद को अपनी ओर मिलाकर दारा शिकोह के विरुद्ध एक सफल मोर्चा खोल लिया था।

2. स्वयं को इस्लाम का संरक्षक घोषित कर उसने प्रभावशाली मुस्लिम अमीरों तथा उलेमा वर्ग का समर्थन प्राप्त कर लिया था।

3. औरंगज़ेब ने मिर्ज़ा राजा जयसिंह और जसवंत सिंह को भी अपनी ओर करने में सफलता प्राप्त की थी।

औरंगज़ेब ने मौका पाकर अपने तीनों भाइयों को मरवा दिया और शाहजहां के विरुद्ध अपने विद्रोह तथा अपने राज्यारोहण को इस्लाम के संरक्षण हेतु अभियान के रूप में प्रस्तुत करने में सफलता प्राप्त की। शाहजहां ने औरंगज़ेब की किसी भी चाल को नाकाम करने में सफलता प्राप्त नहीं की। बागी शहज़ादों के प्रति कठोर कार्यवाही करने में देर करना उसे बहुत भारी पड़ा। लम्बी बीमारी के बाद अशक्त शाहजहां के जीवन ही में हुए इसः उत्तराधिकार के युद्ध में सबसे योग्य प्रतिभागी होने के कारण औरंगज़ेब का सफल होना कोई आश्चर्य नहीं था।

5. दारा शिकोह की उदारवादी विचारधारा, उसकी हीन सैन्य प्रतिभा और उसकी कूटनीतिक विफलता उसके पतन का मुख्य कारण बनीं। शुजा की विलासिता और मुराद की मानसिक अपरिपक्वता व अनियन्त्रित क्रोधी स्वभाव उनके लिए घातक सिद्ध हुए। कूटनीतिक एवं सैनिक प्रतिभा की दृष्टि से औरंगज़ेब अपने भाइयों में सबसे योग्य था अतः उसके द्वारा मुगलों के तख्त पर अधिकार कर लेना अपने पिता के साथ अन्याय करने व अपने भाइयों की निर्मम हत्या करने के कारण भले ही अनैतिक कहा जा सकता हो किन्तु उसे अस्वाभाविक एवं अप्रत्याशित नहीं कहा जा सकता।

3.6 इस्लाम के संरक्षक के रूप में बादशाह औरंगज़ेब

3.6.1 साम्राज्य में इस्लाम के आदर्शों तथा परम्पराओं की पुनर्स्थापना

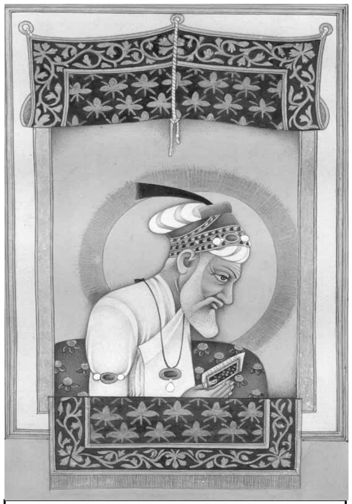

उत्तराधिकार के युद्ध में औरंगज़ेब ने स्वयं को इस्लाम के संरक्षक के रूप में प्रस्तुत कर उलेमा वर्ग तथा मुस्लिम अमीरों का समर्थन प्राप्त किया था और वह उनके सहयोग से अपना लक्ष्य प्राप्त करने में सफल रहा था। बादशाह बनने के बाद भी उसे इस्लाम के संरक्षक के रूप में अपनी छवि को पूर्ववत बनाए रखना आवश्यक हो गया था।

सिद्धान्ततः वह हिन्दुस्तान जैसे दारुल हर्ब (विधर्मियों का देश) को दारुल इस्लाम (इस्लाम के अनुयायियों का देश) में परिवर्तत करने के लिए वचनबद्ध था। उसके शासन में इस्लाम को राज-धर्म घोषित किया गया। औरंगज़ेब हनाफ़ी सम्प्रदाय का कट्टर सुन्नी मुसलमान था अतः उसने इसी

सम्प्रदाय की आस्थाओं व परम्पराओं को अपने राज्य में प्रतिष्ठित करना अपना कर्तव्य समझा। औरंगज़ेब ने अपने दरबार की गैर-मुस्लिम तथा हनाफ़ी मत के प्रतिकूल परम्पराओं को हटा दिया।

1. उसने अपने दरबार में रंग-बिरंगे तथा रेशमी वस्त्रों के पहनने पर पाबन्दी लगा दी।

2. औरंगज़ेब ने संगीत, इतिहास तथा चित्रकला को इस्लाम में वर्जित मानकर उनको राज्य की ओर से दिया जाने वाला संरक्षण समाप्त कर दिया। उसने होली, दिवाली, वसन्त, नौरोज़ जैसे गैर-मुस्लिम उत्सवों का राज्य की ओर से मनाया जाना समाप्त कर दिया। झरोखा दर्शन, तुलादान, पैबोस तथा सिजदा करने जैसी गैर-मुस्लिम परम्पराओं का भी परित्याग कर दिया गया।

3. औरंगज़ेब ने अपने सिक्कों पर कल्मा का अंकित किया जाना समाप्त करा दिया क्योंकि ये सिक्के विधर्मियों के हाथ में भी जाते थे।

4. अपने राज्य में मुसलमानों के धार्मिक व नैतिक जीवन में सुधार लाने के उद्देश्य से उसने मुहतसिबों की नियुक्ति की।

5. औरंगज़ेब ने हज-यात्रा के लिए अपनी मुस्लिम प्रजा को विशेष सुविधाएं दीं। मक्का-मदीना के लिए उसने निरन्तर उपहार भेजे। दीनी तालीम के प्रसार व मुसलमानों के अनाथ, बेसहारा बच्चों और विधवाओं के पालन हेतु उसने विशेष व्यवस्था कराई।

3.6.2 धार्मिक उत्पीड़न की नीति

1. औरंगज़ेब ने सन् 1659 में दाराशिकोह को धार्मिक अदालत से इस्लाम-विरोधी होने के कारण प्राणदण्ड दिलवाया। सन् 1661 में औरंगज़ेब ने दारा के मित्र और प्रसिद्ध शायर व सूफ़ी साधक सरमद को भी उसके उन्मुक्त विचारों के कारण धार्मिक अदालत द्वारा प्राणदण्ड दिलवाया गया। अपने उस्ताद रह चुके मुल्ला शाह क़ादरी को भी उसने उनकी उदार विचारधारा के लिए प्रताड़ित किया।

2. सिक्खों के नवें गुरु तेगबहादुर को बादशाह की धर्म-परिवर्तन की नीति की आलोचना करने और स्वयं धर्म परिवर्तन कर मुसलमान न बनने पर दिल्ली की कोतवाली में प्राणदण्ड दिया गया।

3. औरंगज़ेब जब दक्षिण का सूबेदार था तभी से बीजापुर और गोलकुण्डा के शिया राज्यों के प्रति उसके हृदय में वैमनस्य का भाव था। सन् 1686 में बीजापुर तथा सन् 1687 में गोलकुण्डा पर मुगलों का अधिकार होने के बाद उसने वहां प्रचलित सभी शिया परम्पराओं को समाप्त कर दिया।

4. औरंगज़ेब ने अकबर के मकबरे में बने चित्रों पर चूना पुतवा दिया क्योंकि इस्लाम में चित्रकला का निषेध बताया गया है।

5. मारवाड़ के शासक जसवंत सिंह की सन् 1678 में जमरूद में हुई मृत्यु में औरंगज़ेब का हाथ था। इस शक्तिशाली राजपूत शासक की मृत्यु के बाद औरंगज़ेब की धार्मिक उत्पीड़न की नीति और अधिक उग्र हो गई। उसने जसवंत सिंह के नवजात पुत्रों को बलात् मुसलमान बनाने का असफल प्रयास किया जो कि राजपूत स्वतन्त्रता संग्राम का मुख्य कारण बना। सन् 1679 में औरंगज़ेब ने 115 साल के बाद गैर-मुस्लिमों पर लगाया जाने वाला धार्मिक कर जज़िया फिर से लागू कर दिया।

6. औरंगज़ेब ने बलात् एवं धन व पदोन्नति का लालच देकर धर्म परिवर्तन की नीति को प्रोत्साहन दिया। उसने मुसलमानों के अतिरिक्त अन्य धर्मावलम्बियों को सार्वजनिक रूप से अपना धर्म पालन करने तथा त्यौहार मनाने की अनुमति नहीं दी। उसने गैर-मुस्लिमों के विरुद्ध सैनिक अभियानों को जिहाद का नाम दिया और अपने तथाकथित जिहाद के बाद उसने हर बार उनके पूजास्थलों का विध्वंस किया। काशी विश्वनाथ के मन्दिर और मथुरा में कृष्ण-जन्म मन्दिरों के प्रांगण में उसने मस्जिदों का निर्माण कराया। उसने राजपूतों के अतिरिक्त सभी हिन्दुओं के पालकी या घोड़े पर बैठने पर प्रतिबन्ध लगा दिया। औरंगज़ेब ने मुसलमानों की तुलना में गैर-मुस्लिमों पर जज़िया लगाने के अतिरिक्त व्यापारिक करों का भी अधिक बोझ डाला। उसके काल में राजपूत मनसबदार तो उच्च पदों पर बने रहे किन्तु मध्यम स्तर के प्रशासनिक पदों पर मुसलमानों का वर्चस्व स्थापित हो गया।

3.6.3 धार्मिक उत्पीड़न की नीति का विरोध

3.6.3.1 जाट प्रतिरोध

औरंगज़ेब ने अपने शासनकाल के पहले दस वर्षों में धार्मिक उत्पीड़न की नीति को सीमित क्षेत्र में ही लागू किया किन्तु इसके बाद बढ़ते हुए हिन्दू प्रतिरोध की प्रतिक्रिया में वह अपने दमन चक्र में और भी निर्मम हो गया। सन् 1669 में मथुरा के फ़ौजदार अब्दुन नबी की धार्मिक उत्पीड़न की नीति के विरोध में तिलपट के गोकुल जाट के नेतृत्व में विद्रोह हुआ। अब्दुन नबी मारा गया। जाट विद्रोह का दमन करने के बाद केशव राय मन्दिर को ध्वस्त कर दिया गया। गोकुल जाट के दमन के बाद भी राजा राम तथा चूरामन जाट के नेतृत्व में जाट प्रतिरोध अगले 40 वर्षों तक जारी रहा।

3.6.3.2 सतनामी प्रतिरोध

नारनौल के कृषक समुदाय सतनामियों ने अपने धार्मिक अधिकारों की रक्षार्थ मुगल सत्ता का विरोध किया और उनके विरुद्ध कई मोर्चों पर सफलता भी प्राप्त की। बड़ी कठिनाई से मुगलों को सतनामियों का दमन करने में सफलता मिल सकी।

3.6.3.3 सिक्खों का प्रतिरोध

सन् 1675 में गुरु तेगबहादुर द्वारा अपने धर्म की रक्षार्थ बलिदान के लगभग दो दशक बाद उनके पुत्र गुरु गोविन्द ने खालसा की स्थापना कर शान्तिप्रिय सिक्खों को एक लड़ाकू और जुझारू कौम में परिवर्तित कर दिया। उन्होंने आजीवन मुगलों का विरोध किया और पंजाब पर उनकी पकड़ को कमज़ोर किया।

3.6.3.4 राजपूत प्रतिरोध

सन् 1678 में जोधपुर के शासक राजा जसवंत सिंह की मृत्यु के बाद औरंगज़ेब द्वारा उनके मरणोपरान्त पुत्रों को इस्लाम धर्म में दीक्षित करने के प्रयास को राजपूतों ने अपने धर्म पर आघात मानकर मुगलों के विरुद्ध अपना स्वतन्त्रता अभियान छेड़ दिया। धीरे-धीरे विद्रोह की आग पूरे राजपूताना में फैल गई। औरंगज़ेब द्वारा सन् 1679 में जज़िया का फिर से लगाया जाना राजपूतों को स्वीकार्य नहीं था। मेवाड़ के राणा राजसिंह तथा मारवाड़ के दुर्गादास राठौड़ के नेतृत्व में राजपूत स्वतन्त्रता आन्दोलन ने मुगलों की शक्ति को क्षीण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

3.6.3.5 बुन्देला राजपूतों का प्रतिरोध

बुन्देला शासक छत्रसाल ने मुगलों की धार्मिक उत्पीड़न की नीति का विरोध करने तथा अपने धर्म की रक्षार्थ बुन्देलों को संगठित किया और दक्षिण में औरंगज़ेब की व्यस्तता का लाभ उठाकर मुगलों के विरुद्ध मोर्चा खोल दिया। छत्रसाल को बुन्देलखण्ड में स्वतन्त्र राज्य की स्थापना करने में सफलता मिली।

3.6.3.6 मराठा प्रतिरोध

शिवाजी द्वारा प्रतिपादित ‘हिन्द स्वराज्य’ की अवधारणा का मुख्य आधार अपने धर्म व राजनीतिक हितों की रक्षा करना था। इस विषय पर औरंगज़ेब की दक्षिण नीति तथा ब्लाक पॉच की इकाई चार - ‘मराठों के उत्थान के कारण तथा पेशवाओं के अंतर्गत मराठा प्रशासन’ के अन्तर्गत विस्तार से चर्चा की जाएगी।

3.6.3.7 औरंगज़ेब की धार्मिक नीति का आकलन

औरंगज़ेब ने अपने राजनीतिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए मुस्लिम उलेमाओं, अमीरों तथा आम मुसलमानों की धार्मिक भावनाओं का लाभ उठाया था किन्तु बादशाह बनने के बाद इस्लाम के संरक्षक की उसकी छवि स्वयं उसके लिए और उसके साम्राज्य के लिए सबसे बड़ी समस्या के रूप में उभर कर सामने आई थी। औरंगज़ेब की धार्मिक उत्पीड़न की नीति के देश-व्यापी विरोध ने औरंगज़ेब के लिए मुसीबतों का पहाड़ खड़ा कर दिया था। डॉक्टर अतहर अली और ज़ेड0

ए0 फ़ारूकी जैसे विद्वानों ने औरंगज़ेब द्वारा धार्मिक उत्पीड़न करने के आरोपों को अतिशयोक्तिपूर्ण माना है किन्तु इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि मुगल साम्राज्य की आर्थिक अवनति, उसके विघटन और पतन के लिए औरंगज़ेब की धार्मिक उत्पीड़न की नीति काफ़ी हद तक ज़िम्मेदार थी।

3.7 औरंगज़ेब की दक्षिण नीति

3.7.1 औरंगज़ेब का दक्षिण भारत का अभियान और प्रारम्भिक स□लताएं

शाहजहां के शासनकाल में औरंगज़ेब दो बार दक्षिण सूबेदार रह चुका था। सन् 1656 में वह बीजापुर और गोलकुण्डा पर विजय प्राप्त कर उनको मुगल साम्राज्य में मिलाने के लिए प्रयत्नशील था किन्तु उत्तराधिकार के युद्ध में कूद पड़ने के कारण उसे अपना विजय-अभियान अधूरा ही छोड़ना पड़ा था। परन्तु उत्तर भारत में अपनी व्यस्तताओं के कारण वह दक्षिण-विजय के अपने पुराने स्वप्न को साकार करने के लिए समय नहीं निकाल सका था। शिवाजी के अयोग्य उत्तराधिकारी छत्रपति शम्भाजी ने बागी शहज़ादे अकबर को शरण देकर औरंगज़ेब के दक्षिण अभियान के लिए अनुकूल परिस्थितियां उत्पन्न कर दी थीं। औरंगज़ेब ने सन् 1682 में दक्षिण के लिए अभियान किया। इस अभियान के मुख्य उद्देश्य थे -

1. बागी शहज़ादे अकबर को कैद करना।

2. बीजापुर तथा गोलकुण्डा के शिया राज्यों पर अधिकार कर वहां पर सुन्नी परम्पराओं का प्रचलन करना तथा मुगल साम्राज्य का विस्तार करना।

3. मराठों की शक्ति का दमन करना।

अगले सात वर्षों में अपने उपरोक्त लक्ष्यों को प्राप्त करने में औरंगज़ेब को ऊपरी तौर पर पर्याप्त सफलता मिली -

1. शम्भाजी के साथ 5 वर्ष बिताकर शहज़ादा अकबर भारत छोड़कर ईरान चला गया।

2. सन् 1686 में मुगलों ने बीजापुर पर तथा सन् 1687 में गोलकुण्डा पर अधिकार कर औरंगज़ेब ने दक्षिण में मुगल साम्राज्य के विस्तार के स्वप्न को साकार किया।

3. सन् 1689 में संगामेश्वर में छत्रपति शम्भाजी को मुगलों द्वारा गिरफ़्तार कर लिया गया और बाद में उसकी निर्ममतापूर्वक हत्या कर दी गई।

इतिहासकार सर जदुनाथ सरकार के शब्दों में - ऐसा प्रतीत होता था कि औरंगज़ेब ने दक्षिण में वह सब पा लिया जिसके लिए कि वह वहां पर पहुंचा था, किन्तु वास्तव में यह उसके अन्त की शुरुआत थी।

3.7.2 मराठा स्वतन्त्रता संग्राम

1. संगमेश्वर में छत्रपति शम्भाजी अपनी गिरफ्तारी के बाद एक नायक के रूप उभर कर सामने आया। अपनी जान बचाने के लिए न तो वह अपना धर्म परिवर्तित करने के लिए तैयार हुआ और न ही मुगलों की आधीनता स्वीकार करने को। एक अयोग्य शासक के रूप में कुख्यात शम्भाजी अपनी निर्भीक मृत्यु के बाद एक शहीद का सम्मान प्राप्त करने का अधिकारी बन गया। उसकी निर्मम हत्या कर औरंगज़ेब ने अपने लिए मुश्किलों का पहाड़ खड़ा कर दिया।

2. मराठों ने अपने छत्रपति के बलिदान को व्यर्थ न जाने देने के लिए शम्भाजी के छोटे भाई राजाराम के नेतृत्व में छापामार युद्ध नीति का आश्रय लेकर स्थानीय निवासियों के सहयोग से अपना स्वतन्त्रता आन्दोलन छेड़ दिया। धानाजी जाधव और सन्ताजी घोरपड़े ने मुगलों पर अनेक सफल हमले किए। उन्होंने औरंगज़ेब के शिविर तक पर हमले किए। मुगलों को अनेक बार मराठों के विरुद्ध सफलताए मिलीं किन्तु उनमें स्थायित्व नहीं रहा। विख्यात मुगल सेनानायक ज़ुल्फ़िकार खाँ ने जिन्जी के प्रसिद्ध किले पर अनेक बार विजय प्राप्त की परन्तु हर बार मराठों ने उसे वापस जीत लिया। मराठों ने मुगल सेना की रसद सामग्री को लूटकर अपने संसाधन बढ़ा लिए तथा मुगलों का जीवन दूभर कर दिया। मराठा छापामारों से अपनी जान बचाने के लिए अनेक बार मुगलों को उन्हें रिश्वत तक देनी पड़ती थी। रुस्तम खाँ, इस्माइल खाँ और अलीमर्दान खाँ जैसे अनेक मुगल सेनापतियों को मराठों ने कैद किया और भारी जुर्माना लेकर ही उनको मुक्त किया।

3. औरंगज़ेब को यह समझ आ गई कि साम्राज्य विस्तार हेतु उसने मराठों की गतिविधियों पर नियन्त्रण रखने वाले गोलकुण्डा तथा बीजापुर के राज्यों को समाप्त कर अपनी मुश्किलें बढ़ा ली हैं। राजाराम की सन् 1700 में मृत्यु के बाद भी औरंगज़ेब की कठिनाइयों का अन्त नहीं हुआ। राजाराम की विधवा ताराबाई के कुशल नेतृत्व में मराठा सव्तन्त्रता संग्राम पूर्ववत जारी रहा। औरंगज़ेब ने तोरना के किले को छोड़कर मराठों के सभी किलों पर अधिकार तो किया किन्तु उन पर उसकी पकड़ कभी मज़बूत नहीं हो सकी।

दूसरी ओर मराठों द्वारा दक्षिण के छहो मुगल सूबों पर छापे डाले जाते रहे और व्यावहारिक दृष्टि से इन क्षेत्रों पर मराठों का ही अधिकार हो गया।

3.7.3 मुगल साम्राज्य के पतन में औरंगज़ेब की दक्षिण नीति का दायित्व

1. औरंगज़ेब ने सन् 1686 में बीजापुर तथा सन् 1687 में गोलकुण्डा को मुगल साम्राज्य में मिलाकर दक्षिण में मुगल साम्राज्य का व्यापक विस्तार किया था किन्तु कुछ वर्षों के दक्षिण प्रवास में उसको यह समझ आ गई कि साम्राज्य विस्तार हेतु उसने मराठों की गतिविधियों पर नियन्त्रण रखने वाले इन स्वतन्त्र राज्यों को समाप्त कर अपनी मुश्किलें बढ़ा ली हैं। अब मराठों की शक्ति से उसको अकेले अपने दम पर ही निपटना था।

2. लगातार अपने घरों से दूर रहकर अनजान, दुर्गम एवं अभावग्रस्त क्षेत्र में जन-समर्थन प्राप्त मराठा शत्रुओं की छापामार युद्धनीति का मुगल सेना के पास कोई जवाब नहीं था। सन् 1707 में अपनी मृत्यु से पूर्व औरंगज़ेब दक्षिण में 26 वर्ष बिता चुका था किन्तु इतने समय में उसने केवल निराशा, हताशा, धन-जन तथा प्रतिष्ठा की अपरिमित हानि ही अर्जित की थी।

3. लगातार 26 वर्ष तक दक्षिण में रहने के कारण अपने साम्राज्य के अन्य क्षेत्रों पर औरंगज़ेब की पकड़ अत्यन्त शिथिल हो गई थी। राजपूताना, बुन्देलखण्ड, पंजाब, उत्तर-पश्चिम सीमा प्रान्त आदि क्षेत्र व्यावहारिक दृष्टि से मुगलों के अधिकार से निकल गए थे। औरंगज़ेब मुगल साम्राज्य के विघटन का एक मूक दर्शक बनकर रह गया था।

4. दक्षिण में लगातार युद्धों में व्यस्त रहने के कारण धन-जन की अपार हानि के बाद भी मुगल अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सके थे।

5. औरंगज़ेब की असफल दक्षिण नीति प्रशासनिक भ्रष्टाचार, अशान्ति, राजनीतिक अराजकता, गुटबन्दी, षडयन्त्र, आर्थिक संकट, कृषि, उद्योग एवं व्यापार के विकास में बाधा, साहित्य, कला एवं संस्कृति के क्षेत्र में अवनति के लिए ज़िम्मेदार थी। सर जदुनाथ सरकार ने औरंगज़ेब की दक्षिण नीति और नैपोलियन के स्पेन अभियान (स्पेन के नासूर) के विनाशकारी परिणामों में बहुत समानता पाई है। यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि औरंगज़ेब ने अपने दक्षिण अभियान से अपने साम्राज्य की कब्र खुद अपने हाथों से खोदी थी।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्नांकित पर चर्चा कीजिए-

1. शाहजहां की दक्षिण नीति।
2. शाहजहां का मध्य-एशिया अभियान।
3. उत्तराधिकार के युद्ध में औरंगज़ेब की सफलता के कारण।

4. इस्लाम के संरक्षक के रूप में बादशाह औरंगज़ेब।

5. औरंगज़ेब की सिक्खों के प्रति नीति।

6. औरंगज़ेब तथा छत्रपति शम्भाजी।

3.8 सारांश

बादशाह शाहजहां के काल में मुगल समृद्धि तथा वैभव की पराकाष्ठा पर पहुंच गए थे। उसके शासनकाल के अन्तिम वर्षों को छोड़कर साम्राज्य में प्रायः शान्ति बनी रही। अनेक विदेशी यात्रियों तथा इतिहासकारों ने उसके शासनकाल को मुगलकाल का स्वर्णयुग माना है किन्तु दक्षिण भारत छोड़कर शाहजहां को मध्य-एशिया तथा उत्तर-पश्चिम में साम्राज्य विस्तार करने में असफलता का सामना करना पड़ा था। शाहजहां के काल में प्रजा का आर्थिक शोषण बढ़ गया था तथा उत्तराधिकार के युद्ध ने तथा औरंगज़ेब द्वारा उसको अपदस्थ किए जाने की त्रासदी ने उसके शासनकाल की कमियों व दुर्बलताओं को उजागर कर दिया था।

औरंगज़ेब ने इस्लाम के सरक्षक के रूप में उत्तराधिकार के युद्ध में सफलता प्राप्त कर सिंहासन प्राप्त किया था। उसने इस्लाम को राज-धर्म घोषित कर उसके विकास हेतु निरन्तर प्रयास किए किन्तु गैर-मुस्लिमों के प्रति उसकी असहिष्णुता की नीति साम्राज्य में अशान्ति और अनवरत संघर्ष का कारण बनी। उसकी धार्मिक उत्पीड़न की नीति ने मुगलों के परम्परागत स्वामिभक्त राजपूतों व बुन्देलों को उनका शत्रु बना दिया और शान्तिप्रिय सिक्खों को एक लड़ाकू कौम बना दिया। मराठों का उत्कर्ष मुख्यतः उसी की अव्यावहारिक दक्षिण नीति का कुपरिणाम था। औरंगज़ेब की दक्षिण नीति उसके साम्राज्य केलिए एक नासूर बन गई और मुगल साम्राज्य के पतन का एक मुख्य कारण बनी।

3.9 पारिभाषिक शब्दावली

तख्त-ए-ताऊस - मयूर सिंहासन।
शान-ओ-शौकत - वैभव, तड़क-भड़क।
नहर-ए-बहिश्त - स्वर्ग की नहर।
अबवाब - अतिरिक्त कर, उपकर।
दारुल इस्लाम - आस्तिकों अर्थात् मुसलमानों का देश।
दारुल हर्ब - विधर्मियों का देश।
पैबोस - चरण चूमना।
सिजदा - साष्टांग प्रणाम।

मुहतसिब - मुसलमानों के धार्मिक एवं नैतिक जीवन के निरीक्षक।

3.10 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 4.3.3.1.1 दक्षिण-भारत अभियान।
2. देखिए 4.3.3.1.2 मध्य-एशिया तथा उत्तर-पश्चिम सीमा पर अभियान का बिन्दु 1।
3. देखिए 4.3.5.4 उत्तराधिकार के युद्ध में औरंगज़ेब की सफलता के कारण।
4. देखिए 4.3.6.1 साम्राज्य में इस्लाम के आदर्शों तथा परम्पराओं की पुनर्स्थापना।
5. देखिए 4.3.6.2 धार्मिक उत्पीड़न की नीति का बिन्दु 2 तथा 4.3.6.3.3 सिक्खों का प्रतिरोध।
6. देखिए 4.3.7.1 औरंगज़ेब का दक्षिण भारत का अभियान और प्रारम्भिक सफलताएं का बिन्दु 3 तथा 4.3.7.2 मराठा स्वतन्त्रता संग्राम का बिन्दु 1

3.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Saxena, B. P. – *Shah Jahan of Delhi*
2. Sarkar, Jadunath – *Short History of Arangzeb*
3. Faruki, Z. A. – *Auranzeb and Hus Times*
4. Sardesai, G. S. - *The New History of the Marathas*
5. Sarkar, Jadunath – *Fall of the Mughal Empire*

3.12 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Sarkar, Jadunath – *Studies in Mughal India*
2. Qanungo, K. R. – *Dara Shikoh*
3. Lane Poole, S. – *Medieval India*
4. Sarkar, Jadunath – *Shivaji*
5. Lane Poole, S. - *Aurangzeb*

3.13 निबंधात्मक प्रश्न

उत्तराधिकार के युद्ध में औरंगज़ेब की सफलता के कारणों का परीक्षण कीजिए।

इकाई चार- मुगलों के राजत्व का सिद्धान्त

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 मुगलों से पूर्व भारत में राजत्व का सिद्धान्त
4.3.1 प्राचीन भारत में राजत्व का सिद्धान्त
4.3.2 इस्लाम के अन्तर्गत राजत्व का सिद्धान्त
4.3.3 दिल्ली सल्तनत काल में राजत्व का सिद्धान्त
4.3.3.1 तथाकथित गुलाम वंश में राजत्व का सिद्धान्त
4.3.3.2 अलाउद्दीन खिलजी तथा मुहम्मद तुगलक का राजत्व का सिद्धान्त
4.3.3.3 अफ़गान राजत्व का सिद्धान्त
4.4 मुगलों का राजत्व का सिद्धान्त
4.4.1 बाबर का राजत्व का सिद्धान्त
4.4.2 अकबर का राजत्व का सिद्धान्त
4.4.3 शाहजहां का स्वयं को स्वर्गलोक के शासक के रूप में प्रस्तुत करना
4.4.4 मुगल राजत्व के सिद्धान्त में बादशाह के अधिकार और कर्तव्य
4.4.5 वंशानुगत शासन की परम्परा का विरोध
4.4.6 औरंगज़ेब द्वारा अकबर के राजत्व के सिद्धान्त में परिवर्तन
4.4.7 राजनीतिक पराभव के काल में मुगल राजत्व के सिद्धान्त की निरर्थकता
4.4.8 मध्यकालीन राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में मुगल राजत्व के सिद्धान्त का आकलन
4.5 सारांश
4.6 पारिभाषिक शब्दावली
4.7 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर
4.8 संदर्भ ग्रंथ सूची
4.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
4.10 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

बाबर ने भारत में पादशाह के रूप स्वयं को स्थापित किया था। सुल्तान पद की तुलना में पादशाह अथवा बादशाह का पद अधिक गरिमा, प्रतिष्ठा और शक्ति का द्योतक था। पूर्ण सम्प्रभुता प्राप्त शासक के रूप में मुगल बादशाहों ने स्वयं को खलीफ़ा द्वारा वैधानिक मान्यता दिए जाने की शर्त से व्यावहारिक व सैद्धान्तिक दृष्टि से मुक्त किया। पादशाह बाबर ने वंशानुगत शासन की स्थापना की और अपनी बहुसंख्यक गैर-मुस्लिम प्रजा को किंचित प्रतिबन्धों के साथ शान्तिपूर्वक जीने का अधिकार दिया।

अकबर ने राजत्व के दैविक सिद्धान्त का पोषण किया। उसने स्वयं को पृथ्वी पर ईश्वर के प्रतिनिधि, पूर्ण पुरुष तथा अपनी प्रजा के आध्यात्मिक मार्गदर्शक के रूप में प्रतिष्ठित किया। अबुल फ़ज़्ल ने आइन-ए-अकबरी में अकबर के धर्म-निर्पेक्ष राजत्व के सिद्धान्त की विशद व्याख्या की है। अकबर के राजत्व के सिद्धान्त पर हिन्दुओं के पौराणिक एवं ऐतिहासिक राजत्व के सिद्धान्तों का स्पष्ट प्रभाव पड़ा था।

औरंगज़ेब ने इस्लाम को राज-धर्म घोषित कर राजत्व के दैविक सिद्धान्त का परित्याग कर दिया और स्वयं को इस्लाम के संरक्षक के रूप में प्रस्तुत किया। अपने साम्राज्य कोदारुल हर्ब से दारुल इस्लाम में परिवर्तित करने के प्रयास में उसने राजनीति पर धर्म के प्रभुत्व को एक बार फिर से स्थापित किया। परवर्ती मुगल शासकों ने अपनी अयोग्यता व अकमर्ण्यता से मुगल राजत्व के सिद्धान्त की महत्ता को गहरा आघात पहुंचाया। मुगलों का राजत्व का सिद्धान्त मध्यकालीन राजनीतिक आदर्शों के अनुरूप था और इस पर तुर्की, ईरानी, मंगोल तथा भारतीय राजत्व के सिद्धान्तों का प्रभाव पड़ा था।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1- मुगलों के भारत आगमन से पूर्व प्रचलित राजत्व के सिद्धान्त।

2. पादशाह अथवा बादशाह की अवधारणा।

3. अकबर के राजत्व के सिद्धान्त सम्बन्धी प्रयोग।

4. राज-धर्म इस्लाम के अन्तर्गत औरंगज़ेब द्वारा अकबर द्वारा पोषित राजत्व के सिद्धान्त में परिवर्तन।

5. मध्यकालीन राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में मुगलों के राजत्व का सिद्धान्त।

4.3 मुगलों से पूर्व भारत में राजत्व का सिद्धान्त

4.3.1 प्राचीन भारत में राजत्व का सिद्धान्त

अति प्राचीन भारत में राजत्व के सिद्धान्त में शासक के चयन की प्रक्रिया प्रचलित थी। विभिन्न कबीलों द्वारा सबसे सक्षम व्यक्ति का शासक के रूप में चयन किया जाता था। शासक का अस्तित्व उसके शासकत्व के गुणों तथा उसके कर्तव्य निर्वाहन की क्षमता पर निर्भर करता था। एक अयोग्य शासक को कर्तव्य निर्वाहन की कसौटी पर खरा न उतरने की स्थिति में अपदस्थ भी किया जा सका था। वैशाली आदि राज्यों में शासक विहीन गणराज्य की स्थापना थी। किन्तु साम्राज्यों के उदय के काल में राजत्व के दैविक सिद्धान्त का पोषण किया जाने लगा। राजा को ईश्वर का प्रतिनिधि कहा जाने लगा। शासकगण अपने वंश की उत्पत्ति सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि आदि दैविक शक्तियों से बताने लगे और वंशानुगत शासन प्रणाली का पोषण करने लगे। राजा को अनियन्त्रित शक्तियां प्राप्त हुईं किन्तु उससे यह अपेक्षा की गई कि राज्य संचालन में वह धर्म, नीति और परम्पराओं का पालन करे। देवानां प्रिय सम्राट अशोक, चद्रगुप्त विक्रमादित्य और हर्षवर्धन ने आदर्श शासक की परिकल्पना को साकार करने में पर्याप्त सफलता प्राप्त की।

4.3.2 इस्लाम के अन्तर्गत राजत्व का सिद्धान्त

इस्लाम में धर्म और राजसत्ता आपस में जुड़े हुए होते हैं। वास्तव में आस्तिकों के समुदाय में धर्म और राजनीति दोनों में ईश्वरीय आदेश का ही अनुपालन होता है। इस्लाम के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ स्थान विशेष की परिस्थितियों तथा परम्पराओं के अनुसार राजत्व के सिद्धान्त में किंचित संशोधन अथवा परिवर्तन किए गए किन्तु मूलतः उसका स्वरूप कुरान शरीफ़ में वर्णित शासक के अधिकारों और कर्तव्यों पर ही आधारित रहा। प्रसिद्ध विचारक और इतिहासकार इब्न खल्दूम के अनुसार इस्लाम में शासक के बिना राज्य का अस्तित्व असम्भव है। इसीलिए हज़रत मुहम्मद की मृत्यु के बाद खलीफ़ा के पद तथा उसके राज्य खिलाफ़त की अवधारणा का विकास किया गया। खलीफ़ा को धर्म-प्रमुख, शासक तथा सर्वोच्च सेनानायक तीनों की ही भूमिका एक साथ निभानी थी। किन्तु उसकी सत्ता रोमन कैथोलिक चर्च के पोप के समकक्ष नहीं थी क्योंकि उसे पोप के समान धर्म की व्याख्या करने की शक्ति प्राप्त नहीं थी। खलीफ़ा को शरा के नियमों का पालन करते हुए एक शासक के अधिकारों व कर्तव्यों का निर्वाहन करना होता था। खलीफ़ा को स्वतः अपनी प्रजा पर शासन करने का अधिकार नहीं मिल जाता था। विभिन्न मुस्लिम समुदायों द्वारा उसका चयन होता था। खलीफ़ा को अपना उत्तराधिकारी घोषित करने का अधिकार नहीं था। खलीफ़ा का पद वंशानुगत नहीं होता था।

4.3.3 दिल्ली सल्तनत काल में राजत्व का सिद्धान्त

4.3.3.1 तथाकथित गुलाम वंश में राजत्व का सिद्धान्त

1. इस्लाम के व्यापक प्रचार-प्रसार के साथ खलीफ़ा की खिलाफ़त का भी विस्तार हुआ किन्तु व्यावहारिक रूप में इतने विशाल क्षेत्र पर एक ही व्यक्ति द्वारा शासन कर पाना असम्भव था। इसलिए ‘खलीफ़ा’ के अधीन ‘सुल्तान’ तथा ‘खिलाफ़त’ के अन्तर्गत ‘सल्तनत’ की संस्थाओं का विकास किया गया गया। सुल्तान को खलीफ़ा के नाइब के रूप में स्थापित किया गया। खुतबे में खलीफ़ा का नाम लिया जाना अनिवार्य था। दिल्ली के सुल्तानों ने तुर्क राजत्व के सिद्धान्त का पोषण किया जिसमें कि सुल्तान को शरियत के नियमों के अनुसार शासन करना आवश्यक होता था। इस हेतु उसको उलेमा वर्ग और उसमें भी विशेषकर सद्र-उस-सुदूर की सलाह अथवा उसके मार्गदर्शन की आवश्यकता पड़ती थी। दिल्ली के सुल्तान के रूप में इल्तुतमिश को गुलाम के गुलाम होने के कलंक को मिटाने के लिए खलीफ़ा से वैधानिक मान्यता प्राप्त करना आवश्यक हो गया था।

2. बलबन का राजत्व का सिद्धान्त प्रत्यक्षतः निरंकुश, स्वेच्छाचारी शासन का समर्थक दिखाई देता है परन्तु वास्तव में यह अनेक उपयोगी नियमों, नैतिक व धार्मिक आदर्शों से बंधा हुआ था। बलबन ने सुल्तान के पद की खोई हुई प्रतिष्ठा फिर से स्थापित करने और जनता व आभिजात्य वर्ग में सुल्तान के प्रति श्रद्धा तथा भय का भाव फिर से संचारित करने के लिए राजत्व के दैविक सिद्धान्त का पोषण किया। इस्लाम के इतिहास से यह विदित होता है किं खलीफ़ा का चयन किया जाता था और खलीफ़ा के अधिकारों का उसके कर्तव्यों से अटूट सम्बन्ध था किन्तु राजत्व के दैविक सिद्धान्त के अन्तर्गत शासक पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि माना जाता है और उसके आदेश में ईश्वर का आदेश प्रतिध्वनित होता है। राज्य में शासक का कोई समकक्ष नहीं हो सकता और न ही शासक के रूप में उसका कोई सम्बन्धी हो सकता है। शासक के सगे रक्त सम्बन्धियों के लिए भी उसके प्रति श्रद्धा और स्वामिभक्ति का प्रदर्शन करना, उनका कर्तव्य होता है। उसने सुल्तान के समक्ष हर किसी के लिए सिजदा और पैबोस जैसी गैर-मुस्लिम परम्पराओं का प्रचलन किया। सुल्तान को ईश्वर के प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत करने के उद्देश्य से उसने वैभवशाली एवं गरिमापूर्ण दरबार लगाया। इस दरबार में सुल्तान के सामने सभी हाथ बांधकर खड़े रहने के लिए बाध्य थे। सुल्तान के आदेश को ग्रहण करने के लिए अमीरों को उसे पैदल चलकर प्राप्त करना होता था। शासक के लिए आम इंसान की तरह हँसना या रोना तक निषिद्ध हो गया। बलबन ने दरबार में अपने पुत्र महमूद की मृत्यु का समाचार सुनकर भी रोना उचित नहीं समझा। आभिजात्य वर्ग, उलेमा तथा विद्वानों के अतिरिक्त उसने आम आदमियों से मिलना-जुलना बिलकुल बन्द कर दिया। बलबन ने स्वयं को पौराणिक अफ़्रीसियाबों का वंशज घोषित किया। बलबन ने बलबन का राजत्व का दैविक सिद्धान्त इस्लाम की मूल अवधारणाओं के विरुद्ध था किन्तु बलबन ने खलीफ़ा के प्रभुत्व अथवा उसकी सर्वोच्चता

को कभी चुनौती नहीं दी। बलबन के राजत्व के सिद्धान्त को हम पूर्ववर्ती कौटिल्य के अर्थशास्त्र तथा परवर्ती मैकियावेली के दि प्रिंस में उल्लिखित राजत्व के सिद्धान्त के समकक्ष रख सकते हैं।

4.3.3.2 अलाउद्दीन खिलजी तथा मुहम्मद तुगलक का राजत्व का सिद्धान्त

अलाउद्दीन खिलजी ने बलबन के राजत्व के दैविक सिद्धान्त का पोषण किया। उसने शासक को ईश्वर के प्रतिनिधि के रूप में स्थापित किया। अलाउद्दीन ने अमीरों की शक्ति व प्रतिष्ठा में कमी की। उसने जलाली अमीरों का पूर्णतया दमन कर दिया और अपने वफ़ादार अमीरों की शक्तियों को भी नियन्त्रित किया। गुप्तचरों का जाल बिछाकर अमीरों के आपस में मिलने-जुलने, वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने आदि पर उसने राज्य का नियन्त्रण स्थापित किया। विद्रोह व षडयन्त्र करने वालों का समूल विनाश कर उसने सभी को भविष्य में विद्रोह करने का दुःसाहस करने से रोक दिया। अलाउद्दीन ने उलेमा वर्ग की भी उपेक्षा की। उलेमाओं को मिलने वाली आर्थिक सुविधाओं और रियायतों को उसने समाप्त कर उन्हें साधनहीन बना दिया। अलाउद्दीन चूंकि शासक को ईश्वर का प्रतिनिधि मानता था इसलिए धर्म के नाम पर उलेमा वर्ग द्वारा राजकाज में हस्तक्षेप करना उसे स्वीकार्य नहीं था। उसने राज्य पर से धर्म का नियन्त्रण हटा दिया। अलाउद्दीन ने खलीफ़ा से खिलअत अथवा उपाधि प्राप्त करने का कोई प्रयास नहीं किया। मुहम्मद तुगलक ने भी अलाउद्दीन खिलजी की भांति अपने राज्य में धर्म अथवा धर्म प्रतिनिधियों की भूमिका पर नियन्त्रण लगा दिया किन्तु अलाउद्दीन खिलजी और मुहम्मद बिन तुगलक जैसे महत्वाकांक्षी सुल्तानों ने भी कभी खलीफ़ा की सत्ता से पूर्णतया स्वतन्त्र होने का साहस नहीं किया। अपनी गिरती साख को उठाने के उद्देश्य से मुहम्मद तुगलक ने खलीफ़ा के प्रतिनिधि का भव्य स्वागत-सम्मान किया था।

4.3.3.3 अफ़गान राजत्व का सिद्धान्त

1. सुल्तान बहलोल लोदी अफ़गान जाति का था। वह अफ़गानों की कबाइली राजनीतिक अवधारणा में विश्वास करता था। शासक की पूर्ण सम्प्रभुता और उसकी निरंकुश शक्ति में अफ़गानों की आस्था नहीं थी। उनका विश्वास शासक अथवा मुखिया के चुनाव में था न कि राजत्व के दैविक सिद्धान्त और वंशानुगत शासन की अवधारणा में। अपनी कबाइली संस्कृति में विश्वास रखते हुए अफ़गानों के विभिन्न कबीले, शासक को अपनी बिरादरी का मुखिया मानते थे न कि अपना स्वामी। बलबन, अलाउद्दीन खिलजी और मुहम्मद तुगलक के राजत्व के दैविक सिद्धान्त के विपरीत, सुल्तान बहलोल लोदी अफ़गानों के कबाइली और कुनबे की राजनीतिक अवधारणा में विश्वास करता था। बहलोल ने कभी भी एक स्वेच्छाचारी, निरंकुश एवं पूर्णसम्प्रभुता प्राप्त शासक की भांति व्यवहार नहीं किया। वह स्वयं को राज्य संघ का प्रमुख मात्र मानता था। उसने अपने पुरखों के स्थान रोह से अपने कबीले वालों को अपने राज्य में आने के लिए निमन्त्रित किया था। अपनी बिरादरी के अमीरों को उसने अपनी बराबरी का दर्जा दिया और सल्तनत में उनको अपना हिस्सेदार माना। उनके

रूठने पर उनको मनाने के लिए उनके घर तक जाने में उसे कोई ऐतराज़ नहीं था और उनके साथ एक ही मसनद पर बैठने में उसे कोई संकोच नहीं था।

2. सिकन्दर लोदी के अमीर उसको अपना स्वामी नहीं, अपितु अपना मुखिया मात्र मानते थे। उसके अनेक अमीर उसके स्थान पर बरबक शाह अथवा आज़म हुमायूं को सुल्तान बनाना चाहते थे। सिकन्दर लोदी ने बहलोल लोदी द्वारा पोषित राजत्व के सिद्धान्त में बदलाव कर सुल्तान पद की गरिमा को बढ़ाया और अमीरों के महत्व को कम किया। सुल्तान ने अपने अमीरों को अपने साथ एक ही मसनद पर बिठाने के स्थान पर उन्हें अपने सामने खड़े रहकर सम्मान प्रदर्शित करने के लिए विवश किया। अमीरों को सुल्तान के आदेश को पैदल चलकर ग्रहण करने के लिए बाध्य किया गया। अनुशासनहीन एवं भ्रष्ट अमीरों को उसने दण्डित किया और उनकी गतिविधियों पर दृष्टि रखने के लिए गुप्तचर नियुक्त किए।

3. इब्राहीम लोदी ने भी अपने पिता के समान अफ़गान राजत्व के सिद्धान्त को नकारते हुए सुल्तान के पद और उसकी गरिमा को अत्यधिक महत्ता दी और सुल्तान के चयन अथवा उसके कार्य-संचालन में अमीरों की किसी भी प्रकार की भूमिका को समाप्त कर दिया।

4.4 मुगलों का राजत्व का सिद्धान्त

4.4.1 बाबर का राजत्व का सिद्धान्त

बाबर स्वयं चग़ताई तुर्क था और अपनी माँ की ओर से उसमें मंगोल रक्त था। बाबर ईरान के सम्पर्क में भी रहा था। बाबरं का राजत्व का सिद्धान्त मुख्यतः तुर्क, ईरानी तथा मंगोल राजत्व के सिद्धान्तों पर आधारित था। बाबर ने अप्रैल, 1526 में पानीपत के युद्ध में विजय प्राप्त करने के बाद भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना के साथ-साथ एक नवीन राजत्व के सिद्धान्त की स्थापना भी की । बाबर ने स्वयं को सुल्तान के स्थान पर पादशाह अथवा बादशाह की उपाधि धारण की। पादशाह अथवा बादशाह एक पूर्ण सम्प्रभुता प्राप्त शासक होता था जब कि सुल्तान को अपने पद की वैधानिकता सिद्धान्ततः खलीफ़ा द्वारा प्रदान की जाती थी। इस प्रकार पादशाह अथवा बादशाह का दर्जा सुल्तान से कहीं अधिक ऊँचा था। सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि पादशाह अथवा बादशाह को अपने पद की वैधानिकता के लिए खलीफ़ा की मान्यता की आवश्यकता नहीं होती थी। इस प्रकार सुल्तान का अस्तित्व मूलतः इस्लाम के अन्तर्गत सर्वोच्च धार्मिक सत्ता खलीफ़ा के आधीन होता था जब कि पादशाह अथवा बादशाह को किसी धार्मिक सत्ता से मान्यता अथवा वैधानिकता प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं होती थी। पादशाह अथवा बादशाह की प्रजा को अपनी निष्ठा खलीफ़ा के प्रति नहीं बल्कि पादशाह अथवा बादशाह के प्रति प्रदर्शित करनी होती थी। इस प्रकार पादशाह अथवा बादशाह स्वयं में सर्वोच्च था और उसकी सत्ता धर्म-निर्पेक्ष थी। मुगल काल

में पादशाह की तुलना में सुल्तान तथा शाह पद की महत्ता कम की गई और यह पद अब शहज़ादों को प्रदान किया जाने लगा था। शहज़ादा खुर्रम को 'शाहजहां' और शहज़ादा मुअज़्ज़म को 'शाह' की उपाधि अपने-अपने पिताओं द्वारा ही प्रदान कर दी गई थी।

4.4.2 अकबर का राजत्व का सिद्धान्त

1. मुगलों ने राजत्व के दैविक सिद्धान्त का अनुपालन किया। मुगलों द्वारा शासक को ईश्वर का प्रतिनिधि बताया गया और उसके आदेश में ईश्वर के आदेश की प्रतिध्वनि बताई गई। राजभक्ति को ईश्वरीय भक्ति का ही एक रूप माना गया। इस दृष्टि से बादशाह के साम्राज्य के हर व्यक्ति के लिए उसके आदेश को मानना उसका धार्मिक कर्तव्य माना गया। अबुल फ़ज़्ल ने अपने ग्रंथ अकबरनामा में राजत्व को ईश्वरीय उपहार माना है। अबुल फ़ज़्ल ने बादशाह को प्रजा के संरक्षक, उसके पालक, शुभचिन्तक और अभिभावक के रूप में प्रस्तुत किया। इस प्रकार बादशाह के अपरिमित अधिकारों के साथ उसके कर्तव्यों को भी जोड़ दिया गया क्योंकि पिता के पद की गरिमा और उसके अधिकारों को बिना किसी दायित्व के ग्रहण नहीं किया जा सकता। अबुल फ़ज़्ल के अनुसार बादशाह का कार्य राज्य में शान्ति एवं व्यवस्था स्थापित कर उसे सुदृढ़ता तथां सुरक्षा प्रदान करना है। अगर बादशाह का अस्तित्व नहीं होता तो हर जगह अशान्ति, अराजकता व्याप्त रहती और निहित स्वार्थों में लिप्त व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के अधिकारों का हनन कर रहे होते। समस्त मानवजाति के लिए विनाशकारी इन प्रवृत्तियों पर नियन्त्रण स्थापित करने के लिए बादशाह को अपनी शक्ति का भय दिखलाना आवश्यक है। बादशाह के प्रति आज्ञाकारिता और उसके प्रति निष्ठा व स्वामिभक्ति प्रदर्शित करना उसकी प्रजा का कर्तव्य है। प्रजापालक बादशाह जनकल्याण, सर्वतोन्मुखी प्रगति तथा निष्पक्ष न्याय का जीवन्त प्रतीक होता है।

2. अबुल फ़ज़्ल पादशाह शब्द में पाद को स्थायित्व व स्वामित्व का तथा शाह को ईश्वर के प्रतिनिधि का प्रतीक मानता है। अतः पादशाह दैविक शक्ति से युक्त, ईश्वरीय आदेश पर पृथ्वी पर भेजा गया एक सर्वशक्तिमान शासक है जिसको आम प्रजा अथवा प्रभावशाली उलेमा वर्ग अथवा अमीरों द्वारा अपदस्थ नहीं किया जा सकता। पादशाह के विरुद्ध विद्रोह करना अथवा उसके आदेश की अवज्ञा करना, ईश्वरीय आदेश की अवमानना है।

एक आदर्श बादशाह सुख-दुःख से परे होता है। उसमें ईश्वरीय ज्ञान का प्रकाश प्रतिबिम्बित होता है इसलिए उसे अपनी प्रजा का आध्यात्मिक गुरु अथवा मार्गदर्शक बनने का भी अधिकार है। सन् 1579 में निर्गत महज़र में अकबर ने मुसलमानों के धार्मिक विवादों के विषय में प्रामाणिक व्याख्या तथा अन्तिम निर्णय देने का अधिकार अपने पास सुरक्षित रखा था। अकबर की नीतयों से असन्तुष्ट उलेमा वर्ग ने जब उसको अपदस्थ करने के षडयन्त्र में भाग लिया तब उसने उनके प्रभाव और प्रतिष्ठा को और भी क्षीण कर दिया।

3. सन् 1582 में दीन-ए-इलाही की योजना को प्रस्तुत किया गया था। अकबर इस नवीन मत का प्रणेता, आध्यात्मिक गुरु पुरोहित तथा पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि था। इसके मतावलम्बी अकबर से दीक्षा लेते थे और अपने अहंकार तथा स्वार्थ को त्याग कर उसके प्रति अपनी पूर्ण निष्ठा एवं भक्ति व्यक्त करते थे। तौहीद-ए-इलाही (दैविक एकेश्वरवाद) अथवा दीन-ए-इलाही को बदायूंनी ने अकबर द्वारा धर्म प्रवर्तक के रूप में अपने साम्राज्य की समस्त प्रजा को स्वनिर्मित एक राष्ट्रीय धर्म के अन्तर्गत लाने की महत्वाकांक्षी योजना कहा है। कुछ अन्य विद्वानों ने उसके द्वारा स्वयं को एक पैगम्बर या खलीफ़ा के रूप में प्रस्तुत करने का षडयन्त्र कहा है। दीन-ए-इलाही में अल्लाह हो अकबर (अल्लाह महान है।) तथा जल्ले जलाल हू के नारों का महत्व था। इन दोनों में बादशाह के नाम - 'अकबर' तथा 'जलालुद्दीन' का सम्मिलित होना आकस्मिक नहीं माना जा सकता। दीन-ए-इलाही में बादशाह अकबर को अपना आध्यात्मिक गुरु मानते हुए उपासक उसके समक्ष अपना तन-मन-धन तथा ईमान अर्पित करते थे। वास्तव में अकबर के राजत्व के सिद्धान्त के अनुसार, बादशाह, इस पृथ्वी पर, ईश्वर की छाया और उसका प्रतिनिधि होता है। अबुल फ़ज़्ल ने बादशाह अकबर को इंसान-ए-कामिल अर्थात् सर्वगुण सम्पन्न, दोषरहित, पूर्ण पुरुष के रूप में प्रस्तुत किया है। अकबर का राजत्व का सिद्धान्त इस्लाम की राजनीतिक परम्पराओं पर आधारित नहीं था। उसके राजत्व के सिद्धान्त पर हिन्दुओं के राजत्व सिद्धान्त का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। फ़तेहपुर सीकरी में अकबर ने दीवान-ए-खास का निर्माण कराया था। इसके मुख्य कक्ष के मध्य में बादशाह एक सुदृढ़ स्तम्भ के ऊपर कमल की आकृति के गोलाकार स्थान पर रखे सिंहासन पर बैठता था। इसकी प्रेरणा कमल पर विराजमान प्रजापति ब्रह्मा की अवधारणा से ली गई थी। अकबर ने अपने नवरत्नों की अवधारणा की प्रेरणा चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य तथा अन्य भारतीय शासकों से प्राप्त की थी। अकबर के ब्राह्मण चाटुकारों ने उसे भगवान कृष्ण के अवतार के रूप में भी प्रस्तुत किया था। अकबर ने झरोखा दर्शन की हिन्दू शासकों की परम्परा को पुनर्जीवित किया था। उसके काल में उसके अनेक भक्त दर्शनिए बन गए थे जो कि अकबर का दर्शन किए बिना अन्न-जल ग्रहण नहीं करते थे। इस प्रकार अकबर ने व्यक्ति पूजा को प्रोत्साहन दिया जो कि इस्लाम के मूलभूत सिद्धान्तों के विरुद्ध था।

4.4.3 शाहजहां का स्वयं को स्वर्गलोक के शासक के रूप में प्रस्तुत करना

दिल्ली के लालकिले में उद्यान-योजना, नहरे बहिश्त , दीवान-ए-खास में शाहजहां के दरबार का अनुपम वैभव और तख्त-ए-ताऊस पर उसका विराजमान होना तथा दीवान-ए-खास को पृथ्वी पर स्वर्ग के रूप में प्रस्तुत करने की गर्वोक्ति शाहजहां द्वारा स्वयं को स्वर्गलोक के शासक इन्द्र के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास कहा जा सकता है।

4.4.4 मुगल राजत्व के सिद्धान्त में बादशाह के अधिकार और कर्तव्य

महान मुगल बादशाहों में हुमायूं तथा जहांगीर के अतिरिक्त सभी बादशाह कर्मठ थे तथा अपने अधिकारों के साथ-साथ अपने कर्तव्यों के प्रति जागरूक थे। सभी बादशाह अपनी प्रजा के हितों के संरक्षण के लिए प्रयत्नशील रहते थे। बादशाह अकबर ने अप्रत्यक्ष रूप से सम्राट अशोक तथा शेरशाह की लोक-कल्याणकारी शासन-व्यवस्था से प्रेरणा प्राप्त की थी। बादशाह बाबर और बादशाह अकबर ने सैनिक अभियानों में स्वयं अपनी वीरता और साहस से अपने सैनिकों के लिए एक आदर्श उपस्थित किया था। सभी बादशाहों ने निष्पक्ष न्याय वितरण को अपना कर्तव्य माना था। राजा विक्रमादित्य तथा शेर शाह की न्याय व्यवस्था उनके लिए आदर्श थी। अपनी चारित्रिक दुर्बलताओं के बावजूद जहांगीर ने इंसाफ़ पसन्द बादशाह के रूप में ख्याति प्राप्त की थी। अब्दुल हमीद लाहौरी ने अपने ग्रंथ बादशाहनामा में शाहजहां की व्यस्त दिनचर्या का विस्तृत वर्णन किया है। बादशाह औरंगज़ेब आजीवन कर्तव्य निर्वाहन के प्रति अपने समर्पित भाव के लिए विख्यात रहा। महान मुगल बादशाहों ने स्वयं को उदार निरंकुश शासक के रूप में प्रतिष्ठित करने में पर्याप्त सफलता प्राप्त की थी। अबुल फ़ज़्ल आइन-ए-अकबरी में एक आदर्श पादशाह को निष्पक्ष न्यायकर्ता, सत्यान्वेषी तथा प्रजा को शान्ति एवं सुरक्षा प्रदान करने वाले कर्तव्यपरायण प्रजापालक के रूप में देखता है।

4.4.5 वंशानुगत शासन की परम्परा का विरोध

इस्लाम में वंशानुगत शासन की अवधारणा मान्य नहीं है। शारीरिक तथा मानसिक दृष्टि से स्वस्थ कोई भी मुसलमान शासक का पद प्राप्त करने का अधिकारी है। शासक को अपना उत्तराधिकारी घोषित करने का अधिकार नहीं है। मुगल शासकों ने अपने जीवन में ही प्रायः अपने उत्तराधिकारियों की घोषणा कर दी थी किन्तु उनके जीवन काल में ही शहज़ादों तथा प्रभावशाली अमीरों के विद्रोहों तथा उनकी मृत्यु के तुरन्त बाद शहज़ादों के मध्य उत्तराधिकार के युद्धों ने उनके इन प्रयासों को असफल सिद्ध कर दिया था। शाहजहां जैसे प्रतापी बादशाह को तो अपने शासनकाल में ही न केवल उत्तराधिकार का युद्ध देखना पड़ा बल्कि औरंगज़ेब द्वारा अपदस्थ किए जाने के बाद आठ वर्ष तक कैदखाने में अपमानजनक जीवन व्यतीत करने के लिए विवश भी होना पड़ा।

4.4.6 औरंगज़ेब द्वारा अकबर के राजत्व के सिद्धान्त में परिवर्तन

औरंगज़ेब ने स्वयं को इस्लाम के संरक्षक के रूप में प्रस्तुत कर उत्तराधिकार के युद्ध में सफलता प्राप्त की थी। बादशाह बनने के बाद इस्लाम के मान्य राजत्व सिद्धान्त को पुनर्स्थापित करना उसके प्रारम्भिक कार्यक्रम सम्मिलित था। उसने व्यक्तिगत जीवन में सादगी, परिश्रम और धर्माचरण को अपनाया। उसके जीवन में ही उसकी छवि आलमगीर ज़िन्दापीर की बन गई। चूंकि

औरंगज़ेब ने इस्लाम को राज-धर्म घोषित कर दिया था अतः उसने उलेमा वर्ग को राज्य की नीतियों के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने का अवसर प्रदान किया। औरंगज़ेब के काल में अकबर और शाहजहां के काल के शाही वैभव का स्थान सादगी ने ले लिया और बादशाह के सामने सिजदा, कोर्निश करने तथा उसके चरण चूमने की गैर-मुस्लिम प्रथा - पैबोस को समाप्त कर दिया गया झरोखा दर्शन तथा तुलादान जैसी हिन्दू परम्पराओं को भी समाप्त कर दिया गया। अभिवादन के लिए सलाम वालिकुम तथा उसके जवाब में वालेकुम अस्सलाम का प्रचलन किया गया। औरंगज़ेब एक स्वेच्छाचारी निरंकुश बादशाह के स्थान पर एक सच्चा धर्मनिष्ठ मुसलमान बादशाह बनना चाहता था जिसका कि कोई भी कार्य इस्लाम की मूल आस्थाओं तथा परम्पराओं के विरुद्ध न हो।

4.4.7 राजनीतिक पराभव के काल में मुगल राजत्व के सिद्धान्त की निरर्थकता

वास्तव में मुगल राजत्व का सिद्धान्त तभी तक बादशाह पद को गरिमा प्रदान कर सका जब तक कि मुगल बादशाह शक्तिशाली रहे। महान मुगल बादशाहों के अवसान के बाद परवर्ती मुगल शासकों के काल में राजत्व का सिद्धान्त व्यावहारिक दृष्टि से पूर्णतया निरर्थक हो गया। अब सैयद बन्धु, इमाद्7उल-मुल्क अथवा नजीब-उद्-दौला जैसे प्रभावशाली अमीर, बादशाहों को शतरंज के मोहरों की भांति बदलने लगे थे। इन निर्बल और कठपुतली बादशाहों में से शायद ही किसी की स्वाभाविक मृत्यु हुई थी, इनमें से अधिकांश प्रभावशाली व महत्वाकांक्षी अमीरों के हाथों मारे गए थे। बादशाह के प्रति न तो किसी के हृदय में अब न तो भय का भाव रह गया था और न ही श्रद्धा का।

4.4.8 मध्यकालीन राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में मुगल राजत्व के सिद्धान्त का आकलन

मध्यकालीन राजत्व का सिद्धान्त सामान्यतः निरंकुश स्वेच्छाचारी राजतन्त्र का पोषक था। इस काल में लोकतान्त्रिक मूल्य, जनभावना का सम्मान, नागरिक अधिकार, बौद्धिक राजनीतिक दृष्टिकोण, धर्म-निर्पेक्षता आदि का राजत्व के सिद्धान्त से कोई भी सम्बन्ध नहीं था। मध्यकाल में पूरे विश्व में निरंकुश शासकों का आधिपत्य रहा। मैकियावेली के राजत्व के सिद्धान्त का प्रतिबिम्बन हम किसी भी देश के मध्यकालीन शासक के राजत्व के सिद्धान्त में देख सकते हैं। मुगल राजत्व का सिद्धान्त, शोषण, दमन, असमानता, निरंकुशता, स्वेच्छाचारिता, धार्मिक संकीर्णता और वंशवाद का पोषक था किन्तु आज के प्रगतिशील राजनीतिक दृष्टिकोण से मुगल राजत्व के सिद्धान्त का हम आकलन नहीं कर सकते। मुगलों ने मध्यकालीन राजनीतिक वातावरण में शासक के अधिकार और कर्तव्य में एक व्यावहारिक सामन्जस्य स्थापित करने का प्रयास किया था। अकबर, जहांगीर और एक सीमा तक शाहजहां ने मुस्लिम मान्यताओं पर आधारित राजत्व के सिद्धान्त में आवश्यकतानुसार परिवर्तन किया था। जिस काल में यूरोप में धर्मयुद्ध के नाम पर रक्तपात हो रहा था

उस काल में मुगल बादशाहों ने अपनी बहुसंख्यक गैर-मुस्लिम प्रजा को अपने साम्राज्य में शान्तिपूर्वक, सुख से जीने का अधिकार प्रदान कर अपनी उदारता का परिचय दिया था।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्नांकित पर चर्चा कीजिए-

1. प्राचीन भारत में राजत्व का सिद्धान्त।

2. बलबन का राजत्व का सिद्धान्त।

3. बाबर का राजत्व का सिद्धान्त।

4. दीन-ए-इलाही के अन्तर्गत बादशाह अकबर की महत्ता।

5. बादशाह के अधिकार और कर्तव्य।

6. मुगल राजत्व के सिद्धान्त का आकलन।

4.5 सारांश

राजत्व का सिद्धान्त शासक के अधिकार, उसके कर्तव्य, उसके राजनीतिक व धार्मिक महत्व की व्याख्या करता है। प्राचीन भारत में साम्राज्यों की स्थापना से पूर्व राजत्व के सिद्धान्त में लोकतान्त्रिक मूल्य के दर्शन होते हैं जब कि साम्राज्यों की स्थापना के युग में राजत्व के दैविक सिद्धान्त का पोषण किया गया। इस्लाम के अन्तर्गत विभिन्न कबीलों द्वारा चयनित शासक को प्रशासक, सेनानायक तथा धर्म-प्रमुख की तिहरी भूमिका निभानी होती थी। दिल्ली सल्तनत काल में सुल्तान को खलीफ़ा के नाइब के रूप स्वयं को स्थापित करना होता था। सुल्तान बलबन ने राजत्व के दैविक सिद्धान्त का पोषण कर सुल्तान पद की गरिमा में वृद्धि की थी। अलाउद्दीन खिलजी तथा मुहम्मद तुगलक ने शासन में धर्म के हस्तक्षेप को नियन्त्रित करने का प्रयास किया था। लोदी काल में पोषित अफ़गान राजत्व के सिद्धान्त में शासक और अमीर में स्वामी और सेवक का नहीं बल्कि परिवार के मुखिया और परिवार के सदस्य का सम्बन्ध होता था परन्तु सिकन्दर लोदी व इब्राहीम लोदी ने अमीरों पर सुल्तान का प्रभुत्व स्थापित करने का प्रयास किया था।

बाबर ने भारत में पादशाह के रूप स्वयं को स्थापित किया था। सुल्तान पद की तुलना में पादशाह अथवा बादशाह का पद अधिक गरिमा, प्रतिष्ठा और शक्ति का द्योतक था। पूर्ण सम्प्रभुता प्राप्त शासक के रूप में मुगल बादशाहों ने स्वयं को खलीफ़ा द्वारा वैधानिक मान्यता दिए जाने की

शर्त से व्यावहारिक व सैद्धान्तिक दृष्टि से मुक्त किया। पादशाह बाबर ने वंशानुगत शासन की स्थापना की।

अकबर ने राजत्व के दैविक सिद्धान्त का पोषण किया। उसने स्वयं को पृथ्वी पर ईश्वर के प्रतिनिधि तथा अपनी प्रजा के आध्यात्मिक मार्गदर्शक के रूप में प्रतिष्ठित किया। अकबर के राजत्व के सिद्धान्त पर हिन्दुओं के पौराणिक एवं ऐतिहासिक राजत्व के सिद्धान्तों का स्पष्ट प्रभाव पड़ा था। औरंगज़ेब ने इस्लाम को राज-धर्म घोषित कर राजत्व के दैविक सिद्धान्त का परित्याग कर दिया और स्वयं को इस्लाम के संरक्षक के रूप में प्रस्तुत किया। उसने राजनीति पर धर्म के प्रभुत्व को एक बार फिर से स्थापित किया। परवर्ती मुगल शासकों ने अपनी अयोग्यता व अकमर्ण्यता से मुगल राजत्व के सिद्धान्त की महत्ता को गहरा आघात पहुंचाया। मुगलों का राजत्व का सिद्धान्त मध्यकालीन राजनीतिक आदर्शों के अनुरूप था और इस पर तुर्की, ईरानी, मंगोल तथा भारतीय राजत्व के सिद्धान्तों का प्रभाव पड़ा था।

4.6 पारिभाषिक शब्दावली

नाइब - प्रतिशासक, उप-शासक।

पादशाह - पूर्ण सम्प्रभुता प्राप्त शासक

खुतबा - जुम्मे तथा त्यौहारों के अवसर पर पढ़ी जाने वाली नमाज़ में समकालीन शासक का उल्लेख।

सद्र-उस-सुदूर - दान एवं धार्मिक मामलों के विभाग का प्रमुख।

वंशानुगत शासन प्रणाली - एक ही वंश में से शासकों की व्यवस्था।

ज़िन्दापीर - अपने जीवनकाल में ही एक पहुंचे हुए सन्त की प्रतिष्ठा प्राप्त करने वाला।

4.7 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 4.4.3.1 प्राचीन भारत में राजत्व का सिद्धान्त।

2. देखिए 4.4.3.3.1 तथाकथित गुलाम वंश में राजत्व का सिद्धान्त का बिन्दु - 2 ।

3. देखिए 4.4.4.1 बाबर का राजत्व का सिद्धान्त।

4. देखिए 4.4.4.2 अकबर का राजत्व का सिद्धान्त का बिन्दु -3 ।

5. देखिए 4.4.4.4 मुगल राजत्व के सिद्धान्त में बादशाह के अधिकार और कर्तव्य।

6. देखिए 4.4.4.8 मध्यकालीन राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में मुगल राजत्व के सिद्धान्त का आकलन।

4.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Abul Fazl – *The Ain-i-Akbari* (English Tr. Blochmann, H.)

2. Qureshi, I. H. – *The Administration of the Mughal Empire*

3. Sarkar, J. N. – *Mughal Administration*

4. Day, U. N. – *The Mughal Government (A.D. 1556-1707)*

4.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Smith, V. A. – *Akbar the Great Mogul*

2. Abul Fazl – *Akbarnama* (English tr. Beveridge, H.)

4.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. अकबर के राजत्व के सिद्धान्त में उसकी राजनीतिक एवं धार्मिक महत्वाकांक्षाओं के प्रतिबिम्बन का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

इकाई एक- मुगल प्रशासन का स्वरुप, वित्त व्यवस्था, मनसबदारी व्यवस्था

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 मुगल प्रशासन का स्वरूप

1.3.1 केन्द्रीय शासन

1.3.1.1 बादशाह

1.3.1.2 वकील

1.3.1.3 वज़ीर-ए-आज़म/वज़ीर/दीवान-ए-कुल/दीवान-ए-आला/दीवान

1.3.1.4 मीरबख्शी

1.3.1.5 वकील-ए-दर/खान-ए-सामाँ/मीर-ए-सामाँ

1.3.1.6 सद्र-उस-सुदूर

1.3.1.7 काज़ी-उल-कज़ात

1.3.1.8 मीर-ए-आतिश

1.3.1.9 दारोगा-ए-डाक चौकी

1.3.1.10 मुहतसिब

1.3.2 प्रान्तीय शासन

1.3.2.1 साम्राज्य का प्रान्तों में विभाजन

1.3.2.2 सूबेदार

1.3.2.3 दीवान

1.3.2.4 बख्शी

1.3.2.6 वाकियानवीस

1.3.2.7 कोतवाल

1.3.2.8 दारोगा-ए-डाक चौकी

1.3.2.9 मीर-ए-बहर

1.3.3 स्थानीय प्रशासन

1.3.3.1 सरकार

1.3.3.2 परगना

1.3.3.3 ग्राम

1.3.4 प्रशासनिक व्यवस्था का आकलन
1.4 वित्त व्यवस्था
1.4.1 कर प्रणाली
1.4.1.1 भू राजस्व व्यवस्था
1.4.1.2 जज़िया
1.4.1.3 ज़कात
1.4.1.4 खम्स
1.4.1.5 अबवाब (अतिरिक्त कर)
1.4.2. मुद्रा प्रणाली
1.4.3 शिल्प तथा उद्योग
1.4.3.1. वस्त्र उद्योग
1.4.3.2. अन्य उद्योग
1.4.4 व्यापार एवं वाणिज्य
1.4.4.1. आन्तरिक व्यापार
1.4.4.2 विदेश व्यापार
1.4.5 मुगलकालीन वित्त व्यवस्था का आकलन
1.5 मनसबदारी व्यवस्था
1.5.1 मनसबदारी व्यवस्था की उत्पत्ति
1.5.2 जागीर तथा जागीर-ए-वतन
1.5.3 मनसबदारी व्यवस्था के अन्तर्गत ज़ात तथा सवार पद
1.5.4 मनसबदारों की श्रेणियां
1.5.5 दोअस्पा तथा सिहअस्पा
1.5.6 मुगलकाल में मनसबदारों की संख्या
1.5.7 मनसबदारी व्यवस्था पतन
1.6 सारांश
1.7 पारिभाषिक शब्दावली
1.8 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर
1..9 संदर्भ ग्रंथ सूची
1.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.11 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

मुगल काल में मुख्य रूप से सैन्य शक्ति पर आधारित एक केन्द्रीकृत शासन था। मुगलों ने तुर्क, मंगोल, अफ़गान और भारतीय प्रशासनिक परम्पराओं का समन्वय कर अपनी प्रशासनिक व्यवस्था का विकास किया था। बादशाह इसका सर्वोच्च प्रशासक तथा सर्वोच्च सेनानायक होता था। वह साम्राज्य के सर्वोच्च न्यायाधीश की भूमिका भी निभाता था। बादशाह अपने उच्चस्थ अधिकारियों की स्वयं नियुक्ति करता था। केन्द्रीय शासन के अन्तर्गत उच्च्तम अधिकारी वकील, वज़ीर अथवा दीवान-ए-कुल, मीरबख्शी, मीर-ए-सामाँ, सद्र-उस-सुदूर, काज़ी-उल-कज़ात, मीर-ए-आतिश, दारोगा-ए-डाक चौकी, मीर-ए-बहर, मुहतसिब आदि थे। इन अधिकारियों को केन्द्रीय प्रशासन के अपने दायित्व के अतिरिक्त अपने विभागों से सम्बद्ध प्रान्तों के अधिकारियों पर भी नज़र रखनी होती थी। प्रान्त के सर्वोच्च अधिकारी सूबेदार तथा वित्त विभाग के प्रमुख दीवान की नियुक्ति बादशाह द्वारा की जाती थी। प्रान्तीय प्रशासन को हम केन्द्रीय प्रशासन का ही लघु रूप कह सकते हैं। स्थानीय प्रशासन में सरकार, परगने और ग्राम का प्रशासन आता था।

मुगल साम्राज्य की सुदृढ़ता एवं उसके स्थायित्व का मूल कारण उसकी सक्षम वित्त व्यवस्था थी। केन्द्र में दीवान-ए-कुल तथा प्रान्त में दीवान वित्त विभाग का प्रमुख होता था। मुगलों की राजस्व प्रणाली मुख्य रूप से मुस्लिम प्रशासनिक परम्पराओं के अनुरूप थी। खिराज, खम्स, जज़िया और ज़कात मुख्य कर थे और समय-समय पर आवश्यकतानुसार अबवाब भी लगाए जाते थे। मुगल काल में उच्च कोटि की सोने, चाँदी व तांबे की मुद्राओं का प्रचलन था। राज्य की ओर से कृषि, उद्योग एवं व्यापार के संरक्षण तथा प्रोत्साहन के लिए विशेष प्रयास किए जाते थे। इस काल में व्यापार संतुलन भारत के पक्ष में था।

प्रशासनिक एकरूपता स्थापित करने के उद्देश्य से अकबर ने मनसबदारी व्यवस्था को मुगल सैनिक संगठन तथा नागरिक प्रशासन का आधार बनाया था। राज्य के सभी छोटे-बड़े सैनिक तथा असैनिक अधिकारियों को एक सैनिक पद 'मनसब' प्रदान किया गया। मनसबदारों की नियुक्ति का अधिकार बादशाह का होता था। उच्चतम मनसब शहज़ादों को प्रदान किया जाता था। पहले मनसबदारों को एक पदीय मनसब दिया जाता था परन्तु बाद में उन्हें वैयक्तिक पद 'ज़ात' और अश्वारोहियों की संख्या के आधार पर 'सवार' मनसब प्रदान किया जाने लगा। जहांगीर के काल से 'सवार' पद में 'दोअस्पा' तथा 'सिंहअस्पा' सवारों का भी वर्गीकरण किया जाने लगा। मनसबदारों को वेतन के रूप में नकदी अथवा जागीर दिए जाने की व्यवस्था की गई। मनसबदार का मनसब और जागीर वंशानुगत नहीं थे। मनसबदारों में तुर्क, उज़बेग, ईरानी, अफ़गान, हिन्दुस्तानी मुसलमान, राजपूत और अनन्तर काल में दक्किनी और मराठे शामिल थे। धीरे-धीरे मनसबदारी व्यवस्था में शिथिलता आती चली गई और मनसबदारों की संख्या निरन्तर बढ़ने से राजकोश पर बोझ बढ़ने

लगा। पतनोन्मुख मुगल साम्राज्य में मनसबदारों की निष्ठा में कमी और उनकी महत्वाकांक्षाओं में वृद्धि देखी गई। शिथिल एवं बोझिल मनसबदारी व्यवस्था मुगल साम्राज्य के पतन का एक प्रमुख कारण बनी।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य मुगल प्रशासन के विभिन्न पहलुओं, विभिन्न मुगलकालीन वित्तीय संस्थाओं की कार्य प्रणाली तथा मनसबदारी व्यवस्था के गुण-दोषों से आपको अवगत कराना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1- मुगल प्रशासन के अन्तर्गत केन्द्रीय, प्रान्तीय एवं स्थानीय प्रशासनिक व्यवस्था।

2- मुगल राजस्व व्यवस्था, मुदा प्रणाली, औद्योगिक एवं व्यापारिक नीति।

3- मनसबदारी व्यवस्था की उत्पत्ति, विकास, कार्यप्रणाली और मुगल साम्राज्य के पतन में उसका दायित्व।

1.3 मुगल प्रशासन का स्वरूप

1.3.1 केन्द्रीय शासन

1.3.1.1 बादशाह

मुगल प्रशासन में सैन्य शक्ति पर आधारित एक केन्द्रीकृत व्यवस्था थी। मुगल केन्द्रीय शासन की धुरी बादशाह होता था जो कि इसका सर्वोच्च शासक तथा सेनानायक था। बादशाह के पास ही उच्च प्रशासनिक एवं सैनिक अधिकारियों (मनसबदारों) की नियुक्ति, पदोन्नति, उनके निलम्बन अथवा उन्हें पदमुक्त करने का अधिकार था। बादशाह किसी भी अधिकारी की सलाह लेने के लिए बाध्य नहीं था। अपने अधिकारियों से सलाह लेना या न लेना उसकी इच्छा पर निर्भर करता था। सैद्धान्तिक रूप से उसकी शक्तियां अपरिमित थीं। मनसबदारों की ज़ात का निर्धारण बादशाह के द्वारा किया जाता था तथा उसके निर्वाहन के लिए जागीरों का आवंटन भी वही करता था। अपने साम्राज्य में बादशाह सर्वोच्च न्यायकर्ता होता था। सामान्यतः कानून निर्माण का आधार शरियत के नियमों अथवा प्रचलित स्थानीय परम्पराओं को बनाया जाता था किन्तु कानून बनाने का एकाधिकार बादशाह के पास सुरक्षित था। बादशाह को प्रशासनिक अध्यादेश निर्गत करने का अधिकार था। अपने साम्राज्य में शान्ति व व्यवस्था स्थापित कर उसे सुदृढ़ता एवं सुरक्षा प्रदान करना बादशाह का दायित्व होता था।

1.3.1.2 वकील

बाबर, हुमायूं तथा अकबर के शासनकाल के प्रारम्भ में (बैरम खाँ के पतन तक) वज़ीर-ए-आज़म/वज़ीर को वकील कहा जाता था। वकील के पास सैनिक तथा प्रशासनिक, दोनों ही प्रकार के अधिकार सुरक्षित थे। वह बादशाह का मुख्य सलाहकार होता था। बैरम खाँ के पतन के बाद वकील का पद व्यावहारिक दृष्टि से समाप्त कर दिया गया और परवर्ती काल में वकील पद केवल एक मानद उपाधि मात्र रह गया।

1.3.1.3 वज़ीर-ए-आज़म/वज़ीर/दीवान-ए-कुल/दीवान-ए-आला/दीवान

वज़ीर/दीवान वित्त विभाग का प्रमुख तथा साम्राज्य का सर्वोच्च अधिकारी (प्रधानमन्त्री) होता था। बादशाह तथा दूसरे अधिकारियों के बीच मध्यस्थ की भूमिका वज़ीर/दीवान की होती थी। दीवान के अधीन दीवान-ए-खालसा, दीवान-ए-तन, साहिब-ए-तौजीह तथा मुस्तफ़ी होते थे।

1.3.1.4 मीरबख्शी

सल्तनत काल में आरिद-ए-मुमालिक की जो भूमिका थी उससे कही महत्वपूर्ण भूमिका मुगल काल में मीरबख्शी की थी। मीरबख्शी सैन्य प्रशासन का प्रमुख होता था। यह स्वयं एक उच्च मनसबदार होता था। सैनिकों की भर्ती, मनसबदारों के वेतन के रूप में उनकी जागीरों के हिसाब-किताब, अस्त्र-शस्त्रों के निर्माण, सेना से सम्बद्ध पशुओं के रख-रखाव, उनकी खरीद-फ़रोख्त के अतिरिक्त सैन्य-अनुशासन का दायित्व उसी का होता था। सभी प्रान्तीय बख्शी, मीरबख्शी को अपने-अपने प्रान्तों की सैन्य प्रशासन से सम्बन्धित गतिविधियों से अवगत कराते थे।

1.3.1.5 वकील-ए-दर/खान-ए-सामाँ/मीर-ए-सामाँ

शाही महल, शाही सम्पत्ति तथा कारखानों की देखभाल का दायित्व खान-ए-सामाँ का होता था। पहले इस अधिकारी को वकील-ए-दर कहा जाता था। बादशाह और उसके परिवार के खान-पान तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति का तथा शाही महल में तैनात कर्मचारियों पर नियन्त्रण रखने का दायित्व इस अधिकारी का होता था। सार्वजनिक निर्माण विभाग का दायित्व भी

खान-ए-सामाँ का होता था। उसके अधीन मीर-ए-माल, महर-ए-दर, बारबेगी, मीर-ए-तुजुक, मीर-ए-मन्ज़िल, मीर-ए-अर्द, ख्वान सालार तथा मुंशी होते थे। कारखानों की देखभाल में उसकी सहायता के लिए दीवान-ए-बयूतत होता था। परवर्ती काल में नाज़िर-ए-बयूतत भी उसके सहायकों की पंक्ति में जोड़ दिया गया।

1.3.1.6 सद्र-उस-सुदूर

धार्मिक तथा दान-पुण्य के मामलों का सर्वोच्च अधिकारी सद्र-उस-सुदूर होता था। इस पद पर मुस्लिम धर्मशास्त्र, न्याय तथा दर्शन के ज्ञाता को नियुक्त किया जाता था। मुगल साम्राज्य में इस्लाम के संरक्षण तथा शिक्षा प्रसार (विशेषकर धार्मिक शिक्षा) का दायित्व उसी का होता था। राज्य की ओर से धार्मिक स्थलों, धर्म से सम्बद्ध व्यक्तियों और शिक्षण संस्थाओं को दिए जाने वाले अनुदानों (वजीफ़ा, सयूरगाल, मदद-ए-माश) तथा भू-दानों का वितरण वही करता था। सद्र-उस-सुदूर धार्मिक मामलों में न्यायाधिकारी की भूमिका भी निभाता था।

1.3.1.7 काज़ी-उल-कज़ात

यह न्याय विभाग का प्रमुख होता था। कभी-कभी सद्र-उस-सुदूर ही इस दायित्व को निभाता था। इस अधिकारी का मुस्लिम कानून में निष्णात होना आवश्यक होता था। यह अधिकारी बादशाह की न्याय करने में सहायता भी करता था और मांगे जाने पर उसे कानूनी सलाह भी देता था।

1.3.1.8 मीर-ए-आतिश

मुगलों की सैन्य शक्ति का मुख्य आधार तोपखाना था। मीर-ए-आतिश तोपखाना विभाग का प्रमुख होता था। तोपों के निर्माण, उनके रख-रखाव, गोला-बारूद की आपूर्ति, तोपखाने से सम्बद्ध सैनिकों की भर्ती और उनके प्रशिक्षण, अभियानों के लिए तोपों के आवागमन तथा किलों की सुरक्षा हेतु तोपों की तैनातगी आदि कार्य उसकी देखरेख में किए जाते थे।

1.3.1.9 दारोगा-ए-डाक चौकी

साम्राज्य के प्रत्येक भाग से केन्द्र तक और केन्द्र से साम्राज्य के प्रत्येक भाग तक आवश्यक सूचना पहुंचाने का दायित्व डाक विभाग के अध्यक्ष दारोगा-ए-डाक चौकी का होता था। साम्राज्य में स्थापित हज़ारों डाक चौकियों के कुशल संचालन का दायित्व भी उसी का था। इस हेतु घोड़ों, घुड़सवारों, हरकारों, गुप्तचरों वाकियानवीसों आदि की व्यवस्था का भार भी उसी पर था।

1.3.1.10 मुहतसिब

मुहतसिब का कार्य साम्राज्य की मुस्लिम नागरिकों के जीवन में धर्म और नैतिकता का समावेश करना था। उसको मुस्लिम नागरिकों में इस्लाम की शिक्षाओं का प्रचार करना होता था तथा उन्हें मादक पदार्थों , दुर्व्यसनों आदि से दूर रहकर नैतिक जीवन व्यतीत करने के लिए प्रेरित करना होता था। माप-तौल में हेराफेरी कर ग्राहकों को ठगने वाले भ्रष्ट दुकानदारों पर भी उसको नज़र रखनी होती थी। औरंगज़ेब के काल में मुहतसिबों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गई थी।

1.3.2 प्रान्तीय शासन

1.3.2.1 साम्राज्य का प्रान्तों में विभाजन

मुगल काल में सूबों का प्रशासन केन्द्रीय प्रशासन के अनुरूप ही किया जाता था। शेरशाह के काल में सबसे बड़ी प्रशासनिक इकाई सरकार थी। बादशाह अकबर ने प्रान्तों को सबसे बड़ी प्रशासनिक इकाई बना दिया था। अकबर के शासनकाल में पहले 12 सूबे थे जो कि दक्षिण भारत में साम्राज्य विस्तार के बाद खानदेश, बरार और अहमदनगर मिलाकर 15 हो गए थे। शाहजहां के काल में काश्मीर, थट्टा, उड़ीसा, दौलताबाद व कान्धार को सूबे का दर्जा देने के कारण इनकी संख्या 20 तथा बाद में कान्धार के साम्राज्य से निकल जाने के कारण इनकी संख्या 19 रह गई थी। औरंगज़ेब के काल में बीजापुर और गोलकुण्डा विजय के बाद इनकी संख्या 21 हो गई थी।

1.3.2.2 सूबेदार

प्रान्त के सर्वोच्च अधिकारी को सूबेदार अथवा निज़ाम कहा जाता था जिसकी कि नियुक्ति बादशाह के द्वारा की जाती थी। सूबेदार प्रान्त में बादशाह का प्रतिनिधित्व करता था और अपने सूबे में उसके फ़रमानों को लागू करता था। सूबेदार अपने प्रान्त का सर्वोच्च प्रशासनिक तथा सैनिक अधिकारी होता था। वह एक उच्च श्रेणी का मनसबदार भी होता था। सूबेदार को अपने तथा अपनी सेना के व्यय के लिए एक जागीर आवंटित की जाती थी। अपने प्रान्त में शान्ति एवं व्यवस्था बनाए रखना, उद्योग, व्यापार एवं कृषि को प्रोत्साहन देना, अपनी सेना में अनुशासन बनाए रखना तथा प्रान्त की गतिविधियों से बादशाह को नियमित रूप से अवगत कराना सूबेदार का दायित्व होता था। एक ही प्रान्त में अधिक समय व्यतीत करके सूबेदार अपनी शक्ति और संसाधनों में वृद्धि कर स्वतन्त्र शासक बनने के लिए बादशाह के विरुद्ध विद्रोह न कर बैठें, इसको ध्यान में रखते हुए सूबेदारों का समय-समय पर एक सूबे से दूसरे सूबे में स्थानान्तरण कर दिया जाता था। प्रान्त में सूबेदार की देखरेख में दीवान, बख्शी, सद्र आदि कार्य करते थे किन्तु वे केन्द्र में अपने उच्चस्थ अधिकारियों-क्रमशःदीवान-ए-आला/दीवान-ए-कुल, मीरबख्शी तथा सद्र-उस-सुदूर के प्रति भी उत्तरदायी होते थे।

1.3.2.3 दीवान

प्रान्तीय वित्त विभाग का प्रमुख दीवान होता था। वैसे तो दीवान सूबेदार के आधीन होता था किन्तु उसे वित्तीय मामलों में सूबेदार से स्वतन्त्र शक्तियां प्राप्त थीं और उसकी नियुक्ति भी सीधे बादशाह के द्वारा की जाती थी। सूबेदार को दीवान पर नियन्त्रण की शक्ति न देने के पीछे शक्ति-सन्तुलन तथा शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त थे। सूबेदार और दीवान दोनों ही एक-दूसरे की महत्वाकांक्षाओं पर अंकुश लगाने का कार्य करते थे।

1.3.2.4 बख्शी

प्रान्त में सैन्य विभाग का प्रमुख बख्शी होता था। प्रान्त में मौजूद मनसबदारों की व्यवस्था का दायित्व उसका होता था। वह मीर बख्शी को वर्ष में दो बार अपने विभाग की विस्तृत रिपसेर्ट भेजता था।

1.3.2.5 सद्र तथा काज़ी

प्रान्तीय स्तर पर अपने उच्चस्थ केन्द्रीय अधिकारी सद्र-उस-सुदूर तथा काज़ी-उल-कज़ात के कर्तव्यों तथा अधिकारों का निर्वाहन इन अधिकारियों द्वारा किया जाता था।

1.3.2.6 वाकियानवीस

प्रान्तीय गुप्तचर विभाग का प्रमुख वाकियानवीस होता था। इसका दायित्व अपने गुप्तचरों के माध्यम से प्रान्त की प्रमुख गतिविधियों की खबर केन्द्र तक पहुंचाना था। अपने दायित्व निर्वाहन में वह सूबेदार तथा दीवान के आधीन न होकर स्वतन्त्र रूप से कार्य करता था।

1.3.2.7 कोतवाल

प्रान्तीय राजधानियों में शान्ति एव सुरक्षा बनाए रखने का दायित्व कोतवाल का होता था। उसे एक न्यायधीश की भूमिका भी निभानी होती थी और नगर में देह-व्यापार पर भी नियन्त्रण रखना होता था।

1.3.2.8 दारोगा-ए-डाक चौकी

प्रान्त के प्रत्येक भाग से केन्द्र तक और केन्द्र से प्रान्त तक आवश्यक सूचना पहुंचाने का दायित्व डाक विभाग के अध्यक्ष दारोगा-ए-डाक चौकी का होता था।

1.3.2.9 मीर-ए-बहर

मीर-ए-बहर का दायित्व पुलों तथा नौकाओं की देखभाल, सीमा शुल्क तथा पत्तन शुल्क पर नज़र रखना होता था।

1.3.3 स्थानीय प्रशासन

1.3.3.1 सरकार

सरकार अर्थात् जिले के मुख्य अधिकारियों में फौजदार - सैनिक तथा प्रशासनिक अधिकारी, अमल गुज़ार - राजस्व अधिकारी, वितिकची - राजस्व लेखाधिकारी, खज़ानदार - खजान्ची तथा काजी़ - न्यायाधीश होता था। इन सभी अधिकारियों को अपने प्रान्तीय उच्च अधिकारियों के आधीन रहकर कार्य करना होता था।

1.3.3.2 परगना

परगना में मुख्य प्रशासक तथा सैन्य अधिकारी शिकदार होता था। आमिल मुख्य राजस्व अधिकारी होता था। फ़ोतदार -खजान्ची तथा कारकुन - राजस्व लेखाधिकारी होता था। कानूनगो - लगान एवं कृषि-भूमि के हिसाब किताब के साथ परगने के पटवारियों पर नज़र भी रखता था। कानूनगो का पद प्रायः वंशानुगत होता था।

1.3.3.3 ग्राम

ग्राम में पंचायत होती थी जिसके मुखिया को मुकद्दम कहा जाता था। मुकद्दम राजस्व एकत्र करने में राजस्व अधिकारियों तथा ज़मींदार की सहायता करता था। प्रत्येक ग्राम में राजस्व का लेखा-जोखा रखने के लिए एक पटवारी होता था। पटवारी का पद प्रायः वंशानुगत होता था। मुगल काल में राज्य की ओर से ग्राम्य‘प्रशासन में बहुत कम हस्तक्षेप किया जाता था।

1.3.4 प्रशासनिक व्यवस्था का आकलन

मध्यकालीन परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में महान मुगल शासकों की प्रशासनिक व्यवस्था सामान्यतः सक्षम थी। बाबर और हुमायूं की इस क्षेत्र में विशेष उपलब्धियां नहीं थीं किन्तु अकबर की गणना मध्यकालीन विश्व इतिहास के सर्वश्रेष्ठ एवं सबसे सफल प्रशासकों में की जा सकती है। एक निरंकुश, स्वेच्छाचारी राजतन्त्र में प्रजा के हितों के प्रति इतना समर्पित भाव, शान्ति एवं व्यवस्था बनाए रखने हेतु इतना व्यापक प्रबन्ध मिल पाना बहुत दुर्लभ है। मुगलों ने तुर्क, मंगोल, अफ़गान और भारतीय प्रशासनिक परम्पराओं का समन्वय कर अपनी प्रशासनिक व्यवस्था का

विकास किया था। औरंगज़ेब के शासनकाल के उत्तरार्ध से मुगल प्रशासनिक व्यवस्था चरमरा गई और परवर्ती काल में प्रशासन के नाम पर अराजकता एवं अव्यवस्था मात्र शेष रह गई।

1.4 वित्त व्यवस्था

1.4.1 कर प्रणाली

1.4.1.1 भू राजस्व व्यवस्था

मुगल साम्राज्य की सुदृढ़ता एवं उसके स्थायित्व का मूल कारण उसकी सक्षम वित्त व्यवस्था थी। इस वित्त व्यवस्था का मुख्य आधार भू-राजस्व व्यवस्था थी। भू-राजस्व व्यवस्था का विस्तृत वर्णन इस खण्ड की इकाई दो (2) में किया जाएगा।

1.4.1.2 जज़िया

इस्लाम के प्रचार-प्रसार के साथ-साथ विश्व के अनेक भागों में मुस्लिम राज्यों की स्थापना हुई। नव-स्थापित मुस्लिम राज्यों में स्थानीय निवासियों में से अनेक ने इस्लाम धर्म को नहीं अपनाया था। व्यावहारिक दृष्टि से यह सम्भव नहीं हो सकता था कि समस्त प्रजाजनों को इस्लाम कुबूल करने के लिए बाध्य किया जाए अतः मुस्लिम राज्यों द्वारा गैर-मुस्लिम प्रजा से उनके अस्तित्व की रक्षार्थ एक प्रकार का धार्मिक कर वसूल किया जाता था जिसको कि जज़िया कहा जाता था। जज़िया की राशि खज़ाना-ए-जज़िया में जमा की जाती थी। जज़िया देने वाले को जिम्मी कहा जाता था। स्त्रियां, बच्चे, गुलाम, सन्त, पुरोहित, अपंग, भिखारी, अन्धे, विक्षिप्त तथा दिवालिए इस कर से मुक्त थे। राज्य में सैनिक एव नागरिक सेवा में नियुक्त गैर-मुस्लिम भी इस कर से मुक्त थे। मुगलों ने भारत में इस कर को सन् 1564 लागू रखा। सन् 1564 में बादशाह अकबर ने अपनी धार्मिक सहिष्णुता व उदारता का परिचय देते हुए इस कर को समाप्त कर दिया। जहांगीर, शाहजहां ने इस विषय में अकबर का अनुकरण किया। औरंगज़ेब ने भी अपने शासन के प्रथम 21 वर्ष तक गैर-मुस्लिमों पर जज़िया नहीं लगाया किन्तु सन् 1679 में उसने अपने साम्राज्य में गैर-मुस्लिमों पर जज़िया फिर से लगा दिया। औरंगज़ेब ने जज़िया कर राज्य के आर्थिक संसाधनों में वृद्धि करने के उद्देश्य से नहीं लगाया था अपित? इस निर्णय के पीछे उसके राजनीतिक एवं धार्मिक उद्देश्य थे।

1.4.1.3 ज़कात

मुगल साम्राज्य मूलतः मुस्लिम राज्य था अतः धर्मार्थ व्यय हेतु मुसलमानों की व्यक्तिगत आय का कुल 2.5 प्रतिशत भाग (चालीसवां भाग) लिए जाने वाले कर ज़कात पर उनका हक़ बनता था किन्तु मुगलों ने इस कर की अदायगी के लिए मुसलमानों को बाध्य नहीं किया और इसे

उनके विवेक पर छोड़ दिया। दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की खरीद-फ़रोख्त पर भी ज़कात लगाया जाता था परन्तु अकबर, जहांगीर व शाहजहां ने इसे समाप्त कर दिया था। औरंगज़ेब ने अपने शासनकाल में मूल्यवान वस्तुओं की खरीद-फ़रोख्त पर ज़कात लगा दिया था। ज़कात की राशि खजाना-ए-सदाक़त में जमा की जाती थी।

1.4.1.4 खम्स

खनिज पदार्थों, खजाने की प्राप्ति तथा सैनिकों द्वारा युद्ध में प्राप्त लूट का पाँचवां भाग खम्स के रूप में लिया जाता था। चूंकि मुगल सैनिकों राज्य की ओर से नियमित वेतन मिलता था इसलिए लूट की राशि में उन्हें कोई हिस्सा नहीं दिया जाता था।

1.4.1.5 अबवाब (अतिरिक्त कर)

सबसे अधिक राजस्व दिलाने वाला अबवाब - राहदारी होता था जो कि माल के आवागमन पर लगाया जाता था। एक अन्य अबवाब चोरी के सामान की पुलिस द्वारा बरामदगी के बाद उसे उसके स्वामी को लौटाते समय वसूला जाता था। इसी प्रकार कर्ज़ में डूबी रकम को कर्ज़दार से कर्ज़ देने वाले को वापस दिलाने में राज्य की भूमिका के बदले में कुल प्राप्त रकम का एक चौथाई भाग तक अबवाब के रूप में लिया जाता था। समय-समय पर आवश्यकताओं के अनुसार अन्य अबवाब भी लगाए जाते थे। अबवाबों की वसूली में अधिकारीगण निजी स्वार्थों के कारण प्रायः जनता पर मनमानी कर उनका भरपूर शोषण करते थे।

1.4.2 मुद्रा प्रणाली

मुगल काल में शाही टकसालों में सोने, चाँदी तथा तांबे के सिक्के ढाले जाते थे। शुद्धता और सुघड़पन की दृष्टि से मुगल सिक्के अपने समकालीन यूरोपीय शासकों के सिक्कों की तुलना में कहीं अधिक श्रेष्ठ थे। मुगलकालीन सोने के सिक्कों में 164 ग्रेन की मुहर अथवा अशर्फ़ी सबसे अधिक प्रचलित सिक्का था। शेरशाह के 178 ग्रेन के चाँदी के सिक्के को आधार मानकर अकबर ने भी चाँदी का रूपया चलाया था। एक रुपया 64 दामों के बराबर होता था और एक दाम - दो अधेलों या चार पावलो या आठ दमड़ियों के बराबर होता था। दाम, अधेला, पावला तथा दमड़ी, तांबे के होते थे। सोने-चाँदी के सिक्कों की शुद्धता व उनकी मापतौल की जांच की समुचित व्यवस्था की जाती थी।

1.4.3 शिल्प तथा उद्योग

1.4.3.1. वस्त्र उद्योग

मुगल बादशाह शिल्प तथा उद्योग के प्रोत्साहन के लिए सतत प्रयत्नशील रहते थे। किसानों को उद्योग से सम्बन्धित फ़सलें - कपास, नील आदि उगाने के लिए लगान में रियायतें दी जाती थी। मुगल काल में सूती कपड़ा उद्योग तथा रेशमी वस्त्र उद्योग का अभूतपूर्व विकास हुआ था। बंगाल सूती तथा रेशमी वस्त्र के उत्पादन का मुख्य केन्द्र था। काश्मीर में उच्चकोटि के रेशमी तथा ऊनी वस्त्र बनाए जाते थे। गुजरात, मालवा तथा आगरा सूती वस्त्र उद्योग के लिए प्रसिद्ध थे। कपड़ों की स्तरीय रंगाई-छपाई के लिए भी मुगल काल विख्यात था। मछलीपट्टम रंगाई का एक प्रमुख केन्द्र था। वस्त्रों के निर्यात से साम्राज्य को प्रचुर मात्रा में आय होती थी।

1.4.3.2. अन्य उद्योग

मुगल काल में धातु उद्योग भी विकसित था। बर्तन, सन्दूकें, हथियारों में - तोपें, बन्दूकें, तलवारें आदि, उपकरणों में - कैंची, प्लास, रहट, हुक्के आदि तथा सोने-चाँदी के आभूषणों की गुणवत्ता उच्च कोटि की थी। लकड़ी-उद्योग, चीनी उद्योग, चर्म-उद्योग, संगतराश एवं भवन निर्माण-उद्योग, कागज़ उद्योग, इत्र व सुगन्धित तैल-उद्योग, नौका एवं पोत-निर्माण उद्योग, काँच-उद्योग, विस्फोटक सामग्री निर्माण-उद्योग रत्न-उद्योग, हाथी दाँत-उद्योग आदि को राज्य की ओर से संरक्षित एवं प्रोत्साहित किया जाता था। मुगलकाल में आभिजात्य वर्ग की विशिष्ट आवश्यकताओं की आपूर्ति के लिए शाही कारखाने स्थापित किए गए थे। आइन-ए-अकबरी में अबुल फ़ज़्ल 36 शाही कारखानों का उल्लेख करता है। सभी प्रमुख नगरों में शाही कारखाने स्थापित किए गए थे।

1.4.4 व्यापार एवं वाणिज्य

1.4.4.1. आन्तरिक व्यापार

आन्तरिक व्यापार के सुचारु रूप से संचालन हेतु राज्य की ओर से सड़कों, पुलों तथा सरायों के निर्माण, उनके रख-रखाव के अतिरिक्त मार्गों तथा मण्डियों- बाज़ारों की सुरक्षा का समुचित प्रबन्ध किया जाता था। आन्तरिक व्यापार जल-मार्ग से भी होता था। इसके लिए नावों के बेड़े तैयार रखे जाते थे। सभी प्रमुख व्यापारिक केन्द्र साम्राज्य के बड़े नगर थे। दुकानदारों तथा व्यापारियों को अपने संघ बनाने की स्वतन्त्रता थी। व्यापार कर के रूप में राज्य को प्रचुर मात्रा में धन प्राप्त होता था।

1.4.4.2 विदेश व्यापार

मुगल काल में विदेश व्यापार को प्रोत्साहित करने के लिए व्यापारियों पर करों का बोझ अधिक नहीं डाला जाता था तथा साम्राज्य के अधिकारियों द्वारा उनके साथ मैत्रीपूर्ण व्यवहार किया जाता था। विदेश व्यापार स्थल व जल दोनों ही मार्गों से होता था। मुगल काल में निर्यात की जाने वाली वस्तुओं में सूती, रेशमी व ऊनी वस्त्र, नील, मसाले, शोरा, नमक, चीनी, औषधियां आदि प्रमुख थीं। आयात की जाने वाली वस्तुओं में सोना, चाँदी, हाथी दाँत, चीनी मिट्टी तथा काँच के बर्तन, शराब, तम्बाकू , मेवे का आयात किया जाता था। विदेशों से गुलामों तथा ऊँची नस्ल के घोड़ों का भी आयात किया जाता था। व्यापारियों को हर सम्भव सुरक्षा प्रदान की जाती थी किन्तु समुद्री मार्ग में सुरक्षा का समुचित प्रबन्ध नहीं था फिर भी व्यापार सन्तुलन मुगलों के पक्ष में था और हर वर्ष विदेश व्यापार से उन्हें लाभ होता था। मीर-ए-बहर तटीय शुल्क का संग्रहण कर राज्य कोष प्रचुर धन जमा कराता था। औरंगज़ेब तथा परवर्ती मुगल शासकों के काल में युद्ध और अराजकता की स्थिति के कारण आन्तरिक तथा विदेश व्यापार दोनों में ही गिरावट आई थी।

1.4.5 मुगलकालीन वित्त व्यवस्था का आकलन

औरंगज़ेब के शासनकाल के उत्तरार्ध के अतिरिक्त महान मुगल शासकों की वित्त व्यवस्था अत्यन्त सुदृढ़ थी। इस काल में कृषि, उद्योग, आन्तरिक तथा विदेश व्यापार आदि क्षेत्रों में चहुमुखी विकास हो रहा था। शाही खज़ानों में पर्याप्त धन था तथा आभिजात्य वर्ग के वैभव और उसकी समृद्धि की कोई थाह नहीं थी। इस काल में भारत में विश्व के सबसे समृद्ध तथा विशाल महानगर थे। श्रमिक वर्ग, कृषक वर्ग तथा कारीगरों की स्थिति प्रायः दयनीय थी किन्तु व्यापारी वर्ग समृद्ध था। औद्योगिक क्रान्ति से पूर्व के इस काल में व्यापार सन्तुलन भारत के पक्ष में था। इसीलिए विश्व में भारत को सोने की चिड़िया के नाम से जाना जाता था।

1.5 मनसबदारी व्यवस्था

1.5.1 मनसबदारी व्यवस्था की उत्पत्ति

मुगलों की मनसबदारी व्यवस्था को हम मध्य एशिया की सैन्य व्यवस्था का एक संशोधित एव सवंर्धित रूप कह सकते हैं। बाबर के पूर्वज चंगेज़ खाँ की सेना में अधिकारियों का, उनके अधीन घुड़सवारों की संख्या के आधार पर, वर्गीकरण किया गया था। उनको 10 (दहबशी) से लेकर 10000 (दहहज़ारी) घुड़सवारों तक के सेनानायक का पद प्रदान किया गया था। बाबर ने विभिन्न कबीलों तथा कुलों के सरदारों को उनकी सेनाओं के साथ भारत पर आक्रमण किया और पानीपत के युद्ध में विजय प्राप्त कर जब भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना की तो उसने विभिन्न सरदारों को

उनकी योग्यता के अनुसार सैनिक पद प्रदान किए। इन सैन्य अधिकारियों को वजहदार कहा गया। इसी परम्परा को आगे बढ़ाकर अकबर ने प्रशासनिक तथा वैतनिक एकरूपता स्थापित करने के उद्देश्य से अपने सभी सैनिक अधिकारियों (अशब-उस-सैफ़) तथा प्रशासनिक अधिकारियों (अशब-उल-क़लम) तथा राज्य सेवा में नियुक्त धर्म शास्त्रियों एवं न्याय वेत्ताओं (अशब-उल-अमामा) को सैन्य पद - मनसब प्रदान कर मनसबदारी व्यवस्था का विकास किया। अकबर ने इसे मुगल सैनिक संगठन तथा नागरिक प्रशासन का आधार बनाया। बादशाह द्वारा नियुक्त अधिकारियों का पहले मनसब (पद) निर्धारित किया गया फिर उसी के आधार पर उनका वेतन निर्धारित किया गया। प्रारम्भ में 20 से लेकर पाँच हज़ारी मनसबदार (20 घुड़सवारों के नायक से लेकर 5000 घुड़सवारों के नायक) तक नियुक्त किए गए। बाद में उच्चतम मनसब 7000 और फिर 10000 तक बढ़ा दिया गया। बाद में शहज़ादों का मनसब इससे भी अधिक ऊँचाई तक पहुंचा दिया गया। अबुल फ़ज़्ल आइन-ए-अकबरी में मनसबों की कुल संख्या 66 बताता है किन्तु उल्लेख केवल 33 मनसबों का करता है।

1.5.2 जागीर तथा जागीर-ए-वतन

मनसब के आधार पर वेतन के रूप में या तो मनसबदार को उसके निर्धारित वेतन के अनुरूप एक जागीर आवंटित कर दी जाती थी या उसे नकद वेतन दिया जाता था। इस प्रकार के मनसबदार क्रमशः जागीरदार और नकदी कहलाते थे। अपने वेतन से मनसबदार को अपना, अपने सैनिकों का, उनसे सम्बद्ध पशुओं तथा अस्त्र-शस्त्रों का खर्च सम्भालना होता था। मनसबदारों को लम्बे समय तक एक ही जागीर पर नहीं दी जाती थी। उनकी जागीरें हस्तान्तरित होती रहती थीं। जागीर और मनसब वंशानुगत नहीं होते थे अर्थात् मनसबदार की मृत्यु के बाद उसके वंशज उसकी जागीर या उसके मनसब पर अपना दावा प्रस्तुत नहीं कर सकते थे। मनसबदार की मृत्यु के बाद उसकी जागीर स्वतः बादशाह के अधिकार में वापस चली जाती थी। परन्तु आमतौर पर बादशाह मनसबदार की मृत्यु पर उसके वंशजों के साथ उदारता का ही व्यवहार करता था। सामान्यतया मनसबदार को उसके गृह पदेश में जागीर नहीं दी जाती थी। गृह प्रदेश की जागीर को जागीर-ए-वतन कहा जाता था। यह केवल उन मनसबदारों को प्रदान की जाती थी जिनके कि पास मुगल सेवा में आने से पूर्व अपना राज्य होता था या ज़मींदारी होती थी। उदाहरणार्थ राजपूत शासक जब मुगलों की आधीनता स्वीकार कर उनके मनसबदार बनाए गए तो उन्हें जागीर-ए-वतन प्रदान की गई। दीवान-ए-विज़ारत में जागीरों का लेखा-जोखा रखा जाता था।

1.5.3 मनसबदारी व्यवस्था के अन्तर्गत ज़ात तथा सवार पद

सोलहवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में मनसबदारी व्यवस्था में एकल-पदीय ज़ात व्यवस्था के स्थान पर द्वि-पदीय व्यवस्था ज़ात और सवार को लागू किया गया। इसका उद्देश्य मनसबदारों से

उनके सैनिक उत्तरदायित्वों का निष्ठापूर्ण निर्वाहन कराना था। अब मनसबदार को ज़ात और सवार दोनों के पद प्रदान किए गए। इनमें से ज़ात मनसबदार का वैयक्तिक पद होता था (जितने घुड़सवार रखने की उससे अपेक्षा की जाती थी) तथा सवार पद (अश्वारोही पद) वास्तव में उसके अधीन घुड़सवारों की संख्या के आधार पर निश्चित किया जाता था।

1.5.4 मनसबदारों की श्रेणियां

मनसबदारों की तीन श्रेणियां निर्धारित की गई थीं। प्रथम श्रेणी के मनसबदार का ज़ात और सवार मनसब एक समान होता था। द्वितीय श्रेणी के मनसबदार सवार मनसब उसके ज़ात मनसब का आधा या उससे अधिक होता था। तृतीय श्रेणी के मनसबदार का सवार मनसब उसके ज़ात मनसब के आधे से कम होता था। मनसबदारी में 500 से कम मनसब प्राप्त को 'मनसबदार', 500 से लेकर 2500 से कम मनसब वाले को 'अमीर' तथा 2500 व उससे अधिक मनसब वाले को 'अमीर-ए-उम्दा' कहा जाता था।

1.5.5 दोअस्पा तथा सिहअस्पा

जहांगीर के शासनकाल में मनसबदारों के साथ दोअस्पा (दो घोड़ों वाले घुड़सवार) तथा सिंहअस्पा (दो से अधिक घोड़े वाले घुड़सवार) पद जोड़ा जाने लगा। यह व्यवस्था उन मनसबदारों के लिए की गई जिनके पास अपने सवार पद से अधिक घुड़सवार होते थे। ऐसे मनसबदारों का ज़ात और सवार पद बढ़ाए बिना उनको उनके आधीन दोअस्पा तथा सिंहअस्पा सवारों के अनुसार उन्हें अतिरिक्त भत्ता दिया जाता था। जहांगीर ने महाबत खाँ को इस प्रकार का पद प्रदान किया था।

1.5.6 मुगलकाल में मनसबदारों की संख्या

अकबर के शासनकाल के चालीसवें वर्ष में मनसबदारों की कुल संख्या 1803 थी। इनमें तुर्क, उज़बेग, ईरानी, अफ़गान, भारतीय मुसलमान तथा राजपूत सम्मिलित थे परन्तु बाद में औरंगज़ेब के शासन तक इनमें मराठे और दक्किनी भी शामिल हो गए। मनसबदारों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होती ही चली गई। औरंगज़ेब के शासनकाल के अन्त में इनकी संख्या बढ़कर साढ़े चौदह हज़ार तक पहुंच गई। इन मनसबदारों को दिए जाने वाले वेतन और जागीरों के कारण शाही खज़ाने पर असहनीय बोझ पड़ने लगा। बाद में मनसबदारों को दी जाने वाली जागीरें कम पड़ने लगीं।

1.5.7 मनसबदारी व्यवस्था पतन

मनसबदारों की संख्या में निरन्तर वृद्धि ने राज्य पर न केवल आर्थिक बोझ डाला अपितु राज्य की ओर से उन पर भरपूर नज़र न रख पाने के कारण उनकी क्षमता पर भी इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। जागीरों की कमी को पूरा करने के लिए एक ही जागीर को मनसबदारों में विभाजित

करके दिया जाने लगा जिसके कारण जागीरदारों ने अपना खर्च निकालने के लिए कृषकों का और अधिक शोषण करने का प्रयास किया। मनसबदारों की निष्ठा और स्वामिभक्ति में भी कमी आई। मनसबदारों द्वारा भर्ती किए गए सैनिकों की निष्ठा अब बादशाह के प्रति न होकर रोज़ी देने वाले मनसबदार के प्रति होने लगी। अधिक साधन सम्पन्न मनसबदार अब स्वतन्त्र शासक बनने की महत्वाकांक्षा पालने लगे और पतनोन्मुख मुगल साम्राज्य में उनकी बढ़ती हुई शक्ति और महत्वाकांक्षाओं पर अंकुश लगाने की किसी में क्षमता ही नहीं रही। धीरे-धीरे मनसबदारी व्यवस्था मुगल शासन को सुदृढ़ एवं सक्षम बनाने के स्थान पर उसके पतन का कारण बनने लगी।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्नांकित पर चर्चा कीजिए-

1. बादशाह के अधिकार और उसके दायित्व।

2. मुगलकालीन ग्राम प्रशासन।

3. मुगलकालीन मुद्राए।

4. मुगलकालीन विदेश व्यापार।

5. मनसबदारी व्यवस्था के अन्तर्गत ज़ात एवं सवार पद।

6. जागीर तथा जागीर-ए-वतन।

1.6 सारांश

मुगल काल में सैन्य शक्ति पर आधारित एक केन्द्रीकृत शासन था। बादशाह इसका सर्वोच्च प्रशासक तथा सर्वोच्च सेनानायक होता था। वह साम्राज्य के सर्वोच्च न्यायाधीश की भूमिका भी निभाता था। बादशाह राज्य के सभी उच्चस्थ अधिकारियों की स्वयं नियुक्ति करता था। बादशाह की शक्तियां अपरिमित थीं। केन्द्रीय शासन के अन्तर्गत उच्चतम अधिकारी वकील, वज़ीर अथवा दीवान-ए-कुल, मीरबख्शी, मीर-ए-सामाँ, सद्र-उस-सुदूर, काज़ी-उल-कज़ात आदि होते थे। इन अधिकारियों को केन्द्रीय प्रशासन के अपने दायित्व के अतिरिक्त अपने विभागों से सम्बद्ध प्रान्तों के अधिकारियों पर भी नज़र रखनी होती थी। प्रान्त के सर्वोच्च अधिकारी सूबेदार तथा वित्त विभाग के प्रमुख दीवान की नियुक्ति बादशाह द्वारा की जाती थी। प्रान्तीय प्रशासन को हम केन्द्रीय प्रशासन का ही लघु रूप कह सकते हैं। स्थानीय प्रशासन में सरकार, परगने और ग्राम का प्रशासन आता था।

मुगल साम्राज्य की आर्थिक सुदृढ़ता एवं का मूल कारण उसकी सक्षम वित्त व्यवस्था थी। केन्द्र में दीवान-ए-कुल तथा प्रान्त में दीवान वित्त विभाग का प्रमुख होता था। मुगलों की राजस्व प्रणाली मुख्य रूप से मुस्लिम प्रशासनिक परम्पराओं के अनुरूप थी किन्तु उसमें स्थानीय राजस्व प्रणालियों के तत्वों का भी समावेश किया गया था। खिराज, खम्स, जज़िया और ज़कात मुख्य कर थे और समय-समय पर अनेक अबवाब भी लगाए जाते थे। मुगल काल में सोने, चाँदी व तांबे की उच्च कोटि की मुद्राओं का प्रचलन था। मुगल शासक कृषि, उद्योग एवं व्यापार के विकास के लिए सतत प्रयत्नशील रहते थे। महा मुगलों के काल में व्यापार संतुलन भारत के पक्ष में था।

प्रशासनिक एकरूपता स्थापित करने के उद्देश्य से अकबर ने मनसबदारी व्यवस्था को मुगल सैनिक संगठन तथा नागरिक प्रशासन का आधार बनाया था। राज्य के सभी छोटे-बड़े सैनिक तथा असैनिक अधिकारियों को एक सैनिक पद 'मनसब' प्रदान किया गया। मनसबदारों की नियुक्ति का अधिकार केवल बादशाह का होता था। उच्चतम मनसब शहज़ादों को प्रदान किया जाता था। मनसबदारों का वैयक्तिक पद 'ज़ात' और उनके अश्वारोहियों की संख्या को प्रदर्शित करने वाला 'सवार' पद होता था। जहांगीर के काल से 'सवार' पद में 'दोअस्पा' तथा 'सिंहअस्पा' सवारों का भी वर्गीकरण किया जाने लगा। मनसबदारों को वेतन के रूप में नकदी अथवा जागीर दिए जाने की व्यवस्था की गई। मनसबदार का मनसब और जागीर वंशानुगत नहीं थे। मनसबदारों में तुर्क, उज़बेग, ईरानी, अफ़गान, हिन्दुस्तानी मुसलमान, राजपूत और अनन्तर काल में मराठे शामिल थे। प्रोफ़ेसर अतहर अली ने इस तथ्य का उद्घाटन किया है कि औरंगज़ेब के शासनकाल में हिन्दू मनसबदारों की संख्या तथा उनका कुल प्रतिशत अन्य मुगल बादशाहों की तुलना में अधिक था। धीरे-धीरे मनसबदारी व्यवस्था में शिथिलता आती चली गई और मनसबदारों की संख्या निरन्तर बढ़ने से राजकोश पर बोझ बढ़ने लगा। शिथिल एवं बोझिल मनसबदारी व्यवस्था मुगल साम्राज्य के पतन का एक प्रमुख कारण बनी।

1.7 पारिभाषिक शब्दावली

मीर-ए-सामाँ - शाही महल, शाही सम्पत्ति तथा कारखानों की देखभाल करने वाला अधिकारी।

वजीफ़ा, सयूरगाल, मदद-ए-माश - राज्य की ओर से धार्मिक स्थलों, धर्म से सम्बद्ध व्यक्तियों और शिक्षण संस्थाओं को दिए जाने वाले आर्थिक व भूमि के अनुदान।

मुकद्दम - ग्राम प्रधान।

जिम्मी - मुस्लिम राज्य में जज़िया देने वाला गैर-मुस्लिम।

खजाना-ए-सदाक़त -साम्राज्य की ओर से धर्मार्थ राशि रखने हेतु कोश।

कारखाना - शाही उद्योगशाला।

जागीर-ए-वतन - मुगल सेवा में आने से पूर्व ही ज़मींदार व शासक रह चुके मनसबदारों को उनके गृह प्रदेश में ही आवंटित जागीर।

1.8 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 5.1.3.1.1 बादशाह।

2. देखिए 5.1.3.3.3 ग्राम।

3. देखिए 5.1.4.2. मुद्रा प्रणाली।

4. देखिए 5.1.4.4.2 विदेश व्यापार।

5. देखिए 5.1.5.2 मनसबदारी व्यवस्था के अन्तर्गत ज़ात तथा सवार पद।

6. देखिए 5.1.5.3 जागीर तथा जागीर-ए-वतन ।

1..9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Hasan, Ibn – *The Central Structure of the Mughal Empire*

2. Qureshi, I. H. – *The Administration of the Mughal Empire*

3. Tripathi, R. P. – *Some Aspects of Muslim Administration*

1.10 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Jahangir – *Tuzuk-i-Jahangiri* (English Tr. Beveridge, Rogers)

2. Abul Fazl – *The Ain-i-Akbari* (English Tr. Blochmann, H.)

3. Sarkar, J. N. – *Mughal Administration*

4. Bernier, F. – *Travels in the Mogul Empire* (English Tr. Brock, Irving)

1.11 निबंधात्मक प्रश्न

मुगल शासकों की औद्योगिक एवं व्यापारिक नीति का आलोचात्मक परीक्षण कीजिए।

इकाई दो- मुगलकाल की जागीरदारी प्रथा, भू-राजस्व व्यवस्था

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 जागीरदारी प्रथा

2.3.1 अकबर के शासनकाल से पूर्व जागीरदारी प्रथा

2.3.2 अकबर तथा परवर्ती मुगल काल में जागीरदारी प्रथा

2.3.2.1 अकबर के शासनकाल में जागीरदारी प्रथा को लागू करने के उद्देश्य

2.3.2.2 नकदी तथा जागीरदार

2.3.2.3 जमादामी

2.3.2.4 जागीरों का हस्तान्तरण तथा जागीरों का वंशानुगत न होना

2.3.2.5 जागीरों का प्रशासन

2.3.2.6 राज्य के प्रशासनिक अधिकारियों का जागीरदारों पर नियन्त्रण

2.3.2.7 जागीर-ए-वतन

2.3.2.8 जागीरदारी व्यवस्था का पतन

2.4 भू-राजस्व व्यवस्था

2.4.1 मुगलों से पूर्व भू-राजस्व व्यवस्था

2.4.1.1 प्राचीन भारतीय शासकों की भू-राजस्व व्यवस्था

2.4.1.2 दिल्ली सल्तनत काल में भू-राजस्व व्यवस्था

2.4.1.3 शेरशाह की भू-राजस्व व्यवस्था

2.4.2 मुगलशासकों की भू-राजस्व व्यवस्था

2.4.2.1 बाबर तथा हुमायूं के शासनकाल में भू-राजस्व व्यवस्था

2.4.2.2 अकबर की भू-राजस्व व्यवस्था

2.4.2.2.1 भू-राजस्व प्रशासन में प्रारम्भिक प्रयोग

2.4.2.2.2 राजा टोडरमल का दहसाला बन्दोबस्त

2.4.2.2.3 अन्य भू-राजस्व प्रणालियां

2.4.2.3 अबवाब

2.4.2.4 किसानों को राहत तथा कृषि योग्य भूमि के विकास को प्रोत्साहन

2.4.2.5 अकबर के परवर्ती मुगल बादशाहों की भू-राजस्व व्यवस्था

2.4.2.6 किसानों पर ऋण का बोझ

2.4.2.7 मुगल भू-राजस्व व्यवस्था के गुण-दोष

2.5 सारांश

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

2.7 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

2.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

2.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

2.10 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

जागीरदारी प्रथा सामन्तवादी शासन प्रणाली का एक प्रकार थी। सल्तनत काल में अमीरों को उनके नकद वेतन के बदले में उन्हें उसके समतुल्य आय के इक्ते (जागीर) प्रदान किए जाते थे। बलबन और अलाउद्दीन खिलजी ने जागीरदारी प्रथा का दमन किया जब कि फ़ीरोज़ तुगलक ने इसका पुनरुत्थान किया। अकबर ने मनसबदारी व्यवस्था के अन्तर्गत उच्च पदीय मनसबदारों को वेतन के बदले में जागीरें आवंटित कीं। जागीर वंशानुगत नहीं होती थी तथा समय-समय पर उनका हस्तान्तरण भी होता था किन्तु पूर्व शासकों और ज़मींदारों को उनके गृह क्षेत्र में जागीर-ए-वतन प्रदान की जाती थी। जागीरदार अपनी आवंटित जागीरों में प्रशासक की भूमिका भी निभाते थे। जागीरदारों की गतिविधियों पर सम्बद्ध सूबेदार, फ़ौजदार व शिकदार के माध्यम से राज्य का नियन्त्रण रखा जाता था। धीरे-धीरे सैनिक व राजनीतिक कारणों से जागीरदारों की संख्या बढ़ती चली गई और जागीरों की कमी पड़ने लगी। औरंगज़ेब के शासनकाल के उत्तरार्ध से जागीरदारी व्यवस्था राज्य पर एक भारी आर्थिक बोझ बन गई और परवर्ती काल में उसमें और भी अधिक अव्यवस्था व अराजकता व्याप्त होने के कारण उसका पतन हो गया।

कृषि प्रधान देश भारत में राज्य की आय का मुख्य स्रोत भू-राजस्व रहा है। मौर्य तथा गुप्त काल में आमतौर पर उपज का छठा भाग भू-राजस्व के रूप में लिया जाता था। भू-राजस्व निर्धारण में भूमि की नापजोख किए जाने की व्यवस्था थी। प्राचीन भारत में शासक कृषि विकास और किसानों के कल्याण के प्रति प्रयत्नशील रहते थे। दिल्ली सल्तनत काल में भू-राजस्व के रूप में उपज का आधा भाग लेकर अलाउद्दीन खिलजी ने किसानों के हितों की सर्वथा उपेक्षा की थी किन्तु उसने राजस्व एकत्रण में मध्यस्थों की भूमिका समाप्त कर तथा लगान निर्धारण हेतु भूमि की पैमाइश की वैज्ञानिक प्रणाली लागू की थी। फ़ीरोज़ तुगलक ने किसानों पर करों का बोझ कम किया तथा कृषि-विकास हेतु नहरों व जलाशयों का निर्माण किया परन्तु भू-राजस्व के एकत्रण हेतु ठेकेदारी प्रथा का प्रचलन कर उसने किसानों का अहित किया। भूमि की नापजोख तथा उत्पादकता के आधार पर भू- राजस्व का निर्धारण कर, किसानों को पट्टा प्रदान कर व उनसे कुबूलियत प्राप्त कर शेरशाह ने भू-राजस्व प्रशासन को अत्यन्त व्यवस्थित किया।

मुगल भू-प्रशासन इस धारणा पर आधारित था कि साम्राज्य की समृद्धि किसान के सुखी होने पर निर्भर करती है। अकबर ने शेरशाह के भू-राजस्व प्रशासन से प्रेरणा लेकर राजा टोडरमल के नेतृत्व में दहसाला बन्दोबस्त किया जिसमें भूमि की पैमाइश तथा उसकी उत्पादकता के आधार पर भू-राजस्व का निर्धारण किया गया। अकबर के शासनकाल के दहसाला बदोबस्त को राजपूतों, मराठों व अंग्रेज़ों ने अपने भू-राजस्व प्रशासन का आधार बनाया। मुगल शासकों ने किसानों के हितों की रक्षा व कृषि विकास को राज्य का दायित्व समझा परन्तु इस काल में किसानों पर करों का बोझ

ब्रिटिश काल की तुलना में कम होते हुए भी बहुत अधिक था फिर भी मध्यकालीन परिस्थितियों को देखते हुए हम मुगल भू-राजस्व व्यवस्था को सफल कह सकते हैं।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य आपको मुगल काल में जागीरदारी प्रथा के विकास तथा उसका मुगल सैन्य-शक्ति, प्रशासन तथा राजनीति पर प्रभाव से अवगत कराने के अतिरिक्त मुगल भू-राजस्व व्यवस्था के मूल तत्वों तथा उसके गुण-दोषों से आपको परिचित कराना है।

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1- मुगल काल से पूर्व जागीरदारी प्रथा का प्रचलन।

2- जागीरदारी प्रथा की मुगल सैन्य-प्रबन्ध तथा प्रशासन में जागीरदारी प्रथा की महत्ता।

3- भारत में मुगल शासकों से पूर्व भू-राजस्व व्यवस्था।

4- दहसाला बन्दोबस्त तथा अन्य भू-राजस्व प्रणालियां।

5- मुगल भू-राजस्व व्यवस्था के गुण-दोष।

2.3 जागीरदारी प्रथा

2.3.1 अकबर के शासनकाल से पूर्व जागीरदारी प्रथा

जागीरदारी प्रथा सामन्तवादी शासन प्रणाली का एक प्रकार थी। दिल्ली सल्तनत काल में इक्तादारी प्रथा प्रचलित थी। सल्तनत काल में अमीरों को उनके नकद वेतन के बदले में उन्हें उसके समतुल्य आय के इक्ते प्रदान किए जाते थे। इन इक्तों का प्रबन्ध करने तथा उनमें राजस्व एकत्र करने का अधिकार उन्हें दे दिया जाता था। इक्तेदार अथवा मुक्ती अपने-अपने इक्तों अथवा जागीरों में लगभग स्वतन्त्र शासक की भांति कार्य करते थे जिसके कारण केन्द्रीय सरकार कमज़ोर पड़ने लगी थी। दिल्ली सल्तनत काल में मुगल काल की भांति न तो जागीरों के हस्तान्तरण की प्रथा थी और न ही जागीरदार की मृत्यु के बाद राज्य द्वारा जागीर को वापस अपने अधिकार में लिए जाने की परम्परा। केन्द्रीय शासन की शक्ति बढ़ाने के उद्देश्य से सुल्तान बलबन ने जागीरदारी प्रथा के प्रचलन पर प्रतिबन्ध लगा दिए थे। परन्तु सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी ने तो उसे समाप्त ही कर दिया था। सुल्तान फ़ीरोज़ शाह तुगलक ने इस प्रथा को पुनर्जीवित किया था तथा जागीरों को वंशानुगत कर दिया। और तब से लेकर लोदियों के शासन काल तक इसका प्रचलन बना रहा परन्तु शेरशाह ने

जागीर प्रथा को समाप्त कर दिया। बाबर, हुमायूं तथा अकबर के शासनकाल के प्रथम दशक में जागीरदारी प्रथा का प्रचलन नहीं था।

2.3.2 अकबर तथा परवर्ती मुगल काल में जागीरदारी प्रथा

2.3.2.1 अकबर के शासनकाल में जागीरदारी प्रथा को लागू करने के उद्देश्य

अकबर के शासनकाल के दूसरे दशक में प्रारम्भ की गई मनसबदारी व्यवस्था के अन्तर्गत मनसबदारों को उनके वेतन के बदले में जागीर दिए जाने की व्यवस्था ने मुगलकालीन जागीरदारी प्रथा को जन्म दिया था। जागीरदारी व्यवस्था लागू करने का उद्देश्य शाही खज़ाने पर बिना अतिरिक्त बोझ डाले साम्राज्य की सैन्य-शक्ति को बढ़ाना था। सैनिक अधिकारियों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ उनके आधीन सैनिकों तथा उनसे सम्बद्ध पशुओं की ज़रूरतों को भी पूरा करने की सुनिश्चित व्यवस्था करना था।

2.3.2.2 नकदी तथा जागीरदार

मुगल काल में जागीरदारी प्रथा मनसबदारी व्यवस्था का अन्तरंग अंग थी। अकबर के शासनकाल के दूसरे दशक से सभी मुगल सैनिक तथा असैनिक अधिकारियों को सैनिक पद मनसब प्रदान किया गया और वे सभी मनसबदार कहलाए। मनसबदारों को दिया जाने वाला वेतन दो प्रकार से दिया गया। प्रथम वे, जिन्हें नकद वेतन दिया गया। इन्हें नकदी कहा गया और द्वितीय वे, जिन्हें वेतन के स्थान पर उनके वेतन के बराबर आय के भू-क्षेत्र आवंटित किए गए। इन भू-क्षेत्रों को जागीर कहा गया और जिन्हें ये क्षेत्र आवंटित किए गए उन्हें जागीरदार कहा गया। इस प्रकार मुगल काल में जागीरदारी प्रथा अकबर के शानकाल से प्रारम्भ हुई थी।

2.3.2.3 जमादामी

जागीर से प्राप्त आय को 'जमादामी' कहा जाता था। आवंटित जागीर की आय से मनसबदार को अपना, अपने सैनिकों का, उनसे सम्बद्ध पशुओं तथा अस्त्र-शस्त्रों का खर्च सम्भालना होता था। सामान्यतया जागीरें उच्चपदीय मनसबदारों को प्रदान की जाती थीं। इस प्रकार जागीरदार आमतौर पर आभिजात्य वर्ग से सम्बद्ध थे। किसी मनसबदार को जागीर आवंटित करते समय यह सुनिश्चित कर लिया जाता था कि उस जागीर की वार्षिक आय उसके निर्धारित वेतन तथा भत्तों के समतुल्य है अथवा नहीं।

2.3.2.4 जागीरों का हस्तान्तरण तथा जागीरों का वंशानुगत न होना

किसी भी जागीरदार को आवंटित जागीर पर स्वामित्व (मालिकाना हक़) प्रदान नहीं किया जाता था। मनसबदारों को लम्बे समय तक एक ही जागीर पर नहीं दी जाती थी। सावधानी के तौर पर

समय-समय पर जागीरों का हस्तान्तरण भी किया जाता था ताकि जागीरदार आवंटित जागीर पर स्थायी रूप से अपने अधिकार अथवा स्वामित्व का दावा पेश न करने लगे। जागीर और मनसब वंशानुगत नहीं होते थे अर्थात् मनसबदार की मृत्यु के बाद उसके वंशज उसकी जागीर या उसके मनसब पर अपना दावा प्रस्तुत नहीं कर सकते थे। मनसबदार की मृत्यु के बाद उसकी जागीर स्वतः बादशाह के अधिकार में वापस चली जाती थी।

2.3.2.5 जागीरों का प्रशासन

जागीरदार को आवंटित जागीर से राज्य को देय भू-राजस्व तथा विभिन्न अबवाब प्राप्त करने का अधिकार था। अपनी आवंटित जागीर में जागीरदार करों की वसूली के लिए अपने कर्मचारी नियुक्त करता था। इस प्रकार जागीरदारों की जागीरों में राज्य की ओर से भू-राजस्व एकत्र करने वाले कर्मचारियों की सेवाओं की आवश्यकता नहीं रह गई और इससे राज्य को इन क्षेत्रों में भू-राजस्व एकत्र करने के व्यय से छुटकारा मिल गया। प्रारम्भ में जागीरदारी व्यवस्था से न केवल राज्य के भू-राजस्व एकत्र करने के कार्य में खर्च होने वाली राशि में कमी आई अपितु मनसबदारों के आधीन सैनिकों और उनके पशुओं के रख-रखाव की चिन्ता से भी राज्य को छुटकारा मिल गया। जागीरदार अपनी-अपनी जागीरों में स्वतन्त्र शासक की भांति कार्य करते थे। अपनी-अपनी जागीरों में शान्ति-व्यवस्था बनाए रखने का तथा प्रजा के हितों की रक्षा करने का दायित्व जागीरदारों का ही होता था।

2.3.2.6 राज्य के प्रशासनिक अधिकारियों का जागीरदारों पर नियन्त्रण

यद्यपि जागीरदारों को अपनी-अपनी जागीरों में व्यावहारिक दृष्टि से स्वतन्त्र रूप से कार्य करने की छूट दी गई थी किन्तु उनकी स्वेच्छाचारिता पर अंकुश रखने के लिए जागीरदारों के अधिकार क्षेत्रों से सम्बद्ध सूबेदारों/फ़ौजदारों/शिकदारों को उनकी गतिविधियों पर नज़र रखने का निर्देश था। आर्थिक मामलों में जागीरदार कोई गड़बड़ी या ज़्यादती न करें, इसकी देखभाल करने का दायित्व उन क्षेत्रों से सम्बद्ध राजस्व अधिकारियों अर्थात् दीवानों/अमल गुज़ारों/आमिलों को दिया गया। जागीरदार अपने सैनिक अभियानों के लिए राज्य से अग्रिम राशि प्राप्त करते थे तथा अन्य आवश्यकताओं के लिए उधार भी लिया करते थे। दीवान-ए-विज़ारत का सवानिह निगार नामक अधिकारी जागीरदारों और राज्य के मध्य लेनदेन का हिसाब रखता था। जागीरदार की मृत्यु की स्थिति में उसकी जागीर स्वतः बादशाह के पास वापस चली जाती थी तथा उसकी व्यक्तिगत सम्पत्ति भी राज्य की ओर से ज़ब्त कर ली जाती थी। इसके बाद सवानिह निगार के कार्यालय में उसके पिछले लेनदेन का हिसाब चुकता करने के बाद उसकी निजी सम्पत्ति की शेष राशि उसके परिवार जनों को लौटा दी जाती थी।

2.3.2.7 जागीर-ए-वतन

सामान्यतया मनसबदार को उसके गृह पदेश में जागीर नहीं दी जाती थी। गृह प्रदेश की जागीर को जागीर-ए-वतन कहा जाता था। यह केवल उन मनसबदारों को प्रदान की जाती थी जिनके कि पास मुगल सेवा में आने से पूर्व अपना राज्य होता था या ज़मींदारी होती थी। उदाहरणार्थ जब मुगलों की आधीनता स्वीकार कर राजपूत शासक उनके मनसबदार बनाए गए तो उन्हें जागीर-ए-वतन प्रदान की गईं इस प्रकार आनुवंशिक ज़मींदारों तथा पूर्व शासकों को जागीर-ए-वतन प्रदान की गईं

2.3.2.8 जागीरदारी व्यवस्था का पतन

जागीरदारी व्यवस्था का अतिशय विस्तार मुगल साम्राज्य के लिए अत्यन्त घातक सिद्ध हुआ। अकबर के शासनकाल में मनसबदारों की कुल संख्या दो हज़ार से भी कम थी और औरंगज़ेब के शासनकाल में उनकी संख्या लगभग साढ़े चौदह हज़ार तक पहुंच गई। इनमें जागीर आवंटित किए गए मनसबदारों अर्थात् जागीरदारों की संख्या भी हज़ारों में थी। बीजापुर और गोलकुण्डा विजय के बाद मुगल साम्राज्य विस्तार को पूर्ण विराम लग चुका था। अब नए भू-क्षेत्रों का मुगल साम्राज्य में समावेश नहीं हो रहा था किन्तु अपने अनवरत सैनिक अभियानों के कारण औरंगज़ेब को सैनिक अधिकारियों की संख्या में लगातार वृद्धि करनी पड़ रही थी। राज्य को अपने नए मनसबदारों को आवंटित करने के लिए नई जागीरों की निरन्तर आवश्यकता पड़ रही थी। इस प्रकार आवंटन हेतु जागीरों की कमी पड़ने लगी। धीरे-धीरे मनसबदार को आवंटित जागीर मिलने में वर्षों का समय लगने लगा और कभी-कभी अपनी आवंटित जागीर प्राप्त करने उसकी पूरी उम्र कम पड़ने लगी। शाह-ए-बेखबर कहे जाने वाले औरंगज़ेब के पुत्र बहादुर शाह प्रथम के काल में तो एक ही जागीर दो या उससे भी अधिक मनसबदारों को आवंटित की जाने लगी। धीरे-धीरे स्थिति इतनी खराब हो गई कि जागीर के आवंटन का पत्र रद्दी की टोकरी की शोभा बढ़ाने के लायक ही रह गया। अपनी-अपनी जागीरों पर वास्तविक अधिकार रखने वाले मनसबदारों की स्वेच्छाचारिता मुगल बादशाहों की दुर्बलता के कारण दिनों-दिन बढ़ती चली गई। उन्होंने किसानों का अनियन्त्रित होकर शोषण करना प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने किसानों से मनमाना लगान वसूल करना प्रारम्भ कर दिया और दुर्भिक्ष व बाढ़ की स्थिति में भी उन पर किसी प्रकार का रहम करना उचित नहीं समझा। जागीरदारों की इस ज़ोर-ज़बर्दस्ती से कृषि विकास को गहरा आघात लगा। जागीरदारी आनुवंशिक नहीं थी। जागीरदार के उत्तराधिकारियों का जागीरदार बनाया जाना बादशाह की इच्छा पर निर्भर करता था। इसके अतिरिक्त जागीरों के समय-समय पर हस्तान्तरित किए जाने के नियम तथा जागीरदार की मृत्यु की स्थिति में उसकी जागीर स्वतः बादशाह के पास वापस चले जाने और उसकी व्यक्तिगत सम्पत्ति भी राज्य की ओर से ज़ब्त किए जाने के कारण जागीरदारों के मन में आशंका, भय व अनिश्चितता बनी

रहती थी। अपनी आवंटित जागीर और उसमें रहने वाली प्रजा के प्रति उनका कोई स्थायी लगाव नहीं हो पाता था। इन परिस्थितियों में अधिकांश जागीरदार अपनी-अपनी जागीरों में अपने दायित्वों के प्रति असावधान होकर मनमाने ढंग से किसानों तथा अन्य निवासियों को शोषण करते थे तथा निजी जीवन में बचत करने के स्थान पर अपनी विलासिता में अयिन्त्रित अपव्यय करते थे। विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत करने के कारण जागीरदार अपने सैनिकों के रख-रखाव के प्रति भी असावधान हो गए जिसका कि प्रतिकूल प्रभाव राज्य की सैन्य-शक्ति पर पड़ा। इस प्रकार राज्य की सैनिक क्षमता बढ़ाने तथा जागीरों में राजस्व एकत्रण हेतु सरकारी खर्च में कमी करने के जिन उद्देश्यों को लेकर जागीरदारी प्रथा को लागू किया गया था उनको प्राप्त करने की कोई भी सम्भावना जाती रही। धीरे-धीरे जागीरदारी प्रथा न केवल साम्राज्य के लिए असहनीय आर्थिक बोझ का कारण बनती गई अपितु उसके पतन का एक प्रमुख कारण भी बन गई।

2.4 भू-राजस्व व्यवस्था

2.4.1 मुगलों से पूर्व भू-राजस्व व्यवस्था

2.4.1.1 प्राचीन भारतीय शासकों की भू-राजस्व व्यवस्था

कृषि प्रधान देश भारत में राज्य की आय का मुख्य स्रोत भू-राजस्व रहा है। भारत का कोई भी शासक भू-राजस्व प्रशासन की उपेक्षा कर अथवा उसका कु-प्रबन्ध कर अपने शासन को सफल नहीं बना सकता था। राज्य को कृषि-उपज का एक भाग प्राप्त करने का वैधानिक अधिकार था। मौर्य तथा गुप्त काल में आमतौर पर उपज का छठा भाग भू-राजस्व के रूप में लिया जाता था। भू-राजस्व निर्धारण में भूमि की नापजोख किए जाने की व्यवस्था थी। प्राचीन भारतीय शासकों के काल में दुर्भिक्ष, अनावृष्टि तथा बाढ़ की स्थिति में भू-राजस्व की वसूली का स्थगन अथवा उसको भयंकर आपदा की स्थिति में पूर्णतया समाप्त करने की व्यवस्था थी। कृषि को प्रोत्साहन देने के लिए तथा भू-राजस्व के माध्यम से राज्य की आय में वृद्धि करने के उद्देश्य से शासकों द्वारा सिंचाई हेतु नहरों, जलाशयों तथा कूपों का निर्माण कराया जाता था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में सुचारु भू-राजस्व प्रशासन हेतु अनेक उपायों की चर्चा की गई है।

2.4.1.2 दिल्ली सल्तनत काल में भू-राजस्व व्यवस्था

दिल्ली सल्तनत काल में प्राचीन भारतीय भू-राजस्व व्यवस्था में कोई आमूल परिवर्तन नहीं किया गया किन्तु राज्य की ओर से लिया जाने वाला भू-राजस्व कुल उपज के छठे भाग से बढ़ाकर उपज का तीसरा भाग कर दिया गया। सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी ने इसे और बढ़ाकर उपज का आधा भाग कर दिया और भू-राजस्व निर्धारण में भूमि की नापजोख को आधार बनाया। भू-राजस्व

के साथ-साथ चारागाह कर तथा गृह कर जैसे अबवाब लगाकर तथा बाज़ार नियन्त्रण नीति लागू कर अलाउद्दीन ने निर्धन किसानों पर और भी अधिक आर्थिक बोझ डाल दिया। सुल्तान गियासुद्दीन तुगलक ने अलाउद्दीन की कठोर भू-राजस्व नीति को बदल कर उसे किसानों के अनुकूल बनाने का प्रयास किया। सुल्तान मुहम्मद बिन तुगलक द्वारा दोआब में कर वृद्धि का प्रयोग पूर्णतया असफल रहा परन्तु उसके उत्तराधिकारी सुल्तान फ़ीरोज़शाह तुगलक ने किसानों की दशा सुधारने तथा कृषि-विकास हेतु अनेक ठोस कदम उठाए। फ़ीरोज़शाह तुगलक के काल में भू-राजस्व निर्धारण हेतु भूमि की नापजोख करने की व्यवस्था को तथा अबवाबों को समाप्त कर दिया गया। सिंचाई के साधनों - नहरों, जलाशयों आदि का निर्माण कर उसने कृषि क्षेत्र का विस्तार किया। सिंचाई के साधनों से लाभान्वित क्षेत्रों में सिंचाई कर लगाकर उसने राज्य की आय में वृद्धि की किन्तु उसने राजस्व संग्रह हेतु ठेका दिए जाने की प्रथा को बढ़ावा देकर किसानों के आर्थिक दोहन का मार्ग प्रशस्त कर दिया। सैयद वंश और लोदी वंश के सुल्तानों ने भू-राजस्व व्यवस्था को लगभग पूर्ववत बने रहने दिया। भू-राजस्व प्रशासन के क्षेत्र में उनकी कोई भी उल्लेखनीय उपलब्धि नहीं थी।

2.4.1.3 शेरशाह की भू-राजस्व व्यवस्था

शेर शाह ने भू-राजस्व प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार को दूर कर उसे अधिक सक्षम, निष्पक्ष और पारदर्शी बनाया। भू-राजस्व के निर्धारण को वैज्ञानिक आधार देने के लिए उसने भूमि की नापजोख तथा औसत उपज के आधार पर ज़मीन का तीन किस्मों (उत्तम, मध्यम और निम्न) में वर्गीकरण किया। उसने अनुमानित लगान (जमा) और वास्तव में वसूला गया लगान (हासिल) का अन्तर कम करने के लिए ठोस उपाय किए। लगान का भुगतान नकदी में किया जाना निश्चित किया गया। किसानों को भूमि पर अधिकार सम्बन्धी पट्टे दिए गए तथा उनको लगान सम्बन्धी अपने कर्तव्यों के लिए कुबूलियत भी देनी पड़ी। सैनिक अभियानों के समय किसानों को उनकी फ़सल के नुक्सान की भरपाई की व्यवस्था की गई तथा आपदाकाल में उनको लगान में छूट व अन्य प्रकार की सहायता की व्यवस्था भी की गई।

2.4.2 मुगलशासकों की भू-राजस्व व्यवस्था

2.4.2.1 बाबर तथा हुमायूं के शासनकाल में भू-राजस्व व्यवस्था

बाबर और हुमायूं के शासनकाल में भू-राजस्व प्रशासन में कोई परिवर्तन नहीं किया गया। इन दोनों बादशाहों को प्रशासनिक सुधार करने का न तो समय मिला और न ही उनमें नव-विजित साम्राज्य की जटिल भू-राजस्व व्यवस्था की जटिलताओं को समझ पाने की योग्यता थी और न उसमें सुधार करने हेतु आवश्यक संसाधन। उन्होंने पूर्ववर्ती भू-राजस्व व्यवस्था को लगभग ज्यों का ज्यों बनाए रखा।

2.4.2.2 अकबर की भू-राजस्व व्यवस्था

2.4.2.2.1 भू-राजस्व प्रशासन में प्रारम्भिक प्रयोग

कृषि योग्य भूमि तीन वर्गों में विभाजित थी - खालसा, जागीर और मदद-ए-माश। जागीरों के भू-राजस्व प्रशासन का दायित्व उनसे सम्बद्ध मनसबदारों का था तथा मदद-ए-माश के अन्तर्गत भूमि की आय पर धार्मिक व्यक्तियों का अधिकार होता था। राज्य के लिए खालसा भूमि ही राजस्व का साधन होती थी। अकबर ने शासन की बागडोर वास्तविक रूप से अपने हाथों में सम्भालते ही राज्य की आय के मुख्य स्रोत भू-राजस्व की महत्ता को समझते हुए भू-राजस्व प्रशासन में व्याप्त अराजकता, दस्तावेज़ों में गड़बड़ी, किसानों के अनावश्यक शोषण तथा राज्य की आय में अनश्चितता की स्थिति को सुधारने तथा अपने साम्राज्य में भू-राजस्व प्रशासन में एकरूपता लाने के प्रयास प्रारम्भ कर दिए। उसके प्रारम्भिक प्रयोगों में शाह मन्सूर, मुज़फ़्फ़र खाँ तरबाती तथा राजा टोडरमल का विशेष योगदान था। मुज़फ़्फ़र खाँ तरबाती तथा राजा टोडरमल ने स्थानीय कानूनगो के दस्तावेज़ों का गहन अध्ययन किया। राजा टोडरमल ने समस्त गुजरात की कृषि योग्य भूमि का सर्वेक्षण किया और उसके आधार पर वहां भू-राजस्व का निर्धारण किया।

2.4.2.2.2 राजा टोडरमल का दहसाला बन्दोबस्त

अकबर यह समझता था शेरशाह के शासनकाल में राजस्व अधिकारी रह चुके राजा टोडरमल का भूमि का दहसाला बन्दोबस्त सन् 1573 के उसके गुजरात के तथा सन् 1575-76 के उसके गुजरात, बिहार व बंगाल छोड़कर शेष साम्राज्य के भू-राजस्व प्रशासन के सर्वेक्षण पर आधारित था। टोडरमल ने साम्राज्य को लगभग 1 करोड़ टकों की वार्षिक भू-राजस्व आय वाली 182 इकाइयों में विभाजित किया और उनमें से प्रत्येक को करोड़ी नामक अधिकारी के सुपुर्द कर दिया। बाद में इस व्यवस्था को बदल कर भू-राजस्व प्रशासन हेतु साम्राज्य को 12 सूबों में विभाजित कर दस वर्षीय व्यवस्था दहसाला बन्दोबस्त को लागू किया गया। भू-राजस्व निर्धारण हेतु भूमि की पैमाइश की गई तथा उसे उत्पादकता की दृष्टि से पोलज, परौती, चाचर तथा बन्जर में वर्गीकृत किया गया। लगान के रूप में किसान को अपनी दस वर्ष की औसत उपज का तीसरा भाग देना निश्चित किया गया। विभिन्न क्षेत्रों में कृषि-उत्पादों की मूल्य-तालिका (दस्तूरुल अमल) के आधार पर किसान की कुल उपज का

मूल्यांकन किया गया और फिर लगान को नकदी में लिए जाने का प्रबन्ध किया गया। इस व्यवस्था पर शेरशाह के भू-राजस्व प्रशासन की स्पष्ट छाप थी। दहसाला बन्दोबस्त न तो दस वर्ष के लिए था न ही यह स्थायी था, लगान की दरों में समय-समय पर संशोधन करने का अधिकार राज्य के पास सुरक्षित था। इस व्यवस्था में किसानों के हितों की रक्षा करने तथा राजस्व अधिकारियों द्वारा उनके शोषण पर नियन्त्रण करने के अनेक प्रबन्ध किए गए थे किन्तु यह व्यवस्था दोषमुक्त नहीं थी। इसमें किसानों पर करों का बोझ अत्यधिक था। लॉर्ड कॉर्नवालिस के शासनकाल में सन् 1793 के स्थायी बन्दोबस्त में लगान निर्धारण में दहसाला बन्दोबस्त के दस्तावेज़ों को ही आधार बनाया गया था किन्तु ब्रिटिश शासन की भू-राजस्व व्यवस्था की तुलना में मुगलकालीन भू-राजस्व व्यवस्था अधिक उदार तथा किसानों के लिए हितकारी थी।

2.4.2.2.3 अन्य भू-राजस्व प्रणालियां

1. कनकूत प्रणाली: इस प्रणाली में उपज का अनुमान लगाकर लगान का निर्धारण किया जाता था। इसमें लगान गल्ले के रूप में वसूला जाता था।

2. नस्क प्रणाली: यह प्रथा काश्मीर तथा गुजरात में प्रचलित थी। मोरलैण्ड के अनुसार इस प्रथा के अन्तर्गत भूमि कर किसानों से व्यक्तिगत रूप से नहीं अपितु उनके समूह से वसूली जाती थी। प्रोफ़ेसर ए0 एल0 श्रीवास्तव के अनुसार इस व्यवस्था में प्रति हल के हिसाब से लगान निर्धारित किया जाता था।

3. गल्लाबख्शी: इस परम्परागत भू-राजस्व प्रणाली में खेत में ही कटी फ़सल में से किसान और राज्य के हिस्से का बटवारा कर लिया जाता था किन्तु इस प्रणाली में राजस्व अधिकारियों द्वारा किसानों का शोषण करने तथा किसानों के साथ मिलीभगत कर राज्य को भू-राजस्व में नुकसान पहुंचाने की सम्भावना बनी रहती थी। इसके अतिरिक्त भू-राजस्व के रूप में प्राप्त गल्ले को रखने की व्यवस्था का खर्च भी राज्य को उठाना पड़ता था।

2.4.2.3 अबवाब

मुगल काल में किसान को लगान के अतिरिक्त राजस्व कर्मचारियों को पैमाइश करने की एवज़ में एक दाम प्रति बीघा जाबिताना भी देना पड़ता था। किसानों को स्थानीय पुजारी, बढ़ई, धोबी, लुहार, नाई आदि को उनकी सेवाओं के बदले में अनाज के रूप में खुराकी देनी पड़ती थी। पशुओं, चारागाहों तथा बागों पर भी अबवाब लगाए जात थे। अनेक बार बादशाहों को अबवाबों को समाप्त करना पड़ता था किन्तु स्थानीय अधिकारी बार-बार किसी न किसी बहाने उन्हें फिर से लगा देते थे।

2.4.2.4 किसानों को राहत तथा कृषि योग्य भूमि के विकास को प्रोत्साहन

अकाल, अनावृष्टि अथवा बाढ़ की स्थिति में किसानों को लगान में राहत दिए जाने की व्यवस्था थी। शाहजहां द्वारा 1630-31 के दुर्भिक्ष के समय खालसा भूमि पर 70 लाख का लगान माफ़ किया गया था। सन् 1641 में काश्मीर में अकाल के दौरान किसानों को 1 लाख रुपये की सहायता देने के साथ लंगरों में मुफ़्त भोजन की व्यवस्था भी की गई थी। किसानों को कृषि योग्य भूमि में विस्तार करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता था और उन्हें बंजर या वनाच्छादित भूमि को खेती योग्य बनाने पर लगान में 5 वर्ष तक की पूरी अथवा आंशिक छूट दी जाती थी। ज़रूरत पड़ने पर किसानों को बीज तथा पशु खरीदने के लिए ब्याज मुक्त तकावी (अग्रिम धन) दी जाती थी जिसे आसान किश्तों में उन्हें चुकाना होता था। राज्य की ओर से सिंचाई हेतु बांधों, नहरों, जलाशयों तथा कूपों का निर्माण किया जाता था।

2.4.2.5 अकबर के परवर्ती मुगल बादशाहों की भू-राजस्व व्यवस्था

अकबर के परवर्ती मुगल बादशाहों ने उसकी भू-राजस्व व्यवस्था को लगभग ज्यों का त्यों लागू रखा परन्तु शाहजहां की विलासिता और औरंगज़ेब के निरन्तर युद्धों में व्यस्त रहने के कारण राज्य पर बहुत अधिक आर्थिक बोझ पड़ा। इस कारण भू-राजस्व को उपज के तीसरे भाग से बढ़ाकर आधा भाग कर दिया गया। मुगल साम्राज्य के पतन के समय भू-राजस्व प्रशासन पूर्णतया अव्यवस्थित हो गया तथा किसानों का शोषण निरन्तर बढ़ने के कारण उनकी हालत बद से बदतर होती चली गई।

2.4.2.6 किसानों पर ऋण का बोझ

आमतौर पर लगान तथा अबवाब चुकाने के लिए तथा भ्रष्ट राजस्व अधिकारियों - ताल्लुकदार, ज़मींदार, चौधरी, खुत, मुकद्दम, कानूनगो, पटवारी आदि की नाजायज़ मांगों को पूरा करने के लिए किसानों को बार-बार महाजनों से ऊँची ब्याज दरों पर ऋण लेना पड़ता था और फिर वे आजीवन ऋण के बोझ तले दब जाते थे। अन्नदाता किसान को दो वक्त की रोटी भी मुश्किल से नसीब हो पाती थी।

2.4.2.7 मुगल भू-राजस्व व्यवस्था के गुण-दोष

महान मुगल शासकों की भू-राजस्व व्यवस्था मध्यकालीन परिस्थितियों को देखते हुए उदार एवं व्यवस्थित कही जा सकती है। राजपूत, मराठा, सिक्ख तथा अन्य परवर्ती भारतीय शासकों के अतिरिक्त ब्रिटिश भारतीय शासकों ने भी मुगलों की भू-राजस्व प्रणाली को अपने भूमि-प्रशासन का आधार बनाया था। मुगल काल में लगान कुल उत्पादन पर नहीं अपितु लाभांश (बीज, खाद आदि

का खर्चा निकाल कर) के आधार पर वसूला जाता था जब कि अंग्रेज़ों ने भारत में लगान निर्धारण में कुल उत्पादन को आधार बनाया था इसीलिए मुगल काल की तुलना में ब्रिटिश काल में किसानों की दशा कहीं अधिक खराब थी। मुगल भू-प्रशासन इस धारणा पर आधारित था कि साम्राज्य की समृद्धि किसान के सुखी होने पर निर्भर करती है। इसलिए मुगल शासन में यथा सम्भव किसान के हितों की रक्षा की गई, उसको प्रोत्साहित किया गया और आवश्यकता पड़ने पर उसकी सहायता भी की गई।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्नांकित पर चर्चा कीजिए-

1. दिल्ली सल्तनत काल में जागीरदारी प्रथा।
2. जागीर-ए-वतन।
3. जागीरों पर राज्य का नियन्त्रण।
4. शेरशाह की भू-राजस्व प्रशासन की उपलब्धियां।
5. गल्ला बख्शी व्यवस्था।
6. मुगल भू-राजस्व व्यवस्था के गुण-दोष।

2.5 सारांश

जागीरदारी प्रथा सामन्तवादी शासन प्रणाली का एक प्रकार थी। सल्तनत काल में अमीरों को उनके नकद वेतन के बदले में उन्हें उसके समतुल्य आय के इक्ते (जागीर) प्रदान किए जाते थे। बलबन और अलाउद्दीन खिलजी ने जागीरदारी प्रथा का दमन किया जब कि फ़ीरोज़ तुगलक ने इसका पुनरुत्थान किया। अकबर ने मनसबदारी व्यवस्था के अन्तर्गत उच्च पदीय मनसबदारों को वेतन के बदले में जागीरें आवंटित कीं। जागीर वंशानुगत नहीं होती थी तथा समय-समय पर उनका हस्तान्तरण भी होता था किन्तु पूर्व शासकों और ज़मींदारों को उनके गृह क्षेत्र में जागीर-ए-वतन प्रदान की जाती थी। जागीरदार अपनी आवंटित जागीरों में प्रशासक की भूमिका भी निभाते थे। जागीरदारों की गतिविधियों पर सम्बद्ध सूबेदार, फ़ौजदार व शिकदार के माध्यम से राज्य का नियन्त्रण रखा जाता था। धीरे-धीरे सैनिक व राजनीतिक कारणों से जागीरदारों की संख्या बढ़ती चली गई और जागीरों की कमी पड़ने लगी। औरंगज़ेब के शासनकाल के उत्तरार्ध से जागीरदारी

व्यवस्था राज्य पर एक भारी आर्थिक बोझ बन गई और परवर्ती काल में उसमें और भी अधिक अव्यवस्था व अराजकता व्याप्त होने के कारण उसका पतन हो गया।

कृषि प्रधान देश भारत में प्राचीन काल से राज्य की आय का मुख्य स्रोत भू-राजस्व रहा है। मौर्य तथा गुप्त काल में उपज का छठा भाग भू-राजस्व के रूप में लिया जाता था। भू-राजस्व निर्धारण में भूमि की नापजोख किए जाने की व्यवस्था थी। दिल्ली सल्तनत काल में अलाउद्दीन ने लगान निर्धारण हेतु भूमि की पैमाइश की प्रणाली लागू की किन्तु भू-राजस्व के रूप में उपज का आधा भाग लेकर उसने किसानों का शोषण किया। फ़ीरोज़ तुगलक ने किसानों पर करों का बोझ कम किया किन्तु भू-राजस्व के एकत्रण हेतु ठेकेदारी प्रथा का प्रचलन कर उसने किसानों का अहित किया। भूमि की नापजोख तथा उत्पादकता के आधार पर भू- राजस्व का निर्धारण कर, किसानों के अधिकारों व कर्तव्यों को सुनिश्चित कर शेरशाह ने भू-राजस्व प्रशासन को सक्षम बनाया।

अकबर ने शेरशाह के भू-राजस्व प्रशासन से प्रेरणा लेकर राजा टोडरमल के नेतृत्व में दहसाला बन्दोबस्त किया। इसमें भूमि की पैमाइश तथा उसकी उत्पादकता के आधार पर भू-राजस्व का निर्धारण किया गया। कनकूत, नस्क तथा गल्ला बख्शी अन्य प्रचलित भू-राजस्व प्रणालियां थीं। मुगल काल में किसानों पर करों का बोझ अधिक था किन्तु ब्रिटिश भारतीय शासन की तुलना यह बहुत कम था। अकबर के दहसाला बदोबस्त को राजपूतों, मराठों व अंग्रेज़ों ने अपने भू-राजस्व प्रशासन का आधार बनाया। मुगल शासकों ने किसानों के हितों की रक्षा व कृषि विकास को राज्य का दायित्व समझा। मध्यकालीन परिस्थितियों को देखते हुए हम मुगल भू-राजस्व व्यवस्था को सफल कह सकते हैं।

2.6 पारिभाषिक शब्दावली

जमादामी - जागीर से प्राप्त आय।

जागीर-ए-वतन - मनसबदार के गृह प्रदेश की जागीर।

पट्टा - शासन की ओर से किसान को दिया जाने वाला भूमि सम्बन्धी अधिकार पत्र।

कुबूलियत - किसान की ओर से लगान चुकाने के दायित्व का स्वीकृति पत्र।

अबवाब - अतिरिक्त कर।

जाबिताना - भूमि की पैमाइश के एवज़ में किसान से लिया जाने वाला कर।

तकावी - अग्रिम धन।

2.7 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 5.2.3.1 अकबर के शासनकाल से पूर्व जागीरदारी प्रथा।

2. देखिए 5.2.3.2.7 जागीर-ए-वतन।

3. देखिए 5.2.3.2.6 राज्य के प्रशासनिक अधिकारियों का जागीरदारों पर नियन्त्रण।

4. देखिए 5.2.4.1.3 शेरशाह की भू-राजस्व व्यवस्था।

5. देखिए 5.2.4.2.2.3 अन्य भू-राजस्व प्रणालियां का बिन्दु 3।

6. देखिए 5.2.4.2.7 मुगल भू-राजस्व व्यवस्था के गुण-दोष।

2.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Dharma Kumar – *Economic History of India Vol. I*
2. Habib, Irfan – *Agrarian System of the Mughals*
3. Smith, V. A. – *Akbar the Great*
4. Abu-l –Fazl – *The Ain-i-Akbari* (English Tr. Blochmann, H.)
5. Abu-l –Fazl – *Akbarnama* (English Tr. Beveridge, H.)
6. Habib, Irfan – *Akbar and His India*

2.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Sarkar, Jadunath – *Studies in Mughal India*
2. Sarkar, Jadunath – *Fall of the Mughal Empire*
3. Chandra, S. – *Medieval India: From Sultanate to the Mughals*
4. Moreland – *India from Akbar to Aurangzeb*

2.10 निबंधात्मक प्रश्न

दहसाला बन्दोबस्त का आलोचनात्मक परीक्षण कीजिए।

इकाई तीन- मुगल स्थापत्य कला तथा चित्रकला

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 मुगलकालीन स्थापत्य कला

3.3.1 मुगलों से पूर्व भारत में स्थापत्य कला का विकास

3.3.1.1 प्राचीन एवं पूर्व मध्यकालीन स्थापत्य कला

3.3.1.2 दिल्ली सल्तनत, प्रान्तीय एवं शेरशाह की स्थापत्य कला

3.3.1.2.1 दिल्ली सल्तनत की स्थापत्य कला

3.3.1.2.2 मध्यकालीन प्रान्तीय स्थापत्य कला

3.3.1.2.3 शेरशाह की स्थापत्य कला

3.3.2 मुगल स्थापत्य कला

3.3.2.1 अकबर के शासनकाल से पूर्व की मुगल स्थापत्य कला

3.3.2.2 स्थापत्य कला के पोषक के रूप में अकबर

3.3.2.3 जहांगीर के काल में स्थापत्य कला का विकास

3.3.2.4 शाहजहां के काल में स्थापत्य कला का चरमोत्कर्ष

3.3.2.5 मुगल स्थापत्य कला का पतन

3.4 मुगलकालीन चित्रकला

3.4.1 मुगल काल से पूर्व भारत में चित्रकला का विकास

3.4.2 मुगल काल में चित्रकला का विकास

3.4.2.1 बाबर और हुमायूं के शासनकाल में चित्रकला का विकास

3.4.2.2 चित्रकला के पोषक के रूप में अकबर

3.4.2.3 जहांगीर के काल में मुगल चित्रकला का चरमोत्कर्ष

3.4.2.4 मुगल चित्रकला का पतन

3.5 सारांश

3.6 पारिभाषिक शब्दावली

3.7 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

3.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

3.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

3.10 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

मुगलकालीन स्थापत्य कला एवं चित्रकला मध्यकालीन भारत में विकसित सांस्कृतिक समन्वय की जीवन्त प्रतीक हैं। मुगल शासक, कला के विभिन्न पक्षों के न केवल संरक्षक तथा पोषक थे अपितु स्वयं कला के पारखी भी थे। उनके शासनकाल में स्थापत्य कला व चित्रकला के क्षेत्र में विभिन्न कला तत्वों का समावेश कर उनकी विशिष्ट शैलियों (इण्डो-इस्लामिक) का विकास किया गया जो कि कला मर्मज्ञों की दृष्टि में अनुपम हैं। मुगल काल की कला में मौलिकता से अधिक सौन्दर्य की पराकाष्ठा तक पहुंचने के प्रयास किए गए और इसके लिए कलाकारों ने भारत की ही नहीं अपितु विश्व की अनेक स्थापित कला शैलियों के तत्वों को आत्मसात किया।

हुमायूं का मकबरा, फ़तेहपुर सीकरी में बुलन्द दरवाज़ा, जामा मस्जिद तथा दीवान-ए-खास, आगरा के लाल किले की प्राचीर, अकबर का मकबरा, जहांगीर का मकबरा, एत्मात्-उद्-दौला का मकबरा, मोती मस्जिद, दिल्ली के लाल किले में दीवान-ए-खास, दिल्ली की जामा मस्जिद, ताज महल और बीबी का मकबरा मुगल काल की सबसे प्रसिद्ध इमारते हैं। उद्यान-योजना, जल-स्रोत की निकटता, भव्य प्रवेश द्वार, ज्यामितीय समरूपता, मीनारें, गुम्बद, सीढ़ियों की कतारें और मुख्य भवन का प्रायः एक ऊँचे चबूतरे पर स्थित होना, अलंकरण हेतु - जाली का काम, लाल पत्थर पर संगमरमर की पच्चीकारी (इनले वर्क) तथा संगमरमर पर बहुमूल्य पत्थरों की पच्चीकारी (पीत्रा दुरा), मुगल स्थापत्य कला की पहचान मानी जा सकती हैं।

इस्लाम में जीवित प्राणियों का चित्रण निषिद्ध होने के कारण दिल्ली सल्तनत काल में चित्रकला का विकास नहीं हो सका किन्तु मुगल शासक चित्रकला के पोषक थे। औरंगज़ेब को छोड़कर सभी मुगल बादशाहों ने चित्रकारों को संरक्षण देकर चित्रकला को प्रोत्साहित किया। मुगलकालीन चित्र कला पर ईरानी, तुर्की, चीनी, यूनानी, रोमन और भारतीय चित्रकला शैलियों का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। मुगल बादशाहों में जहांगीर चित्रकला का सबसे बड़ा पोषक था। प्राकृतिक रंगों के प्रयोग के लिए विख्यात उसके शासनकाल की चित्रकला अपनी मौलिकता, कल्पनाशीलता और विषयों की विविधता के कारण उन्नति के शिखर तक पहुंच गई थी। अब्दुर्रहीम खानखाना और दाराशिकोह भी चित्रकला के पोषक थे। मुगल लघुचित्रों में प्राकृतिक दृश्य, पशु-पक्षी का चित्रण, आखेट तथा दरबार का चित्रण, हिन्दू पौराणिक कथानकों पर आधारित चित्र तथा व्यक्ति चित्र प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। मुगल चित्रकला धर्म-निर्पेक्ष चित्रकला का प्रतिनिधित्व करती है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य मुगलकालीन स्थापत्य कला व चित्रकला के विकास के विभिन्न चरणों से आपको अवगत कराना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1- इण्डो-इस्लामिक स्थापत्य कला की मुख्य विशेषताएं।

2- मुगल स्थापत्य कला में विभिन्न कला-तत्वों का समावेश।

3-मुगल स्थापत्य कला के पोषक के रूप में अकबर, नूरजहां तथा शाहजहां।

4- मुगल शासकों द्वारा चित्रकला का पोषण।

5. मुगल चित्रकला का कलात्मक एव भावात्मक पक्ष।

3.3 मुगलकालीन स्थापत्य कला

3.3.1 मुगलों से पूर्व भारत में स्थापत्य कला का विकास

3.3.1.1 प्राचीन एवं पूर्व मध्यकालीन स्थापत्य कला

भारत में तुर्क शासन की स्थापना से पूर्व प्राचीन एवं पूर्व मध्यकाल में स्थापत्य कला का अभूतपूर्व विकास हुआ था। इस काल की अधिकांश इमारतें अब नष्ट हो चुकी हैं किन्तु मौर्यकालीन स्तूप तथा प्रवेश द्वार, कुषाणकालीन स्तूप, गुप्तकालीन देवगढ़ तथा भीतरगांव के मन्दिर, नालन्दा के विश्वविद्यालय के भग्नावशेष, दिलवाड़ा तथा रणकपुर के जैन मन्दिर, खजुराहो के मन्दिर, कोणार्क का सूर्य मन्दिर, दक्षिण भारत के भव्य गुहा मन्दिर, रथ अथवा विमान शैली के मन्दिर, चोल शैली का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण वृहदेश्वर मन्दिर, आदि स्थापत्य कला के विकास के जीवन्त प्रमाण हैं। बीम-ब्रैकेट सिद्धान्त पर आधारित इस स्थापत्य कला की विशिष्ट पहचान इसकी पटी हुई छतें, खुला आँगन, सुदृढ़ता, आगे निकले हुए छज्जे, घोड़ियों पर स्थित मेहराब, स्तम्भों और उन्नत शिखरों के साथ मूर्तियों तथा चित्रों द्वारा अलंकरण और पत्थर पर महीन तराशा हुआ काम है।

3.3.1.2 दिल्ली सल्तनत, प्रान्तीय एवं शेरशाह की स्थापत्य कला

3.3.1.2.1 दिल्ली सल्तनत की स्थापत्य कला

कला मर्मज्ञों ने दिल्ली सल्तनत की स्थापत्य कला को इण्डो-इस्लामिक स्थापत्य कला कहा है जिसमें कि हिन्दू तथा मुस्लिम स्थापत्य कला-तत्वों का समन्वय दृष्टिगोचर होता है। इस काल की इमारतों में गुम्बद, मीनारें, मेहराबें, मेहराबी डाटदार छतें, भवनों में हवा और रौशनी के लिए खुलापन, भवनों की अष्टकोणिक रूपरेखा आदि मुस्लिम स्थापत्य कला-तत्वों के दर्शन होते हैं किन्तु इस काल में अलंकरण में सादगी की मुस्लिम कला शैली की जगह अलंकरण की हिन्दू कला-शैली ने ले ली और भवनों में स्तम्भों का भी निर्माण किया गया। दिल्ली सल्तनत काल की प्रतिनिधि इमारतों में कुतुब मीनार सबसे ऊँची और सबसे सुन्दर मीनार है। इसके छज्जों तथा अलंकरण में भारतीय प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। अलाउद्दीन खिलजी द्वारा निर्मित अलाई दरवाज़े पर अरबी स्थापत्य कला का प्रभाव है। गियासुद्दीन तुगलक, फ़ीरोज़शाह तुगलक तथा सिकन्दर लोदी के मकबरे इस काल की प्रसिद्ध इमारते हैं। लोदी काल के अठकोणिक कक्षों तथा भवन के साथ उद्यान योजना ने मुगल स्थापत्य कला को प्रभावित किया था।

3.3.1.2.2 मध्यकालीन प्रान्तीय स्थापत्य कला

काश्मीर, मुल्तान, जौनपुर, बंगाल, मालवा, गुजरात तथा बहमनी राज्यों की स्थापत्य कला में दिल्ली सल्तनत की तुलना में हिन्दू तथा मुस्लिम कला-तत्वों का अधिक समन्वय हुआ था। बंगाल में बड़ी सोना मस्जिद, जौनपुर में अटाला मस्जिद, माण्डू में वहां का किला, गुजरात में जामी मस्जिद और काश्मीर में मदानी का मकबरा इण्डो-इस्लामिक स्थापत्य कला के श्रेष्ठ उदाहरण हैं।

मध्यकालीन हिन्दू स्थापत्य कला के सर्वश्रेष्ठ उदाहरण के रूप में चित्तौड़ के विजय स्तम्भ, कीर्ति स्तम्भ, ग्वालियर का मान मन्दिर और विजय नगर साम्राज्य की राजधानी हम्पी में स्थित भग्नावशेष हैं।

3.3.1.2.3 शेरशाह की स्थापत्य कला

शेरशाह द्वारा बनवाई गई दिल्ली की किला-ए-कोहना मस्जिद में ईरानी तथा भारतीय कला-तत्वों का समावेश है। सहसराम में उसका मक़बरा मध्यकालीन वास्तुकला की अनुपम धरोहर है। तालाब के मध्य टापू पर बने उसके मकबरे ने मुगल स्थापत्य कला को विशेष रूप से प्रभावित किया था।

3.3.2 मुगल स्थापत्य कला

3.3.2.1 अकबर के शासनकाल से पूर्व की मुगल स्थापत्य कला

बाबर ने मुगल स्थापत्य कला में बहते हुए जल की कृत्रिम व्यवस्था और उद्यान योजना का समावेश किया था। काबुल में उसका मकबरा एक बाग के मध्य स्थित है। उसके काल में पानीपत, मुरादाबाद तथा अयोध्या में मस्जिदें बनाई गईं जो कि कलात्मक दृष्टि से महत्वपूर्ण नहीं हैं। हुमायूं ने दीनपनाह का निर्माण कराया किन्तु अब उसके अवशेष तक उपलब्ध नहीं हैं।

3.3.2.2 स्थापत्य कला के पोषक के रूप में अकबर

अकबर एक महान भवन एवं नगर निर्माता था। उसकी समन्वयवादी प्रवृत्ति उसके काल की इमारतों में प्रतिबिम्बित होती है। अबुल फ़ज़्ल अकबरनामा में लिखता है - बादशाह स्वयं सुन्दर भवनों की योजना बनाते हैं और फिर उन्हें पत्थर और गारे का जामा पहनाते हैं।

1. अकबर के काल की प्रथम महत्वपूर्ण इमारत दिल्ली में स्थित हुमायूं का मकबरा है जिस पर कि ईरानी स्थापत्य कला की स्पष्ट छाप है। मुगल इमारतों में उपलब्ध सामान्य तत्व - भव्य प्रवेश द्वार, विशाल गुम्बद, अष्टकोणिक कक्ष, लाल पत्थर पर संगमरमर की पच्चीकारी, जाली का काम, ज्यामितीय समरूपता, ऊँचे चबूतरे पर स्थित मुख्य भवन और उस तक पहुंचने के लिए सीढ़ियां, चारबाग (भवन के चारों ओर उद्यान योजना), कृत्रिम नहर, फव्वारे तथा (पीछे यमुना नदी के रूप में) जल-स्रोत की निकटता(पीछे यमुना नदी के रूप में) को हम हुमायूं के मकबरे में देख सकते हैं।

2. आगरा के किले की भव्य प्राचीर का निर्माण अकबर ने कराया था। इस किले में अकबर द्वारा बनवाए गए जहांगीरी महल पर राजपूत स्थापत्य कला का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। इस भवन में हंस, हाथी, मोर आदि की आकृतियां अंकित हैं।

3. फ़तेहपुर सीकरी मध्यकालीन सुनियोजित नगर है। गुजरात विजय की स्मृति में बना एक ऊँचे टीले पर लाल पत्थर से बना तथा लाल पत्थर पर संगमरमर की पच्चीकारी से सज्जित 176 फ़ुट ऊँचा बुलन्द दरवाज़ा अकबर के साम्राज्य की सुदृढ़ता, विशालता, समन्वयवादिता तथा मौलिक विचारधारा का प्रतीक है। धार्मिक इमारतों में जामा मस्जिद में ईरानी, अरबी तथा भारतीय कला-

शैली का समावेश है। शेख सलीम चिश्ती की मज़ार में गुजराती शैली का सीप का काम और पत्थर पर जाली का काम बहुत सुन्दर है। आवासीय भवनों में जोधाबाई तथा बीरबल के महलों पर राजपूत स्थापत्य कला का और मरियम के महल पर यूनानी स्थापत्य कला का प्रभाव है। प्रशासनिक भवनों में पाँच मन्ज़िली खम्भों पर टिकी बिना दीवार की इमारत पंचमहल बौद्ध विहार की शैली में बनी है। अपनी मौलिकता के लिए विख्यात दीवान-ए-खास में ईरानी, तूरानी, अरबी तथा राजपूत स्थापत्य कला का समावेश है। इसकी नक्काशी पर दिलवाड़ा के मन्दिरों की नक्काशी का प्रभाव है। इसके मुख्य भवन के बीच में स्थित खम्भे के कमलाकार ऊपरी भाग में अकबर प्रजापति ब्रह्मा के समान विराजमान होता था।

4. अकबर ने सिकन्दरा में अपना मकबरा बनवाना प्रारम्भ किया था। इसके भव्य प्रवेश द्वार पर दक्षिण की स्थापत्य कला का प्रभाव है। इसकी भवन की पहली मन्ज़िल भी अकबर के काल में बन गई थी।

3.3.2.3 जहांगीर के काल में स्थापत्य कला का विकास

जहांगीर ने सिकन्दरा में अकबर के अधूरे बने मकबरे की निर्माण-योजना में ऊपर गुम्बद बनाने के स्थान खुली छत बना दी। जहांगीर ने उसे बौद्ध विहार की शैली में पूरा करवाया। मौलिकता तथा हिन्दू, मुस्लिम, बौद्ध एवं ईसाई कला शैलियों के समन्वय के बावजूद यह पाँच मन्ज़िली इमारत अकबर के भव्य व्यक्तित्व से मेल नहीं खाती है।

एत्मात–उद–दौला का मकबरा

नूरजहां ने अपने निर्देशन में ज्हांगीर के काल की दो प्रमुख इमारतों - आगरा में एत्मात्-उद-दौला के मकबरे तथा लाहौर में जहांगीर के मकबरे का निर्माण कराया था। एत्मात्-उद-दौला का मकबरा संगमरमर की बनी पहली मुगल इमारत है। संगमरमर पर बहुमूल्य पत्थर की पच्चीकारी की इतालवी शैली पीत्रा दुरा का प्रयोग भी मुगलकाल में पहली बार इसी में किया गया था। जहांगीर के मकबरे में अलंकरण के लिए रंगीन टाइल्स का प्रयोग किया गया है। चित्रकला वीथिका इस मकबरे का एक अन्तरंग अंग है।

3.3.2.4 शाहजहां के काल में स्थापत्य कला का चरमोत्कर्ष

शाहजहां के शासनकाल में मुगल स्थापत्य कला अपने चरमोत्कर्ष पर पहुंच गई थी। शाहजहां की महानगरीय स्थापत्य कला की तुलना रोमन सम्राट ऑगस्टस के शासनकाल की स्थापत्य कला से की जाती है। इन दोनों ही शासकों ने सफ़ेद संगमरमर को अपनी कलात्मक अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया था। शाहजहां के काल की इमारतों पर ईरानी स्थापत्य कला का व्यापक प्रभाव पड़ा था किन्तु उसने अपनी इमारतों में सभी प्रतिष्ठित स्थापत्य कलाओं के श्रेष्ठ तत्वों का समावेश करने में कभी संकोच नहीं किया।

1. आगरा के लाल किले में लाल पत्थर पर चूने के प्लास्टर जड़े दीवान-ए-आम तथा संगमरमर से बने दीवान-ए-खास, खासमहल, झरोखा-ए-दर्शन, मुसम्मन बुर्ज, नगीना मस्जिद के अतिरिक्त संगमरमर के मण्डप वाला मच्छी भवन शाहजहां की बनवाई हुई इमारतें हैं। परन्तु अपने सादगी भरे सौन्दर्य से अभिभूत करने वाली संगमरमर से बनी मोती मस्जिद आगरा के लाल किले की सबसे सुन्दर इमारत है।

2. दिल्ली के लाल किले का निर्माण सन् 1648 में पूरा हुआ था। कृत्रिम रूप से बरसात का आनन्द देने वाली छतरियों -सावन-भादों, नहर-ए-बहिश्त से सज्जित उद्यान से घिरे, सफ़ेद संगमरमर से बने, सोने-चाँदी व रत्नों और कीमती पत्थरों से जड़ित तथा चित्रों से शोभित, दीवान-ए-खास का दरबार पृथ्वी पर जन्नत का नज़ारा माना जाता था। इस किले में रंग महल तथा ख्वाबगाह भी संगमरमर से बनाए गए हैं।

3. ऊँचे टीले पर स्थित, लाल पत्थर से बनी तथा लाल पत्थर पर संगमरमर की सुन्दर पच्चीकारी से शोभित दिल्ली की भव्य जामा मस्जिद भारत की सबसे बड़ी मस्जिद मानी जाती है। इस तक पहुंचने के लिए सीढ़ियों की कतार इसकी शोभा को द्विगुणित कर देती हैं।

4. आगरा में यमुना नदी के किनारे पर बेगम मुमताज़ महल की स्मृति में मकराना के सफ़ेद सगमरमर से बनवाया गया नारी-सुलभ सौन्दर्य से परिपूर्ण, पवित्र प्रेम का प्रतीक ताजमहल मुगल स्थापत्य कला के चरमोत्कर्ष को दर्शाता है। इसकी रूपरेखा तैयार करने का श्रेय अहमद लाहौरी को दिया जाता है। उस्ताद ईसा खाँ के निर्देशन में इसका निर्माण किया गया था। ताजमहल की निर्माण-शैली

पर शेरशाह के मकबरे तथा हुमायूं के मकबरे तथा खानखाना के मकबरे का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है। उद्यान योजना, मुख्य भवन के सामने फव्वारों युक्त नहर से शोभित, 187 फ़ुट लम्बे, 187 फ़ुट चौड़े तथा 22 फ़ुट ऊँचे चबूतरे पर स्थित ताजमहल का कलशाकार गुम्बद चबूतरे से 187 फ़ुट ऊँचा है तथा उस पर 29 फ़ुट ऊँचा धातु का त्रिशूल है। इस प्रकार इसकी ऊँचाई कुतुबमीनार के बराबर अर्थात् 238 फ़ुट है। इसकी चारो मीनारे 137 फ़ुट ऊँची हैं। ताजमहल में इतालवी अलंकरण शैली पीत्रा दुरा का भरपूर उपयोग किया गया है। अलंकरण के लिए जाली के काम और चित्रकला का भी उपयोग किया गया है। ताजमहल का मुख्य भवन अष्टकोणिक है। भवन के अन्दर कुरान की आयतों के सुलेख से इसको सुन्दर बनाने के साथ इसे पवित्रता का वातावरण दिया गया है। ताजमहल में मौलिकता के नाम पर किसी भी प्रकार का प्रयोग नहीं किया गया है, इसमें तो सभी विद्यमान स्थापत्य कला शैलियों के सर्वश्रेष्ठ तत्वों का कल्पनाशील समन्वय किया गया है और एक दोषरहित पूर्ण सौन्दर्ययुक्त कलाकृति बनाने का सफल प्रयास किया गया है।

3.3.2.5 मुगल स्थापत्य कला का पतन

शाहजहां के शासनकाल में स्थापत्य कला का चरमोत्कर्ष साम्राज्य की अर्थव्यवस्था को खोखला करके ही प्राप्त किया जा सका था। औरंगज़ेब तथा उसके परवर्ती मुगल बादशाहों के पास स्थापत्य कला के विकास के लिए न तो शाहजहां के समान संसाधन थे और न ही उनकी इसमें इतनी रुचि थी। औरंगज़ेब के शासनकाल में दिल्ली के लाल किले में शाही परिवार के उपयोग के लिए संगमरमर की छोटे आकार की साधारण सी मोती मस्जिद बनवाई गई। औरंगज़ेब के काल की सबसे प्रसिद्ध इमारत बीबी का मकबरा है जो ताजमहल की भद्दी नकल कही जाती है। परवर्ती मुगल काल की सबसे प्रसिद्ध इमारत दिल्ली में सफ़दरजंग का मकबरा है। मुगल शासकों की दुर्बलता, राजनीतिक पतन, आर्थिक संकट, सांस्कृतिक अवनति, कलाकारों का मुगल साम्राज्य छोड़कर अन्य राज्यों में चले जाना आदि कारण थे जिनसे स्थापत्य कला का पतन हुआ। किन्तु मुगल स्थापत्य कला ने राजपूत, मराठा, सिक्ख तथा अन्य भारतीय शासकों की स्थापत्य कला को प्रभावित करने के साथ ही ब्रिटिश भारतीय शासकों की स्थापत्य कला को भी प्रभावित किया। मुगल स्थापत्य कला मध्यकालीन भारतीय इतिहास में सांस्कृतिक समन्वय तथा कलात्मक विकास का सर्वश्रेष्ठ जीवन्त उदाहरण है।

3.4 मुगलकालीन चित्रकला

3.4.1 मुगल काल से पूर्व भारत में चित्रकला का विकास

प्रागैतिहासिक काल के शैल चित्र, हड़प्पाकालीन सभ्यता में मृदभाण्डों का चित्रों द्वारा अलंकरण, अजन्ता और एलोरा के विश्वविख्यात चित्र आदि यह प्रदर्शित करते हैं कि भारत में चित्रकला मानवीय अनुभवों और उसकी कल्पनाशीलता की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम रही है। चित्रकला को गुप्त शासकों ने संरक्षण प्रदान किया। प्राचीन काल में हिन्दू धर्म, बौद्ध तथा जैन धर्म के कथानकों पर आधारित चित्रों का प्रचुर मात्रा में निर्माण हुआ।

इस्लाम में केवल खुदा को ही चितेरा माना गया है और शेष सभी के लिए चित्रांकन, विशेषकर जीवित प्राणियों का चित्रांकन वर्जित है। मुस्लिम राज्यों द्वारा चित्रकला को सामान्यतः संरक्षण नहीं दिया जाता था। दिल्ली सल्तनत काल में चित्रकला प्रायः निषिद्ध रही।

3.4.2 मुगल काल में चित्रकला का विकास

3.4.2.1 बाबर और हुमायूं के शासनकाल में चित्रकला का विकास

भारत में मुगलकाल में चित्रकला का अभूतपूर्व विकास हुआ। प्रारम्भ से ही मुगलों में धार्मिक संकीर्णता नहीं थी उनके राजनीतिक सिद्धान्तों, तथा उनके सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों में भी उदारता तथा लचीलापन था। बाबर ईरानी चित्रकला से प्रभावित था और प्रसिद्ध ईरानी चित्रकारों बहज़ाद तथा शाह मुज़फ़्फ़र का प्रशंसक था। परन्तु भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना के बाद अपने अल्पकालीन शासन में चित्रकला के विकास में वह कोई भी योगदान नहीं दे सका। हुमायूं भी अपने पिता के समान चित्रकला में अभिरुचि रखता था। अपने ईरान प्रवास के दौरान वह ईरानी चित्रकारों के सम्पर्क में रहा था। सन् 1555 में अपनी भारत वापसी के समय वह दो प्रसिद्ध ईरानी चित्रकार ख्वाजा अब्दुस्समद तथा सैयद मीर अली तबरेज़ी को अपने साथ लाया था। इन दोनों चित्रकारों को हुमायूं द्वारा दास्तान-ए-अमीर हम्ज़ा के कथानक के चित्रांकन का तथा अपने पुत्र अकबर को चित्रकला की शिक्षा देने का दायित्व सौंपा था। हुमायूं के अल्पकालीन शासन के उपलब्ध चित्र मूलतः ईरानी चित्रकला का ही प्रतिनिधित्व करते हैं। इन चित्रों की विशेषता इनकी प्रभावपूर्ण पृष्ठभूमि, समृद्ध अलंकरण तथा भावों का सजीव चित्रण है।

3.4.2.2 चित्रकला के पोषक के रूप में अकबर

अकबर कलात्मक अभिरुचि का एक कल्पनाशील व्यक्ति था। बादशाह हुमायूं ने उसको चित्रकला का प्रशिक्षण देने के लिए दो प्रतिष्ठित ईरानी चित्रकारों - मीर सैयद अली तबरेज़ी तथा

ख्वाजा अब्दुस्समद को नियुक्त किया था। इन दो कलाकारों ने ही उसके शासनकाल में चित्रकला के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। अकबर की उदार विचारधारा तथा उसका सौन्दर्य प्रेम उसे इस्लाम में बताए गए चित्रकला के निषेध को स्वीकार करने से रोकती थी। वह मानव द्वारा बनाए चित्रों को खुदा की शान में गुस्ताखी नहीं बल्कि उस सबसे बड़े चितेरे की अनुपम कलाकारिता को कलाकार द्वारा अर्पित श्रद्धा सुमन मानता था।

1. अकबर के शासनकाल के प्रारम्भ में चित्रकला का विकास मुख्यतः ईरानी चित्रकला शैली के आधार पर हुआ। इस काल में बने चित्रों की विषय वस्तु तथा तकनीक मूलतः ईरानी थी। इन चित्रों में त्रि-आयामीय प्रभाव का अभाव है। प्रसिद्ध प्रेम आख्यानों, साहसिक अभियानों, ऐतिहासिक वृतान्तों - दास्तान-ए-अमीर हम्ज़ा, दास्तान-ए-लैला मजनू, रुबाइयात-ए-उमर खैयाम, चंगेज़नामा, बाबरनामा आदि के चित्रण के अतिरिक्त प्राकृतिक दृश्यों, दरबार, हरम, आखेट, प्रेम लीलाओं तथा आमोद-प्रमोद के दृश्यों का चित्रांकन किया गया।

2. अकबरकालीन चित्रों में कपड़ों पर बने चित्र , व्यक्ति चित्र (बादशाह, उसके परिवारजन तथा आभिजात्य वर्ग के स्त्री-पुरुषों के चित्र), लघु-आकारीय ग्रंथ चित्र तथा भित्ति चित्र (फ़तेहपुर सीकरी के महलों की दीवारों पर) सम्मिलित हैं।

3. अकबर के सरंक्षण में विकसित चित्रकला में उसकी समन्वयवादी प्रवृत्ति रामायण, महाभारत, पंचतन्त्र, बैताल पचीसी, नल-दमयन्ती, काली-दहन, श्रीकृष्ण रास लीला आदि के चित्रांकन में परिलक्षित होती है। फ़तेहपुर सीकरी के मरियम के महल की दीवारों पर ईसाई धर्म से सम्बन्धित चित्र उपलब्ध हैं। अकबर के दरबार के 17 चित्रकारों में मीर सैयद अली तबरेज़ी, ख्वाजा अब्दुस्समद, फ़ारूख कलामक तथा मिसकीन के अतिरिक्त शेष सभी 13 हिन्दू थे। इनमें प्रमुख थे - दसवन्त, बसावन, केसूलाल, मुकुन्द, महेश, खेमकरन, सांवला तथा हरिवंश।

4. अकबरकालीन चित्रों में ईरानी शैली में पृष्ठभूमि को फूल-पत्ती तथा पेड़-पौधों से अलंकृत किया जाता था जिनके लिए चमकदार रंगों का प्रयोग किया जाता था। चित्रों में छाया और प्रकाश योजना का ध्यान रखा जाता था। चित्रों में बॉर्डर की सजावट पर विशेष ध्यान दिया जाता था। चित्रांकन में भावाभिव्यक्ति पर विशेष बल दिया जाता था। अकबरकालीन चित्रकला धर्म-निर्पेक्ष थी।

3.4.2.3 जहांगीर के काल में मुगल चित्रकला का चरमोत्कर्ष

जहांगीर स्वयं चित्रकला का पारखी था। ललित कलाओं में उसकी सबसे अधिक अभिरुचि चित्रकला में थी। जहांगीर अपना अधिकांश खाली समय चित्रकारों के सानिघ्य में व्यतीत करता था। विदेशी यात्रियों, पादरियों तथा दूतों - विलियम हॉकिन्स, सर टॉमस रो, फ़ादर गिरीरो आदि ने जहांगीर के चित्रकला प्रेम और उसकी चित्रकला में मर्मज्ञता की प्रशंसा की है। अपनी आत्मकथा तुज़ुक-ए-जहांगीरी में जहांगीर यह दावा करता है कि वो ऐसे चित्र में जिसको कि कई प्रतिष्ठित चित्रकारों ने मिलकर बनाया हो, यह बता सकता है कि चित्र के अमुक भाग को किस चित्रकार ने बनाया है। जहांगीर के काल में प्रसिद्ध चित्रों की ऐसी अनुकृतियां तैयार की गईं जो कि मूल चित्रों से इतना मेल खाती थीं कि उनमें आपस में अन्तर करना मुश्किल हो जाता था। सर टॉमस रो द्वारा उपहार में दी गई मदर मैरी के चित्र की उसने अपने दरबारी चित्रकारों से तुरन्त अनुकृति तैयार करवाई। जहांगीर ने तुरन्त मूल कृति तथा उसकी अनुकृति में अन्तर कर लिया जब कि टॉमस रो ऐसा नहीं कर सका।

राधा–कृष्ण (चित्रकार –बिशन दास)

1. जहांगीर के काल के प्रसिद्ध चित्रकारों में अबुल हसन, उस्ताद मन्सूर, उस्ताद मुराद, मनोहर, तुलसी, बिशनदास, गोवर्धन और सालिवाहन सम्मिलित थे। जहांगीर के काल में चित्रों में प्राकृतिक रंगों का प्रयोग किया गया। इस काल में मुगल चित्रकला का भारतीयकरण हुआ और वह ईरानी प्रभाव से मुक्त हो गई। इस काल में प्राकृतिक दृश्यों तथा पशु-पक्षियों का तथा आखेट का चित्रांकन बहुत सजीव हो गया। उस्ताद मन्सूर, मुराद और मनोहर इस क्षेत्र में सबसे विख्यात थे। जहांगीर के काल में प्रचुर मात्रा में व्यक्ति चित्रों का निर्माण किया गया। इस क्षेत्र में बिशनदास सबसे विख्यात था। बिशनदास द्वारा बनाया गया नवजात शहज़ादे शाह शुजा का चित्र अत्यन्त सजीव है।

2. हरम में बेगमों, शहज़ादियों आदि के व्यक्तिचित्रों के निर्माण का दायित्व महिला चित्रकारों को दिया गया। जहांगीर के काल में चित्रों के विषयों में ईसाई विषयों पर आधारित चित्रों का भी निर्माण किया गया। वर्जिन मैरी, जीसस क्राइस्ट, मैडोना आदि के चित्रों का निर्माण किया गया। जर्मन चित्रकार अल्बर्ट ड्यूरर के चित्रों से प्रभावित होकर जहांगीर ने उसके चित्रों की अनुकृतियां तैयार करवाई थीं।

3. मलिका नूरजहां भी चित्रकला की पोषक थी। उसने लाहौर स्थित जहांगीर के मकबरे में चित्रवीथिका निर्माण करवाया था।

4. जहांगीर का शासनकाल चित्रकला की दृष्टि से मुगल काल का स्वर्ण युग कहा जा सकता है।

3.4.2.4 मुगल चित्रकला का पतन

शाहजहां की अभिरुचि चित्रकला से अधिक स्थापत्य कला में थी। उसके शासनकाल में जहांगीर के शासनकाल की तुलना में चित्रकला को कम प्रोत्साहन दिया गया। इस काल में चित्रों में भावों की सजीवता के स्थान पर एक ठहराव आ गया। प्राकृतिक रंगों के स्थान पर चमकीले, भड़कीले रंगों के प्रयोग से चित्रों में स्वाभाविकता के स्थान पर कृत्रिमता आ गई। विषयों की विविधता भी कम हो गई तथा व्यक्ति-चित्रों के निर्माण पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा। शाहजहां के काल के प्रसिद्ध चित्रकार - फ़कीर उल्ला, मीर हाशिम, अनूप तथा चित्रमणि थे। शाहजहां का ज्येष्ठ पुत्र दाराशिकोह चित्रकला का संरक्षक था। उसके द्वारा तैयार कराया गया एलबम पटना के खुदाबख्श संग्रहालय में उपलब्ध है।

औरंगज़ेब ने चित्रकला को राज्याश्रय नहीं दिया। उसने अकबर के मकबरे, बीजापुर व गोलकुण्डा राज्यों में पहले से बने चित्रों को नष्ट करवा दिया। परवर्ती मुगल बादशाहों के काल में चित्रकला को प्रोत्साहन देने की बादशाहों में क्षमता ही नहीं रही। अधिकांश चित्रकार मुगल दरबार छोड़कर अन्य राज्यों में चले गए फिर भी परम्परागत मुगल चित्रकला पूर्णतया लुप्त नहीं हुई और उसकी परम्परा को राजपूताना, कांगड़ा, पंजाब, गढ़वाल आदि राज्यों में जीवित रखा गया।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्नांकित पर चर्चा कीजिए-

1. बाबर और हुमायूं के काल की स्थापत्य कला।
2. फ़तेहपुर सीकरी की इमारतें।
3. आगरा का लाल किला।
4. मुगल सापत्य कला पर भारतीय प्रभाव।
5. मुगलकालीन हिन्दू चित्रकार।
6. मुगल चित्रकला का चरमोत्कर्ष।

3.5 सारांश

मुगलकालीन स्थापत्य कला एवं चित्रकला हमारे सांस्कृतिक समन्वय तथा हमारी गंगा-जमुनी तहज़ीब के जीवन्त प्रतीक हैं। मुगल शासक, ललितकलाओं के संरक्षक तथा पोषक थे और

स्वयं कला के पारखी थे। उनके शासनकाल में स्थापत्य कला व चित्रकला के क्षेत्र में विभिन्न कला तत्वों का समावेश कर उनकी विशिष्ट शैलियों (इण्डो-इस्लामिक) का विकास किया गया जो कि कला मर्मज्ञों की दृष्टि में अनुपम है। मुगल काल की कला में भारत की ही नहीं अपितु विश्व की अनेक स्थापित कला शैलियों के तत्वों को आत्मसात किया गया।

हुमायूं का मकबरा, फ़तेहपुर सीकरी में बुलन्द दरवाज़ा, जामा मस्जिद तथा दीवान-ए-खास, जोधाबाई का महल, आगरा के लाल किले में जहांगीरी महल, मोती मस्जिद, मुसम्मन बुर्ज, सिकन्दरा में अकबर का मकबरा, लाहौर में जहांगीर का मकबरा, आगरा में एत्मात्-उद्-दौला का मकबरा,, दिल्ली के लाल किले में दीवान-ए-खास, दिल्ली की जामा मस्जिद, आगरा में ताज महल और औरंगाबाद में बीबी का मकबरा मुगल काल की सबसे प्रसिद्ध इमारते हैं। चारबाग, जल-स्रोत की निकटता, भव्य प्रवेश द्वार, ज्यामितीय समरूपता, मीनारें, गुम्बद, अलंकरण हेतु - जाली का काम, लाल पत्थर पर संगमरमर की पच्चीकारी तथा संगमरमर पर बहुमूल्य पत्थरों की पच्चीकारी मुगल स्थापत्य कला की पहचान मानी जा सकती हैं।

इस्लाम में जीवित प्राणियों का चित्रण निषिद्ध होने के कारण दिल्ली सल्तनत काल में चित्रकला का विकास नहीं हो सका किन्तु मुगल शासक चित्रकला के पोषक थे। औरंगज़ेब को छोड़कर सभी मुगल बादशाहों ने चित्रकारों को संरक्षण देकर चित्रकला को प्रोत्साहित किया। मुगलकालीन चित्र कला पर ईरानी, तुर्की, चीनी, यूनानी, रोमन और भारतीय चित्रकला शैलियों का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। मुगलकालीन चित्रों में कपड़ों पर बने चित्र , व्यक्ति चित्र, लघु-आकारीय ग्रंथ चित्र तथा भित्ति चित्र सम्मिलित हैं। मुगल बादशाहों में जहांगीर चित्रकला का सबसे बड़ा पोषक था। प्राकृतिक रंगों के प्रयोग के लिए विख्यात उसके शासनकाल की चित्रकला अपनी मौलिकता, कल्पनाशीलता और विषयों की विविधता के कारण उन्नति के शिखर तक पहुंच गई थी। मुगल लघुचित्रों में प्राकृतिक दृश्य, पशु-पक्षी का चित्रण, आखेट तथा दरबार का चित्रण, हिन्दू पौराणिक कथानकों पर आधारित चित्र तथा व्यक्ति चित्र प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। मुगल चित्रकला धर्म-निर्पेक्ष चित्रकला का प्रतिनिधित्व करती है। जहांगीर के शासनकाल के बाद मुगल चित्रकला पतनोन्मुख हो गई और औरंगज़ेब तथा उसके परवर्ती मुगल शासकों के काल में इसका पूर्ण पतन हो गया।

3.6 पारिभाषिक शब्दावली

इनले वर्क - एक पत्थर पर दूसरे प्रकार के पत्थर की पच्चीकारी।

पीत्रा दुरा - संगमरमर पर बहुमूल्य पत्थर की पच्चीकारी।

चारबाग - भवन के परिसर में भवन के चारों ओर उद्यान-योजना।

सावन-भादों - दिल्ली के लाल किले के दीवान-ए-खास के प्रांगण में कृत्रिम रूप से बरसात का आनन्द देने के लिए बनाई गई छतरियां।

त्रि-आयामीय प्रभाव - लम्बाई, चौड़ाई तथा मोटाई अथवा गहराई का आभास।

चितेरा - चित्रकार।

भित्ति चित्र - दीवारों पर बने चित्र।

3.7 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 5.3.3.2.1 अकबर के शासनकाल से पूर्व की मुगल स्थापत्य कला
2. देखिए 5.3.3.2.2 स्थापत्य कला के पोषक के रूप में अकबर - का बिन्दु 3 ।
3. देखिए 5.3.3.2.2 स्थापत्य कला के पोषक के रूप में अकबर - का बिन्दु 2 तथा 5.3.3.2.4 शाहजहां के काल में स्थापत्य कला का चरमोत्कर्ष -का बिन्दु 1 ।
4. देखिए 5.3.3.2.2 स्थापत्य कला के पोषक के रूप में अकबर - के बिन्दु 2 तथा 3 ।
5. देखिए 5.3.4.2.2 चित्रकला के पोषक के रूप में अकबर -का बिन्दु 3 तथा 5.3.4.2.3 जहांगीर के काल में मुगल चित्रकला का चरमोत्कर्ष का बिन्दु 1 ।
6. देखिए 5.3.4.2.3 जहांगीर के काल में मुगल चित्रकला का चरमोत्कर्ष।

3.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Havell, E. B. – *Indian Sculptures and Paintings*
2. Desai, A. Ziyauddin – *Indo-Islamic Architecture*
3. Smith, V. A. – *History of the Fine Arts in India and Ceylon*
4. Brown, Percy – *Indian Architecture (Islamic Period)*

3.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1- Husain, Yusuf – *Glimpses of Medieval Indian Culture*
2. Chopra, P. N. – *Some Aspects of Society and Culture in Mughal Age*

3.10 निबंधात्मक प्रश्न

शाहजहां के शासनकाल में स्थापत्य कला के चरमोत्कर्ष का आकलन कीजिए।

इकाई चार- मराठों के उत्थान के कारण तथा पेशवाओं के अंतर्गत मराठा प्रशासन

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 मराठों का उत्थान
4.3.1 महाराष्ट्र की भौगोलिक स्थिति तथा शिवाजी के उदय से पूर्व उसका राजनीतिक-सैनिक इतिहास
4.3.2 शिवाजी का उत्थान
4.3.2.1 बीजापुर से संघर्ष
4.3.2.2 मुगलों से संघर्ष
4.3.2.3 शिवाजी का राज्याभिषेक
4.3.2.4 कर्नाटक अभियान
4.3.2.5 शिवाजी के उत्थान के कारण
4.3.3 पेशवाओं के काल में मराठा शक्ति का विस्तार
4.4 पेशवाओं के अंतर्गत मराठा प्रशासन
4.4.1 छत्रपति
4.4.2 पेशवा
4.4.3 हुज़ूर दफ़्तर
4.4.4 प्रान्तीय तथा जिला प्रशासन
4.4.5 ग्राम प्रशासन
4.4.6 जागीरों (सरंजामी) का प्रशासन
4.4.7 राजस्व प्रशासन
4.4.7.1 भू-राजस्व
4.4.7.2 चौथ तथा सरदेशमुखी
4.4.7.3 अन्य कर
4.4.8 न्याय व्यवस्था
4.4.9 पुलिस
4.4.10 सैन्य प्रशासन
4.4.11 पेशवाकालीन प्रशासन का आकलन
4.5 सारांश
4.6 पारिभाषिक शब्दावली
4.7 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर
4.8 संदर्भ ग्रंथ सूची
4.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
4.10 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

महाराष्ट्र की की दुर्गम भौगोलिक स्थिति के कारण वाह्य शक्तियों का इस पर प्रभुत्व स्थापित कर पाना कठिन था। मराठा जाति अपने साहस, वीरता, आत्मनिर्भरता की भावना, अपने सामाजिक समानता के भाव, अपने सादगी-पसन्द जीवन और अपनी स्वतन्त्र प्रकृति के लिए विख्यात थी। उत्तर भारत की प्रमुख शक्तियों ने इस क्षेत्र पर सीधे प्रभुत्व स्थापित करने का बार-बार प्रयास किया किन्तु उनको इस विषय में कभी भी स्थायी सफलता नहीं मिली। देवगिरि राज्य के पतन के बाद मराठे बहमनी राज्य और उसके विघटन के बाद अहमदनगर और बीजापुर राज्य में छोटे-बड़े सैनिक तथा प्रशासनिक पदों पर कार्यरत रहे थे। मराठों ने अहमदनगर राज्य के मलिक अम्बर की छत्रछाया में गुरिल्ला रणनीति का प्रशिक्षण प्राप्त किया था।

बीजापुर सुल्तान के जागीरदार शाहजी भोंसले के पुत्र शिवाजी ने अपने साहसी सहयोगियों के साथ छापामार युद्धनीति अपना कर आपसी फूट के शिकार बीजापुर राज्य के अनेक किलों तथा विशाल भू-क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। शिवाजी ने उत्तराधिकार के युद्ध का लाभ उठाकर मुगलों के आधीन क्षेत्रो पर भी अधिकार कर लिया। मिर्ज़ा राजा जयसिंह से पराजित होकर शिवाजी को मुगलों की आधीनता स्वीकार करने, अपने अधिकांश किले उनको सौंपने तथा मुगल दरबार में उपस्थित होने के लिए राज़ी होना पड़ा। दिल्ली में दरबार में उपस्थित होने के बाद शिवाजी को आगरा के किले में बन्दी बना लिया गया किन्तु वहां से निकल भागने में सफल होने के बाद दक्षिण लौटकर वह अपनी शक्ति को पुनर्स्थापित करने में सफल रहे। सन् 1674 में पूर्ण सम्प्रभुता प्राप्त छत्रपति के रूप में शिवाजी का राज्याभिषेक हुआ। शिवाजी की मृत्यु के बाद अगले चालीस वर्षों तक मराठे अपने अस्तित्व संरक्षण के लिए प्रयत्नशील रहे। पेशवा बाजीराव प्रथम तथा पेशवा बालाजी बाजीराव के नेतृत्व में मराठा शक्ति का अभूतपूर्व विस्तार हुआ। मराठा साम्राज्य महाराष्ट्र, कोंकण, कर्नाटक, तमिलनाडु, गुजरात, मालवा तथा बुन्देलखण्ड के एक भाग तक और उसका प्रभाव क्षेत्र पंजाब तक फैल गया।

पेशवा काल में सैद्धान्तिक दृष्टि से शासन का प्रमुख छत्रपति था किन्तु वास्तविक सत्ता पेशवा के हाथों में थी। मराठा सत्ता का केन्द्र अब सतारा के स्थान पर पेशवा की जागीर पूना में स्थापित हो गया था। पूना में स्थित पेशवा के सचिवालय हुज़ूर दफ़्तर से प्रशासनिक गतिविधियों का संचालन किया जाता था। हुज़ूर दफ़्तर के अन्तर्गत प्रमुख विभाग चलते दफ़्तर तथा बेरिज़ दफ़्तर थे। हुज़ूर दफ़्तर के आधीन मामलतदार/सरसूबेदार प्रान्तीय शासन के प्रभारी तथा जिलों के प्रभारी कामविष्कार होते थे। पेशवाओं के काल में ग्राम स्वायत्तशासी होते थे। गांव का मुखिया पाटिल कहलाता था और उसका लेखा सहायक कुलकर्णी होता था। मुगल मनसबदारी व्यवस्था की भांति सरदारों को उनकी सैनिक सेवा के बदले में वेतन के स्थान पर जागीर (सरंजामी) प्रदान की जाती थी।

मराठों की भू-राजस्व व्यवस्था मुगलों की भू-राजस्व व्यवस्था से प्रभावित थी। चौथ तथा सरदेशमुखी राजस्व के प्रमुख स्रोतों में थे। पेशवाओं के काल में सैन्य संगठन में शिथिलता आ गई थी जिसके कारण मराठा शक्ति का पतन होने लगा फिर भी दीर्घ काल तक मराठे भारत की प्रमुख सैनिक एवं राजनीतिक शक्ति बने रहे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य शिवाजी तथा पेशवाओं के काल में मराठों के उत्थान तथा पेशवाकालीन प्रशासन से आपको अवगत कराना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1- शिवाजी के नेतृत्व में मराठा साम्राज्य की स्थापना तथा पेशवाओं के काल में उसका विस्तार।

2. पेशवाकालीन प्रशासन का आलोचनात्मक परीक्षण।

4.3 मराठों का उत्थान

4.3.1 महाराष्ट्र की भौगोलिक स्थिति तथा शिवाजी के उदय से पूर्व उसका राजनीतिक-सैनिक इतिहास

1. महाराष्ट्र भारत के पश्चिम में स्थित दुर्गम पठारी, खाद्योत्पादन की दृष्टि से सामान्यतः अनुपजाऊ क्षेत्र है। मध्यकाल में इस क्षेत्र में व्यापार और वाणिज्य का अधिक विकास भी सम्भव नहीं था। प्राचीन तथा मध्यकाल में इस क्षेत्र की दुर्गम भौगोलिक स्थिति के कारण वाह्य शक्तियों का इस पर प्रभुत्व स्थापित कर पाना कठिन था। प्रसिद्ध इतिहासकार सर जदुनाथ सरकार मराठा जाति के साहस, आत्मनिर्भरता, सामाजिक समानता के भाव तथा सादगी पसन्द स्वभाव को उसकी वीरता और स्वतन्त्र प्रकृति का श्रेय देते हैं। कठिनाइयों से भरा चुनौतीपूर्ण जीवन व्यतीत करने वाले मराठों ने जंगलों और पर्वतीय दुर्गों में अपने सैनिक ठिकाने बना लिए थे जहां छिप-छिप कर लड़ते हुए वे बड़े से बड़े से आक्रमण को विफल कर सकते थे।

2. उत्तर भारत की प्रमुख शक्तियों ने इस क्षेत्र पर सीधे प्रभुत्व स्थापित करने का बार-बार प्रयास किया किन्तु उनको इस विषय में कभी भी स्थायी सफलता नहीं मिली। अलाउद्दीन खिलजी से पहले किसी भी मुस्लिम शासन ने यहां पर सैनिक और राजनीतिक सफलता प्राप्त नहीं की। अलाउद्दीन खिलजी ने देवगिरि राज्य के शासकों को पराजित कर उन्हें अपनी आधीनता स्वीकार करने के लिए विवश किया किन्तु वार्षिक भेंट लेने के बाद वास्तविक सत्ता उन्हीं के हाथों में रहने दी। मुहम्मद बिन तुगलक ने दिल्ली से दौलताबाद में अपनी राजधानी परिवर्तित कर दक्षिण पर अपना सीधा प्रभुत्व

स्थापित करना चाहा तो उसको असफलता मिली। इस प्रकार लम्बे समय तक यह क्षेत्र मुस्लिम आधिपत्य से मुक्त रहा। देवगिरि राज्य के पतन तथा दक्षिण में बहमनी राज्य की स्थापना के बाद मराठा सरदार अपने सैनिकों के साथ उसमें शामिल हो गए और बहमनी राज्य के विघटन के बाद नवोदित राज्यों अहमदनगर, बीजापुर तथा गोलकुण्डा की प्रशासनिक एवं सैनिक सेवा में सम्मिलित हो गए।

3. पंढरपुर के सन्तों के नेतृत्व में महाराष्ट्र में भक्ति आन्दोलन के विकास से मराठों को अपनी एक अलग धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और सैनिक पहचान बनाने की प्रेरणा मिली। समर्थ गुरु रामदास ने महाराष्ट्र-धर्म की अवधारणा का विकास कर मराठा जाति को एकजुट कर उसमें राष्ट्रीय चेतना का संचार कर उसकी राजनीतिक महत्वाकांक्षा का विकास किया।

4. अहमदनगर के मलिक अम्बर ने मराठों को अपनी प्रशासनिक एवं सैनिक सेवा में शामिल किया। मलिक अम्बर मराठों को गुरुल्ला युद्ध नीति में प्रशिक्षित किया और उनकी सहायता से उसने मुगलों को अहमदनगर में अपने पाँव आगे नहीं पसारने दिए। मलिक अम्बर के बाद शाह जी भोंसले ने अहमदनगर राज्य की ओर से मुगलों का सामना किया किन्तु सन् 1636 में अहमदनगर के मुगल साम्राज्य में शामिल किए जाने के बाद उसने बीजापुर राज्य में एक उच्च पद प्राप्त कर लिया।

4.3.2 शिवाजी का उत्थान

4.3.2.1 बीजापुर से संघर्ष

आपसी फूट से त्रस्त और मुगलों से अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए निरन्तर संघर्षरत बीजापुर राज्य की अपने दूरस्थ क्षेत्रों पर पकड़ बहुत कमज़ोर हो गई थी। शाहजी भोंसले के पुत्र शिवाजी ने अपने पिता की पूना की जागीर में रहकर अपने साथियों के साथ अपने साहसिक अभियान का प्रारम्भ बीजापुर राज्य के दूरस्थ तथा असुरक्षित किलों को जीतकर प्रारम्भ किया। शिवाजी ने समर्थ गुरु रामदास को अपना मार्गदर्शक माना। उनसे महाराष्ट्र-धर्म में दीक्षित होकर उनकी प्रेरणा से शिवाजी ने 'हिन्द स्वराज्य' के स्वप्न को साकार करने का बीड़ा उठाया था। शिवाजी की साहसिक सैनिक टुकड़ी छापामार युद्ध में निष्णात थी। असावधान शत्रु पर अचानक हमला करना और शत्रु को प्रबल देखकर स्वयं मैदान छोड़कर किसी सुरक्षित स्थान पर जा छुपने की कला

[illegible] में शिवाजी की प्रतिमा

शिवाजी के उत्थान में सहायक सिद्ध हुई। शिवाजी को अपने अभियान में घोरपदे, मोरे, मनेस, सावन्त तथा अन्य मराठा सरदारों का कोई सहयोग नहीं मिला परन्तु उन्होने मोरे पिंगले, अन्नाजी दत्ता, नीराजी पन्त, दत्ताजी गोपीनाथ रासोजी सोमनाथ, रघुनाथ पन्त, नेताजी पाल्कर और तानाजी मल्सूरे प्रमुख को साथ लेकर अपना विजय अभियान शुरू किया। सन् 1646 की वर्षा ऋतु में उन्होंने तोरना का किला जीत लिया। इस किले में प्राप्त खजाने की मदद से उन्होंने अपनी सैनिक शक्ति में वृद्धि की। कुछ समय बाद उन्होंने कोण्डाना तथा पुरन्दर, लौहगढ़, राजमाची, राइवी तथा अन्य छह बीजापुरी किलों पर भी अधिकार कर लिया। शिवाजी की गतिविधियों से क्रुद्ध बीजापुर के सुल्तान ने उनके पिता शाहजी को कैद कर लिया किन्तु शिवाजी ने मुगलों की सहायता से उन्हें मुक्त करा लिया। शिवाजी ने सन् 1655 में जावली पर अधिकार कर लिया। मुगल-बीजापुर संघर्ष फिर से प्रारम्भ होने का लाभ उठाकर उन्होंने जन्जीरा तथा प्रतापगढ़ पर अधिकार कर लिया। सन् 1659 में उन्होंने बीजापुर के विख्यात सेनानायक तथा वाई के सूबेदार अफ़ज़ल खाँ को नाटकीय ढंग से मार डाला। सन् 1662 तक उन्होंने मन्धोल, पन्हाला तथा सावन्तवादी पर अधिकार कर लिया।

4.3.2.2 मुगलों से संघर्ष

सिंहगढ़

कल्याण पर मुगल अधिकार हो जाने के बाद शिवाजी और मुगलों संघर्ष प्रारम्भ हो गया। मुगल दक्षिण के सूबेदार शायिस्ता खाँ ने सन् 1663 में शिवाजी से सूपा और पूना छीन लिए किन्तु शिवाजी ने अप्रैल, 1663 में उस पर रात में अचानक हमला कर उसे भारी नुक्सान पहुंचाया। सन् 1664 में उन्होंने प्रसिद्ध मुगल व्यापारिक केन्द्र सूरत को लूटा। परन्तु मिर्ज़ा राजा जयसिंह ने शिवाजी को पराजित कर सन् 1665 में मुगलों से पुरन्दर की अपमानजनक सन्धि करने के लिए विवश किया। अपने आधे से अधिक किलों को सौंपने के साथ मुगलों की आधीनता स्वीकार करने और स्वयं बादशाह के दरबार में उपस्थित होने के लिए शिवाजी को तैयार होना पड़ा। सन् 1666 में शिवाजी का दिल्ली दरबार में औरंगज़ेब के सामने उपस्थित होना, दरबार में मान-सम्मान न पाने के कारण कुपित होकर दरबार से चले जाना, उनकी गिरफ़्तारी, फिर उनको आगरा के किले में की जेल में रखा जाना और फिर वहां से उनका निकल भागकर अपने राज्य लौट जाना इतिहास के सबसे रोमांचक प्रसंगों में गिना जाता है।

शिवाजी ने दकिन लौटकर वहां के मुगल सूबेदार शहज़ादा मुअज़्ज़म के साथ सुलह कर अपनी शक्ति को पुनर्संगठित करने में कुछ वर्ष व्यतीत किए। परन्तु बरार पर सन् 1670 में किए गए मुगल आक्रमण से मुगल-मराठा सम्बन्ध फिर बिगड़ गए। शिवाजी ने सन् 1670 में सूरत को दुबारा लूटा। उन्होंने पुरन्दर की सन्धि में जो किले मुगलों को सौंपे थे उन्हें उनसे फिर वापस जीत लिया।

4.3.2.3 शिवाजी का राज्याभिषेक

मार्च, 1674 में शिवाजी ने पूर्ण सम्प्रभुता प्राप्त छत्रपति के रूप में वैदिक रीति से अपना राज्याभिषेक करवा कर 'हिन्द स्वराज्य' की स्थापना के अपने तथा अपने मार्गदर्शक समर्थगुरु रामदास के स्वप्न को साकार किया। शिवाजी के साम्राज्य का क्षेत्रफल बहुत अधिक नहीं था और न ही चारों ओर मुगल, बीजापुर, जन्जीरा के सिद्दियों और तंजावुर स्थित अपने ही भाई व्यंकोजी जैसे शत्रुओं से घिरे होने के कारण वह सुरक्षित था किन्तु जिन प्रतिकूल परिस्थितियों में यह राज्याभिषेक हुआ उसके बल पर शिवाजी ने मराठों को ही नहीं अपितु समस्त हिन्दू जाति को गौरवान्वित किया।

4.3.2.4 कर्नाटक अभियान

सन् 1677 में शिवाजी ने गोलकुण्डा राज्य के मन्त्रियों मदन्ना तथा अकन्ना के माध्यम से गोलकुण्डा के सुल्तान से सन्धि कर बीजापुर राज्य पर अधिकार कर उसे आपस में बांटने हेतु अपना कर्नाटक अभियान प्रारम्भ किया। शिवाजी ने जिन्जी, मदुराई, वेल्लूर और तिरुवाड़ी सहित कर्नाटक व तमिलनाडु के लगभग 100 किलों पर अधिकार कर लिया। उन्होंने समुद्र तटीय क्षेत्र तक साम्राज्य विस्तार करने के लिए गोआ के पुर्तगालियों से भी संघर्ष किया और सिद्दियों से जन्जीरा का टापू छीन लिया।

4.3.2.5 शिवाजी के उत्थान के कारण

रायगढ़ का किला

1. 12 अप्रैल, 1680 में अपनी मृत्यु के समय तक शिवाजी एक महान साम्राज्य निर्माता के रूप में प्रतिष्ठित हो चुके थे। एक जागीरदार के उपेक्षित पुत्र के रूप में अपने राजनीतिक एवं सैनिक जीवन का प्रारम्भ करने वाला एक किशोर तीन दशकों में छत्रपति के रूप में एक महान साम्राज्य निर्माता बन बैठा। इस सफलता के पीछे

शिवाजी का अपनी साहसिक प्रवृत्ति, वीरता, चतुरता, तत्परता, अवसरवादिता व महत्वाकांक्षा तो थी ही साथ ही साथ उन्हें उनके वफ़ादार साथियों का पूर्ण सहयोग भी लक्ष्य प्राप्ति में उनका सहायक रहा था।

2. शिवाजी औरंगज़ेब की धार्मिक उत्पीड़न की नीति का प्रबल विरोध कर स्वयं को हिन्दुओं के रक्षक के रूप में प्रस्तुत करने में सफल रहे। उन्होंने 'हिन्द स्वराज्य' की स्थापना का सपना दिखाकर समस्त देश के हिन्दुओं की सद्भावनाएं प्राप्त कर ली थीं। भूषण जैसे कवि अपने काव्य के माध्यम से उन्हें हिन्दुओं के पुनरोद्धारक के रूप में प्रस्तुत करते रहे। अपनी इस छवि के कारण उन्हें मुगलों के विरुद्ध अप्रत्यक्ष रूप से राजपूतों का भी सहयोग मिला। आगरा के किले से भाग निकलने में उन्हें मिर्ज़ा राजा जयसिंह के पुत्र रामसिंह का सहयोग प्राप्त हुआ था।

3. अपने सीमित संसाधनों को ध्यान में रखकर शिवाजी ने कभी भी आमने-सामने युद्ध करने की रणनीति नहीं अपनाई। दुर्गम मार्ग, जंगली पहाड़ियों से घिरा असुरक्षित क्षेत्र असावधान शत्रु पर अचानक हमला करने के लिए सबसे अनुकल स्थान था। शिवाजी की गुरिल्ला रणनीति ने उनको सफलता दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। सहयाद्रि की चट्टानों में प्रबल शत्रु से अपनी रक्षा करने में वहां के किलों और जंगलों ने भी शरण-स्थल के रूप में उनकी सहायता की।

4. शिवाजी का उत्थान दक्षिण भारत की अराजकतापूर्ण स्थिति के कारण सम्भव हुआ था। विघटित होते हुए बीजापुर राज्य की दुर्बलताओं का लाभ उठाकर उन्होंने अपनी शक्ति बढ़ाई और फिर दकिन में मुगलों की आपसी फूट तथा इस क्षेत्र से उनकी अनभिज्ञता का लाभ उठाकर अपना साम्राज्य स्थापित किया।

5. शिवाजी ने अपनी नौ-सेना का विकास कर पुर्तगालियों तथा सिद्दियों का मुकाबला किया और अपना साम्राज्य समुद्र तट तक विस्तृत करने में सफलता प्राप्त की।

6. शिवाजी ने अपने प्रभाव क्षेत्र में चौथ वसूल कर अपने संसाधनों में वृद्धि की। उनकी सेना बरसात का मौसम छोड़कर शेष समय अभियानों में व्यस्त रहती थी। मुख्यतया लूट में प्राप्त धन से ही शिवाजी के राज्य का खर्चा चलता था।

7. छत्रपति के रूप में शिवाजी ने उदार धार्मिक नीति अपनाकर सभी धर्मावलम्बियों को अपने-अपने धर्म का पालन करने की स्वतन्त्रता प्रदान की। उन्होंने निष्पक्ष न्याय व्यवस्था स्थापित करने का प्रयास किया। प्राचीन हिन्दू शासकों तथा मुगल शासकों के प्रशासन से प्रेरणा लेकर उन्होंने अपना प्रशासन स्थापित किया। उन्होंने व्यापार, वाणिज्य और कृषि विकास को महत्व देकर राज्य के संसाधनों में वृद्धि करने में सफलता प्राप्त की। औरंगज़ेब की नज़र में एक दकिनी पहाड़ी चूहा अपने

बल कब पर एक महान साम्राज्य निर्माता बन बैठा, यह कौतूहल भरा प्रश्न इतिहास के विद्यार्थियों को आज भी अचंभित करता है।

4.3.3 पेशवाओं के काल में मराठा शक्ति का विस्तार

शनिवार वाड़ा – पेशवा काल

1. शिवाजी की सन् 1680 में मृत्यु के बाद उनके पुत्र शम्भाजी ने मराठा साम्राज्य को कमज़ोर कर दिया। सन् 1689 में मुगलों ने उसे पकड़ लिया और औरंगज़ेब के आदेश पर उसकी हत्या कर दी गई। अगले 30 वर्ष तक मराठे अपने अस्तिव संरक्षण के लिए संघर्षरत रहे। राजाराम, ताराबाई और पेशवा बालाजी विश्वनाथ के सहयोग से छत्रपति शाहू ने मुगलों का मुकाबला किया परन्तु इस काल में मराठा शक्ति का किंचित भी विस्तार नहीं हो सका। 2. पेशवा बालाजी विश्वनाथ ने हिन्दू पद पादशाही (भारत में हिन्दू साम्राज्य की स्थापना) का स्वप्न अवश्य देखा था किन्तु उसे साकार करने का प्रयास उसके पुत्र पेशवा बाजीराव प्रथम ने किया था। बाजीराव ने मराठों की रक्षात्मक नीति को आक्रामक नीति में बदल दिया। उसने मुगल ठिकानों पर आक्रमण कर अब उन्हें रक्षात्मक नीति अपनाने के लिए बाध्य किया। उसने जर्जर होते हुए विशाल वृक्ष रूपी मुगल साम्राज्य की जड़ पर चोट करने के लिए अपने साहसी होल्कर, सिंन्धिया गायकवाड़ और भोंसले सहयोगियों को लेकर उसने उत्तर भारत की ओर अभियान किए। मराठा छत्रपति शाहू की भूमिका अब पृष्ठभूमि में चली गई और अब उसका स्थान पेशवा के नेतृत्व में मराठा राज्य संघ ने ले लिया। मराठों ने दक्षिण में महाराष्ट्र, कोंकण, और कर्नाटक में अपनी शक्ति का विस्तार किया। बड़ौदा में गायकवाड़, नागपुर में भोंसले, इन्दौर में होल्कर और ग्वालियर में सिन्धिया राज्यों की स्थापना कर मराठों ने अपनी शक्ति का विस्तार किया। पूना में रहते हुए पेशवा अब भारत की राजनीतिक गतिविधियों का प्रधान संचालक बन गया। सन् 1737 में बाजीराव दिल्ली की सीमा तक जा पहुंचा। उसने मुगलों के सबसे प्रतिष्ठित सेनानायक निज़ाम को कई बार करारी शिकस्त देकर अपनी शर्तों पर सन्धि करने के लिए विवश किया। मराठों के प्रभाव क्षेत्र में अत्यधिक विस्तार हुआ। अपने प्रभाव क्षेत्र में चौथ और सरदेशमुखी वसूल कर मराठों ने अपने संसाधनों में वृद्धि की।

3. बाजीराव प्रथम की मृत्यु के बाद पेशवा बालाजी बाजीराव के काल में भी मराठा शक्ति का विस्तार जारी रहा। उत्तर भारत में मराठा प्रभाव क्षेत्र पंजाब तक फैल गया। नादिरशाह और अहमद शाह अब्दाली के आक्रमणों से छिन्न-भिन्न मुगल सत्ता अब नाम मात्र की ही रह गई थी। अब मराठों

की नज़र दिल्ली के तख्त पर अधिकार करने पर लग गई। सन् 1761 में पानीपत के तृतीय युद्ध में मराठों और अपने भारतीय सहयोगियों के साथ लड़ रहे अहमद शाह अब्दाली के बीच यही निर्णय होना था कि दिल्ली के तख्त पर किसका अधिकार होगा। मराठे इस युद्ध में पराजित हुए और उनका साम्राज्य विस्तार का स्वप्न भंग हो गया

4. पेशवा माधवराव प्रथम और महादजी सिंधिया ने मराठा शक्ति को पुनर्जीवित करने में सफलता प्राप्त की। व्यावहारिक दृष्टि से मराठे मुगलों के राजनीतिक उत्तराधिकारी बन बैठे थे। वास्तव में अंग्रेज़ों ने मुगलों को हराकर नहीं अपितु मराठों को हराकर भारत में अपना साम्राज्य स्थापित किया था।

4.4 पेशवाओं के अंतर्गत मराठा प्रशासन

4.4.1 छत्रपति

पेशवाओं के काल में सैद्धान्तिक रूप से राज्य का प्रमुख पूर्ण सम्प्रभुता प्राप्त छत्रपति होता था। वह मुख्य प्रशासक, सर्वोच्च सेनानायक तथा न्यायाधीश होता था। छत्रपति का पद वंशानुगत होता था।

4.4.2 पेशवा

शिवाजी द्वारा गठित अष्ट प्रधान में प्रधानमन्त्री पेशवा होता था तथा राजराम द्वारा गठित अष्ट प्रधान में वह प्रतिनिधि से नीचे दूसरे स्थान पर आ गया था। पहले पेशवा के पद पर छत्रपति किसी को भी नियुक्त कर सकता था किन्तु बालाजी विश्वनाथ के काल से (सन् 1713 से) यह आनुवंशिक हो गया और मराठा राज्य संघ के पतन (सन् 1818) तक उसके वंशजों का ही पेशवा पद पर अधिकार रहा। अठारहवीं शताब्दी के दूसरे दशक से व्यावहारिक दृष्टि से छत्रपति अब मात्र एक संवैधानिक राज्य प्रमुख रह गया था और वास्तविक शक्ति अब पेशवा के हाथों में आ चुकी थी। छत्रपति शाहू को तो अपने पेशवाओं की ओर से सम्मान और किंचित महत्व मिला भी किन्तु उसके उत्तराधिकारी सतारा में कठपुतली शासक बनकर रह गए। मराठा सत्ता का केन्द्र अब सतारा के स्थान पर पेशवा की जागीर पूना में स्थापित हो गया था। छत्रपति द्वारा गठित अष्टप्रधान को अब भंग कर दिया गया और राज्य की समस्त शक्तियां पेशवा के हाथों में आ गईं पेशवा को धार्मिक मामलों - यथा पुराहितों की नियुक्ति करने, धार्मिक स्थलों को आर्थिक अनुदान देने तथा सामाजिक मामलों में विधवा विवाह, गोद लेने की प्रथा आदि के विषय में निर्णय लेने का अधिकार था।

4.4.3 हुज़ूर दफ़्तर

पूना में स्थित पेशवा के सचिवालय को हुज़ूर दफ़्तर कहा जाता था। हुज़ूर दफ़्तर में प्रशासनिक विभागों के रिकॉर्ड रखे जाते थे तथा वहां से उन विभागों का संचालन भी होता था। हुज़ूर दफ़्तर के अन्तर्गत विभागों में फड़नवीस के आधीन चलते दफ़्तर में बजट बनाया जाता था और सभी लेखे जांचे जाते थे। दूसरा महत्वपूर्ण विभाग बेरिज़ दफ़्तर होता था जिसमें सभी नागरिक, सैनिक तथा धार्मिक विभागों के वर्गीकृत लेखे रखे जाते थे तथा वार्षिक आय-व्यय तथा जमा-घाटे की एक तालिका तर्जुमा तैयार की जाती थी।

4.4.4 प्रान्तीय तथा जिला प्रशासन

हुज़ूर दफ़्तर के आधीन मामलतदार/सरसूबेदार प्रान्तीय शासन के प्रभारी होते थे। उनके कामों पर नज़र रखने के लिए राज्य की ओर से देशपाण्डे तथा देशमुख रखे जाते थे। देशमुख सम्पत्तियों के हस्तान्तरण तथा विभाजन सम्बन्धी दस्तावेज़ों की देखभाल भी करते थे। मामलतदार के आधीन जिलों के प्रभारी कामविष्कार होते थे। कृषि, राजस्व निर्धारण, उद्योग, फ़ौजदारी तथा दीवानी न्याय प्रशासन, पुलिस प्रशासन, सामाजिक-धार्मिक विवाद के मामलों की देखभाल का दायित्व कामिष्कार का होता था।

4.4.5 ग्राम प्रशासन

पेशवाओं के काल में ग्राम स्वायत्तशासी होते थे। गांव का मुखिया पाटिल कहलाता था जो कि वहां का प्रशासक, राजस्व अधिकारी तथा न्यायकर्ता भी होता था। पाटिल का लेखा सहायक कुलकर्णी होता था। सिक्कों की शुद्धता और उनकी मापतौल का दायित्व पोतदार का होता था। ग्रामीण कारीगरों - बलूतों को फ़सल का एक भाग दिए जाने की व्यवस्था थी।

4.4.6 जागीरों (सरंजामी) का प्रशासन

मुगल मनसबदारी व्यवस्था की भांति सरदारों को उनकी सैनिक सेवा के बदले में वेतन के स्थान पर जागीर (सरंजामी) प्रदान की जाती थी। पेशवा मराठा राज्य संघ का प्रमुख था किन्तु पुराने घरानों के सरदार (आँगरिया, भोंसले तथा गायकवाड़) स्वयं को पेशवा का सेवक नहीं अपितु उसका समकक्ष समझते थे क्योंकि पेशवा भी उन्हीं की भांति छत्रपति का एक जागीरदार था। होल्कर, सिन्धिया, रस्तिया आदि पेशवा की महत्ता को स्वीकार करते थे क्योंकि उन्हें अपनी जागीरे पेशवा के प्रभुत्व काल में ही प्राप्त हुई थीं। जागीर के आन्तरिक मामलों में पेशवा को हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं था। सभी सरदार अपनी-अपनी जागीरों में स्वतन्त्र शासक की भांति कार्य करते थे परन्तु उनमें प्रशासनिक अधिकारियों की नियुक्ति का अधिकार पेशवा का होता था। पेशवा माधवराव के बाद कोई भी पेशवा समर्थ तथा योग्य सिद्ध नहीं हुआ जिस कारण सरदारों पर और

उनकी जागीरों पर पेशवा का नियन्त्रण पूरी तरह समाप्त हो गया। मराठा राज्य संघ में एकजुटता नष्ट हो गई और जागीरदार अपने राज्य के प्रति निष्ठावान नहीं रहे। अब वो अपनी जागीर को ही अपना वतन मानने लगे।

4.4.7 राजस्व प्रशासन

4.4.7.1 भू - राजस्व

मराठों की भू-राजस्व व्यवस्था मुगलों की भू-राजस्व व्यवस्था से प्रभावित थी। भू-निर्धारण हेतु उत्पादकता की दृष्टि से भूमि को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता था। भू-राजस्व नकदी तथा जिन्स, दोनों ही रूप में लिया जाता था। भू-स्वामी मिरासदार तथा बटाईदार उपरिस कहलाते थे। उपरिस को ज़मीन से कभी भी बेदखल किया जा सकता था। कृषि प्रोत्साहन हेतु जंगली अथवा बंजर भूमि को कृषि-योग्य बनाने पर लगान में छूट दी जाती थी और प्राकृतिक आपदा की स्थिति से निपटने के लिए किसानों को कम ब्याज पर अग्रिम धन भी उपलब्ध कराया जाता था। ।

4.4.7.2 चौथ तथा सरदेशमुखी

चौथ तथा सरदेशमुखी लगान का क्रमशः चौथाई तथा दसवां भाग होता था। यह उन क्षेत्रों से प्राप्त किया जाता था जो कि मराठा प्रभाव के अन्तर्गत आते थे। इन करों की अदायगी के बाद इन क्षेत्रों के निवासियों को मराठों की लूट से मुक्ति मिल जाती थी। इन करों की वसूली में मराठों ने हिन्दू-मुसलमान में कोई अन्तर नहीं किया और इस प्रकार की ज़ोर-ज़बर्दस्ती व बिना किसी दायित्व की कर वसूली ने मराठों को समस्त भारत में लुटेरों के रूप में कुख्यात कर दिया।

4.4.7.3 अन्य कर

कूप सिंचित भूमि पर सिंचाई कर लगाया जाता था। गृह कर, विवाह एवं पुनर्विवाह के अवसर पर कर, व्यवसाय कर, सीमा शुल्क ज़मीदारों से लिया जाने वाला कर कर्ज़ा पट्टी , न्याय शुल्क तथा क्रय-विक्रय कर आदि राजस्व के अन्य साधन थे।

4.4.8 न्याय व्यवस्था

पेशवाओं के काल में कोई विधि-सम्मत न्याय-व्यवस्था नहीं थी। फ़ौजदारी तथा दीवानी मामलों में परम्प्रारानुसार तथा न्यायकर्ता के विवेक पर न्याय किया जाता था। दण्ड-व्यवस्था में प्राणदण्ड नहीं था किन्तु देशद्रोह जैसे अपराधों के लिए अंग-भंग की व्यवस्था थी।

4.4.9 पुलिस

बड़े नगरों में कोतवाल, प्रान्तों में मामलतदार, जिलों में कामविष्कार तथा गांवों में पाटिल पुलिस का काम देखते थे।

4.4.10 सैन्य प्रशासन

शिवाजी की सेना पर केन्द्रीय सत्ता का नियन्त्रण था किन्तु पेशवाओं के काल में विभिन्न सरदारों की अपनी-अपनी निजी सेनाए होती थीं जिनका कि रख-रखाव सरदार अपनी-अपनी जागीरों से करते थे। पेशवा काल में सैनिकों के प्रशिक्षण हेतु विशेष प्रयास नहीं किए गए थे किन्तु महादजी सिंन्धिया जैसे प्रगतिशील सरदारों ने अपने सैनिकों को फ्रांसीसी सैन्य विशेषज्ञों से प्रशिक्षित कराया था। मराठों की सेना में विदेशी सैनिकों की भर्ती भी की जाने लगी थी। मराठा सैनिक अभियानों में पिण्डारी लुटेरे भी लूट करने के लिए उनके साथ जाते थे। पेशवाकाल में सैनिक अनुशासन में कमी आई थी। सेनानायकों तथा सैनिकों का जुझारूपन समाप्त हो गया था और वो विलासी हो गए थे। सैनिक अभियानों में प्रायः महिलाओं को भी ले जाया जाने लगा था। पानीपत के तृतीय युद्ध में मराठों की पराजय का एक बड़ा कारण सैनिक खेमे में महिलाओं की उपस्थिति थी। सैनिकों के पास हथियारों की कमी होने लगी थी और उनकी आत्म-रक्षा के समुचित साधन नहीं थे। अभियानों के लिए रसद की व्यवस्था अक्षम थी। पेशवाओं के काल में नौ-सेना के संगठन पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। इस कारण समुद्री शक्ति में बेजोड़ अंग्रेज़ों का मुकाबला करने में उन्हें असफलता मिली। पेशवा माधवराव प्रथम के बाद मराठा सेना का पतन प्रारम्भ हो गया फिर भी दीर्घ काल तक मराठे भारत की प्रमुख सैनिक एवं राजनीतिक शक्ति बने रहे।

4.4.11 पेशवाकालीन प्रशासन का आकलन

मराठों की छवि लुटेरों की थी न कि कुशल प्रशासकों की। मराठों का राज्य क्रीग स्टैट (युद्ध द्वारा अर्जित आय पर आधारित राज्य) था। इस काल में प्रशासनिक सुव्यवस्था का अभाव था। पेशवा माधराव प्रथम की मृत्यु के बाद प्रशासन में अराजकता व्याप्त हो गई थी और अनाचार बहुत बढ़ गया था। पेशवाकालीन सैन्य प्रशासन दोषपूर्ण था। पेशवाओं के शासनकाल में न तो शान्ति और व्यवस्था थी और न ही प्रजा सुखी थी।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्नांकित पर चर्चा कीजिए-

1. महाराष्ट्र धर्म।
2. शिवाजी का बीजापुर से संघर्ष।

3. शिवाजी का राज्याभिषेक।

4. बाजीराव प्रथम के काल में मराठा शक्ति का विस्तार।

5. हुज़ूर दफ्तर।

4.5 सारांश

मराठा जाति अपने साहस, वीरता, आत्मनिर्भरता की भावना तथा अपनी स्वतन्त्र प्रकृति के लिए विख्यात थी। महाराष्ट्र की की दुर्गम भौगोलिक स्थिति के कारण वाह्य शक्तियों का इस पर प्रभुत्व स्थापित कर पाना कठिन था। देवगिरि राज्य के पतन के बाद मराठे बहमनी राज्य और उसके विघटन के बाद अहमदनगर और बीजापुर राज्य में छोटे-बड़े सैनिक तथा प्रशासनिक पदों पर कार्यरत रहे थे। मराठों ने अहमदनगर राज्य के मलिक अम्बर की छत्रछाया में गुरिल्ला रणनीति का प्रशिक्षण प्राप्त किया था।

शाहजी भोंसले के पुत्र शिवाजी ने अपने साहसी सहयोगियों के साथ छापामार युद्धनीति अपना कर बीजापुर राज्य के अनेक किलों पर अधिकार कर लिया। शिवाजी ने उत्तराधिकार के युद्ध का लाभ उठाकर मुगलों के आधीन क्षेत्रो पर भी अधिकार कर लिया। मुगल सेनानायक मिर्ज़ा राजा जयसिंह ने उन्हें पराजि कर पुरन्दर की अपमानजनक सन्धि के लिए विवश किया। दिल्ली में दरबार में उपस्थित होने के बाद शिवाजी को आगरा के किले में बन्दी बना लिया गया किन्तु वहां से निकल भागने में सफल होने के बाद दक्षिण लौटकर वह अपनी शक्ति को पुनर्स्थापित करने में सफल रहे। सन् 1674 में शिवाजी का राज्याभिषेक हुआ। शिवाजी के बाद पेशवा बाजीराव प्रथम तथा पेशवा बालाजी बाजीराव ने मराठा शक्ति का अभूतपूर्व विस्तार किया। मराठा साम्राज्य महाराष्ट्र, कोंकण, कर्नाटक, तमिलनाडु, गुजरात, मालवा तथा बुन्देलखण्ड के एक भाग तक और उसका प्रभाव क्षेत्र पंजाब तक फैल गया।

पेशवा काल में सैद्धान्तिक दृष्टि से शासन का प्रमुख छत्रपति था किन्तु वास्तविक सत्ता पेशवा के हाथों में थी। मराठा सत्ता का केन्द्र अब सतारा के स्थान पर पेशवा की जागीर पूना में स्थापित हो गया था। पूना में स्थित पेशवा के सचिवालय हुज़ूर दफ़्तर से प्रशासनिक गतिविधियों का संचालन किया जाता था। पेशवाओं के काल में ग्राम स्वायत्तशासी होते थे। मुगल मनसबदारी व्यवस्था की भांति मराठा सरदारों को उनकी सैनिक सेवा के बदले में वेतन के स्थान पर जागीर (सरंजामी) प्रदान की जाती थी। मराठों की भू-राजस्व व्यवस्था मुगलों की भू-राजस्व व्यवस्था से प्रभावित थी। चौथ तथा सरदेशमुखी राजस्व के प्रमुख स्रोतों में थे। पेशवाओं के काल में सैन्य संगठन

में शिथिलता आ गई थी जिसके कारण मराठा शक्ति का पतन होने लगा फिर भी दीर्घ काल तक मराठे भारत की प्रमुख सैनिक एवं राजनीतिक शक्ति बने रहे।

4.6 पारिभाषिक शब्दावली

हिन्दू पद पादशाही -भारत में हिन्दू साम्राज्य की स्थापना।

हुज़ूर दफ़्तर - पेशवा का सचिवालय।

मामलतदार/सरसूबेदार - प्रान्तीय शासन का प्रभारी।

कामविष्कार - जिला प्रशासन का प्रभारी।

पाटिल - गांव का मुखिया।

कुलकर्णी -पाटिल का लेखा सहायक।

जागीर (सरंजामी) - मराठा सरदारों को उनकी सैनिक सेवा के बदले में वेतन के स्थान पर दिया जाने वाला भू-क्षेत्र।

चौथ - मराठा प्रभावित क्षेत्र में लूट न करने के बदले में लिया जाने वाला भू-राजस्व का चौथाई भाग।

सरदेशमुखी - मराठों द्वारा सरदेशमुख के रूप में प्रभावित क्षेत्र में लूट न करने के बदले में लिया जाने वाला भू-राजस्व का दसवां भाग।

क्रीग स्टैट - युद्ध से अर्जित आय पर आधारित राज्य।

4.7 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

1. देखिए 5.4.3.1 महाराष्ट्र की भौगोलिक स्थिति तथा शिवाजी के उदय से पूर्व उसका राजनीतिक-सैनिक इतिहास का बिन्दु - 3 ।

2. देखिए 5.4.3.2.1 बीजापुर से संघर्ष।

3. देखिए 5.4.3.2.3 शिवाजी का राज्याभिषेक।

4. देखिए 5.4.3.3 पेशवाओं के काल में मराठा शक्ति का विस्तार का बिन्दु -2 ।

5. देखिए 5.4.4.3 हुज़ूर दफ़्तर।

6. देखिए 5.4.4.7.2 चौथ तथा सरदेशमुखी।

4.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Sarkar, Jadunath – *Shivaji*
2. Sardesai, G. S. - *The New History of the Marathas*
3. Faruki, Z. A. – *Auranzeb and Hus Times*
4. Sarkar, Jadunath – *Fall of the Mughal Empire*
5. Sinha, B. N. – *Rise of the Peshwas*

4.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. Dighe, V. S. – *Bajirao I and the Maratha Expansion*
2. Duff, Grant – *A History of the Marathas*
3. Temple, R. C. – *Shivaji and the Rise of the Mahrattas*

4.10 निबंधात्मक प्रश्न

शिवाजी के नेतृत्व में मराठा शक्ति के उत्थान पर प्रकाश डालिए।

इकाईएक- इक्ता, खिलाफत, इनाम, वतन, अमरम, जजिया,जकात, खम्स,खराज,मदद- ए -मास, हरम, परगना,तुर्कानें -चहलगानी, जिम्मी, शरियत, परदा, उलेमा, खिदमती, शहना ए- मंडी

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 संकल्पनाऐं, विचार तथा शब्दावली
1.3.1 इक्ता
1.3.1.1 इक्ता का क्षेत्रीय वितरण
1.3.1.2 इक्ता लागू करने का उद्देश्य
1.3.2 जजिया
1.3.3 जकात
1.3.4 खम्स
1.3.5 खिदमती
1.3.6 इनाम
1.3.7 जिम्मी
1.3.8 वतन
1.3.9 अमरम
1.3.10 मदद-ए-माश
1.3.11 शरीयत
1.3.12 हरम
1.3.13 तुर्कान-ए-चहलगानी
1.3.14 शहना-ए-मण्डी
1.3.15 परदा
1.3.16 खिला□त
1.3.17 परगना
1.3.18 उलेमा
1.7 साराशं
1.8 तकनीकी शब्दावली
1.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर
1.10 संदर्भ ग्रंथ सूची
1.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.12 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

भारत में मुस्लिम शासन की स्थापना के उपरांत भारत और विशेषकर उत्तर भारत में शासन व्यवस्था,एवं संस्कृति के क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन हुए। भारत में आज जो समन्वित संस्कृति मिलती है उसकी शुरूआत इसी काल में हुई। मुगलकाल में समन्वित संस्कृति की अनेक श्रेष्ठ परंपराओं की स्थापना हुयी, सूफी और उनके अनुनायियों तथा भक्तिकालीन संतों ने दो भिन्न-भिन्न धर्मों एवं संस्कृतियों के लोगों को निकट लाने और साथ-साथ रहने के लिए तैयार करने में अहम् भूमिका निभायी थीं।

सल्तनत काल में शासक वर्ग ने मध्य एशिया,ईरान एवं अरब जगत की अनेक परंपराओं, विचारों एवं रीतियों को भारत में प्रचलित किया। इसके परिणामस्वरूप भारत में अनेक नवीन बातों का प्रचलन प्रारंभ हुआ और समाज व्यवस्था में भी परिवर्तन हुए।

मध्यकालीन इतिहास के अध्ययन के लिए मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न संकल्पनाओं ,विचार एवं शब्दावली से परिचित होना नितांत आवश्यक है, इसके अभाव में इस काल के इतिहास को भली प्रकार से समझ पाना कठिन है। इस तथ्य को ध्यान में रखकर आपको सल्तनत एवं मुगल काल में प्रयोग की गयी अनेक संकल्पनाओं ,विचार एवं शब्दावली का विवरण दिया जा रहा है। इन तथ्यों का अध्ययन कर आप मध्यकालीन इतिहास का भली प्रकार अध्ययन कर पायेंगे और इस काल की जानकारी को ठीक तरह से समझ पायेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई्र का उद्देश्य मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न संकल्पनाओं ,विचार एवं शब्दावली के ज्ञान का परिचय देना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1- मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न संकल्पनाओं

2- मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न विचार

3- मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न शब्दावली

1.3 संकल्पनाऐं, विचार तथा शब्दावली

इस इकाई में आपको विभिन्न संकल्पनाओं, विचार तथा शब्दावली का परिचय विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत दिया जा रहा है-

1.3.1 इक्ता

इक्ता या अक्ता अरबी भाषा का शब्द है। प्रारम्भ में इस प्रथा के अन्तर्गत भूमि के विशेष खण्डों के राजस्व का अधिकार सैनिकों में उनके वेतन के रूप में बांटा जाता था। इस प्रथा का आरम्भ इस्लाम धर्म के साथ ही सेवा करने के बदले पुरस्कार प्रदान करने के साथ हो चुका था। तेरहवीं शताब्दी में दिल्ली सल्तन्त के सुल्तानों में इल्तुतमिश ही पहला सुल्तान था जिसने भारत में सांमती प्रथा को समाप्त करने, सामा्रज्य के दूर-दराज के क्षेत्रों को केन्द्र से जोडने के लिए ’इक्ता प्रणाली ’की शुरूवात की । इस प्रणाली के प्रारम्भ होने से तुर्की शासक वर्ग की धन से सम्बन्धित लिप्सा की समाप्ति हुई। साथ ही नये विजित प्रदेशों में कानून व्यवस्था की बहाली के साथ ही राजस्व वसूली की समस्या का समाधान हुआ। मोहम्मद गोरी की विजयों के पश्चात् शीघ्र ही उत्तर-भारत में इक्ता प्रथा शुरू हुई। सन् 1210 में इल्तुतमिश के साथ इक्ता प्रणाली स्थापित हुई उसके शासनकाल के 26 वर्षो में (1211-1236) मुल्तान से लखनौती के मध्य सम्पूर्ण सल्तनत बड़े तथा छोटे भू-भागों में विभक्त हो गये, जिन्हें इक्ता कहा जाता था और जो मुक्ता नामक अधिकारियों को दी गयीं थीं।

इल्तुतमिश के समय में इक्ता की दो श्रेणियां प्रचलन में थी। खालसा भूमि से बाहर प्रान्तीय स्तर की इक्ता जो उच्च वर्ग के अमीरों को प्रदान की जाती थी जिनके पास राजस्व से सम्बन्धित एवं प्रशासकीय दोनों तरह के अधिकार होते थे। इस तरह की इक्ता प्राप्त करने वालों को ’मुक्ता’ कहा जाता था। गांवों को जोडकर बनी छोटी इक्ताओं को सुल्तान अपने सैनिकों को वेतन के रूप में देता था जो खालसा का हिस्सा माना जाता था। इन इक्ताओं के पास प्रशासकीय एवं आर्थिक अधिकार नहीं होते थे। सल्तनत काल में इक्ता प्राप्त करने वालों को मुक्ता, अमीर तथा मलिक कहा जाता था।

बलवन ने इक्ता को जीवन भर के लिए प्रदान करने तथा अपने उत्तराधिकारों को हस्तांतरित करने पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया। उसने मुक्ता के साथ ख्वाजा की नियुक्ति की। अलाउद्दीन के समय में इक्ता के असीमित विस्तार को रोक दिया। सैनिकों को नकद वेतन दिया गया। सेनापतियों को अलाउद्दीन खिलजी के समय में इक्तायें प्रदान की गई। तुगलक वंश के शासकों में गयासुद्दीन तुगलक ने इक्ता प्राप्त अधिकारियों की स्थिति में कुछ परिवर्तन किया। मुक्ता की व्यक्तिगत आय तथा उसके अधीन सैनिक रखे गये। सैनिकों के वेतन में प्रत्यक्ष रूप से विभाजन किया गया। मुहम्मद तुगलक ने इक्ता व्यवस्था में सुधार करते हुए मुक्ता तथा राजस्व से जुड़े अधिकार लेकर नये अधिकारी वली-

उल-खराज को दे दिया। फिरोज तुगलक के शासनकाल में इक्ता पर से केन्द्रीय नियंत्रण समाप्त हो गया। इक्ता पर उत्तराधिकार को मान्यता, नियुक्तियों के हस्तांतरण पर रोक , भूमि अनुदान के रूप में सैनिकों को वेतन प्रदान करने की प्रथा को पुनः प्रारम्भ करने आदि इक्ता व्यवस्था में आये परिवर्तन का श्रेय फिरोज तुगलक को दिया जाता है। लोदियों के शासनकाल में भूमि हस्तांतरण प्रथा अपने चरमोत्कर्ष पर थी। सर्वाधिक भूमि अनुदान फिरोज तुगलक ने बांटा था।

1.3.1.1 इक्ता का क्षेत्रीय वितरण

छोटी इक्ता के अधिकारियों को इक्तादार तथा बड़ी इक्ता के पदाधिकारियों को मुक्ता या वली कहा जाता था। इनका हिसाब, दिवाने-विजारत में तय होता था। जनसाधारण में यह पदाधिकारी मुक्ता, हाकिम और अमीर के नाम से प्रसिद्व हुए। इस्लाम शाह के सिंहासनरूढ़ होने पर बडे पैमाने पर अमीरों को उनकी इक्ता से स्थानांतरित किया गया।

इस्लाम धर्म के प्रारम्भ से ही राज्य की सेवा करने के बदले पुरस्कार स्वरूप इक्ता प्रदान करने का प्रचलन हो चुका था। अक्ता या इक्ता प्राप्त व्यक्ति उक्त भू-खण्डों के मालिक नहीं थे वरन् केवल उसके लगान का ही उपयोग कर सकते थे।सैनिकों को विशेष अनुदान देने की यह प्रथा अक्ता(इक्ता) नाम से विख्यात हुई ।राज्य द्वारा, व्यक्ति विशेष को प्रदत्त भू-संपत्तियों को अक्ता कहा जाता था।सामान्यतः इसे भू- अधिन्यास सूचक माना जाने लगा।

1.3.1.2 इक्ता लागू करने का उद्देश्य

ऐबक तथा इल्तुतमिश ने इक्ता प्रथा से पूरा लाभ उठाया था। इन प्रशासकों ने भारतीय समाज से सामंती प्रथा को समाप्त करने तथा साम्राज्य के दूर- दराज के हिस्सों को केन्द्र से जोडने के लिए महत्वपूर्ण साधन के रूप में इस प्रणाली का उपयोग किया।सल्तनत काल में अधिकारियों को वेतन अदा करने का एक मात्र साधन भू-राजस्व का अनुदान था। इस कारण राजस्व अनुदान व्यवस्था को एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्था के रूप में स्थापित किया गया।भारत में इक्ता लागू करने का एक महत्वपूर्ण कारण में भी था, इससे सुल्तान उपज के अधिशेष का एक बडा भाग प्राप्त कर सकता था।

इक्ता पदाधिकारी(जिन्हें मुक्ता या वली कहा जाता था) खराज तथा अन्य कर वसूल करके अपना तथा अपने सैनिकों का भरण-पोषण करते थे और बची हुई राशि सुल्तान के कोष के लिए भेज देते थे।सुल्तानों ने अमीर वर्ग को नगद वेतन के बदले भरण-पोषण के लिए अक्ता प्रदान किया।पहली खालसा के बाहर प्रान्तीय स्तर की अक्ता तथा दूसरी कुछ गांवों के रूप में छोटी अक्ता। प्रान्तीय स्तर की अक्ताऐं उच्च वर्ग के अमीरों को दी जाती थीं।यदि मुक्ता अन्त तक सक्रिय रूप से

सेवारत रहता है तो राजस्व पर उसका अधिकार बना रहना स्वाभाविक था। उसकी मुत्यु के बाद उससे सम्बन्धित अधिकार पुनः राज्य में विलीन हो जाता था।

अक्ता (इक्ता) को सम्पूर्ण जीवनकाल के लिए पेंशन के रूप् में नहीं दिया जा सकता थी। न इक्तादार उसे अपने अधिकार का समर्पण करके अपनी वित्तीय प्रभुसत्ता को खोना चाहता था।बलवन ने अक्तादार के क्रियाकलापों पर चौकसी रखने तथा उन पर नियंत्रण के लिए ख्वाजा की नियुक्ति की।

1.3.2 जजिया

भारत में जजिया का इतिहास सर्वप्रथम मुहम्मद बिन कासिम के सिंध में विजय के पश्चात् 712 ।ण्क्ण् से मिलता है। जजिया कर राज्य में सम्पूर्ण जनता पर न लगाकर केवल गैर-मुसलमानों से वसूल किया जाता था, ताकि उनकी सम्पत्ति एवं सम्मान की रक्षा की जाये। इस कर से महिलाऐं , बच्चे, साधु एवं भिक्षुक मुक्त थे। ब्राह्मण वर्ग भी इस कर से मुक्त था। यह कर निर्धन लोगों से 12 टंके, मध्यम वर्ग से 24 टंके और धनी से 48 टंके प्रति वर्ष के हिसाब से वसूला जाता था। लेकिन फिरोज तुगलक ने ब्राहमणों पर भी जजिया कर लागू कर दिया था।बाबर तथा हुमायूं के काल में दिल्ली सल्तनत से चला आ रहा कर जजिया बनाये रखा गया।

प्रथम बार 1564 में अकबर ने यह कर समाप्त किया।औरंगजेब ने 1679 में जजिया कर पुनः लगाया। उसने इस्लामी धर्मशास्त्र के अनुसार कर का निर्धारण किया तथा उसके लिए दिरहम नाम के एक विशेष सिक्के का प्रचलन किया। एक दिरहम 550 ग्रेन चांदी के मूल्य का माना जाता था।34 वर्ष पश्चात् फर्रूखशियर ने अपने ने शासनकाल के प्रथम वर्ष में जजिया समाप्त कर दिया। 1717 में जजिया पुनः लगा दिया गया। 1719 में उसे पुनः हटा दिया गया।अन्त में मुहम्मद शाह के शासनकाल में 1720 में उसे समाप्त कर दिया गया।

1.3.3 जकात

इस्लाम धर्म के मानने वालों में धनी वर्ग के लोगों के लिये जकात देना कुरान के अनुसार आवश्यक है। हनीफी सिद्वान्तों में विश्वास रखने वाले को जकात को धार्मिक कर के रूप में देना आवश्यक है। जकात की वसूली में बल प्रयोग करना धर्म विरूद्व था। जकात एवं सदका दोनों ही धार्मिक कर हैं। जकात वास्तव में सदका ही है। जकात के अंतर्गत सम्पत्ति को पुनः दो भागों में बांटा जा सकता है। प्रत्यक्ष एवं परोक्ष। प्रत्यक्ष करों के अंतर्गत पशु तथा कृषि से प्राप्त उपज और अप्रत्यक्ष में व्यापार की वस्तुएं सोना, चांदी इत्यादि आते थे।सम्पत्ति के विषय में दो शर्तो पर ही जकात देना पडता था। पहली शर्त के अनुसार सम्बन्धित व्यक्ति द्वारा सम्पत्ति का पूरे एक वर्ष तक उपभोग करने पर ही वर्ष के अन्त में उसे जकात देना होना था।

दूसरी शर्त के अंतर्गत एक निर्धारित मात्रा से अधिक सम्पत्ति का स्वामी होने पर जकात देना होता था। उस सम्पत्ति की न्यूनतम मात्रा को निसाब कहते थे।आवश्यकता की वस्तुओं पर जकात नहीं देना होता था। इस श्रेणी में निवास, गृह, व्यवहार के वस्त्र, पठन-पाठन में उपयोग की जाने वाली पुस्तकें, अन्न, सेवा कार्य के लिए रखे गये दास आदि आते थे।

सभी प्रकार के वस्तुओं के मूल्य का ½ प्रतिशत आयात-निर्यात कर के रूप में वसूल किया जाता था।परन्तु घोडों के ऊपर 4 प्रतिशत कर लिया जाता था।उल सदका नामक कर का एक अन्य स्रोत है। उल भूमि की उपज के ऊपर कर लगाया जाता था। इस उल कर से वफ्क , मकतब, नाबालिग तथा दासों की सम्पत्ति भी कर मुक्त नहीं हो सकती थी। उल वसूल करने के लिए बल प्रयोग किया जा सकता था। जकात का अर्थ है- शुद्वीकरण। इसका लक्ष्य था धनी मुसलमानों की आय से निर्धन स्वधर्मियों को आर्थिक सहायता प्राप्त हो सकें। यह कर तभी वसूला जाता था जब यह सम्पत्ति करदाता के पास कम से कम एक साल तक रही हो और उसका मूल्य निश्चित सीमा से अधिक हो। यह कर 2.5 प्रतिशत की दर तक वसूल किया जाता था।

1.3.4 खम्स

हनीफी सिद्वान्तों के अनुसार जब सुल्तान दूसरों के शासक को हटा कर जो धन लाते थे उस पर खम्स लागू होता था।वस्तुतः खम्स लूट का धन था जो युद्व में शत्रु राज्य की जनता से लूट में प्राप्त होता था। लूट का 4/5 भाग राजकोष में जमा होता था।सल्तनत काल में फिरोज तुगलक ही एकमात्र ऐसा शासक था जिसने इस कर को शरीयत के अनुसार वसूल किया।अलाउद्दीन खिलजी और मुहम्मद तुगलक ने 4/5 राजकोष में दिया और शेष 1/5 सैनिकों में बांटा।

1.3.5 खिदमती

तुर्को के आगमन पर जो लोग बादशाह के काम काज पर अपनी सेवा प्रदान करते थे, उन्हें खिदमती के नाम से जाना जाता था। अधीनस्थ द्वारा अपने उच्च अधिकारियों को दी गई भेंट को खिदमती कहा जाता था। यह प्रचलन दिल्ली के सुल्तानों में देखने को मिलती है

1.3.6 इनाम

लगान से मुक्त भूमि, जिसका कल्याणकारी कार्यों के लिए दान किया जाता था। इस प्रकार की भूमि सुल्तान, राज्य के प्रति किसी की अच्छी सेवा करने पर अपनी खुशी से भूमि भेंट करता था।

1.3.7 जिम्मी

संरक्षित प्रजा, अर्थात् वह लोग जो जजिया देते थे और बदले में राज्य उन्हें जीवन,धर्म और सम्पत्ति की सुरक्षा प्रदान करता था जिम्मी कहलाते थे।

1.3.8 वतन

बहमनी प्रशासन में मराठा सरदारों को प्रदत्त वंशानुगत भू-अनुदान वतन या वतन जागीर कहलाते थे। मुगल प्रशासन में वंशानुगत भू-अनुदान जोकि गुरूमतः राजपूतों को दिये जाते थे, उन्हें भी वतन जागीर कहा जाता था ।

1.3.9 अमरम

जो भूमि सैनिकों व असैनिक अधिकारियों को उनकी विशेष सेवाओं के बदले में दी जाती थी अमरम कहलाती थी। उसके ग्रहणकर्ता की अमर नायक कहा जाता था। विजयनगर में सामंतों/ नायकों को प्रदत्त अनुदान भूमि अमरम कहलाती थी।

1.3.10 मदद - ए - माश

भूमिकर मुक्त क्षेत्र के अनुदान की प्रथा प्राचीन काल से प्रचलित है। मुगलकाल में इस तरह के अनुदान देने का अधिकार केवल सम्राट को ही प्राप्त था। इस अनुदान को सामान्य रूप से मदद-ए-माश कहते थे। मुगलकाल में यह अनुदान साधारणतया धार्मिक ग्रन्थों के आचार्य, मुल्ला, मौलवी तथा विद्वानों को दिया जाता था।व्यक्तियों के अतिरिक्त संस्थाओं को भी यह अनुदान दिया जाता था, इसे वक्फ कहा जाता था। तथा उसे पाने वाला गुतबल्ली कहलाता था।

जहांगीर ने मदद-ए-माश के अनुरूप ही अलतमगा नाम से लोगों को जागीरें प्रदान कीं। यह तैमूरी परम्परा पर आधारित था तथा वंशानुगत होता था। इसे अलतमगा नामक मुहर लगाई जाती थी।मदद-ए-माश की भूमि एक स्थान से दूसरे स्थान को साधारणतया स्थानांतरित नहीं की जाती थी तथा जिस व्यक्ति को दी जाती थी उसकी मृत्यु तक उसके पास रहती थी।कालान्तर में यह भूमि वंशानुगत हो गई तथा अनुदान प्राप्त परिवार के उत्तराधिकारियों में बंटने से इसके टुकडे-टुकडे हो जाते थे । भू- राजस्व मुक्त, भू-अनुदान, जीवन-यापन के लिए दी जाने वाली जागीर थी।

1.3.11 शरीयत

इस्लाम धर्म मानने वालों के लिए शरीयत वह कानून एवं रूपरेखा है जिसको मानना प्रत्येक मुसलमान के लिए आवश्यक है।इस्लामी विद्वान जो इसके ज्ञाता होते हैं ,उलेमा कहलाते हैं। सालिक (साधक) अथवा तालिब (विद्यार्थी) के लिए आवश्यक है कि वह शरीयत (इस्लामी नियम) के अनुसार अपने मस्तिष्क को अनुशासित रखे। शरीयत नियम का महत्व तुर्कों के आगमन से प्रारम्भ हो गया था।

1.3.12 हरम

वर्जित स्थान जहां स्त्रियां रहती थीं हरम कहलाता था। मुगल काल में हरम का विशेष चलन था। यहां पर अनेक प्रदेश एवं ईरान, मिस्र की प्रिय कन्याऐं लाकर रखी जाती थी। अकबर के हरम में लगभग 500 स्त्रियां थीं । औरंगजेब के शासन काल में हरम को समाप्त कर दिया था। उसने कहा कि यह इस्लाम में शरीयत के विपरीत है। उसने फरमान जारी कर दिया कि या तो शादी कर लें एवं हरम छोड दें ।

1.3.13 तुर्कान - ए - चहलगानी

तुर्कान-ए-चहलगानी का तात्पर्य था चालीस गुलामों का दल। इल्तुतमिश ने इस दल का गठन किया था। इसे चालीसा भी कहा गया है। बलबन शासक इस गुट को मानने वाला था । बलबन शासक तुर्की के गुट का सदस्य था। प्रारम्भ में वह इल्तुतमिश का खाकयार था जो बाद में इस पद पर पहुंचा।

1.3.14 शहना - ए - मण्डी

खाद्यान्नों की खरीद-फरोख्त के लिए शहना-ए-मण्डी नाम अधिकारी की नियुक्ति बलबन ने की थी। राशनिंग व्यवस्था अलाउद्दीन की नवीन सोच थी। पर्याप्त अनाज उपलब्धता उसकी सैनिक व्यवस्था को लागू करवाने के लिए आवश्यक थी। अलाउद्दीन ने अनाज लगान के रूप लिया तथा राजस्थान के छाईन क्षेत्र से आधी लगान नगद एवं आधी अनाज के रूप में वसूल करवायी। यह व्यवस्था अलाउद्दीन खिलजी के बाजार-नियंत्रण पर आधारित थी।

1.3.15 परदा

स्त्रियों को अलग से परदे में रखने की प्रथा मुस्लिम जगत में आम थी। मुस्लिम शासन काल में भारत में भी पर्दा प्रथा बहुत प्रचलित थी। अकबर ने तो यहां तक फरमान निकाल दिया था कि राज्य में यदि कोई स्त्री बेपरदा मिले तो उसे हरम में ले जाओ।परदा की उत्पत्ति तुर्को के आगमन के पश्चात् भारत में देखने को मिलती है।

1.3.16 खिला□त

पैगम्बर साहब, के पश्चात् चार खलीफा आये और उन्होंने इस्लाम धर्म की बागडोर संभाली और उसके बाद शक्ति का केन्द्र तुर्को में विलय हो गया। भारत में जब तुर्को का आगमन प्रारम्भ हुआ तो शासक अपने आप को उनसे संबंधित करने लगे। सुल्तान इल्तुतमिश ने भी 1229 में बगदाद के खलीफा की वैधानिक स्वीकृति मांगी थी।

समय के साथ तुर्की की सल्तनत कमजोर होती गयी और उसका तेजी से ह्रास हाने लगा। प्रथम विश्वयुद्व(1914-18) में उसे तो क्षति उठानी पडी उसके फलस्वरूप इस बात का खतरा उत्पन्न हो गया कि वही पूरी तरह समाप्त हो जायेगी। इससे भारतीय मुसलमानों में बडी बेचैनी फैली और उन्होंने 1920 ई0 में एक आन्दोलन शुरू किया, जिसका उद्देश्य इंग्लैण्ड इस बात के लिए जोर डालना था कि वह तुर्की सामा्रज्य तथा खलीफा पद को जोड़ने में हिस्सा न ले। भारतीय मुसलमानों का यह आंदोलन खिलाफत आंदोलन के नाम से विख्यात है। इसमें अलीबंधु शौकत अली तथा मुहम्मद अली खूब चमके। दोनों सुशिक्षित और अच्छे वक्ता थे । वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में सम्मिलित हो गये, जिसने महात्मा गांधी के नेतृत्व में 1920 में असहयोग आन्दोलन आरंभ किया। इस प्रकार खिलाफत आंदोलन के फलस्वरूप भारतीय मुसलमानों को अफगानिस्तान की हिजरत के लिए प्रेरित किया। परन्तु अफगानों ने मुसलमान होते हुए भी अपने भारतीय मुसलमानों भाइयों की हिजरत का स्वागत नहीं किया। तुर्की में कमाज अतातुर्क का उदय हुआ जिससे तुर्की में नवजागरण का संचार हुआ। 1925 ई0 में तुर्की के सुल्तान को गद्दी से उतार दिया गया। इस प्रकार खिलाफत आंदोलन के नीचे की जमीन ही एक प्रकार से खिसक गयी और इसके बाद आंदोलन शीघ्रता से समाप्त हो गया।

1.3.17 परगना

अनेक गांवों को मिलकर बनायी गयी प्रशासनिक इकाई मध्यकाल में परगना कहलाती थी।सल्तनतकाल में यह इकाई विभिन्न नामों से जानी जाती रही है। इब्नबतूता के अनुसार सौ गांवों के समूह को सदी कहा जाता था। शेरशाह ने परगना के शासन को सुव्यवस्थित किया तथा प्रत्येक परगने में एक शिकदार एक अमीन, एक खजांची और दो कारकून- एकनागरी लिपि में दूसरा फारंसी लिपि से हिसाब लिखने के लिए नियुक्त किये गये।शिकदार परगना का मुख्य प्रशासक था। उसका काम परगने में शान्ति एवं सुव्यवस्था तथा लगान वसूल करना था और इसके साथ ही परगने में मालगुजारी निर्धारण करना था। परगने का प्रशासनिक कार्य भी यह देखता था।

आमिल परगने का प्रमुख अधिकारी था। इसका प्रमुख कार्य मालगुजारी वसूल करना था। इसके साथी ही परगने का प्रशासनिक कार्य भी देखते थे।शाहजहॉ के शासनकाल में प्रथम बार प्रत्येक परगने में मालगुजारी निर्धारण एक नई इकाई चकला का संगठन किया।आमिल का काम परगने की मालगुजारी निश्चित करना और उसकी वसूली करना था। इस कारण किसानों के साथ उसका निकट सम्पर्क रहता था।खजानदार प्रत्येक परगने में एक होता था। इसका प्रमुख शासनाधिकारी खजानदार या फोतदार कहलाता था।

खजानदार परगने के खजाने के धन के हिसाब- किताब का उत्तरदायी होता था। इसका प्रमुख कार्य परगना के कोष की निगरानी करना तथा यह देखना कि जमा धन सुरक्षित रहे तथा बिना

दीवान की अनुमति के खर्च न हो।शेरशाह और अकबर के काल में एक परगने में एक कानूनगो की नियुक्ति होती थी। इसकी नियुक्ति राजाज्ञा द्वारा होती थी । साधारणतया यह पद वंशानुगत हो गया था।

परगना में न्याय का कार्य शिकदार, काजी, कोतवाल द्वारा सम्पादित होता था। शिकदार परगने का प्रमुख प्रशासनिक अधिकारी था। शान्ति सुव्यवस्था के अतिरिक्त वह परगने के फौजदारी मुकदमों का निर्णय करता था।परगने का मुख्य न्यायालय परगना न्यायालय था। इसका मुख्य न्यायाधीश काजी-ए-परगना था। इसकी नियुक्ति राजसी सनद द्वारा होती थी। एक मुफ्ती, एक मुहतसिव-ए-परगना तथा एक दरोग-ए-अदालत काजी की सहायता के लिए नियुक्त थे।

प्रत्येक बड़े गांव एवं महत्वपूर्ण नगर में काजी नियुक्त होता था। काजियों के अधीन मस्जिदों की देख-रेख भी की जाती थी और वे शिक्षा भी दिया करते थे।परगने के लगान सम्बन्धी मुकदमों का निर्णय अमीन आमिल या करोड़ी करता था। परगने के नगर में कोतवाल-ए-परगना रहता था जो साधारण अपराध का निर्णय करता था । मुसलमानों के दीवानी मुकदमों का फैसला इस्लामी कानून के आधार पर होता था। फौजदारी कानून हिन्दू तथा मुसलमानों के लिए समान था।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्नांकित पर चर्चा कीजिए-

1- इक्ता

2- खिलाफत

3- परगना

4- जकात

5- मदद-ए-माश

6- जजिया

1.3.18 उलेमा

इस्लाम धर्म में उलेमा को सर्वश्रेष्ठ स्थान दिया गया है। मुस्लिम वर्गों में सबसे अधिक प्रभावशाली लोग जो धर्माधिकारी होते हैं उन्हें उलेमा कहते हैं।अलाउद्दीन पहला सुल्तान था जिसने स्वतंत्र नीति अपनायी और उनकी राय की उपेक्षा की। वे विद्वान जो ज्ञान की प्राप्ति में रत रहते थे उन्हें उलेमा और जो राजा के सलाहकार के रूप में चुने जाते थे उन्हें शेखुल इस्लाम कहते थे।उलेमा वर्ग

में क्रमबद्व पदाधिकारी मिलते हैं, जिनमें से प्रान्तों में सद्र, मीरअदल, मुफ्ती और काजी की नियुक्ति की जाती थीं। दिल्ली और आगरा धर्माधिकारी कट्टर सुन्नी होते थे, जिनका मुख्य उद्देश्य सम्राट पर अपना प्रभाव बनाये रखना था, उलेमा बहुत शक्तिशाली होते थे। मुस्लिम शासकों में अलाउद्दीन खिलजी और अकबर ने इन्हें नियंत्रित रखा।

उलेमाओं का उत्तरदायित्व था कि राजनैतिक परिवर्तनों की उपेक्षा करते हुए धार्मिक संस्थाओं को ज्यों का त्यों बनाये रखा जाय। एक तरफ उलेमा धार्मिक क्रिया-कलापों में मस्जिदों के निर्माण में और दान की समुचित व्यवस्था में अपना योग देते थे। दूसरी तरफ उन धार्मिक संस्थाओं पर अपने द्वारा नियुक्त किये गये अधिकारियों के माध्यम से नियंत्रण रखते थे।उलेमा का प्रमुख उद्देश्य इस्लामी संप्रदाय की एकता बनाये रखना था। इस कार्य में वे किसी तरह के जातिभेद को स्थान नहीं देते थे और वे अपना कार्य करने में राजनीतिक संस्थाओं से पूर्णतया स्वतंत्र थे। उलेमा का कर्तव्य था कि वे ज्ञान प्राप्त करने में रत रहें और इस्लामी कानून का प्रभाव क्षेत्र बढ़ाये राज्य की तरफ से प्रार्थना व अन्य धार्मिक समारोहों में भी उलेमा की प्रधानता थी। सन्त, धर्माचार्य, सैयद, पीर और उनके वंशज आदि धार्मिक श्रेणी मे कई वर्गों के लोग शामिल थे।

सल्तनतकाल में उलेमा मुस्लिम बहुत प्रभावशाली रहे। वे पैगम्बर के उत्तराधिकारी समझे जाते थे।पैगम्बर साहब का कहना था कि सभी अच्छे बादशाह और अभिजात वर्ग के लोग उलेमा के निवास स्थान पर जाते थे। बादशाह का स्थान उलेमा के बाद आता था।सभी उलेमा का आदर करते थे जिन्हें धार्मिक ज्ञान प्राप्त होता था वह उलेमा कहलाते थें।उलेमा का राजनीति में भाग लेना राज्य के लिए हानिकारक समझा जाता था।

कुरान में उलेमा को मुस्लिम समाज में पृथक श्रेणी में रखा गया है और उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे अच्छाई के मार्ग पर चलें इसके अतिरिक्त कुरान में उलेमा वर्ग के लिए व्यवस्था नहीं है।मुहम्मद साहब का निर्देश था कि उलेमा का सम्मान करना चाहिए क्योंकि वे पैगम्बर व अल्लाह का आदर करता हैं ऐसी परिस्थिति में उलेमा के प्रभाव क्षेत्र का विस्तार स्वाभाविक था।

उलेमा दो वर्गों में विभाजित थे, उलेमा-ए-अखरात और उलेमा-ए-दुनिया।उलेमा-ए-अखरात,त्याग और तपस्या का जीवन व्यतीत करना पसन्द करते थे।दूसरे उलेमा-ए-दुनिया थे जो राजाओं और विशिष्ट प्रशासनिक अधिकारियों के सम्पर्क में सदैव रहते थे और राजाओं के अच्छे बुरे कार्यों में अपना सहयोग देते थे। लोग इनको अधिक आदर की दृष्टि से नहीं देखते थे और मुस्लिम समाज की समस्त बुराइयों के लिए इनको उत्तरदायी समझते थे।

प्रमुख उलेमा मौलाना कमालुद्दीन जाहीद को पैगम्बर साहब की परम्पराओं हदीस का अच्छा ज्ञान था। बलवन ने उनसे इमाम के पद पर कार्य करने की प्रार्थना की। जिसको इन्होंने

अस्वीकार कर दिया। मौलाना जाहिद ने अपना सारा जीवन हदीस की शिक्षा देने में लगाया।उलेमा को जिन पदों पर नियुक्त किया जाता था वे वंशानुगत नहीं थे परन्तु परम्परागत कुछ परिवार काजियों, मुक्तियों और खातिबों के नाम से जाने जाते थे। शुखूल इस्लाम के परिवार के सदस्य अधिक धन-लोलुप होते थे जिसके कारण वे घृणा के पात्र थे।

उलेमा वर्ग की विशेषता थी कि किसी विषय में वे अपना विचार तब तक प्रकट नहीं करते थे जब तक कि वे उन्हें उस व्यक्ति के विषय में विस्तृत जानकारी प्राप्त नहीं हो जाती थी। मुस्लिम शासकों ने उलेमा वर्ग से कुछ विद्वानों को मुजक्किर के पद पर नियुक्त किया। ये मुजक्किर रहमान और मुहर्रम के महीनों में तजकीर सभाओं में भाग लेते थे, जो राजदरबार में आयोजित की जाती थी। 13 वीं सदी में उलेमा ने राजनीति में अपने प्रभाव का विकास किया। वे राजनीति में अमीरों के गुटों का अपने स्वार्थ के लिए समर्थन करले लगे। कुतुबुद्दीन ऐबक उलेमा का सम्मान करता था। इल्तुतमिश के शासनकाल में उलेमा राजनीति में सक्रिय हो गये। इल्तुतमिश ने उलेमा को इतना सम्मान दिया जिससे वे दंभी हो गये। सल्तनतकाल में उलेमा ने दिल्ली के सुल्तानों की शक्ति और प्रतिष्ठा बढाने में सहयोग दिया। उलेमा ने दिल्ली के सुल्तानों को पैगम्बर के समान लोगों को आदर देने को कहा। उलेमा ने सुल्तान को पैगम्बर की संज्ञा दी।

1.7 साराशं

उपरोक्त विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत आपको सल्तनत एवं मुगल कालीन भारत में प्रचलित अनेक विचार,संकल्पनाओं एवं शब्दावली की जानकारी दी गयी। अब आप इक्ता, खिलाफत, इनाम, वतन, अमरम, जजिया, जकात, खम्स, खराज,मदद-ए-माश,हरम, परगना, तुर्कान-ए-चहलगानी, जिम्मी, शरियत, परदा, उलेमा, खिदमती, शहना ए-मंडी के बारे में पर्याप्त जानकारी रखते हैं और मध्यकालीन भारत के इतिहास को भली प्रकार समझ सकते हैं।

1.8 तकनीकी शब्दावली

यह इकाई मूलतः संकल्पना, विचार तथा शब्दावली से संबंधित है,आपको इस इकाई में सल्तनत काल एवं मुगल काल में प्रचलित शब्दावली से परिचित कराया गया,अब आप इस इकाई में प्रयुक्त शब्दावली से परिचित हो गये होंगे।

1.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

इकाई 1.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 1के उत्तर के लिए देखिए इकाई 1.3.1 ; 1.3.1.1; 1.3.1.2

इकाई 1.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 2के उत्तर के लिए देखिए इकाई 1.3.16

इकाई 1.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 3के उत्तर के लिए देखिए इकाई 1.3.17

इकाई 1.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 4के उत्तर के लिए देखिए इकाई 1.3.3

इकाई 1.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 5के उत्तर के लिए देखिए इकाई 1.3.10

इकाई 1.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 6के उत्तर के लिए देखिए इकाई 1.3.2

1.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1-टी0पी0,हाम्स, डिक्शनरी ऑफ इस्लाम

2– MEDIEVAL INDIA - Cultorweb.com
www.cultorweb.com/eBooks/.../Hist%20Dict%20**Medieval_India**.pdf

3– books.google.co.in/books?isbn=8120812506**...**

1.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1- ब्लाकमैन: आइने अकबरी, द्वितीय संस्करण

2- जे0एन0सरकारः हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब, जिल्द-3

3- अवध बिहारी पाण्डेय: दि फर्स्ट अफगान एम्पायर इन इण्डिया, कलकत्ता, 1956

4- जे0एल0 मेहता: मध्यकालीन इतिहास, खण्ड-प्एप्प्

5- सतीश चन्द्र: मध्यकालीन इतिहास

6- एस0आर0शर्मा: मध्यकालीन भारत

1.12 निबंधात्मक प्रश्न

1- मध्यकालीन भारत में लगाये गये करों के विषय में चर्चा कीजिए।

इकाई दो-उर्दू, तराना, ठुमरी, गजल, कव्वाली, खयाल, कथक, खड़ी बोली, सती,गोद प्रथा, दास, बुतपरस्त, दोआब, सिलसिला

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3.0 संकल्पनाऐं, विचार तथा शब्दावली

2.3.1 उर्दू

2.3.2 खड़ी बोली

2.3.3 गोद प्रथा

2.3.4 दास

2.3.5 सती

2.3.6 शास्त्रीय विधाऐं

2.3.6.1 ठुमरी

2.3.6.2 कत्थक

2.3.6.3 गजल

2.3.6.4 ख्याल

2.3.6.5 कव्वाली

2.3.6.6 तराना

2.3.7 सिलसिला

2.3.7.1 अन्य सिलसिले

2.3.8 दोआब

2.3.9 बुतपरस्त

2.7 साराशं

2.8 तकनीकी शब्दावली

2.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

2.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

2.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

2.12 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

भारत में मुस्लिम शासन की स्थापना के उपरांत भारत और विशेषकर उत्तर भारत में शासन व्यवस्था,एवं संस्कृति के क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन हुए। भारत में आज जो समन्वित संस्कृति मिलती है उसकी शुरूआत इसी काल में हुई। मुगलकाल में समन्वित संस्कृति की अनेक श्रेष्ठ परंपराओं की स्थापना हुयी, सूफी और उनके अनुनायियों तथा भक्तिकालीन संतों ने दो भिन्न-भिन्न धर्मों एवं संस्कृतियों के लोगों को निकट लाने और साथ-साथ रहने के लिए तैयार करने में अहम् भूमिका निभायी थीं।

सल्तनत काल में शासक वर्ग ने मध्य एशिया,ईरान एवं अरब जगत की अनेक परंपराओं, विचारों एवं रीतियों को भारत में प्रचलित किया। इसके परिणामस्वरूप भारत में अनेक नवीन बातों का प्रचलन प्रारंभ हुआ और समाज व्यवस्था में भी परिवर्तन हुए।

मध्यकालीन इतिहास के अध्ययन के लिए मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न संकल्पनाओं ,विचार एवं शब्दावली से परिचित होना नितांत आवश्यक है, इसके अभाव में इस काल के इतिहास को भली प्रकार से समझ पाना कठिन है। इस तथ्य को ध्यान में रखकर आपको सल्तनत एवं मुगल काल में प्रयोग की गयी अनेक संकल्पनाओं ,विचार एवं शब्दावली का विवरण दिया जा रहा है। इन तथ्यों का अध्ययन कर आप मध्यकालीन इतिहास का भली प्रकार अध्ययन कर पायेंगे और इस काल की जानकारी को ठीक तरह से समझ पायेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई्र का उद्देश्य मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न संकल्पनाओं ,विचार एवं शब्दावली के ज्ञान का परिचय देना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1- मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न संकल्पनाओं

2- मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न विचार

3- मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न शब्दावली

2.3.0 संकल्पनाऐं, विचार तथा शब्दावली

2.3 इस इकाई में आपको विभिन्न संकल्पनाओं, विचार तथा शब्दावली का परिचय विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत दिया जा रहा है-

2.3.1 उर्दू

मध्यकाल में तुर्कों एवं मुगलों के भारत आक्रमण के दौरान उनके सैनिकों तथा भारत के स्थानीय व्यापारियों तथा कारीगरों के बीच एक नयी मिली-जुली भाषा का विकास हुआ , जिसमें तुर्की, फारसी,अरबी, अफगानी तथा तत्कालीन भारत में प्रचलित अवहट्ट या अप्रसंग सभी का समावेश था। इस भाषा को प्रारम्भ में रेखता, दक्कनी तथा हिन्दवी कहा गया जिसे बीसवीं शताब्दी के आरम्भ तक हिन्दुस्तानी कहा जाने लगा। वास्तव में यह संस्कृत और फारसी दोनों भाषाओं से प्रभावित थी। परन्तु बीसवीं सदी में हिन्दु-मुस्लिम साम्प्रदायिकता बढ़ने के कारण इसके दो रूप दृष्टिगत होने लगे। प्रथम संस्कृतगर्भित नागरी लिपि में लिखा गया रूप 'हिन्दू' और द्वितीय फारसीगर्भित एवं फारसी लिपि में लिखित रूप 'उर्दू'। उर्दू का व्याकरण पश्चिमी शौरसेनी अप्रभंश पर आधारित है।

उर्दू साहित्य में मसनवी, गजल, कसीदा, मर्सिया (शोकगीत),रेख्ता, नज्म आदि प्रमुख विधाएं दृष्टिगत होती हैं। चौदहवीं शताब्दी मे उर्दू के प्रारम्भिक कवियों में शेख गुंजुल इल्म, ख्बाजा वंदा नवाज, मुकिनी, अहमद आदि प्रमुख थे। सत्रहवीं सदी में मुल्ला वज्ही उर्दू के प्रसिद्व मसनवी रचानकार हुए। इसके पश्चात् गजलों का युग आया। जिसके प्रारम्भिक रचयिताओं में अमीर खुसरो , हाशमी, कुतुबशाह,सरोज आदि उल्लेखनीय हैं। परन्तु वली सर्वप्रसिद्व हुए। उन्हें ''बाबा-ए-रेख्ता'' (रेख्ता का पितामह) कहा गया है।

18 वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध उर्दू का स्वर्ण युग था। 18वीं सदी और 19 वीं सदी के प्रारम्भ में उर्दू शायरी नवाबों व अमीरों की जीहजूरी में लीन हो गई।

2.3.2 खड़ी बोली

खड़ी बोली हिन्दी का उद्धव शौरसेनी अप्रभंश से हुआ। परन्तु उसे पश्चिमी हिन्दी एवं पूर्वी हिन्दी की 8 बोलियों का प्रतिनिधि मानने पर उसका उद्धव शौरसेनी तथा अर्धमागधी अपभंश से हुआ माना जाता है। इसका उद्धव काल लगभग 1000 ई0 माना जाता है। प्राचीन हिन्दी या प्रारम्भिक हिन्दी को परिनिष्ठित अप्रभंश से अलग करने के लिए 'अवहट्ट' नाम दिया गया।

खड़ी बोली के प्रथम उत्थान का आरम्भ श्रीधर पाठक की रचनाओं से तथा द्वितीय उत्थान का पं0 महावीर प्रसाद द्विवेदी तथा मैथिलीशरण गुप्त की रचनाओं से हुआ।आधुनिक काल में हिन्दी में दो नवीन प्रवृत्तियां दिखाई पड़ती हैं। एक ओर खड़ी बोली में गद्य रचना आरम्भ हुई और दूसरी ओर ब्रज तथा अवधी से हटकर खड़ी बोली में काव्य रचना होने लगी। प्रताप नारायण मिश्र, बद्रीनारायण उपाध्याय, प्रेमधनजी,पं0 अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', वियोगी हरि आदि इस काल के प्रसिद्ध कवि हुए। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी को नवीन आयाम प्रदान किया।

2.3.3 गोद प्रथा

भारत में प्रारंभ से ही गोद प्रथा का प्रचलन मिलता है। भारत में अंग्रेजी राज्य के समय इस नीति पर अंकुश लगाया गया।लार्ड डलहौजी की साम्राज्यवाद से प्रेरित नीति, जिसके अन्तर्गत पुत्रहीन शासकों के लिए सन्तान गोद लेने से पूर्व कम्पनी की स्वीकृति आवश्यक कर दी गई। इस पर भारत के इतिहास में बहुत चर्चा हुई है। इस के अन्तर्गत सतारा (1848) लार्ड डलहौजी ने ले लिया और उसके पश्चात गोद प्रथा के रीति- रिवाजों पर रोक लगा कर , हड़प का सिद्धांत के अन्तर्गत सतारा, नागपुर, झांसी इत्यादि ब्रिटिश राज्य के अंतर्गत सम्मिलित कर लिए गये।

2.3.4 दास

दासप्रथा एक प्राचीन प्रथा रही है, इतिहास में इसका विवरण मिलता है। इसका उल्लेख मेगस्थनीज के लेख में भी मिलता है। लेकिन भारत में दासों का इतिहास तुर्कों के आगमन से मिलता है।

भारत में सर्वप्रथम जिस सल्तनत की स्थापना हुई उसे दास वंश कहा गया है। इसे यामिनी या इलबरी भी कहा जाता था। यामिनी या इलबरी,तुर्कों की खास प्रजाति थी, जिससे पूर्व मध्यकालीन सुल्तान जुड़े थे,जबकि दास सुल्तान उन्हें कहते थे जिन्होंने अपनी योग्यता से शासक पद हासिल किया था।

ऐबक से लेकर फिरोज शाह तुगलक तक इन की संख्या बढती गई लेकिन फिरोज तुगलक के शासन काल में दासों की संख्या 1,80,000 तक पहुंच गई । अकबर दासों को माल कहकर पुकारा करता था।

मुगल काल में भी इनकी व्यवस्था में कोई परिवर्तन नहीं आया। अकबर ने 1562 में दास प्रथा को बन्द करवा दिया था लेकिन बाद के शासकों के समय यह प्रथा पुनः जारी रही।आधुनिक काल तक दासों का प्रचलन रहा लेकिन भारत में लॉर्ड एलिनबरॉ के काल में 1843 में इस प्रथा को सदैव के लिए समाप्त कर दिया गया।

2.3.5 सती

सती का विवरण ऋग्वेदिक काल से मिलता है। प्राचीन भारत में यह प्रथा प्रचलन में थी । सुल्तानों के शासनकाल में भी यह प्रथा प्रचलित रही थी लेकिन इसको रोकने की मुहम्मद तुगलक के अतिरिक्त किसी ने कोशिश नहीं की।

हिन्दुओं में सती प्रथा का प्रचलन था। पति की मृत्यु के बाद स्त्री अपने पति की चिता के साथ अपने को जला देती थी। यह कई प्रकार का होता था। सहभरण, अनुसरण, सहगमन तथा अनुगमन। इब्नबतूता के अनुसार धर्म के आधार पर ब्राहमण सती के लिए प्रोत्साहित करता था डा0 अशरफ के अनुसार हिन्दु समाज में विधवाओं की उपेक्षा के कारण स्त्रियां पति की मृत्यु के बाद सती हो कर अपने शरीर का त्याग कर देती थीं।

अबुल फजल के अनुसार सती होने के लिए उनके परिवार वाले बाध्य करते थे। कुछ लोक लज्जा के कारण जल कर भस्म होना चाहती थीं। अधिकांश रीति- रिवाज के कारण सती होना स्वीकार करती थीं।

इब्नबतूता के अनुसार सती होने से पूर्व सरकार की अनुमति प्राप्त करना अनिवार्य था। हूमायूं तथा अकबर ने सती प्रथा पर प्रतिबन्ध लगा दिया था।

19 वीं शताब्दी में राजा राममोहन राय तथा अन्य समाज सुधारकों के अथक प्रयास के परिणामस्वरूप यह कुप्रथा समाप्त हो गई।

सती होने वाली स्त्रियों के सम्मान में पाषाण स्मारक लगाये जाते थे जिन्हें सती मन्दिर भी कहा जाता था। बदायूं में तो ये स्मारक आसानी से देखे जा सकते थे। इल्तुतमिश ने भी इस पर प्रतिबन्ध लगाने का अथक प्रयास किया परन्तु असफल रहा। इस प्राचीन व्यवस्था को अंग्रेजों के शासनकाल में 1829 में अधिनियम के अनुसार समाप्त करके रोक लगा दी गई।

2.3.6 लोक - शास्त्रीय विधाऐं

मध्यकाल में अनेक लोक-शास्त्रीय विधाओं का विकास हुआ जो आज भारतीय कलाओं में प्रमुख स्थान रखती हैं, इनका संक्षिप्त विवरण अग्रांकित है-

2.3.6.1 ठुमरी

ठुमरी गायन का प्रचार लखनऊ में वाजिद अली शाह के समय हुआ। वाजिद अली शाह ने स्वयं अख्तर पिया के नाम से अनेक ठुमरियां रची हैं। अन्य रचनायें इस क्षेत्र में कदरपिया, सकनपिया, ललनापिया, चांदपिया, फजल हुसैन आदि के नामों से हुई है। लखनऊ के वाजिद अली

शाह के बाद ठुमरी का प्रचार मौजुद्दीन खां ,मैमा गनपत राव, बिन्दादीन महाराज आदि द्वारा हुआ। ठुमरी की प्रमुख भूमिकाओं में जयपुर की गोरखी बाई, लखनऊ की पीरबाई , कलकत्ते की मोहरजान आदि खूब प्रसिद्व हुंइं। मियां मौजुद्दीन खां ठुमरी के शहंशाह कहलाते थे।

उत्तर में मुख्यतः ठुमरी गायन की दो शैलियां प्रचलित हैं।

1 पूरब की ठुमरी 2. पंजाबी ठुमरी

लखनऊ तथा बनारसी शैलियों के अन्तर्गत छोटी-छोटी मुरकियां, धीमी लय, बोल-तान तथा बोल अलापी की विशेषतायें हैं। लखनऊ की ठुमरियों में अधिकतर शायरी और गजलों का आनन्द अधिक आता है। आधुनिक समय में पूर्वी अंग की ठुमरियों के लिए काशी की रसूलन बाई तथा लखनऊ(फैजाबाद) की बेगम अख्तर, अख्तरी बाई अधिक प्रसिद्व हैं।

पंजाबी ठुमरियों पर ठप्पा अंग का विशेष प्रभाव पडा है। साथ ही पंजाबी लोक गीतों का प्रभाव भी इन ठुमरियों में दिखलाई पडता है। स्वर का लगाव, सुन्दर मुरकियों का प्रयोग तथा टप्पा गायन की पेंचदार तानों का कलात्मक प्रयोग, इन गायन की विशेषतायें हैं। इन भाग के प्रमुख गायक बडे गुलाम अली खां, आशिक अली खां इत्यादि।

इन दो घरानों के अतिरिक्त ठुमरी के अन्य प्रसिद्व गायक हुए हैं , जो ख्याल गायन के विभिन्न घरानों से सम्बन्ध रखते हैं। सबसे प्रमुख घराना किराना घराने के स्व0 अब्दुल करीम खां थे जिनकी ठुमरियों ने लोगों का मन मोह लिया था। खां साहब के ठुमरी गाने का ढंग निराला था, अति मधुर था। इनकी शैली को अपनाने वाले कलाकार हीराबाई बडोदकर, सरस्वती राने, बहरे बुआ इत्यादि प्रमुख हैं।

आगरा घराने के ख्याल-गायक सुप्रसिद्व फैय्याज खां साहब भी ठुमरियां गाते थे, परन्तु ख्याल-गायक होने के कारण उनका इस क्षेत्र में कोई विशेष स्थान नहीं था।

2.3.6.2 कत्थक

कत्थक शब्द कथा से निकला है। कत्थक नृत्य की उत्पत्ति उत्तर भारत के मन्दिरों के पुजारियों द्वारा महाकाव्यों की कथा बांचते समय स्वांग और हाव-भाव प्रदर्शन के फलस्वरूप विकसित होता गया। 15वीं और 16वीं शताब्दी में राधा-कृष्ण उपाख्यानों या रासलीला की लोकप्रियता से कथक का और विकास हुआ। मुगल शासकों के काल में यह मन्दिरों से निकलकर राज-दरबारों में पहुंचा। जयपुर, बनारस, राजगढ़ तथा लखनऊ इसके मुख्य केन्द्र थे। लखनऊ के

नवाब वाजिद अली शाह के काल में कत्थक अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच गया। बीसवीं सदी में लीला सोखे (मेनका) के प्रयासों से यह और अधिक लोकप्रिय हुआ।

यह अत्यन्त नियमबद्व एवं शुद्ध शास्त्रीय नृत्य शैली है। जिसमें पूरा ध्यान लय पर दिया जाता है। नृत्य के आधार पर लयों की अवस्थाओं को तत्कार, पलटा ,तोड़ा, परन तथा आमद के नाम से जाना जाता है। इस नृत्य शैली में पैरों की थिरकन पर विशेष ध्यान दिया जाता है। इस नृत्य में घुटने नहीं मुड़ते।

इसके कलाकरों में प्रमुख हैं- बिन्दादीन महाराज, बिरजू महाराज, सुखेदव महाराज, नारायण प्रसाद, देवी , गोपीकृष्ण, शोभना नारायण, मालविका सरकार, भारती गुप्ता, दयमंती जोशी, चन्द्र लेखा आदि।

2.3.6.3 गजल

प्रायः प्रेम को मुख्य विषय-वस्तु मानकर उर्दू रचनाओं को गाने की यह एक मधुर शैली है। इन रचनाओं में 5-13 शेर होते हैं। जो एक दूसरे से स्वतंत्र होते हैं। कुछ विद्वान गजलों का जनक मिर्जा गालिब को मानते हैं। गजल रचनाकारों में गालिब के अलावा जफर, शाहिर लुधियानवी, कैफी आजमी आदि प्रसिद्ध हैं। जबकि इसके गायकों में मेंहदी हसन, गुलाम अली, जगजीत सिंह, बेगम अख्तर आदि उल्लेखनीय हैं।ये एक लोकप्रिय विधा है।

2.3.6.4 ख्याल

ख्याल एक स्वर-प्रधान गायक शैली है जो वर्तमान समय में हिन्दुस्तानी संगीत की सर्वाधिक लोकप्रिय गायन शैली है। 15वीं सदी के उत्तरार्द्ध में जौनपुर के सुल्तान शाह शर्की को ख्याल का अविष्कारक माना जाता है, परन्तु कुछ विद्वान इसका श्रेय अमीर खुसरों को देते हैं। मध्यकाल में ख्याल लोक संगीत के अन्तर्गत गाया जाता था। इसे शास्त्रीय स्वरूप प्रदान करने का श्रेय 18वीं सदी में सदानंद नियामत खॅा को दिया जाता है। ब्रजभाषा, राजस्थानी, पंजाबी ,हिन्दी भाषाओं में गाये जाने वाले ख्याल की विषय-वस्तु, राजस्तुति, नायिका वर्णन, श्रृंगार रस सम्बन्धी परिस्थितियों तथा विवाह प्रसंग आदि होते हैं।

ख्याल गाने से पूर्व अलाप नहीं लिया जाता । प्रारम्भ में इसमें तान का प्रयोग नहीं होता था, परन्तु अब इसका प्रयोग होने लगा है। अब तो सरगम का भी प्रयोग होने लगा है। ख्याल के दो खण्ड होते हैं, स्थायी और अन्तरा। स्थायी में शब्द अपेक्षाकृत बहुत कम रखे जाते हैं, इसमें खटके, मुरली आदि लघु अलंकरणों का प्रयोग सामान्य रूप से किया जाता है। ख्याल गायकों में सदारंग, अदारंग,

मनरंग, मुहम्मद शाह रंगीले, कुमार गंधर्व आदि प्रमुख हैं। ख्याल गायन की चार प्रमुख शैलियां हैं, जिन्हें घराना कहा जाता है।

1 ग्वालियर घराना, जो ख्याल गायकी का जन्मदाता है। इस शैली या घराने में ध्रुपद की बोल बांट की सभी विशेषतायें प्रचलित हैं

2 किराना घराना जो अलाप प्रधान बोल तान कम और ताल की अपेक्षा गीत के प्रति विशेष लगाव न होना तथा सिर्फ मुखड़ा पकड़कर ही गा लेना आदि विशेषताएं दर्शाता है।

3 पटियाला घराना, जिसमें ठुमरी अंग की प्रधानता , स्वर की सत्यता, तानों की सफाई और तैय्यारी आदि विशेषताएं दृष्टिगत होती हैं।

4 आगरा घराना , जिसमें रंगीलापन, धुपद के समान ही बंदिश के नोम् तोम अलाप तथा लयकारी की प्रधानता आदि गुण दिखाई पड़ते हैं।

2.3.6.5 कब्वाली

यह भी उर्दू शायरी की संगीतमय अभिव्यक्ति की एक लोकप्रिय शैली है। प्रायः सूफी संतों द्वारा सामूहिक रूप से या एकल रूप से ईश्वर की आराधना हेतु यह गायी जाती थी। आज इनकी विषय वस्तु में अन्य सांसारिक तत्व भी शामिल हो गय हैं। भारत में तुर्कों के आगमन के पश्चात कब्वाली का प्रारंभ मिलता है।हजरत शेख निजाम उद्दीन औलिया कब्वाली में अत्यन्त रूचि लेते थे। इनके खिदमती अमीर खुसरो अपने शेख को प्रसन्न करने के लिए कब्वाली की महफिल सजाते थे और अपने शेख को ईश्वर की तपस्या में विलीन करते थे।

2.3.6.6 तराना

यह एक कर्कश प्राकृतिक राग है। इसमें अर्थहीन शब्दों की रचना होती है। कुछ संगीत विद्वानों का विचार है कि यह राग अरबी एवं फारसी का ही एक खण्ड है, जबकि कुछ संगीतज्ञों का मत है कि यह तबला और सितार के आघात से उत्पन्न हुआ है। जो भी हो इसमें श्रोता में उल्लास की उत्तेजना उत्पन्न होती है। इस शैली का श्रीगणेश अमीर खुसरो ने किया। अलामा इकबाल का तराना बहुत प्रसिद्व है- सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा।

2.3.7 सिलसिला

भारतीय परिप्रेक्ष्य में सूफीमत का विकास मुस्लिम शासन की स्थापना के साथ होता हैं। थोडे ही समय में सिलसिला तथा खानखाह का विस्तार मुल्तान से लखनौती तथा पंजाब से देवगिरी तक हो गया।

आइने-अकबरी में अबुल-फजल ने चौदह प्रकार के सूफी-सिलसिलों का उल्लेख किया है। इनमें चिश्ती, सुहरावर्दी और कादरी सिलसिला प्रमुख हैं।

2.3.7.1 अन्य सिलसिले

1. 15वीं शताब्दी में भारत में शेख अब्दुल्ला शत्तारी ने शत्तारी सिलसिला की स्थापना की

2. कलन्दरी सम्प्रदाय में घुमन्तु फकीर शामिल थे ।ये निन्दनीय थे, क्योंकि सामाजिक व्यवहारों का पालन नहीं किया करते थे।

3. 15वीं-16वीं शताब्दी में कश्मीर में सूफीमत का ऋषि सम्प्रदाय स्थापित हुआ?

4. शेख नुरूद्दीन बली (मृ0 1430) द्वारा स्थापित ऋषि सम्प्रदाय मूलतः स्वदेशी था।

5. ऋषि सम्प्रदाय कश्मीर के ग्रामीण परिवेश में फला-फूला।

6. ऋषि सम्प्रदाय की लोकप्रियता का कारण उसका ग्रामीण परिवेश था।

2.3.8 दोआब

गंगा और यमुना के बीच के क्षेत्र को दोआब कहते हैं। भारत के इतिहास में प्राचीन काल से आधुनिक काल तक प्रत्येक शासक की निगाहें इस क्षेत्र पर गई। क्योंकि यह उपजाऊ क्षेत्र था। यहां कृषि का उत्पादन अधिकतम रहा है और प्रत्येक शासक ने अपने राज्य की आर्थिक व्यवस्था ठोस करने के लिए अनेक प्रकार के नियम कृषकों के लिए बनाये ताकि कृषि का उत्पादन अधिक हो एवं अधिक लोगों को लाभ हो।

2.3.9 बुतपरस्त

मनुष्य के द्वारा भगवान की कल्पनाओं को पत्थर के सांचे मे ढालकर मूर्ति का निर्माण करना और उसे साकार मानकर उसकी पूजा अर्चना करना बुतपरस्ती कहलाता है।

तुर्को के भारत आगमन के पश्चात् जब उन्होंने भारत में इस तरह की बुत को पूजने के भिन्न-भिन्न तरीके देखे तो उसे उन्होने बुतपरस्ती की संज्ञा देना आरम्भ कर दिया।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्नांकित पर चर्चा कीजिए-
1- उर्दू
2- ठुमरी

3- सती

4- कथक

5- ख्याल

6- सिलसिला

2.7 सारशं

उपरोक्त विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत आपको सल्तनत एवं मुगल कालीन भारत में प्रचलित अनेक विचार,संकल्पनाओं एवं शब्दावली की जानकारी दी गयी। अब आप इक्ता, खिलाफत, इनाम, वतन, अमरम, जजिया, जकात, खम्स, खराज,मदद-ए-माश,हरम, परगना, तुर्कान-ए-चहलगानी, जिम्मी, शरियत, परदा, उलेमा, खिदमती, शहना ए-मंडी के बारे में पर्याप्त जानकारी रखते हैं और मध्यकालीन भारत के इतिहास को भली प्रकार समझ सकते हैं।

2.8 तकनीकी शब्दावली

यह इकाई मूलतः संकल्पना, विचार तथा शब्दावली से संबंधित है,आपको इस इकाई में सल्तनत काल एवं मुगल काल में प्रचलित शब्दावली से परिचित कराया गया,अब आप इस इकाई में प्रयुक्त शब्दावली से परिचित हो गये होंगे।

2.8 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

इकाई 2.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 1के उत्तर के लिए देखिए इकाई 2.3.1

इकाई 2.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 2के उत्तर के लिए देखिए इकाई 2.3.6.1

इकाई 2.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 3के उत्तर के लिए देखिए इकाई 2.3.5

इकाई 2.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 4के उत्तर के लिए देखिए इकाई 2.3.6.2

इकाई 2.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 5के उत्तर के लिए देखिए इकाई 2.3.6.4

इकाई 2.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 6के उत्तर के लिए देखिए इकाई 2.3.7; 2.3.7.1

2.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भारत का इतिहास- आर्शीवादी लाल श्रीवास्तव

2. मध्यकालीन भारत, सल्तनत से मुगलों तक- सतीश चन्द्रा जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

3. मध्यकालीन भारत, 8 वीं से 18 वीं शताब्दी तक एक सर्वेक्षण इम्त्याज अहमद नेशनल पब्लिकेशन, खजांची रोड, पटना।

4. मध्ययुगीन भारतीय समाज एवं संस्कृति, डा0 कन्हैया लाल श्रीवास्तव एवं झारखण्ड चौबे।

5. टी0पी0,ह्राम्स, डिक्शनरी ऑफ इस्लाम

2– **MEDIEVAL INDIA** - Cultorweb.com

www.cultorweb.com/eBooks/.../Hist%20Dict%20**Medieval_India**.pdf

3– books.google.co.in/books?isbn=8120812506**...**

2.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1-टी0पी0,ह्राम्स, डिक्शनरी ऑफ इस्लाम

2– **MEDIEVAL INDIA** - Cultorweb.com

www.cultorweb.com/eBooks/.../Hist%20Dict%20**Medieval_India**.pdf

3– books.google.co.in/books?isbn=8120812506**...**

4- ब्लाकमैन: आइने अकबरी, द्वितीय संस्करण

5- जे0एन0सरकारः हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब, जिल्द-3

6- अवध बिहारी पाण्डेय: दि फर्स्ट अफगान एम्पायर इन इण्डिया, कलकत्ता, 1956

7- जे0एल0 मेहता: मध्यकालीन इतिहास, खण्ड-III

8- सतीश चन्द्र: मध्यकालीन इतिहास

6- एस0आर0शर्मा: मध्यकालीन भारत

2.12 निबंधात्मक प्रश्न

1- मध्यकालीन भारत में प्रचलित संगीत गायन पर चर्चा कीजिए।

इकाई तीन- मनसब, मुगल, तुर्क, मंगोल, मेहराब, गुम्बद , दस्तूर, खालसा-भूमी , काजी, सुलहकुल, इबादत्खाना , दहसाला प्रणाली , सयूरघाल

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3.0 संकल्पनाऐं, विचार तथा शब्दावली

3.3.1 मनसब

3.3.1.1 मनसब प्राप्त करने वाले मनसबदार की श्रेणी

3.3.2 मुगल

3.3.3 तुर्क

3.3.4 मंगोल

3.3.5 मेहराब

3.3.6 गुम्बद

3.3.7 दस्तूर

3.3.8 खालसा

3.3.9 काजी

3.3.10 सुलह-कुल

3.3.11 इबादतखाना (पूजा-गृह)

3.3.12 दहसाला प्रणाली

3.3.13 सयूरघाल

3.4 साराशं

3.5 तकनीकी शब्दावली

3.6 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

3.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

3.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

3.9 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

भारत में मुस्लिम शासन की स्थापना के उपरांत भारत और विशेषकर उत्तर भारत में शासन व्यवस्था,एवं संस्कृति के क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन हुए। भारत में आज जो समन्वित संस्कृति मिलती है उसकी शुरूआत इसी काल में हुई। मुगलकाल में समन्वित संस्कृति की अनेक श्रेष्ठ परंपराओं की स्थापना हुयी, सूफी और उनके अनुनायियों तथा भक्तिकालीन संतों ने दो भिन्न-भिन्न धर्मों एवं संस्कृतियों के लोगों को निकट लाने और साथ-साथ रहने के लिए तैयार करने में अहम् भूमिका निभायी थीं।

सल्तनत काल में शासक वर्ग ने मध्य एशिया,ईरान एवं अरब जगत की अनेक परंपराओं, विचारों एवं रीतियों को भारत में प्रचलित किया। इसके परिणामस्वरूप भारत में अनेक नवीन बातों का प्रचलन प्रारंभ हुआ और समाज व्यवस्था में भी परिवर्तन हुए।

मध्यकालीन इतिहास के अध्ययन के लिए मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न संकल्पनाओं ,विचार एवं शब्दावली से परिचित होना नितांत आवश्यक है, इसके अभाव में इस काल के इतिहास को भली प्रकार से समझ पाना कठिन है। इस तथ्य को ध्यान में रखकर आपको सल्तनत एवं मुगल काल में प्रयोग की गयी अनेक संकल्पनाओं ,विचार एवं शब्दावली का विवरण दिया जा रहा है। इन तथ्यों का अध्ययन कर आप मध्यकालीन इतिहास का भली प्रकार अध्ययन कर पायेंगे और इस काल की जानकारी को ठीक तरह से समझ पायेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई्र का उद्देश्य मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न संकल्पनाओं ,विचार एवं शब्दावली के ज्ञान का परिचय देना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1- मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न संकल्पनाओं

2- मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न विचार

3- मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न शब्दावली

3.3.0 संकल्पनाऐं, विचार तथा शब्दावली

इस इकाई में आपको विभिन्न संकल्पनाओं, विचार तथा शब्दावली का परिचय विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत दिया जा रहा है-

3.3.1 मनसब

अरबी भाषा के शब्द मनसब का शाब्दिक अर्थ है पद अथवा श्रेणी। मनसबदारी व्यवस्था की उत्पत्ति मध्य एशिया से मानी जाती है, जिसे सर्वप्रथम बाबर द्वारा उत्तर भारत में लाया गया परन्तु इस व्यवस्था को संस्थागत रूप देने का पूरा श्रेय अकबर को दिया जाता है। अकबर की मनसबदारी व्यवस्था मंगोल नेता चंगेज खां की दशमलवी प्रणाली पर आधारित थी। इस व्यवस्था के अन्तर्गत इन व्यक्तियों को एक पद मिलता था जो शाही सेवा में होते थे। काजी और सद्र के अतिरिक्त सभी उच्चाधिकारियों को सैन्य कार्यवाही में हिस्सा लेना होता था।

मनसब प्रदान किये जाने का प्रथम उल्लेख अकबर के शासन काल के ग्यारहवें वर्ष में मिलता है। 1593 तक केवल जात का प्रयोग किया जाता था , किन्तु 1594 में जात के साथ सवार का पद भी जुड़ गया। जात का अर्थ सैनिक पद से है तथा सवार का अर्थ घुड़सवारों की संख्या से , जो मनसबदार को रखने पड़ते थे। मनसबदार का यह पद तीन श्रेणियों में विभाजित था। प्रथम श्रेणी में मनसबदार को अपने जात पद के बराबर ही सैनिकों की व्यवस्था करनी पडती थी। जैसे 5000/5000 जात तथा सवार, दूसरी श्रेणी में मनसबदार को अपने जात पद से कुछ कम या आधे घुड़सवार सैनिकों की व्यवस्था करनी पड़ती थी, जैसे 5000/3000 जात और सवार तीसरी श्रेणी में मनसबदारों को अपने जात पद से आधे से भी कम घुडसवारों सैनिको की व्यवस्था करनी होती थी; जैसे 5000/2000 जात और सवार।

मुगलकालीन सैन्य व्यवस्था का आधार मनसबदारी व्यवस्था थी। सैनिक अधिकारी मनसबदार कहलाते थे। सबसे छोटा मनसब 10 और सबसे बडा 10 हजार का होता था। 5 हजार से अधिक का मनसब राजकुमार को ही मिलता था। किन्तु बाद में राजा मान सिंह को 7 हजार का मनसब मिला। मनसबदार स्वयं अपनी सेना की भर्ती किया करते थे। साधारणतः ये अपनी जाति के सैनिक भर्ती करते थे। मनसबदार के घोड़ों को दागा जाता था। प्रत्येक घोडे के दायें पुट्ठे पर सरकारी निशान तथा बाएं पुट्ठे पर मनसबदार का निशान लगाया जाता था। मनसबदारों को शाही खजाने से वेतन दिया जाता था।

1 मनसबदारों में बहुत से विदेशी , तुर्क , ईरानी , अफगानी और भारतीय राजदूत थे।

2 सवार इस बात का द्योतक था कि मनसबदार के अधीन एक निश्चित संख्या में घुड़सवार हैं।

3 मनसबदारी व्यवस्था में तीन श्रेणियॉ थी- प्रथम, द्वितीय, तृतीय।

4 एक मनसबदार प्रथम श्रेणी में तभी आ सकता था जब उसका सवार और जात दर्जा एक समान होता था; यथा- (5000 जात और 5000 सवार)

5 यदि उसका सवार का दर्जा जात से कम होता था, किन्तु आधे से कम नहीं, तब वह द्वितीय श्रेणी का मनसबदार होता था।

6.यदि उसका सवार का दर्जा ,जात दर्जे के आधे से कम होता था या सवार दर्जा बिलकुल नहीं होता था तब वह तृतीय श्रेणी का मनसबदार होता था।

3.3.1.1 मनसब प्राप्त करने वाले मनसबदार की श्रेणी

10 से 500 मनसबदार केवल मनसबदार कहलाते थे।

500 से 2500 मनसबदार ,अमीर कहलाते थे।

2500से अधिक के मनसबदार अमीर-ए-उम्दा अथवा अमीर-ए-आजम कहलाते थे।

मनसबदार को वेतन नकद व जागीर दोनों में दिया जाता था। मनसबदारों की मृत्यु के बाद उनकी सम्पत्ति जब्त कर ली जाती थी। इन्हें प्राप्त जागीरें एक स्थान से दूसरे स्थान को स्थानान्नरित की जाती थीं। कुछ बढ़े पदाधिकारियों को स्थायी जागीरें भी दी गयीं थी ,जिन्हें वतन जागीर कहते थे। वह वर्ग जो सरकारी विभागों में कार्यरत था परन्तु मनसबदार नहीं था, उसे रोजिनदार कहा जाता था। इन्हें दैनिक वेतन दिया जाता था। अकबर के समय में 1595 के लगभग कुल 1803 मनसबदार थे जो औंरगजेब के समय में 14449 तक पहुंच गये।

3.3.2 मुगल

मुगल दो महान शासक वंशों के वंशज थे। माता की ओर से वे चीन और मध्य एशिया के मंगोल शासक चंगेज खान (जिसकी मृत्यु 1227 में हुई) के उत्तराधिकारी थे। पिता की ओर से वे ईरान, इराक एवं वर्तमान तुर्की के शासक तैमूर (जिसकी मृत्यु 1404 में हुई) के वंशज थे। परन्तु मुगल अपने को मुगल या मंगोल कहलवाना पसन्द नहीं करते थे। ऐसा इसलिए था क्योंकि चंगेज खान से जुड़ी स्मृतियां सैकड़ों व्यक्तियों के नरसंहार से सम्बन्धित थीं। यही स्मृतियां मुगलों के प्रतियोगियों उजबेगों से भी सम्बन्धित थीं। दूसरी तरफ मुगल तैमूर के वंशज होने पर गर्व का अनुभव करते थे , इसलिए क्योंकि उनके इस महान पूर्वज ने 1398 में दिल्ली पर कब्जा कर लिया था।

मध्यकालीन भारत के इतिहास में मुगल शब्द उस जाति से सम्बन्धित है जिनका अपना एक नवीन इतिहास है। chingez khan (चंगेज खान) प्रसिद्व मंगोल (विश्व आक्रमण) के द्वितीय पुत्र (चकताई) तुर्को से जो शाखा आगे बढी उन्हें इतिहास में मुगल के नाम से जाना जाता है। भारत में 1526 से मुगलों का इतिहास प्रारम्भ होता है। बाबर के पिता चगताई थे और माता का चंगेज खान के परिवार से सम्बन्ध था।

3.3.3 तुर्क

तुर्क लोग विशाल हूण जाति की एक शाखा थे जो मध्य एशिया के भारतीय उपनिवेशों के सम्पर्क में आने के कारण उन्होंने बौद्व धर्म को स्वीकार कर लिया था। नवीं सदी के उत्तरार्द्ध में अरबों के साम्राज्य पर तुर्कों के आक्रमण शुरू हो गये और कुछ समय में ही ईरान और मेसोपोटामिया के प्रदेशों को जीत लिया गया।

तुर्कों ने ईरान और मैसोपोटामियां के मुसलमानों के सम्पर्क में आकर इस्लाम को स्वीकार कर लिया। अरब साम्राज्य का विनाश कर तुर्कों ने अपने तीन मुख्य राज्य कायम किये थे। इनमें से एक राज्य गजनी था।

भारतीय इतिहास के साथ गजनी के तुर्क राज्य का घनिष्ठ सम्बन्ध रहा। इसका संस्थापक सबुक्तगीन था। दसवीं सदी के मध्य भाग में उसने गजनी में अपने राज्य की नींव डाली और फिर पूर्व की ओर अपनी शक्ति का विस्तार शुरू किया।

3.3.4 मंगोल

मंगोल चीन के उत्तरी प्रदेशों के निवासी थे। चंगेज खां जाति से मंगोल था। उन्हीं के नाम से यह प्रदेश मंगोलिया कहलाता है। इनका मुख्य व्यवसाय शिकार और पशुपालन थे। उनकी कोई बस्तियां व नगर नहीं होती थीं। वे डेरों में निवास करते थे, और घोड़ों के दूध व मांस से अपना भरण-पोषण करते थे।

मंगोलो में संगठन का अभाव था। वे अनेक कबीलों में विभक्त थे। जो बहुधा आपस मे लडते रहते थे। बारहवीं सदी के अन्तिम काल में चंगेज खां का उदय नेता के रूप में हुआ। मंगोल लोगों में खान, खां, या का-हान शब्द सम्मान सूचक था। बाद में अन्य अनेक जातियों ने इस शब्द को अपना लिया। चंगेज के साथ खां तथा खान लगा होने से उसे मुसलमान नहीं समझना चाहिए। वह इस्लाम का अनुयायी नहीं था अपितु मंगोलों के पुराने धर्म का अनुयायी था, जिसमें विविध देवी-देवताओं की पूजा को प्रमुख स्थान प्राप्त था। मंगोलो का भारत में पहला आक्रमण 1296 में

हुआ था। जफर खां ने विद्रोहियों को परास्त किया। 1297 में सलदी के नेतृत्व में मंगोलों ने दूसरा आक्रमण किया। पुनः जफर खां ने उन्हें परास्त किया।

1299 ई0 के अन्त में दवा खां ने अपने पुत्र कुतलुग ख्वाजा के नेतृत्व में सेना भेजी। अलाउद्दीन अपनी सेना लेकर कीली के मैदान में पहुंच गया। स्वयं सुल्तान और नुसरत खां सेना के मध्य में उलुग खां वामपक्ष पर और जफर खां दाहिने पक्ष पर था। जफर खां के आक्रमण से मंगोलो का वामपथ टूट गया और वे भाग खडे हुए।मंगोलो का चौथा आक्रमण उस समय हुआ जबकि 1303 में अलाउद्दीन खिलजी चित्तौड़ से वापस लौटकर दिल्ली पहुंचा ही था।1305 ई0 में अलीबेग और तार्ताक के नेतृत्व में मंगोलो ने आक्रमण किया। मलिक काफूर और गाजी मलिक ने मंगोलों को परास्त किया।1306 में मंगोलों ने फिर आक्रमण किया। मलिक कपूर ने सबको परास्त किया । मंगोल भाग गये।

अलाउद्दीन के समय मंगोलो ने सर्वाधिक आक्रमण किये। लेकिन अलाउद्दीन ने कठोर कदम उठाये और विशाल सेना का प्रबन्ध किया। उसके पश्चात मंगोल का भारत पर आक्रमण समाप्त हो गये।

3.3.5 मेहराब

मेहराब की कला भारत में पहली मस्जिद, कुव्वत-उल-इस्लाम जो कुतुब मीनार के समीप है, उसमें देखने को मिलती है। यह तकनीक-कला मध्य एशिया से भारत में तुर्क ले कर आये। मुगलकालीन स्थापत्य कला में मेहराबों का प्रयोग किया गया है। सल्तनत एवं मुगलकालीन अनेक इमारतों में मेहराब का प्रयोग मिलता है।

3.3.6 गुम्बद

गुम्बद की कला भी तुर्को के आगमन के पश्चात भारत में देखने को मिलती है। गुम्बद इमारत के केन्द्र में चाहे वह मस्जिद हो या मजार ठीक उसके ऊपर बनाया जाता है। भारत में प्रथम गुम्बद हुशंग शाह के मकबरे में देखने को मिलता है जिसका निर्माण महमूद खिलजी ने सम्पूर्ण किया। विश्व में सबसे विशाल गुंबद आदिल शाह के मकबरे बीजापुर में देखने को मिलता है। गुंबद एक चौकोर संरचना के ऊपर बना उत्तल छत भवन में अष्टकोणीय या वृत्ताकार स्थान होता है।

3.3.7 दस्तूर

राजस्व निर्धारक राजस्व मंत्रालय द्वारा 1574-81 में मालगुजारी और मूल्य को जोडकर उसमे 10 का भाग देकर औसत निकाल लिया जाता था और इसी औसत के आधार पर राज्य की सालना नकद माल गुजारी निश्चित कर दी जाती थी जिसे दस्तूर कहते थे। ये प्रथा अकबर के

शासनकाल में टोडरमल द्वारा दहसाला प्रणाली के अन्तर्गत लागू की गई थी। अकबर के शासनकाल में राजस्व निर्धारण की दरों की सूची निर्मित की गयी थी।विभिन्न क्षेत्रों को उनकी उत्पादकता और मूल्यों के आधार पर राजस्व की दृष्टि से दस्तूर प्रखण्डों अर्थात् राजस्व क्षेत्रों में विभक्त किया गया था।प्रत्येक दस्तूर में ही फसल का प्रति बीघा कर निर्धारण नकद धन के रूप में होता था।जाब्ती में प्रत्येक फसल के लिए दस्तूर-उल-अमल या दस्तूर के नाम से जाता जाने वाला नकद राजस्व निर्धारित किया जाता था। जाब्ती व्यवस्था में निर्धारित दस्तूर के कारण पदाधिकारी अपनी मनमानी नहीं कर पाते थे। स्थायी दस्तूर के बाद भू-राजस्व की मांग की अनिश्चितता और उतार-चढ़ाव में बहुत कमी आ गई थी।

3.3.8 खालसा

खालसा भूमि ऐसी भूमि थी जिसके भू-भाग का प्रबन्ध केन्द्र सरकार द्वारा किया जाता था। इसका लगान सीधे राजकोष में जमा होता था। खालसा भूमि को प्रशासन में भाग लेने वाले उच्च पदाधिकारियो को भी प्रदान किया जाता था इस भूमि पर उपज का 1/2 भाग लगान लिया जाता था।

वह भूमि जो व्यक्तियों को दान के रूप में दी जाती थी। जैसे मिल्क, वक्फ, इनाम जिस पर राज्य कोई लगान नहीं लेता था। वह जमीन जोकि अधीनस्थ हिन्दू राजाओं के आधिपत्य में थी।1582 में भू-राजस्व के लिए खालसा भूमि को चार भागों में विभाजित कर दिया और उन्हें एक योग्य राजस्व अधिकारी के अन्तर्गत रख दिया गया। भू राजस्व के व्यवस्थित होने से दीवान का स्थान महत्वपूर्ण हो गया।

खालसा भूमि जिसकी आय शाही कोषगार में जमा की जाती थी, का प्रयोग राजा एवं राजा के परिवार के खर्चों पर, राजा के अंगरक्षक व निजी सैनिकों के खर्चों पर तथा युद्ध की तैयारी आदि पर खर्च किया जाता था। इस भूमि के अन्तर्गत मुगल साम्राज्य की कुल भूमि का 20 प्रतिशत हिस्सा आता था।

3.3.9 काजी

यह न्याय विभाग का सर्वोच्च अधिकारी होता था। प्रायः यह पद सद्र-उस-सुदूर को ही दे दिया जाता था। इसके न्यायालय से बड़ा सुल्तान का न्यायालय होता था। किन्तु राज्य का मुख्य काजी होने के नाते वह मुकदमों की सुनवाई तथा निर्णय दिया करता था। उसमें निर्णयों पर पुर्नविचार भी किया जा सकता था। कानून के नियम का मुख्य तौर पर इस्लामिक मुफ्ती नियमों से संचालित करते थे।

राज्य का सबसे बडा न्यायाधीष सम्राट होता था। वह प्रत्येक बुधवार को न्याय करता था, किन्तु सभी मुकदमों का निर्णय बादशाह नहीं करता था अतः उसकी सहायता के लिए मुख्य न्यायाधीष होता था। जिसे मुख्य काजी के नाम से जाना जाता था । वह इस्लामिक कानून के आधार पर न्याय करता था। मुफ्ती नामक पदाधिकारी इसके सहायक होते थे।

काजी की अदालत के अन्य कर्मचारियों में पेशकार ,कातिब (गवाहों के बयान तथा फैसले लिखने के लिए) अमीन, नाजिर , दफ्तरी इत्यादि प्रमुख थे। औरगंजेब के राजस्व काम में प्रत्येक सरकार के काजी की अदालत में प्रान्त के प्रमुख काजी अथवा काजी-उल-कुजात के द्वारा वकील-ए-सरकार नियुक्त होते थे। उनका प्रमुख कार्य राज्य के मुकदमों की पैरवी करना,न्यायालय के आदेशों का राज्य द्वारा कार्यान्वयन करवाना , ऐसी सम्पत्ति के विषय में कानूनी राय देना जिसका न्यासी काजी था। काजी को समाज में उच्च स्थान मिलता था।

3.3.10 सुलह - कुल

अकबर ने विभिन्न धर्मो के सामंजस्य एवं शान्ति पर विशेष बल दिया। वह सार्वभौमिक ओर शान्ति की नीति को क्रियान्वित करना चाहता था। अपनी प्रजा की प्रार्थनाएं सुनने के लिए वह हर समय तैयार रहता था। उनकी इच्छाओं की पूर्ति बड़ी उदारता पूर्वक करता था।सुलह-कुल के सिद्धातं का कलेवर अत्यंत व्यापक था,भारत को राजनीतिक रूप से जोड़न, विशेषकर राजपूतों को वृहत-भारत के कलेवर में शामिल करने के लिए इसका प्रयोग किया गया था।

ईश्वरीय अनुकंपा के विस्तुत आंचल में सभी वर्गो और धर्मो के अनुयायियों की एक जगह है इसलिए उसके विशाल साम्राज्य में जिसकी चारों ओर की सीमाएं केवल समुद्र से ही निर्धारित होती थीं। विरोधी धर्मो के अनुयायियों और हर तरह के अच्छे-बुरे विचारों के लिए जगह थी। यहां असहिष्णुता का मार्ग बन्द था। यहां सुन्नी और शिया एक ही मस्जिद में इकट्ठे होते थे और ईसाई और यहूदी एक ही गिरजे में प्रार्थना करते थे। उसने सुसंगत तरीके से सबके लिए शांति (सुलह-ए-कुल) के सिद्वान्त का पालन किया।

3.3.11 इबादतखाना (पूजा - गृह)

अकबर ने धार्मिक विषयों पर वाद-विवाद के उद्देश्य से 1575 में फतेहपुर सीकरी में इबादतखाने की स्थापना की । प्रत्येक रविवार को इबादतखाने में विभिन्न धर्मावलम्बी एकत्र होकर धार्मिक विषयों का आदान प्रदान करते थे। इबादतखाने के प्रारम्भिक दिनों में मुसलमान शेख, पीर, उलेमा ही यहां धार्मिक वार्ता के लिए आते थे पर कालान्तर में ईसाई, जरथ्रुस्टवादी, हिन्दू, जैन ,बौद्ध, पारसी, सूफी आदि भी धार्मिक वार्ता में हिस्सा लेने लगे।

इबादतखाने की वार्ता में हिस्सा लेने वाले प्रमुख लोग थे। पुरूषोत्तम , देवी (हिन्दू दार्शनिक) हरि विजय सूरी , भानुचन्द्र उपाध्याय (जैन दार्शनिक) आदि। इबादतखाने को अकबर ने 1578 में धर्म संसद के रूप में परिवर्तित कर दिया था।

3.3.12 दहसाला प्रणाली

दहसाला प्रणाली राजस्व निर्धारण की जाब्ती प्रणाली का एक संशोधित रूप था। 1580 में टोडरमल द्वारा निर्धारित इस व्यवस्था को अकबर द्वारा लागू किया गया था।राज्य के प्रत्येक परगने की पिछली दस साल की उपज और उपज की कीमतों की जानकारी प्राप्त कर ली जाती थी और उसका दसवां भाग वार्षिक मालगुजारी (माल-ए-दहसाला) के रूप में निश्चित कर लिया जाता था ।आंकडों के एकत्रित करने का लक्ष्य नये दस्तरूलअमल तैयार करना था।

1570-71 में टोडरमल ने भू-राजस्व की नई प्रणाली जाब्ती को आरम्भ किया। इस प्रणाली के अन्तर्गत भूमि की नाप-जोख कर भूमि की वास्तविक पैदावार आंकने के आधार पर करों को निश्चित किया जाता था। 1580 में अकबर द्वारा चलाई गई दहसाला प्रणाली का ही यह सुधार रूप था। अकबर द्वारा अपने शासनकाल के चौबीसवें वर्ष अर्थात् 1580 में लागू की गई नवीन प्रणाली दहसाला के अन्तर्गत वास्तविक उत्पादन, स्थानीय कीमतें, उत्पादकता आदि को आधार बनाया जाता था। इस प्रणाली में अलग-अलग फसलों के पिछलें दस वर्ष के उत्पादन और इसी समय अवधि में उनकी कीमतों का असल निकाल कर उसी के आधार पर उपज का एक तिहाई भाग भू-राजस्व होता था। पर रैयत इसका भुगतान नकद अथवा अनाज में कर सकती थी। फसलों के अनुसार नकद की दरें परिवर्तित होती रहती थीं। अकबर की यह प्रणाली टोडरमल (अकबर का दीवान-ए-अशरफ) से सम्बन्धित होने के कारण टोडरमल बन्दाबेस्त के नाम से जानी गई। यह प्रणाली लाहौर से इलाहाबाद तथा मालवा और गुजरात में लागू थी। शाहजहां के शासनकाल में मुर्शीदकुली खां ने इस प्रणाली को दक्कन में लागू किया ।

3.3.13 सयूरघाल

राज्य द्वारा राज्य के संरक्षण में रहने वाले धार्मिक व्यक्तियों, विद्वानों और साधनविहीनों को राजस्व अनुदान दिया जाता था। इस प्रकार के अनुदानों को सयूरधाल कहा जाता था। मुगलकाल में बादशाह द्वारा दिये जाने वाले भत्ते नकद अथवा भूमि अनुदान के रूप में होते थे।इस प्रकार के अनुदान पाने वालों का भूमि पर कोई अधिकार नहीं होता था।अनुदान केवल नियत दर पर उस व्यक्ति को कुल उत्पादन में से दिया जाता था। सयूरघाल के अनुदान की अधिकतम सीमा 100 बीघा प्रति व्यक्ति थी।अनुदान प्राप्तकर्ता को अनुदान पूरे जीवन के लिए मिलता था।अनुदान प्राप्तकर्ता की मृत्यु पर उसके उत्तराधिकारी अनुदान के लिए आवेदन करते थे। यह अनुदान प्राय पूर्व अनुदान का

ही एक अंश होता था। धर्माथ, पुरूषार्थ , शिक्षाणार्थ, गुजारे के लिए संस्थाओं तथा व्यक्तियों को दान में दी गई भूमि को सयूरघाल कहा जाता था।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्नांकित पर चर्चा कीजिए-

1. मनसब

2. मंगोल

3. मेहराब एवं गुंबद

4. सुलह-कुल

5. इबादतखाना

6. दहसाला प्रणाली

3.4 साराशं

उपरोक्त विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत आपको सल्तनत एवं मुगल कालीन भारत में प्रचलित अनेक विचार,संकल्पनाओं एवं शब्दावली की जानकारी दी गयी। अब आप मनसब, मुगल, तुर्क, मंगोल, मेहराब, गुम्बद, दस्तूर, खालसा-भूमी, काजी,सुलहकुल, इबादतखाना, दहसाला प्रणाली,सयूरघाल के बारे में पर्याप्त जानकारी रखते हैं और मध्यकालीन भारत के इतिहास को भली प्रकार समझ सकते हैं।

3.5 तकनीकी शब्दावली

यह इकाई मूलतः संकल्पना, विचार तथा शब्दावली से संबंधित है,आपको इस इकाई में सल्तनत काल एवं मुगल काल में प्रचलित शब्दावली से परिचित कराया गया,अब आप इस इकाई में प्रयुक्त शब्दावली से परिचित हो गये होंगे।

3.6 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

इकाई 3.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 1के उत्तर के लिए देखिए इकाई 3.3.1 ; 3.3.1.1

इकाई 3.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 2के उत्तर के लिए देखिए इकाई 3.3.4

इकाई 3.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 3के उत्तर के लिए देखिए इकाई 3.3.5;3.3.6

इकाई 3.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 4के उत्तर के लिए देखिए इकाई 3.3.10

इकाई 3.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 5के उत्तर के लिए देखिए इकाई 3.3.11

इकाई 3.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 6के उत्तर के लिए देखिए इकाई 3.3.12

3.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

1-टी0पी0,हाम्स, डिक्शनरी ऑफ इस्लाम

2– **MEDIEVAL INDIA** - Cultorweb.com
www.cultorweb.com/eBooks/.../Hist%20Dict%20**Medieval_India**.pdf

3– books.google.co.in/books?isbn=8120812506**...**

4- ब्लाकमैन: आइने अकबरी, द्वितीय संस्करण

5- जे0एन0सरकारः हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब, जिल्द-3

6- अवध बिहारी पाण्डेय: दि फर्स्ट अफगान एम्पायर इन इण्डिया, कलकत्ता, 1956

3.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. मध्यकालीन भारत का वृहत इतिहास:जे0एल0मेहता।

2. भारत में मुसलमान शासन का इतिहासःएस0आर0शर्मा

3. पूर्व मध्यकालीन भारतः अवध बिहारी पाण्डेय,सेन्ट्रल बुक डिपो, इलाहाबाद,

4. भारत का इतिहास: डा0एस0एस नागौरी एवं जीतेश नागौरी।

5. राइस एण्ड फाल ऑफ दा मुगल एम्पायर: आर0पी0 त्रिपाठी।

6. मुगल कालीन भारत: एल0पी0शर्मा

7. भारत वर्ष का सम्पूर्ण इतिहास: प्रो0 त्रिनेत्र पाण्डेय

8. भारत का इतिहास: आर्शीवादी लाल श्रीवास्तव

9. मध्यकालीन भारतीय इतिहास: अशोक कुमार पाण्डेय एवं डा0 पंकज गौतम

10. भारत का इतिहास: सत्यकेतु विद्यालंकार

11. मध्यकालीन भारत: इम्त्याज अहमद।

12. स्टडीज इन इस्लामिक कल्चर इन दी इण्डियन एनवायरमेंट: अजीज अहमद,

13. इण्डियन आरकीटेक्चर: ई0वी0 हवेल

14. लाइफ एण्ड कंडीशन आफ दी पीपुल आफ हिन्दुस्तान (1200-1550):के0 एस0 लाल

15. कॉम्प्रिहेन्सिव हिस्ट्री आफ देहली सल्तनत: प्रो0 के0ए0 निजामी, 1955 नई दिल्ली।

16. ताज-उल- मासिर, हसन -एन- निजामी: इलियट एण्ड डोरसन, वालयूम।

17. तारीक-ए-मुबारक शाही: प्रो0 जे0एन0 सरकार।

18. सुल्तान आफ देहली : ए0 एल0 श्रीवास्तव।

19. मध्यकालीन भारत: ईश्वरी प्रसाद।

20. भारत का इतिहास: आर0सी0 मजूमदार।

3.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. मुगलकालीन प्रशासन में मनसबदारी व्यवस्था के योगदान पर चर्चा कीजिए।

इकाई चार- जागीर,मस्जिद,सूफी,सगुण,निर्गुण,सनातन, पीर,नजर,तीर्थ-कर,नायंकर एवं आयगर,रायरेखो,अहदी, दाखली,कारखाना,मज्म-उल-बाहरीन

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 संकल्पनाऐं, विचार तथा शब्दावली
4.3.1 जागीर
4.3.2 सू□ी
4.3.3 नजर
4.3.4 कारखाना
4.3.5 मज्म-उल-बाहरीन (दो समुद्रों का संगम)
4.3.6 पीर
4.3.7 नायंकर एवं आयगर
4.3.8 अहदी
4.3.9 दाखिली
4.3.10 सगुण
4.3.11 निर्गुण
4.3.12 सनातन
4.3.12.1 अवधारणाएं एवं परम्पराएं
4.3.13 मस्जिद
4.3.14 तीर्थंकर
4.7 साराशं
4.8 तकनीकी शब्दावली
4.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर
4.10 संदर्भ ग्रंथ सूची
4.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
4.12 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

भारत में मुस्लिम शासन की स्थापना के उपरांत भारत और विशेषकर उत्तर भारत में शासन व्यवस्था,एवं संस्कृति के क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन हुए। भारत में आज जो समन्वित संस्कृति मिलती है उसकी शुरूआत इसी काल में हुई। मुगलकाल में समन्वित संस्कृति की अनेक श्रेष्ठ परंपराओं की स्थापना हुयी, सूफी और उनके अनुनायियों तथा भक्तिकालीन संतों ने दो भिन्न-भिन्न धर्मों एवं संस्कृतियों के लोगों को निकट लाने और साथ-साथ रहने के लिए तैयार करने में अहम् भूमिका निभायी थीं।

सल्तनत काल में शासक वर्ग ने मध्य एशिया,ईरान एवं अरब जगत की अनेक परंपराओं, विचारों एवं रीतियों को भारत में प्रचलित किया। इसके परिणामस्वरूप भारत में अनेक नवीन बातों का प्रचलन प्रारंभ हुआ और समाज व्यवस्था में भी परिवर्तन हुए।

मध्यकालीन इतिहास के अध्ययन के लिए मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न संकल्पनाओं ,विचार एवं शब्दावली से परिचित होना नितांत आवश्यक है, इसके अभाव में इस काल के इतिहास को भली प्रकार से समझ पाना कठिन है। इस तथ्य को ध्यान में रखकर आपको सल्तनत एवं मुगल काल में प्रयोग की गयी अनेक संकल्पनाओं ,विचार एवं शब्दावली का विवरण दिया जा रहा है। इन तथ्यों का अध्ययन कर आप मध्यकालीन इतिहास का भली प्रकार अध्ययन कर पायेंगे और इस काल की जानकारी को ठीक तरह से समझ पायेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई्र का उद्देश्य मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न संकल्पनाओं ,विचार एवं शब्दावली के ज्ञान का परिचय देना है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप अग्रांकित के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे-

1- मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न संकल्पनाओं

2- मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न विचार

3- मुस्लिम शासन काल में व्यवहृत विभिन्न शब्दावली

4.3 संकल्पनाऐं, विचार तथा शब्दावली

इस इकाई में आपको विभिन्न संकल्पनाओं, विचार तथा शब्दावली का परिचय विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत दिया जा रहा है-

4.3.1 जागीर

मध्यकालीन भारत का वह क्षेत्र जिसका राजस्व किसी राजकीय कर्मचारी को उसकी सेवाओं के बदले में वेतन के रूप में निश्चित अवधि के लिए दिया जाता था,जागीर कहलाता था। मुगल काल में मनसबदार अपना वेतन राजस्व एकत्रित करने वाली भूमि के रूप में पाते थे जिन्हें जागीर कहते थे और यह सल्तनतकालीन इक्ताओं के समान थी।

जागीर वह भूमि होती है जिसमें राज्य के प्रमुख अधिकारियों को वेतन के रूप में विशाल भू-क्षेत्र दिये जाते थे। हस्तान्तरण की जाने वाली जागीर भूमि को पायबाकी कहा जाता था। साम्राज्य की अधिकांश भूमि जागीर भूमि के अन्तर्गत आती थी। वह भूमि जो अनुत्पादक होती थी तथा धार्मिक व्यक्तियों को अनुदान में दी जाती थी। मदद-ए-माश, मिल्क अथवा सयूरघाल कही जाती थी।

मुगलकाल में भूमि की मिल्कियत का अधिकार काश्तकार के पास सुरक्षित था। जिसे बादशाह की स्वीकृति प्राप्त होती थी। फ्रांसीसी यात्री बर्नियर (17 वीं सदी) के अनुसार मुगलकाल में बादशाह सारी भूमि का मालिक होता था। यह सरदारों के अधीन थी जो राजस्व वसूल कर उसका एक भाग केन्द्रीय कोष में भेज देते थे और शेष स्वयं रख लेते थे।

4.3.2 सूफी

सूफी शब्द की उत्पत्ति अरबी भाषा के शब्द शफा (विशुद्ध) से मानी जाती है। कुछ विद्वान इसका सम्बन्ध सूफ (ऊन) से मानते हैं , क्योंकि पहले सूफी ऊनी वस्त्र (कम्बल) धारण करते थे । कुछ विद्वानों का मत है कि सर्वप्रथम साहबा (पैगम्बर मुहम्मद के सहयोग) में से कुछ लोग जो सांसारिक जीवन से अपने को अलग कर एक गुफा में तपस्या करते थे, सूफी कहलाये। विद्वानों के एक अन्य वर्ग का यह मानना है कि मदीना शरीफ स्थित सुफ्फा नामक चबूतरे पर बैठने वाला फकीर सूफी कहलाया।

सूफी चिन्तक इस्लाम धर्म को मानते थे। परन्तु उसके कर्म काण्डीय पक्ष का विरोध करते थे। सूफियों के अनुसार नमाज, रोजा तथा हजयात्रा से ईश्वर की प्राप्ति सम्भव नहीं। सल्तनतकालीन उलेमा वर्ग (धर्मवेत्ताओं) की धार्मिक कट्टरता की सूफियों ने अलोचना की थी।

सूफी रहस्यवाद का जन्म दसवीं शताब्दी के लगभग हुआ। प्रारम्भिक सूफियों में महिला रहस्यवादी रबिया (8 वीं शताब्दी)एवं मंसूर-बिन-हल्लाज(10वीं शताब्दी) ने ईश्वर और व्यक्ति के बीच प्रेम सम्बन्ध पर बल दिया। मंसूर हल्लाज अपने को अनलहक (मैं ईश्वर हूँ) घोषित करने वाला पहला सूफी साधक था। सूफी जगत में सर्वप्रथम इब्नुल अरबी द्वारा दिये गये सिद्धान्त वहादत-उल-वजूद का उलेमाओं ने विरोध किया। उलेमाओं ने जहाँ ब्रह्म तथा जीव के मध्य, मालिक एवं गुलाम के रिश्तों की कल्पना की वहीं दूसरी ओर सन्तों ने ईश्वर को अदृश्य सम्पूर्ण वास्तविकता एवं शाश्वत सौन्दर्य को प्राप्त करने में सूफियों ने अपना विश्वास जताया। इन्होंने सौन्दर्य एवं संगीत को अधिक महत्व दिया। सूफियों ने गुरू को अधिक महत्व दिया, क्योंकि ये गुरूओं को ईश्वर प्राप्ति का साधन मानते थे। सूफी भौतिक एवं भोग-विलास से दूर, सादे, सरल संयमपूर्ण जीवन में अपनी आस्था रखते थे।

सूफी साधकों को परमआनन्द तक पहुँचने से पूर्व दस अवस्थाओं से गुजरना पड़ता था।सूफी सन्तों ने अपनी शिक्षाओं का प्रचार-प्रसार जन साधारण की भाषा में किया। इनके द्वारा ही हिन्दी, उर्दू एवं अन्य कुछ क्षेत्रीय भाषाओं का विकास भी हुआ। सूफी धर्म संघ, बेशर(इस्लामी सिद्धान्त के समर्थकद्ध एवं बाशर (इस्लामी सिद्धान्त में बंधे नहीं) में विभाजित था। सूफी सन्तों के शिष्य को मुरीद एवं उनके आश्रमों एवं मठों को खानकाह कहा जाता था।

4.3.3 नजर

जब लोग सम्राट से भेंट करने जाते थे या शाही दरबार में उपस्थित होते थे तो अपने पद तथा स्थान के अनुरूप सम्राट को पेशकश के अतिरिक्त विशेष अवसरों पर उमरा तथा अन्य लोगों से सम्राट को नजर प्राप्त होती थी।पेशकश तथा नजर में प्रमुख अन्तर यह समझा जाता था कि पेशकश नजर से अधिक मूल्यवान होती थी। पेशकश में हीरे, जवाहरात तथा अन्य मूल्यवान वस्तुएं दी जाती थीं। नजर साधारणतया बधाई तथा खुशी के अवसरों पर नकद के रूप में दी जाती थी।

4.3.4 कारखाना

इसके अन्तर्गत राजदरबार तथा राजपरिवार की शान व शौकत को पूरा करने के लिए जिन विलास सम्बन्धी वस्तुओं की जरूरत पड़ती थी उनका निर्माण यहां होता था और ये वस्तुएं बाजार में नहीं जा सकती थीं। मुहम्मद तुगलक ने अपने राज्य काल में एक वस्त्र निर्माण शाला की स्थापना की थी जहां रेशमी कपड़े बुनने वाले 400 जुलाहे काम में लगे रहते थे। इसी तरह के फिरोज तुगलक के शासन काल में 36 कारखाने थे।

कुछ कारखाने ऐसे थे, जिनमें काम करने वालों को निश्चित वेतन मिलता था। इनके अन्तर्गत पीलखाना, पायगाह, शराबखाना, शैमाखाना, सुतुरखाना, समखाना, अवदारखाना आदि थे। कुछ

कारखाने ऐसे भी थे जिनमें अनिश्चित वेतन पाने वाले कर्मचारी होते थे । इसमें जमारदारखाना, अलमखाना, फराशखाना, रिकाबखाना आदि प्रमुख थे।

मुतशर्रिफ के अधीन एक विशेष प्रकार का कारखाना होता था। जिसमें उच्च श्रेणी के मालिक होते थे,सम्राट के व्यक्तिगत प्रयोग तथा सेना के लिए जो विभाग हथियार बनाता था उसे कारखाना कहा जाता था। अंग्रेजों ने दक्षिण भारत में पहला कारखाना मछलीपट्टम 1611 में खोला।गुजरात, थट्टा, बुरहानपुर, जौनपुर, बनारस, पटना तथा ढाका की मलमल बहुत प्रसिद्ध थी। कश्मीर और कनार्टक लकड़ी की कलात्मक वस्तुएं बनाने के लिए प्रख्यात थे।

गुड़ और शक्कर बनाने के उद्योग बंगाल, गुजरात और पंजाब में मुख्य रूप से थे। लोहे के अस्त्र-शस्त्र बनाने के लिए गुजरात और पंजाब प्रख्यात थे।

तांबा, कांसा और पीतल का प्रयोग मुख्यतः बर्तन और मूर्तियां बनाने के लिए किया जाता था। भारत में सबसे बडा उद्योग वस्त्र उद्योग था। सभी प्रकार के सूती ,ऊनी, और रेशमी वस़्त्र तैयार किये जाते थे। कश्मीर में ऊनी कालीन,रेशमी कपड़ा तथा ऊनी कपड़े का निर्माण बहुत होता था। कश्मीर और बंगाल में रेशम पैदा किया जाता था। ऊनी कपड़ा और वस्त्र बनाने के कारखाने पहाड़ी प्रदेशों में अधिक थे। बढ़िया ऊनी वस्त्र और शाल कश्मीर तथा लाहौर में तैयार किये जाते थे।जहांगीर ने अमृतसर में ऊनी वस्त्रों के उद्योग को प्रारम्भ किया। ढाका की मलमल विश्व प्रसिद्ध थी।

4.3.5 मज्म-उल-बाहरीन (दो समुद्रों का संगम)

यह शाहजहाँ के समय उसके पुत्र दारा सिकोह द्वारा लिखा गया प्रमुख ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में कादिरी सिलसिले के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी दी गई है। क्योंकि दारा शिकोह स्वयं कादिरी सिलसिले को मानने वाला था। इसलिए उसने इस ग्रन्थ की रचना की। इसमें दारा शिकोह ने हिन्दू धर्म और इस्लाम धर्म दोनों को एक ही लक्ष्य तक पहुँचने के दो रास्ते बतलाया। दारा द्वारा लिखा यह ग्रन्थ अति महत्वपूर्ण था।

4.3.6 पीर

इस्लाम धर्म में एक ऐसा व्यक्ति जो अपने जीवन को दुनियादारी से दूर, ईश्वरीय इच्छा में लीन रखने वाला आध्यात्मिक ज्ञाता हो और सांसारिक माया-मोह का त्याग कर जनकल्याण की भावना रखता हो तथा एक उच्च स्थान पर पहुंचकर मुर्शीद का दर्जा प्राप्त कर संसार का कल्याण करता हो उसे पीर कहा जाता है। औरंगजेब को भी जिन्दा पीर माना जाता था क्योंकि उसने जनकल्याण के लिए समाज में व्याप्त बुराईयों को समाप्त करने का प्रयास किया था। अपना जेब खर्च भी वह कुरान की आयतें लिखकर और टोपी सिलकर निकाला करता था। उसे आध्यात्मिक ज्ञान

प्राप्त था। इसलिए लोग उसे जिन्दा पीर मानकर पूजते थे। इस पीर श्रेणी में संत या सूफी और अन्य धार्मिक महानुभाव, साहसी, उपनिवेशी, देवत्व प्राप्त सैनिक एवं योद्धा, विभिन्न, हिन्दू एवं बौद्ध, देवी-देवता और यहां तक कि जीवात्माएं भी शामिल थे। समय के साथ पीरों की पूजा पद्वतियां बहुत ही लोकप्रिय हो गई और उनकी मजारें आज भी भारत के कोने-कोने और विशेषकर बंगाल में सर्वत्र पाई जाती हैं।

4.3.7 नायंकर एवं आयगर

विजयनगर की सेना के सेनानायक को नायक कहा जाता था। नायक भू-सामन्त थे, जिन्हें राजा वेतन के बदले उनकी अधीनस्थ सेना के रख-रखाव के लिए विशेष भू-खण्ड देता था। ऐसे भू-खण्ड अमरम कहलाते थे । अमरम भूमि के उपयोग के बदले नायकों को भूमि से प्राप्त भू-राजस्व के एक हिस्से को सरकारी कोष में जमा करना पड़ता था तथा भूमि की आय से राजा की सहायता के लिए एक सेना का रख-रखाव करना पड़ता था। इसके अलावा नायकों को उस क्षेत्र में शान्ति, सुरक्षा अपराधों को रोकने जैसे अनेक दायित्वों को भी पूरा करना होता था।

आयगर व्यवस्था का गठन प्रशासन को भली-भांति चलाने के लिए किया जाता था । प्रत्येक गांव को एक स्वतन्त्र इकाई के रूप में संगठित किया जाता था। संगठित ग्रामीण इकाई पर शासन हेतु बारह सदस्यीय प्रशासकीय अधिकारियों की नियुक्ति की जाती थी। इन्हें सामूहिक रूप में आयगर कहा जाता था। इन्हें अपनी सेवा के बदले वेतन के रूप में कर मुक्त तथा लगान मुक्त भूमि प्राप्त होती थी। गांव की भूमि बिना आयंगर की पूर्व अनुमति के नहीं बेची जा सकती थी। कर्णिक नामक कर्मचारी के पास भूमि से जुड़े सभी दस्तावेज होते थे। राजा महानायकाचार्य नामक अपने अधिकारी के द्वारा गांव के शासन से अपना सम्बन्ध बनाये रखता था।

4.3.8 अहदी

ये सम्राट के व्यक्तिगत सैनिक हुआ करते थे। इनकी नियुक्ति सम्राट किसी मनसबदार की सेना में भी कर सकता था। सम्राट ही इनके वेतन, शिक्षा, वस्त्र, घोड़े आदि की व्यवस्था करता था। मुगल काल में एक अहदी सैनिक को 500 रूपये तक का वेतन दिया जाता था। ये सम्राट के प्रति वफादार होते थे। इनकी संख्या अनिश्चित होती थी। अकबर के शासनकाल में इनकी संख्या लगभग 12 हजार थी।

ये प्रतिष्ठा वाले सिपाही थे तथा विशेष प्रकार के अश्वारोही होते थे जो साधारणतः बादशाह के अंगरक्षक थे तथा किसी और के अधीन नहीं थे अर्थात् मुगल सेना के प्रमुख भाग थे।

4.3.9 दाखिली

इस प्रकार के सैनिकों की नियुक्ति सम्राट ही करता था। इन्हें मनसबदार की सेवा में रखा जाता था। ये सैनिक अर्द्ध-अश्वारोही और अर्द्ध-पैदल की श्रेणी में आते थे। दाखिली सैनिको की भर्ती भी सीधे राज्य द्वारा ही होती थी। इन्हें मनसबदारों के अधीन रखा जाता था। ये पूरक सिपाही होते थे जिनका खर्च राज्य से मिलता था।

4.3.10 सगुण

सगुण मार्गी भक्तों ने अपने ईष्ट देवों राम और कृष्ण की भक्ति को अधिक महत्व दिया। भक्ति का एक महत्वपूर्ण आधार सगुण मार्ग है। भक्त किसी भी आकार को अपना आराध्य मानकर उसमें एकाकार होने का प्रयास करता है और मूर्तरूप में उसका ध्यान कर भक्ति और पूजा अर्चना करता है। जैसे मीरा ने कृष्ण की मूरत को अपना सर्वस्व और आराध्य मानकर सर्वस्व न्यौछावर कर जीवन समर्पित कर दिया। तुलसीदास ने राम को अपना आराध्य मानकर जनसाधारण में उनका गुणगान कर भगवान के मूर्त रूप को सजीवता प्रदान की और जीवन पर्यन्त उनकी आराधना करते रहे। इसी तरह चैतन्य महाप्रभु, सूरदास , जैसे भक्तों ने कृष्ण भगवान के सगुण रूप को अर्थात् मूर्त रूप को स्वीकार किया और भगवान के रूप में उनकी आराधना की।

4.3.11 निर्गुण

निगुण मार्गी भक्तों ने ज्ञान तथा प्रेम का आश्रय लेते हुए एकेश्वरवाद का प्रचार कर हिन्दू तथा मुस्लिम जनता को एक दूसरे के समीप लाने के प्रयास किया।निर्गुण अर्थात् निराकार, जिसका कोई आकार न हो ऐसे ईश्वर की आराधना करना निर्गण भक्ति कही जाती है। सन्त कबीर, गुरूनानक, रामानुजाचार्य, रामानन्द, दादूदयाल, रैदास, वल्लभाचार्य तथा तुकाराम जैसे भक्त सन्तों ने अपने ज्ञान द्वारा समाज में व्याप्त आडम्बरों, कुरीतियों तथा अंधविश्वास को आपसी वैमनस्य की भावना को प्रेम द्वारा खत्म कर समाज सुधार का कार्य किया। उन्होंने प्रेम द्वारा ज्ञान का संचार किया, एक ऐसी भक्ति को जगाया जो निराकार निर्गुण थी।

4.3.12 सनातन

भारत का सर्वप्रमुख धर्म हिन्दू धर्म है, जिसे इसकी प्राचीनता एवं विशालता के कारण सनातन धर्म भी कहा जाता है। ईसाई, इस्लाम बौद्व जैन आदि धर्मों के समान हिन्दू धर्म किसी पैगम्बर या व्यक्ति विशेष द्वारा स्थापित धर्म नहीं है, बल्कि यह प्राचीन काल से चले आ रहे विभिन्न धर्मों मतमतांतरों, आस्थाओं एवं विश्वासों का समुच्चय है। एक विकासशीन धर्म होने के कारण विभिन्न कालों में इसमें नये-नये आयाम जुड़ते गये। वास्तव में हिन्दू धर्म इतने विशाल परिदृश्य वाला धर्म है कि उसमें आदिम ग्राम-देवताओं , स्थानीय देवी-देवताओं से लेकर त्रि-देव एवं अन्य

देवताओं तथा निराकार ब्रह्म और अत्यंत गूढ़ दर्शन तक सभी बिना किसी अन्तर्विरोध के समाहित हैं और स्थान एवं व्यक्ति विशेष के अनुसार सभी की आराधना होती है। वास्तव में हिन्दू धर्म लघु एवं महान परम्पराओं का उत्तम समन्वय दर्शाता है। एक ओर इसमें वैदिक तत्व तथा पुराणकालीन देवी-देवताओं की पूजा अर्चना होती है तो दूसरी ओर कापालिक और अवधूतों द्वारा भी अत्यन्त भयावह कर्मकंडीय आराधना की जाती है। एक ओर भक्ति रस से सराबोर भक्त हैं , तो दूसरी ओर अनीश्वर, अनात्मवादी और यहां तक कि नास्तिक भी दिखाई पड़ जाते हैं। हिन्दू धर्म सर्वथा विरोधी सिद्धान्तों का भी उत्तम एवं सहज समन्वय है। यह हिन्दू धर्मावलम्बियों की उदारता सर्वधर्मसम्भाव, समन्वयशीलता तथा धार्मिक सहिष्णुता की श्रेष्ठ भावना का ही परिणाम और परिचायक है।

हिन्दू धर्म की परम्पराओं का मूल वेद ही हैं । वैदिक धर्म प्रकृति-पूजक बहुदेववादी तथा अनुष्ठानपरक धर्म था। यद्यपि उस काल में प्रत्येक भौतिक-तत्व का अपना विशेष अधिष्ठातृ देवता या देवी की मान्यता प्रचलित थी, परन्तु देवताओं में वरूण, पूषन, मित्र, सविता, सूर्य , अश्विन, उषा ,इन्द्र, रूद्र, पर्जन्य, अग्नि, वृहस्पति, सोम आदि प्रमुख थे। इन देवताओं की आराधना, यज्ञ तथा मंत्रोच्चारण के माध्यम से की जाती थी। मंदिर तथा मूर्तिपूजा का अभाव था। उपनिषद काल में हिन्दू धर्म के दार्शनिक पक्ष का विकास हुआ। साथ ही एकेश्वरवाद की अवधारणा बलवती हुई। ईश्वर को अजर-अमर, अनादि सर्वव्यापी कहा गया। इसी समय योग,सांख्य, वेदांत आदि षडदर्शनों का विकास हुआ। निर्गुण तथा सगुण की भी अवधारणाएं उत्पन्न हुइं । नौवीं से चौदहवीं शताब्दी के मध्य विभिन्न पुराणों की रचना हुइं। पुराणों में पांच विषयों (पंच लक्षण) का वर्णन है।

1 सर्ग(जगत की सृष्टि)

2 प्रतिसर्ग (सृष्टि का विस्तार , लोप एवं पुनः सृष्टि)

3 वंश (राजाओं की वंशावली)

4 मन्वंतर (भिन्न- भिन्न मनुओं के काल की प्रमुख घटनाएं) तथा

5 वंशानुचरित (अन्य गौरवपूर्ण राजवंशों का विस्तृत विवरण)

इस प्रकार पुराणों में मध्य युगीन धर्म, ज्ञान-विज्ञान तथा इतिहास का वर्णन मिलता है। पुराणों ने ही हिन्दू धर्म में अवतारवाद की अवधारणा का सूत्रपात किया। इसके अलावा मूर्तिपूजा, तीर्थयात्रा ,व्रत आदि इसी काल की देन है। पुराणों के पश्चात भक्ति काल का आगमन होता है। जिसमें विभिन्न संतों एवं भक्तों ने साकार ईश्वर की आराधना पर जोर दिया तथा जनसेवा परोपकार और प्राणी मात्र की समानता एवं सेवा को ईश्वर आराधना का ही रूप बताया। फलस्वरूप प्राचीन दुरूह कर्मकांडों के बंधन कुछ ढीले पड़ गये। दक्षिण भारत के अलवार संतों, गुजरात में नरसि मेहता,

महाराष्ट्र में तुकाराम, बंगाल में चैतन्य, उत्तर में तुलसी, कबीर, सूर और गुरू नानक के भक्ति भाव से ओत-प्रोत भजनों ने जनमानस पर अपनी अमिट छाप छोड़ी।

4.3.12.1 अवधारणाएं एवं परम्पराएं

ब्रहम को सर्वव्यापी एकमात्र सत्ता, निर्गुण तथा सर्वशक्तिमान माना गया है। ब्रहम को सर्वव्यापी माना गया है। अतः जीवों में भी उसका अंश विद्यमान है। आत्मा के अमरत्व की अवधारणा से ही पुनर्जन्म की भी अवधारणा पुष्ट होती है।आत्मा के प्रत्येक जन्म द्वारा प्राप्त जीव रूप को योनि कहते हैं। ऐसी 84 करोड़ योनियों की कल्पना की गई है।प्रत्येक जन्म के दौरान जीवन भर किये गये कृत्यों का फल आत्मा को अगले जन्म में भुगतना पडता है।ये कर्मफल से सम्बन्धित दो लोक है। स्वर्ग में देवी देवता अत्यंत ऐशो-आराम की जिन्दगी व्यतीत करते हैं , जबकि नरक अत्यन्त कष्टदायक, अंधकारमय और निकृष्ट है।

मोक्ष का तात्पर्य है आत्मा का जीवन-मरण के दुष्चक्र से मुक्त हो जाना अर्थात् परमब्रहम में लीन हो जाना है। इसके लिए निर्विकार भाव से सत्कर्म करना और ईश्वर की आराधना करना आवश्यक है।

हिन्दू धर्म में काल को चक्रीय माना गया है। इस प्रकार एक कालचक्र में चार युग, सत्ययुग(क्रत), त्रेता, द्वापर तथा कलि माने गये हैं इन चारों युगों में कृत सर्वश्रेष्ठ और कलि निकृष्टतम माना गया है। इन चारों युगों में मनुष्य की शारीरिक और नैतिक शक्ति क्रमशः क्षीण होती जाती है। जिसके अंत में पृथ्वी पर महाप्रलय होता है।

हिन्दू समाज चार वर्णों में विभाजित है। ब्राहमण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र । ये चार वर्ण प्रारम्भ में कर्म के आधार पर विभाजित थे।

प्राचीन हिन्दू संहिताएं मानव जीवन को 100 वर्ष की आयु वाला मानते हुए उसे चार चरणों अर्थात् आश्रमों में विभाजित करती हैं। ब्रहमचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास। प्रत्येक की संभावित अवधि 25 वर्ष मानी गई। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चार पुरूषार्थ ही जीवन के वांछित उद्देश्य हैं।

ज्ञानयोग, भक्तियोग, कर्मयोग तथा राजयोग ये चार योग हैं जो आत्मा को ब्रहम से जोड़ने के मार्ग हैं।चार धाम- उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम- चारों दिशाओं में स्थित चार हिन्दू धाम क्रमशः बद्रीनाथ, रामेश्वर , जगन्नाथपुरी और द्वारका हैं। जहां जाना प्रत्येक हिन्दू का पुनीत कर्तव्य है।

4.3.13 मस्जिद

यह एक अरबी शब्द है। जिसका शाब्दिक अर्थ है- ऐसा स्थान जहां मुसलमान अल्लाह की आराधना में सजदा (घुटने और माथा टेककर) करते हैं।जामा मस्जिद या (मस्जिद-ए-जामी) वह मस्जिद होती है जहां अनेक मुसलमान एकत्र होकर साथ-साथ नमाज पढ़ते हैं। नमाज की रस्म के लिए सारे नमाजियों में से सबसे अधिक सम्माननीय और विद्वान पुरूष को इमाम (नेता) के रूप में चुना जाता है। इमाम शुक्रवार की नमाज के दौरान धर्मोपदेश(खुतबा) भी देता है।

नमाज के दौरान मुसलमान मक्का की तरफ मुंह करके खड़े होते हैं। भारत में मक्का पश्चिम की ओर पड़ता है। मक्का की ओर की दिशा किबला कहलाती है।

दिल्ली के सुल्तानों ने सारे उपमहाद्वीप के अनेक शहरों में मस्जिदें बनवाई। इससे उनके मुसलमान और इस्लाम के रक्षक होने के दावे को बल मिलता था। सामान अचार संहिता और आस्था का पालन करने वाले श्रद्धालुओं को परस्पर एक समुदाय से जुड़े होने में भी मस्जिदें सहायक थीं। उस काल में एक समुदाय का अंग होने के बोध को प्रबल करना जरूरी था क्योंकि मुसलमान अनेक भिन्न-भिन्न प्रकार की पृष्ठभूमियों से आते थे।

इस्लाम धर्म में मस्जिद ऐसे पवित्र स्थान को कहते हैं जहां पर दिन में पांच बार नमाज अदा की जाती है, दिन में पांच बार आजान देकर नमाजी इकत्र होते हैं और अल्लाह की इबादत होती है मस्जिद में इमाम मेहराब के बाहर खड़ा होता है और उसके पीछे नमाजी एक कतार में सीधे एकत्र हो जाते हैं।

मस्जिद में नमाज से पूर्व वजू करना अति आवश्यक होता है। इस लिए प्रत्येक मस्जिद में पानी का पर्याप्त प्रबन्ध होता है। कुछ मस्जिदों में बीच में हौज होता है। भारत में तुर्कों के आगमन के पश्चात प्रारम्भ में नमाज मैदान में हुआ करती थी।मोहम्मद गौरी ने जब भारत में 1191-1992 में आक्रमण किया, उसके पश्चात मस्जिद की रूपरेखा पर ध्यान दिया गया।जब कुतुबद्दीन एबक भारत आया उसने मस्जिद के निर्माण को आवश्यक समझा और प्रथम बार कुव्वत-उल- इस्लाम मस्जिद का निर्माण दिल्ली में कुतुब मीनार के समीप हुआ।

बाद में अजमेर में अढ़ाई दिन के झोपडा का निर्माण हुआ। गुलाम वंश के सुल्तानों ने एवं मुगल सम्राटों ने अनेक प्रकार की मस्जिदों का निर्माण भारत में करवाया। मस्जिदों में महिलाओं को पुरूषों के साथ नमाज पढ़ने की इजाजत नहीं है। परन्तु अब कुछ मस्जिदों में महिलाएं मस्जिदों में जाकर नमाज पढ़ने लगी हैं। जैसे मद्रास, लखनऊ तथा अन्य कई जगहों पर। परन्तु तुर्कों के आगमन

के समय भारत में मुस्लिम महिलाओं को नमाज अपने घरों में ही पढ़नी होती थी। एक साथ नमाज पढना अनुचित माना जाता है।

4.3.14 तीर्थकर

ये एक तीर्थ कर था। जिसे हिन्दुओं के धार्मिक स्थलों से हिन्दुओं से लिया जाता था। गंगा के घाटों,मन्दिरों आदि पर अमीर, गरीब के अनुसार यह कर लगाया जाता था। अकबर ने राजपूत रानी से विवाह करने के पश्चात् हिन्दुओं से वसूला जाने वाला तीर्थ कर समाप्त करवा दिया था। जहांगीर ने भी अपने शासनकाल में जामिया व तीर्थकर नहीं लगाये।

शाहजहां ने हिन्दुओं पर पुनः तीर्थयात्रा कर लगाया । हिन्दुओं को तीर्थयात्रा कर देने का आदेश दिया गया था। परन्तु बाद में बनारस के कविन्द्राचार्य के अत्यधिक प्रार्थना करने पर यह कर हटा दिया गया था।

स्वमूल्यांकित प्रश्न

निम्नांकित पर चर्चा कीजिए-

1- नायंकर एवं आयगर

2- अहदी एवं दाखली

3- सूफी, सगुण एवं निर्गुण

4- जागीर

5- मस्जिद

6- मज्म-उल-बाहरीन

4.7 सारांश

उपरोक्त विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत आपको सल्तनत एवं मुगल कालीन भारत में प्रचलित अनेक विचार,संकल्पनाओं एवं शब्दावली की जानकारी दी गयी। अब आप जागीर, मस्जिद, सूफी, सगुण, निर्गुण, सनातन, पीर, नजर, तीर्थ-कर, नायंकर एवं आयगर, रायरेखो, अहदी, दाखली,कारखाना,मज्म-उल-बाहरीन के बारे में पर्याप्त जानकारी रखते हैं और मध्यकालीन भारत के इतिहास को भली प्रकार समझ सकते हैं।

4.8 तकनीकी शब्दावली

यह इकाई मूलतः संकल्पना, विचार तथा शब्दावली से संबंधित है,आपको इस इकाई में सल्तनत काल एवं मुगल काल में प्रचलित शब्दावली से परिचित कराया गया,अब आप इस इकाई में प्रयुक्त शब्दावली से परिचित हो गये होंगे।

4.9 स्वमूल्यांकित प्रश्नों के उत्तर

इकाई 4.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 1के उत्तर के लिए देखिए इकाई 4.3.7

इकाई 4.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 2के उत्तर के लिए देखिए इकाई 4.3.8 एवं 4.3.9

इकाई 4.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 3के उत्तर के लिए देखिए इकाई 4.3.2; 4.3.10 एवं 4.3.11

इकाई 4.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 4के उत्तर के लिए देखिए इकाई 4.3.1

इकाई 4.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 5के उत्तर के लिए देखिए इकाई 4.3.13

इकाई 4.3 के स्वमूल्यांकित प्रश्न 6के उत्तर के लिए देखिए इकाई 4.3.5

4.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भारत का इतिहास- आर्शीवादी लाल श्रीवास्तव

2. मध्यकालीन भारत, सल्तनत से मुगलों तक- सतीश चन्द्रा जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

3. मध्यकालीन भारत, 8 वीं से 18 वीं शताब्दी तक एक सर्वेक्षण इम्त्याज अहमद नेशनल पब्लिकेशन, खजांची रोड, पटना।

4. मध्ययुगीन भारतीय समाज एवं संस्कृति, डा0 कन्हैया लाल श्रीवास्तव एवं झारखण्ड चौबे।

5. टी0पी0,ह्राम्स, डिक्शनरी ऑफ इस्लाम

6– **MEDIEVAL INDIA** - Cultorweb.com

www.cultorweb.com/eBooks/.../Hist%20Dict%20**Medieval_India**.pdf

7– books.google.co.in/books?isbn=8120812506**...**

4.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1-टी0पी0,हाम्स, डिक्शनरी ऑफ इस्लाम

2– **MEDIEVAL INDIA** - Cultorweb.com

www.cultorweb.com/eBooks/.../Hist%20Dict%20**Medieval_India**.pdf

3– books.google.co.in/books?isbn=8120812506**...**

4- ब्लाकमैन: आइने अकबरी, द्वितीय संस्करण

5- जे0एन0सरकारः हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब, जिल्द-3

6- अवध बिहारी पाण्डेय: दि फर्स्ट अफगान एम्पायर इन इण्डिया, कलकत्ता, 1956

7- जे0एल0 मेहता: मध्यकालीन इतिहास, खण्ड-प्एप्

8- सतीश चन्द्र: मध्यकालीन इतिहास

6- एस0आर0शर्मा: मध्यकालीन भारत

4.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. मुगलकालीन कारखानों के विषय में आप क्या जानते हैं,ये किस प्रकार वर्तमान कारखानों से भिन्न थे।

2. अपने क्षेत्र में विद्यमान किसी मस्जिद के स्थापत्य के विषय में एक निबंध लिखिए।